CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

7.3

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और पुराण आदि सिद्ध अयाचक और याचक
ण प्रदर्शन पूर्वक, उनके धर्म, आचार व्यवहार एवं
वियों आदि की विवेचना, अयाचक ब्राह्मणों के साथ
याचक ब्राह्मणों के विवाहसम्बन्ध आदि का प्रदर्शन,
आधुनिक इतिहास, व्यवस्थापत्र आदि प्रमाण
निरूपण और विविध आक्षेप निराकरण
आदि अति प्रयोजनीय विषयों की
सविस्तरमीमांसा ।

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री १०८ दण्डि
स्वामीसहजानन्दसरस्वती, काशी द्वारा
लोकोपकारार्थ विरचित ।

तथा

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य दण्डिस्वामी श्रीपूर्णानन्द
सरस्वती, सरायगोवर्धन, काशी
द्वारा प्रकाशित ।

आदावन्ते च यन्नास्ति वर्त्तमानेऽपि तत्तथा ।
नित्यैः सदृशाः सन्तोऽवितथा इव लक्षिताः ॥ (माण्डू०।२६।) ॥

[illegible] द्वारा हितचिन्तक प्रेस, रामघाट,
[illegible] सिटी में मुद्रित ।

तीयावृत्ति २००० } संवत् १९८१ विक्रमी । { मूल्य डेढ़ रुपया ।
डाक व्यय अधिक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आजसे आठ दस वर्ष पहले कुछ
रा विशेष परिचय था, हमसे यह अनुरोध
के इतिहास से सम्बन्ध रखने वाला कोई ग्रन्थ आ
उपकार हो। हम इस बात से सहमत हो गये। प्रथम क
विचार न था, इसलिये तै पाया कि उस ग्रन्थ का नाम भूमि
ब्राह्मण परिचय रक्खा जाय। हमारा विचार था कि कोई छोटी भी
पुस्तक लिख दी जागगी। पर, जब हमने सामग्री एकत्र करना
लिखना आरम्भ किया तो ब्राह्मणमात्र के इतिहास और धर्म
प्रकाश डालने और विचार करने को हम वाध्य होगये। इसके
बीच में और भी कारण आगये। फलतः ग्रन्थ विस्तृत होगया
उस में सभी ब्राह्मणों का विचार भी आगया। फिर भी पूर्व नि
और संकल्प के अनुसार नाम वही रक्खा गया। परन्तु हमें इसव
का दुःख उसी समय हुआ और वह अन्ततक बना रहा कि व्याप
विषयकी पुस्तक लिखकर उसका संकुचित नाम रखना अच्छा न हु
और वह दुःख तभी से बराबर बना रहा। इतना निश्चय तो हमने उ
समय करलिया था कि दूसरी आवृत्ति में इसका नाम अवश्यमेव ब
देना होगा। तदनुसार कुछ और भी इतिहास सामग्री और धार्मि
विषय मध्य में संगृहीत हुए और पूर्व पुस्तक में उनका भी समावे
करके प्रस्तुत पुस्तक तैयार की गई है और नाम भी उसीके अनुस
ब्रह्मर्षि वंश विस्तर रक्खा गया है, जो इस ग्रन्थ के लिये सर्वथा उ
युक्त है। त्यागियों और गौड़ों के सम्बन्ध आदि का विशेष रूप से इ
बार समावेश किया गया है। यद्यपि बहुत यत्न करने पर भी सा
स्वतों और महियालों के सम्बन्ध की विशेष बातें इस बार
दी जासकीं। तथापि आशा है, तीसरे संस्करण में यह कमी भी पू
हो जायगी। इस व्यापक नाम से प्रचार भी विशेष होगा, जो पहल
बार इसी कारण नहीं होसका और यही हमारा लक्ष्य है।

स्वामीसहजानन्दसरस्वती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वि० १९७८ ।

और पुराण आदि सिद्ध अयाचक और याचक
ण प्रदर्शन पूर्वक, उनके धर्म, आचार व्यवहार एवं
वर्यों आदि की विवेचना, अयाचक ब्राह्मणों के साथ
याचक ब्राह्मणों के विवाहसम्बन्ध आदि का प्रदर्शन,
आधुनिक इतिहास, व्यवस्थापत्र आदि प्रमाण
निरूपण और त्रिविध आक्षेप निराकरण
आदि अति प्रयोजनीय विषयों की
सविस्तरमीमांसा ।

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्री १०८ दण्डि
स्वामीसहजानन्दसरस्वती, काशी द्वारा
लोकोपकारार्थ विरचित ।

तथा

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य दण्डिस्वामी श्रीपूर्णानन्द
सरस्वती, सरायगोवर्धन, काशी
द्वारा प्रकाशित ।

आदावन्ते च यन्नास्ति वर्त्तमानेऽपि तत्तथा ।
विचार्य्य सदृशा: पन्थोऽवितथा इव लक्षिता: ॥ (माण्डू० ।२६।) ॥

[illegible] चिन्तामणि प्रेस, रामघाट,
[illegible] मुद्रित ।

[illegible] विक्रमी । { मूल्य डेढ़ रुपया ।
डाक व्यय अधिक ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri. Collection: Equipment Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूमि

आजसे आठ दस वर्ष पहले कुछ
सारा विशेष परिचय था, हमसे यह अनुरोध
के इतिहास से सम्बन्ध रखने वाला कोई ग्रन्थ अ।५
उपकार हो। हम इस बात से सहमत हो गये। प्रथम क.
विचार न था, इसलिये तै पाया कि उस ग्रन्थ का नाम भूमिहार
ब्राह्मण परिचय रक्खा जाय। हमारा विचार था कि कोई छोटी मोटी
पुस्तक लिख दी जागगी। पर, जब हमने सामग्री एकत्र करना और
लिखना आरम्भ किया तो ब्राह्मणमात्र के इतिहास और धर्म पर
प्रकाश डालने और विचार करने को हम वाध्य होगये। इसके लिये
बीच में और भी कारण आगये। फलतः ग्रन्थ विस्तृत होगया और
उस में सभी ब्राह्मणों का विचार भी आगया। फिर भी पूर्व निश्चय
और संकल्प के अनुसार नाम वही रक्खा गया। परन्तु हमें इसबात
का दुःख उसी समय हुआ और वह अन्ततक बना रहा कि व्यापक
विषयकी पुस्तक लिखकर उसका संकुचित नाम रखना अच्छा न हुआ
और वह दुःख तभी सेबराबर बना रहा। इतना निश्चय तो हमने उसी
समय करलिया था कि दूसरी आवृत्ति में इसका नाम अवश्यमेव बदल
देना होगा। तदनुसार कुछ और भी इतिहास सामग्री और धार्मिक
विषय मध्य में संगृहीत हुए और पूर्व पुस्तक में उनका भी समावेश
करके प्रस्तुत पुस्तक तैयार की गई है और नाम भी उसीके अनुसार
ब्रह्मर्षि वंश विस्तर रक्खा गया है, जो इस ग्रन्थ के लिये सर्वथा उप-
युक्त है। त्यागियों और गौड़ों के सम्बन्ध आदि का विशेष रूप से इस
बार समावेश किया गया है। यद्यपि बहुत यत्न करने पर भी सार-
स्वतों और महियालों के सम्बन्ध की विशेष बातें इस बार न
दी जासकीं। तथापि आशा है, तीसरे संस्करण में यह कमी भी पूरी
हो जायगी। इस व्यापक नाम से प्रचार भी विशेष होगा, जो पहले
बार इसी कारण नहीं होसका और यही हमारा लक्ष्य है।

स्वामीसहजानन्दसरस्वती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-Mo

Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation,

ublic Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-M

Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयानुक्रमणिका ।

पूर्वार्द्ध—द्विविध ब्रा[illegible] ।

संख्या	विषय	पृष्ठ	पंक्ति
(१)	ब्राह्म[illegible]	१	२०
(२)	(क) धर्मार्थ कर्म ।	४	१३
	(ख) जीविकार्थक कर्म ।	१८	३
	,, (ग) कृषि ।	३८	२७
	,, (घ) राज्य और युद्ध ।	५८	२५
(३)	ब्राह्मणोंके भूमिहार, त्यागी आदि विशेषण ।	७६	६
(४)	आचार व्यवहार ।	१४६	१३
(५)	आस्पद, उपाधियां या पदवियां ।	१५६	१
(६)	विवाह सम्बन्ध, (क) मैथिलसम्बन्ध ।	१६३	१
	,, (ख) सर्यूपारी, कान्यकुब्जसम्बंध ।	१८१	५
	,, (ग) गौड़ सम्बन्ध ।	१९१	१३
(७)	व्यवस्थाएं, सम्मतियां और पत्र आदि ।	२०२	२७
(८)	आईन अकबरी और उपसंहार ।	२४०	६

उत्तरार्द्ध—कण्टकोद्धार ।

(१)	दुरुक्ति दमन ।	२५२	१५
(२)	दौनवार आदि शब्द मीमांसा ।	३०२	५
(३)	वैदेशिक उक्तियां और उपसंहार ।	३३८	२७

पूर्वपरिशिष्ट ।

(१)	स्फुट प्रश्न समालोचना ।	३७४	५
(२)	वंगीय ब्राह्मण सम्बन्ध ।	३८२	११
(३)	आवश्यक कर्त्तव्य ।	३८३	१४

उत्तरपरिशिष्ट ।

(१)	वाटधान ।	४०५	१३
(२)	धर्मारण्य और वाडव ।	४१३	२६
(३)	याचक और अयाचक ।	४१९	१
(४)	आशौच और उसका संकर ।	४२१	१३
(५)	गोत्र, प्रवर और साधारण होम ।	४२६	२१
(६)	ब्राह्मणोंकी पदवियां ।	४३६	३०
(७)	चरम उपसंहार और समर्पण ।	४४०	१

इसके सिवाय किनवार, सकरवार, बेमुवार, बरुवार, कस्तुवार, कुढ़नियां, तटिहा, सोनपकरिया, भृगुवंश, जिझौतिया, दंसवार, एकसरिया, सहदौलिया, जैथरिया, अरापै, पनचोमै, परहापै, सहस्रामै, नोनहुलिया, भरद्वाज, कौशिक, सावर्णियां, नेकतीवार, करमाई और गौतम आदि शब्दों का भी सविस्तर निरूपण है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस ग्रन्थ के निर्माण करने म हम का जि
न किसी रूप में सहायता प्राप्त हुई है उन के हम
उन में से श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य दण्डिस्वामी
सरस्वती, काशी, पण्डित भाईलालदेव शर्मा, दहिया, मुंगेर, उपनाम
मुनिजी, पण्डित रामदास राय मिश्र काव्यतीर्थ, प्रोफेसर भूमिहार
ब्राह्मण कालेज मुजफ्फरपुर और पंडित श्रीराजेन्द्रप्रसादमिश्र, पतोर,
दरभंगा के नाम विशेष उल्लेख योग्य हैं। इन में से प्रथम के दो
सत्पुरुषों ने क्रमशः गौड़, सर्यूपारी सहित कान्यकुब्ज और मैथिल
ब्राह्मणों के साथ के त्यागी, भूमिहार, पश्चिमा, जमींदार ब्राह्मणों के
विवाह सम्बन्ध के विशेष रूप से संग्रह में अमूल्य साहाय्य प्रदान
किया है। पण्डित रामदास राय जी तो इसलिये धन्यवाद के पात्र
हैं, कि प्रायः उन वैदेशिक उक्तियों के संग्रह में, जो द्वितीय प्रकरण
में प्रदर्शित हैं, उन के संग्रह से हम को विशेष सहायता मिली है।
पंडित श्रीराजेन्द्रप्रसाद मिश्र जी ने प्रथम प्रकरण में प्रदर्शित दरभंगा
महाराजाओं के पत्रों और पण्डित प्रवरों की व्यवस्थाओं को संगृ-
हीत स्वरूप में हमें प्रदान किया है। इसलिये उन के प्रति भी हम अपनी
आन्तरिक कृतज्ञता प्रगट किये विना रह नहीं सकते। इसके अतिरिक्त
पण्डित शिवजगतसिंह शर्मा, काशी और पण्डित मथुराप्रसाद शर्मा,
पनासा, प्रयाग के भी हम ऋणी हैं। क्योंकि प्रथम सज्जन ने
अंग्रेजी ग्रन्थों के अवलोकन में हमारे साथ साथ काम किया है
और द्वितीय ने सर्यूपारियों के बहुत से सम्बन्ध नाम बनाम
लिख भेजे हैं।

स्वामीसहजानन्दसरस्वती।

Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयानुक्रमणिका ।

पूर्वार्द्ध—द्विविध ब्राह्मण विचार ।

संख्या	विषय	पृष्ठ	पंक्ति
(१)	ब्राह्मण लक्षण ।	१	२०
(२)	ब्राह्मण धर्म; (क) धर्मार्थ कर्म ।	४	१३
	,, (ख) जीविकार्थक कर्म ।	१८	३
	,, (ग) कृषि ।	३८	२७
	,, (घ) राज्य और युद्ध ।	५८	२५
(३)	ब्राह्मणोंके भूमिहार, त्यागी आदि विशेषण ।	७६	६
(४)	आचार व्यवहार ।	१४६	१३
(५)	आस्पद, उपाधियां या पदवियां ।	१५६	१
(६)	विवाह सम्बन्ध, (क) मैथिलसम्बन्ध ।	१६३	१
	,, (ख) सर्यूपारी, कान्यकुब्जसम्बंध ।	१८१	५
	,, (ग) गौड़ सम्बन्ध ।	१६१	१३
(७)	व्यवस्थाएं, सम्मतियां और पत्र आदि ।	२०२	२७
(८)	आईन अकबरी और उपसंहार ।	२४०	६

उत्तरार्द्ध—कण्टकोद्धार ।

(१)	दुरुक्ति दमन ।	२५२	१५
(२)	दोनवार आदि शब्द मीमांसा ।	३०२	५
(३)	वैदेशिक उक्तियां और उपसंहार ।	३३८	२७

पूर्वपरिशिष्ट ।

(१)	स्फुट प्रश्न समालोचना ।	३७४	५
(२)	वंगीय ब्राह्मण सम्बन्ध ।	३८२	११
(३)	आवश्यक कर्त्तव्य ।	३८३	१४

उत्तरपरिशिष्ट ।

(१)	वाटधान ।	४०५	१३
(२)	धर्मारण्य और वाडव ।	४१३	२६
(३)	याचक और अयाचक ।	४१६	१
(४)	आशौच और उसका संकर ।	४२१	१३
(५)	गोत्र, प्रवर और साधारण होम ।	४२६	२१
(६)	ब्राह्मणोंकी पदवियां ।	४३६	३०
(७)	चरम उपसंहार और समर्पण ।	४४०	१

इसके सिवाय किनवार, सकरवार, बेमुवार, बरुवार, कस्तुवार, कढ़नियां, तटिहा, सोनपकरिया, भृगुवंश, जिझौतिया, दंसवार, एकसरिया, सहदौलिया, जैथरिया, अरापै, पनचोभै, परहापै, सहस्रामै, गोनहुलिया, भरद्वाज, कौशिक, सावर्णियां, नेकतीवार, करमाई और गौतम आदि शब्दों का भी सविस्तर निरूपण है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धन्यवाद।

इस ग्रन्थ के निर्माण करने में हम को जिन सज्जनों की कि
न किसी रूप में सहायता प्राप्त हुई है उन के हम हार्दिक कृतज्ञ
उन में से श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य दण्डिस्वामी पूर्णा
सरस्वती, काशी, पण्डित भाईलालदेव शर्मा, दहिया, मुंगेर, उप
मुनिजी, पण्डित रामदास राय मिश्र काव्यतीर्थ, प्रोफेसर भूमि
ब्राह्मण कालेज मुजफ्फरपुर और पंडित श्रीराजेन्द्रप्रसादमिश्र, प
दरभंगा के नाम विशेष उल्लेख योग्य हैं। इन में से प्रथम
सत्पुरुषों ने क्रमशः गौड़, सर्यूपारी सहित कान्यकुब्ज और मै
ब्राह्मणों के साथ के त्यागी, भूमिहार, पश्चिमा, जमींदार ब्राह्मणो
विवाह सम्बन्ध के विशेष रूप से संग्रह में अमूल्य साहाय्य
किया है। पण्डित रामदास राय जी तो इसलिये धन्यवाद के
हैं, कि प्रायः उन वैदेशिक उक्तियों के संग्रह में, जो द्वितीय प्र
में प्रदर्शित हैं, उन के संग्रह से हम को विशेष सहायता मिली
पंडित श्रीराजेन्द्रप्रसाद मिश्र जी ने प्रथम प्रकरण में प्रदर्शित दर
महाराजाओं के पत्रों और पण्डित प्रवरों की व्यवस्थाओं को स
हीत स्वरूप में हमें प्रदान किया है। इसलिये उन के प्रति भी हम अ
आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट किये विना रह नहीं सकते। इसके अतिरि
पण्डित शिवजगतसिंह शर्मा, काशी और पण्डित मथुराप्रसाद श
पनासा, प्रयाग के भी हम ऋणी हैं। क्योंकि प्रथम सज्जन
अंग्रेजी ग्रन्थों के अवलोकन में हमारे साथ साथ काम किया
और द्वितीय ने सर्यूपारियों के बहुत से सम्बन्ध नाम
लिख भेजे हैं।

स्वामीसहजानन्दसरस्वती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaigaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

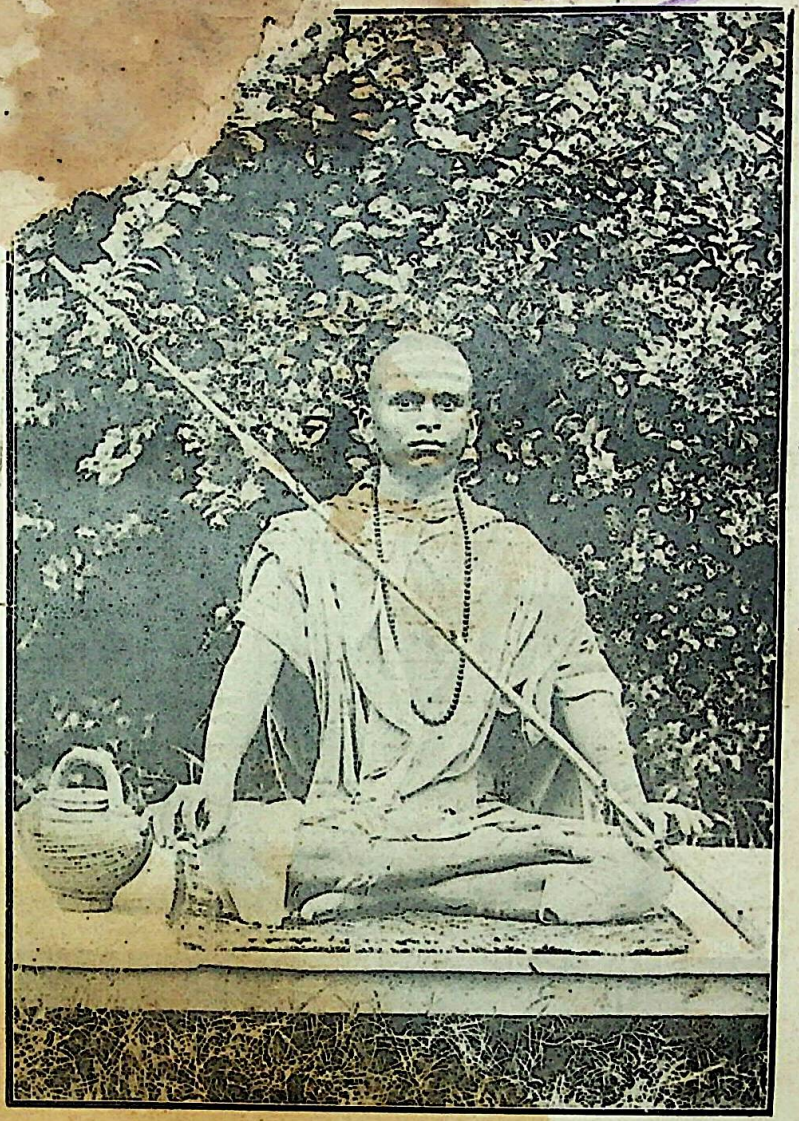

श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य दण्डिस्वामी
श्रीसहजानन्द सरस्वती ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूमिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥

गता गीता शास्त्रं क्वचिदपि पुराणं व्यपगतम् ।
विलीनाः स्मृत्यर्था निगमवचनं दूरमगमत् ॥
इदानीं रैदासप्रभृतिवचनान्मोक्षपदवी ।
न जाने को हेतुः शिव शिव कलेरेष महिमा ॥ १ ॥
विद्वांसो मत्सरग्रस्ताः प्रभवः स्मयदूषिताः ।
अबोधोपहताश्चान्ये जीर्णमंगे सुभाषितम् ॥ २ ॥

आजकाल का समय बहुत ही विलक्षण है। जिधर दृष्टिपात करिये उधरही विचित्र लीलायें दृष्टिगोचर हो रही हैं। 'अपनी २ डफली और अपनी २ गीत' की ध्वनि, जिधर आंख उठाइये और कान दीजिये उधरही, गूंजरही है। सभी लोग डेढ़ चावल की खिचड़ी पका रहे हैं। जो बात सामने आती है उसी का चटपट मनमाना फैसला करदेना प्रत्येक व्यक्ति के लिये एक साधारण बात हो रही है। सभी अपनी २ उच्छृंखल और अनिश्चयपूर्ण सम्मति, हरबात में, देनेको लालायित हो रहे और दे रहे हैं। जिसके मनमें जो ही धुन समाई उसने चट लेखनी उठाई और उसेही लिख मारा। जानने को तो संस्कृत का काला अक्षर भैंस बराबर, परन्तु बड़ी बड़ी व्यवस्थायें लिखी जाने लगी हैं। कोई तो अंग्रेजी की दो चार किताबें पढ़ चट धर्म तथा जाति पांति के निर्णय करने का बीमा उठा लेता है और कोई थोड़ा सा केवल ज्योतिष, व्याकरण अथवा काव्यादि ही पढ़कर पूर्वोक्त विषयों में मनमानी बकने लगता है। आजकल की बड़ी २ समस्यायें शीघ्रबोध और मुहूर्तचिन्तामणि सेही हल होती हैं। पुराणों के आधार पर बड़े बड़े तान टूटते हैं, परन्तु पुराणों में उनकी गन्ध भी नहीं है। कितनेहीं नूतन काल्पनिक पुराणों की रचनायें और तान्त्रिक तथा पौराणिक ग्रन्थों के नाम पर दो चार श्लोकों का जिस किसी विषय में लिखदेना हीं आजकल के प्रखर पाण्डित्य का प्रतिफल है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और इसी टट्टी की ओट में शिकार खेल कर अपने दिलकी पुरानी कान निकाली जाती है, बापदादों के बदले चुकाये जाते हैं। इतनाही नहीं, इन्हीं कल्पित श्लोकों और दोहे चौपाइयोंके आधारपर दूसरे ग्रन्थ बनाये जाते हैं, और उन्हीं के आधारपर तीसरे इत्यादि। वाह रे मानसिक प्रासादकल्पना! बस अब क्या है; इन्हीं कल्पित पोथों को लेकर पण्डित से मूर्ख तक सब विषयों की व्यवस्थायें करने लग जाते हैं। क्या कहें, पढ़े लिखे संसार में हीं अन्धेर मच रही है। चांदनी रातमें भी डाके पड़ना यह विचित्र और अघटित घटना आज देखनेमें आरही है। जिस समाज के लोग आज कल के जैसे चार अक्षर पढ़े लिखे भूत नहीं हैं उसकी तो दुर्दशा है; उसके लिये तो 'अन्धे की गैया, राम रखवैया' की बात है। सुना करते थे कि सरकारी बन्दोबस्त के समय चतुर जमींदार सैकड़ों वर्ष के अनपढ़ और सीधे सादे काश्तकारों को शिकमी लिखा लिया करते थे, या करते हैं। परन्तु वह बात तो आज जाति पांति निर्णय के विषय में आँखों देखी जा रही है। पाठकों को उदाहरणार्थ 'वर्ण विवेक चन्द्रिका' नामक चार पन्ने की पुस्तक का तत्त्व दिखलातेहैं। उसमें लिखा है कि, "पुराणं शूकराख्यं वै तंत्रं भुवलसंज्ञकम्। विलोक्य जातिबोधाय रच्यते वर्णचन्द्रिका ॥ २ ॥" इसका अर्थ यह है कि 'शूकर (वाराह) पुराण और भुवलतन्त्र को देखकर जातियों का ज्ञान होने के लिये, वर्ण (विवेक) चन्द्रिका नामक ग्रन्थ बनाता हूं'। परन्तु यदि ग्रन्थकर्त्ता महाशय के बताये हुए वाराह पुराण को देखिये तो उसमें जाति विचार का गन्ध भी नहीं है, निरूपण तो दूर रहा। जिसको इसकी जांच करनी हो, वह अन्यत्र मुद्रित तथा 'एशियाटिक सोसाइटी' कलकत्ता मुद्रित पुस्तक का अवलोकन करे। उसमें प्रत्येक अध्याय के विषयों का पृथक् सूचीपत्र भी दिया हुआ है और सम्पूर्ण पुराण का सारांश प्रति अध्याय के विषय सूचन द्वारा संक्षिप्त गद्यात्मक संस्कृत के ६० या ७० पृष्ठों में लिखा हुआ है। 'पं० ज्वालाप्रसाद का 'पुराणदर्पण' देखने से भी शीघ्रही उक्त पुराण के विषयों का ज्ञान हो सकता है, और आद्योपान्त पुस्तक देखने से तो शंका भी नहीं रह सकती है। यह तो हुई महाशय जी के बताये पुराण की कथा। अब दूसरे आधार 'भुवल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तन्त्र' को देखिये। प्रथम तो यह नाम हीं विचित्र है। क्योंकि ह्रस्व भु शब्द वाला नाम अप्रसिद्ध है। यदि 'भूवल' ऐसा नाम होवे तो 'बृहज्जोतिषार्णव' ग्रन्थान्तर्गत पृथ्वीनिरूपण प्रकरण में तीन ग्रन्थ इस तरह के मिलते हैं, (१) भूगोल वर्णनाध्याय, (२) भूवल निरूपणाध्याय, (३) मानाध्याय गणित नाममालाध्याय। परन्तु इन ग्रन्थों में जातिनिरूपण का प्रसंगहीं नहीं। इस बात को लोग क्रमिक तीनों नामों, प्रसंग तथा ग्रन्थ नाम से भी अच्छी तरह समझ सकते हैं। साथही, यह भी याद रखना चाहिये कि ग्रन्थ कर्त्ता ने जाति विषयक दो प्रकरण अलगही बनाये हैं, (१) ब्राह्मणोत्पत्तिमार्त्तण्ड, (२) वर्णसंकरजातिनिरूपण। यदि ऐसा कहाजावे कि इस नाम का कोई तंत्र ग्रंथ है। सो भी ठीक नहीं मालूम होता। क्योंकि मिथिला तथा अन्य देशीय बड़े २ पण्डितों और तान्त्रिकों से पूछने पर भी इस नाम के तन्त्र ग्रंथ का पता न लगा। मुद्रित तन्त्रग्रन्थों में तो इसका नाम भी नहीं है। क्योंकि मुद्रित तन्त्र ग्रन्थ ये हैं, (१) आश्चर्य योगरत्नमाला (२) आसुरीकल्प (३) इन्द्रजाल (४) उड्डीश (५) कामरत्न (६) क्रियोड्डीश (७) गुप्तसाधन (८) गौतम (९) गन्धोत्तमनिर्णय (१०) दत्तात्रेय (११) धन्वन्तरि तंत्र शिक्षा (१२) महानिर्वाण (१३) मंत्रमहार्णव (१४) मंत्रमहोदधि (१५) माहेश्वरी (१६) मेरु (१७) योगिनी (१८) योगमाला (१९) वन्ध्या (२०) सिद्धशंकर इत्यादि। इनके अतिरिक्त 'एशियाटिक रिसर्चेज' (AsiaticResearches) नामक अङ्गरेजी ग्रन्थ में, जो सन् १८०१ ई० में छपा है, हिन्दू जातियों के निरूपण प्रकरण के पृष्ठ ६२ में कुछ तन्त्रग्रन्थों के नाम 'दुर्गामहत्त्व' नामक तन्त्र ग्रन्थ के आधार पर गिनाये हैं, जिसका भावार्थ यह है कि '(१) काली (२) मुण्डमाला (३) तारा (४) निर्वाण (५) सर्वरसरण (६) वीर (७) शृंगार्चन (८) भूत (९) उड्डीशान (१०) कालिकाकल्प (११) भैरवीतन्त्र (१२) भैरवीकल्प (१३) तोडल (१४) मातृबृहदश्च (१५) मायातन्त्र (१६) वीरेश्वर (१७) विश्वेश्वर (१८) समय तन्त्र (१९) ब्रह्मयामल (२०) रुद्रयामल (२१) शंकरयामल (२२) गायत्री (२३) कालिकाकुलसर्वस्व (२४) कुलार्णव (२५) योगिनीतन्त्र (२६) महिषमर्दिनी। हे भैरवि! यही तन्त्रग्रन्थ सर्वसाधारण में प्रचलित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं'। इनके अतिरिक्त तन्त्रग्रन्थों का पता नहीं चलता। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि जाति निरूपण का जहां कहीं प्रसंग आया है, चाहे संस्कृत, हिन्दी अथवा अंग्रेजी ग्रंथों में, वहां केवल रुद्र यामल का ही लोग नाम लेते हैं। इससे यही स्पष्ट झलकता है कि जैसे वाराहपुराण का नाम ग्रन्थकर्त्ता महाशय ने झूठ मूंठ लिया है वैसे ही या तो तंत्र ग्रन्थ का कल्पित नाम रख दिया है, अथवा यदि ऐसा ग्रन्थ कहीं पर्वतादि के गुफाओं में मिले भी तो उसमें जाति का विचार नहीं है। उसका नाम यों हीं धोखा देनेके लिये लिया गया है। सब से बड़ी बात तो यह है कि 'वर्णविवेक चन्द्रिका' बहुतही अल्प काल हुए वेंकटेश्वर प्रेस में छपी है। यदि ग्रन्थकार को अन्य ग्रन्थों का प्रमाण देना था, तो उनके अध्याय आदि का तो नाम, कम से कम, दे देते। क्योंकि आजकल की प्रथा ऐसी हो है। परन्तु उन्हें तो लोगों को भुलावा देना था, इसलिये तन्त्रगन्थका नाम लिया। क्योंकि वे आजकल प्रायः अप्रचलित हैं, इसलिये झुठाई का पता न लगेगा। परन्तु यदि इस प्रकार से लिखना हो तो जिस किसी के भी विषय में तन्त्रादि के नाम से बहुत से कल्पित श्लोक आदि कहे जा सकतेहैं, जिससे हाहाकार मचने के सिवाय और कुछ नहीं हो सकता है। ऐसे ही स्वार्थान्ध और दुर्बुद्धि महाशयों ने पुराण आदि का नाम भी बदनाम करदिया है। अतः उधर से लोगों को अश्रद्धा होने लग गई है। अस्तु, इसी वर्णविवेक-चन्द्रिका के आधार पर पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र ने 'जातिनिर्णय' नामका ग्रन्थ बनाया है। या यों कहना चाहिये कि भाषा में उसकी टीका करके कुछ इधर उधर से भी उसमें पेवन्द लगा दिया है। उस ग्रन्थ में आप बहुत जगह लिखते हैं कि 'इति वर्णविवेकचन्द्रिका'। क्या वर्णविवेक चन्द्रिका भी कोई आर्ष ग्रन्थ है जिससे वह भी स्वतंत्र प्रमाण मानी जावे? तो फिर कबीर साहब की साखी और दादू साहब की बानी तथा गुलबकावली आदि को भी क्यों न मानेंगे? बल्कि बाइबिल और कुरान को भी मान कर जांति पांति को ही धो देना चाहिये। यदि संस्कृत श्लोक या गद्यों हीं पर अन्ध विश्वास होवे तो बाइबिल आदि का भी संस्कृत अनुवाद सन्तोष के लिये मिल सकता है। जातिनिर्णय ग्रन्थ को बनाकर विद्यावारिधिजी ने अपनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विद्यावारिधिता का खूब ही परिचय दिया है ! यदि वर्ण विवेक चन्द्रिका के श्लोकोंको पुराणादिकेवाक्यों द्वारा प्रमाणित कर देते तो और भी आप का यश नभोमंडल में छा जाता। परन्तु दुर्भाग्य हमलोगों का कि वारिधि मिलने पर भी प्यासे ही रहना पड़ा ! वारिधिजी की ज्वाला का विशेष परिचय आगे इस ग्रंथ में हीं कराकर आपका तथा वर्णविवेकचन्द्रिकाकार का विशेष परिचय वहीं देंगे। दूसरी पोथी 'भूमिहारोत्पत्ति' नाम की लक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बम्बई में छपी है, जिसके अन्त में लिखा है कि 'इति श्रीस्कन्दपुराणे पातालखण्डे धर्मारण्यमाहात्म्यवर्णने भूमिहारोत्पत्तिवर्णनं नामैकादशोऽध्यायः'। बस, अब क्या है, लोग देखते ही समझलेंगे कि जिस विषय में ग्रंथ और उसके अध्याय आदि तक लिखे हुये हैं उस विषय की पोथी कब झूठी हो सकती ? परन्तु यदि स्कन्दपुराण में ऐसी पंक्ति ११ वें अध्याय में या अन्यत्र देखकर कोई इस ग्रंथ की सत्यता की परीक्षा करना चाहे तो सिवाय पोल खुलने के और कुछ हाथ न लगेगा। प्रथम तो प्राचीन हस्तलिखित स्कन्दपुराण में इन सब विषयों का जिक्रही नहीं है। वहां तो धर्मारण्यखण्ड में अथवा ब्रह्मखण्ड में प्रदोष, शिवरात्रि आदि का निरूपण है। रह गई स्कन्दपुराण के नाम से वेंकटेश्वर प्रेस में छपे पुराण की बात। उसके भी १० वें अध्याय में गोभुज बनियों का वर्णन तो अवश्य है परन्तु न तो उसमें कहीं भूमिहार शब्द ही आया है और न इस विषय का कुछ पता ही है और अन्त में ऐसा भी नहीं लिखा है जैसा कि 'इति श्रीस्कन्दपुराणे' इत्यादि ऊपर दिखलाचुके हैं। साथ ही उसमें भी जो बहुतसे कुचर इत्यादि शब्द और श्लोक मिलाकर मनमाना अर्थ किया है, उसका पर्दाउखेड़ प्रसंगवश पुस्तक में हीं करके ग्रन्थकार का पूर्ण परिचय देंगे। ऐसा ही 'जगतराय दिग्विजय' नामक ग्रन्थ में भी विना प्रसंग के ही झूठमूंठ कुछ लिख मारा है। क्योंकि जिस 'जगतराय' का दिग्विजय उसमें वर्णित है वह कोई ऐसा प्रतापी राजा नहीं हुआ है, जिसके यहां काशिराज मिलने को गये थे। और जो तिथि जगतराय के काशी में आने की उसमें लिखी है उस समय काशी में कोई हिन्दू राजा ही नहीं था। इस बात को ग्रन्थ में ऐतिहासिक प्रमाणों द्वारा दिखलाकर उस ग्रन्थ के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain: Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाक्यों की भी कठिन समालोचना की जावेगी। अन्त में मैं दो एक हिन्दी के ऐतिहासिक ग्रन्थों का दिग्दर्शन कराकर इस विषयको यहीं आगे के लिये छोड़ना चाहता हूं। पहला ग्रन्थ 'विशेनवंश वाटिका' नामका है, जो खड्गविलास प्रेस में १८८७ में छपा है। इसके विषय में इस जगह मुझे यही कहना है कि उस ग्रन्थ के नाम पर ग्रन्थकर्त्ता को केवल अपनी योग्यता की नोटिस देनी थी; क्योंकि ग्रन्थ के टाइटिल पेज पर आपने अपने सारे विशेषण लिखे थे ही, फिर उन्हींकी आवृत्ति ६० वें पृष्ठ से लेकर प्रायः दो परिच्छेदों में की। परन्तु जब उस से भी सन्तोष न हुआ तो पुस्तक के अन्त में भी अपनी प्रशंसा की बहुत सी सनदें पेश कर डालीं। दूसरी बात यह है कि आप उसी पुस्तक के ४५,४६ पृष्ठों में लिखते हैं कि 'शंकर दिग्विजय से स्पष्ट जाना जाता है कि मयूरभट्ट ही के समय में शंकराचार्य भी उत्पन्न हुये थे और शंकराचार्य को एक हजार वर्ष से कम न हुये, इसी से मयूरभट्ट के भी समय का अनुमान किया जा सकता है'। और फिर ५३ से ५५ पृष्ठ तक मयूरभट्ट से लेकर ११४ राजाओं की वंशावली लिखी है और इस विषय में ईलियट साहब की भी सम्मति पृष्ठ ४६ में दिखलाई है कि 'वर्तमान राज्यकर्ता मयूरभट्ट से ११५ पीढ़ी में है'। पाठक, इस जगह ही ग्रन्थकर्त्ता महाशय की सुबुद्धिका पता लगाकर सम्पूर्ण ग्रन्थ की बातों की सचाई झुठाई समझ सकते हैं। बात यह है कि मयूरभट्ट से आज तक ११५ राजाओं को गिना कर भी उनका समय १००० वर्ष बताना, या उसे बताकर उन राजाओं को गिनाना उनको अलौकिक बुद्धिमत्ता का फल नहीं तो और क्या हो सकता है? नहीं मालूम कि ग्रन्थ लिखने के समय दिमाग आकाश में चक्कर लगा रहा था या और कहीं गया था। ऐसी दशा में उनकी पवित्र लेखनी से जो कुछ भी न लिखा गया होवे उसी में आश्चर्य है। एक जगह आप लिखते हैं कि 'यह महाशय (मयूरभट्ट) उसी ऋषिकुल के हैं, जिस ब्रह्मवंश में द्रोणाचार्य, भीष्माचार्य और रामाचार्य हुये।' वाह २ क्याही बुद्धिमत्ता है? मयूरभट्ट वत्सगोत्री भृगु, वत्स, च्यवनादि के वंश में हो सकते हैं। परन्तु द्रोणाचार्य जी का भारद्वाज गोत्र था, क्योंकि महाभारत आदिपर्व १६८ वें अध्याय में भरद्वाज से घृताची अप्सराद्वारा उनकी उत्पत्ति लिखकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिखा है कि 'वनन्तु प्रस्थितं रामं, भरद्वाजसुतोऽब्रवीत् । आगतं वित्तकामं मां विद्धि द्रोणं द्विजोत्तम ' ॥ ६ ॥ अर्थ यह है कि 'जब परशुरामजी पृथिवी को निःक्षत्रिया करके उसे कश्यपादि ब्राह्मणों को देकर वन जाने लगे तब भरद्वाज के पुत्र ने उनसे जाकर कहा कि हे द्विजोत्तम! मैं द्रोण हूं और धन की इच्छा से आया हूं'। फिर दोनों एक कुल के कैसे हुये? उसपर भी तुर्रा यह है कि उसी वंश में क्षत्रियवंशोद्भव भीष्मपितामह तथा श्रीरामजी को भी आप लिखरहे हैं। वाह २ क्याही अच्छा शास्त्र तथा व्यवहार का परिशीलन है! एक जगह आप लिखते हैं कि यद्यपि मिस्टर ईलियट के कथनानुसार मझौलीराज्य मयूरभट्ट ने हीं प्राप्त किया। परन्तु पुराने कागजोंसे विशेन का ही प्राप्त करना सिद्ध होता है। तथापि यह विरोध ऐसा नहीं है जिससे अर्थभंग हो। एकतो आपको ऐसी दशा में, जबकि प्रबल इतिहासज्ञ अंग्रेज के साथ विरोध पड़ता है तो जैसे ग्रन्थान्त में आपने अपनी सनदें पेश की हैं वैसे ही उस कागजी प्रमाण को भी लिख देना था। क्योंकि आपके निज के सार्टिफिकेट से वह अधिक उपयोगी है। परन्तु आपके पास तो कुछ है नहीं। केवल जगह २ कागजी प्रमाण कह कर लोगों को डरवाते और श्रद्धा पैदा करना चाहते हैं। दूसरे यदि ऐसे विरोध से ऐतिहासिक अर्थ का भंग नहीं तो आप भंग मानते हैं किससे? एक दूसरे से बिल्कुल विरुद्ध कहे और फिर भी अर्थभंग नहीं? बस, इसे यहीं रहने देते हैं। अवशिष्ट वक्तव्य प्रसंग वश आगे प्रकाशित करेंगे। क्योंकि बुद्धिमान इतने हीं से उस ग्रन्थ की बातों का तत्त्व जान गये होंगे। दूसरा ग्रन्थ निरंजन मुखोपाध्याय रचित 'भारतवर्षीय राजदर्पण' है। यद्यपि इस ग्रंथ की बातों का खण्डन आगे करेंगे। परन्तु उसका परिचय इसी जगह करादेना उचित होगा। ग्रन्थावलोकन से यह स्पष्ट झलकता है कि उसका लेखक काशिराज का निपट द्रोही था। अतएव जिस किसी ग्रन्थ में भी उनकी प्रशंसा की बात लिखी गई है वह चाहे कितनी हीं सत्य क्यों न हो, उसपर आक्षेप करना उसका मुख्य उद्देश्य प्रतीत होता है। बनारस सूबे के इतिहास का जो प्रथमखण्ड आयरलैंड के इनवर्नेस प्रदेश में छपा है और जिसके प्रत्येक पृष्ठ में हर बातों पर सर्कारी कागजों का नोट दिया हुआ है, उसके विषय में यदि कुछ भी बुद्धि न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चली है तो भूमिका पृष्ठ ४ में लिखदिया है कि महाराज ईश्वरीप्रसाद नारायणसिंह ने अपने वंश को बढ़ाकर लिखवाने के लिये उसे छपवाया है और कहीं २ वार्नहेस्टिंग्ज के समय के कागजों से उसके प्रमाणित करने की चेष्टा कीगई है। यह लेख कहांतक सत्य है वह उस पुस्तक के ही देखने से विदित हो जायगा। फिर आगे भूमिका पृष्ठ ५ में आप लिखते हैं कि 'जब से मनसाराम मझवा ग्राम के पहलवान सिंह की नौकरी छोड़कर आधे ग्राम के चतुर्थांशके एक अंश की मलिकाई से ऊँचे दर्जे पर चढ़े, तब से उन्होंने और उनके वारिसोंने सब तरह से स्वाधीन राजाओं के माफिक इज्जत के लिये कोशिश की हैं, लेकिन उसे सर्कार बृटिश गवर्नमेन्ट ने कभी मंजूर नहीं किया है'। देखिये, इन कलुषतापूर्ण शब्दों से कैसा द्वेष झलकता है? विवेकी ऐसे शब्दों का प्रयोग कभी नहीं कर सकते। बृटिश गवर्नमेन्ट ने इसको कभी नहीं स्वीकार किया है, यह कहना तो उन्हीं महाशय को शोभादेता है। क्योंकि यदि गवर्नमेन्ट उसे न मानती तो द्विजराज महाराज काशिराज को स्वतंत्र क्यों कर देती? हां, जब तक महाराज ने न चाहा था तब तक गवर्नमेन्ट को इससे मतलब ही क्या था कि उनको स्वतंत्र राजा कहती फिरे? उसी जगह आपने फिर लिखा है कि 'वार्नहेस्टिंग्ज ने भी राजा चेतसिंह के साथ बराबर वैसा ही बर्त्ताव किया था जैसा जमीन्दार के साथ करना चाहिये'। परन्तु जब आपने राजा चेतसिंह के बारे में कौंसिल में वार्नहेस्टिंग्ज द्वारा कही हुई बातों का पृष्ठ २१ में उल्लेख किया है तो वहां लिखते हैं कि 'हेस्टिंग्ज साहब ने कहा कि राजा के साथ एक निरूपित मालगुजारी पर इस्तमरारी बन्दोबस्त किया जावे और उनके इलाकों के तमाम एखतियार उन्हें दे दिये जावें, जिसमें किसी तरह से पीछे उस पर दस्तंदाजी करने का एखतियार न रहजावे और इलाके में रेजिडंट भी न रहे। वे कम्पनी को पटने के इलाके में मालगुजारी दाखिल किया करें। क्योंकि रेजिडंट मोकर्रर होने से वे राज्य और राजा पर अपना एखतियार जारी करने की कोशिश करेंगे और उसमें राजा के साथ उनका विवाद हो कर कौंसिल में हमेशा नालिश आया करेगी, जिसमें रेजिडंट की बात में निःसन्देह विश्वास करके राजा के विपक्ष में सब फैसला होवेगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और पश्चात् एतद्द्वारा उनका सब नुकसान करके 'उनको साधारण जमींदार की अवस्था में घटा ले आवेगा'। साथही, आप राजा चेतसिंह की सनद पेश करते हुए उनके दीवानी आदि के अधिकारों को भी स्वीकार करते हैं। फिर यह लिखना कि वार्नहेस्टिंग्ज का व्यवहार उनके साथ साधारण जमींदारों का सा था कितनी बड़ी धृष्टता और द्वेष का फल है? आप सुबहानअली के बलवंत नामे की निन्दा करते हैं; क्योंकि उससे काशिराज के महत्त्व की सूचना होती है। इसीलिये उसपर दिलोजान से रंज हैं। परन्तु खैरुद्दीन के बलवन्तनामे की आपने खूब प्रशंसा की है और उसे प्रामाणिक भी ठहराया है। तौभी कई जगह उसके भी विरुद्ध लिखकर काशिराज की निन्दा करने से न हटे। दृष्टान्त के लिये हम रुस्तम अली के मामिले को उपस्थित करते हैं। पृष्ठ६ में आप लिखते हैं कि 'सन् १७३४ ई० में जब अवध के नवाब ने रुस्तम अली पर खफा होकर उन्हें बनारस से निकालने के लिये अपने नायब सफदर जंग को भेजा, तो रुस्तम अली ने मनसा राम को अपनी तरफ से उनको मनाने के लिये जौनपुर भेजा। परन्तु मनसाराम ने अपने मालिक के साथ दगाबाजी कर के सफदर जंगके पास से बनारस, जौनपुर और चुनार के परगने अपने बेटे बलवन्तसिंह के नाम बन्दोबस्त करवालिये' इत्यादि। अच्छा, अब खैरुद्दीन के बलवन्तनामे को देखिये, जो गवर्नमेन्ट प्रेस प्रयाग में १८७५ ई० में छपा है। उसके ८ और ९ पृष्ठों में लिखा है कि, "However, in 1150 Hijree, being summoned by the Emperor Mahomed Shah to Delhi, he went, leaving his son-in-law, Nawab Abdul Munsur Khan, as his deputy. The enemies of Roostum Alee, finding this an opportunity, poured their complaints and accusations into the ears of Sufdar Jung, asserting that Roostum Alee paid no attention to state business, but spent all his time in pursuit of pleasure; that he entertained enmity towards the servants of the state and meditated encroachment on the prerogative of Meer Murtaza; and thus they succeeded in causing Sufdar

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Jung to mistrust him. When Nawab Abdul Munsur Khan got wind of these accusations, he became greatly irritated and at once started from Fyzabad to inflict chastisement. When he had reached Jaunpore, the well-wisher of Roostum Alee, who always had a spite against Munsaram, insinuated that he was the originator of all this ill-feeling; that openly he professed friendship but in his heart was contriving schemes to injure; and that he it was who had excited Sufdar Jung against him (Roostum Alee). Roostum Alee was thunder-struck at hearing all these stories and asked Raja Munsaram what they meant. Munsaram, a clever and open-minded man, assured Roostum Alee that it was impossible for him, whom he had raised from nothing, to be guilty of such treachery, and that it was merely the invention of enemies who were envious of Roostum and also wished to injure him (Munsaram). To this Roostum Alee replied that if such was really the case, some steps must be taken to induce Sufdar Jung to return at once from Jaunpore to Fyzabad. Munsaram answered that any direct application to that effect would not do; but if Roostum would permit, he himself would proceed to the Nawab by making things smooth with the Nawab's ministers and presenting gifts to remove his suspicions; but he added that he felt doubtful about Roostum's feelings towards him while absent; that it was likely his enemies would take this chance of misrepresenting all his actions, and thus cause a coldness to arise between them in which case his efforts would be fruitless. Roostum Alee approved of Munsaram's plan, and assuring him

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

of the continuance of his friendship, sent him with costly presents to the Nawab. Rajah Munsaram, on his arrival at Jaunpore and obtaining an audience, laid these presents from Roostum Alee before the Nawab, and by his address and knowledge of affairs, completely cleared the mind of the Nawab from the doubts he had regarding Roostum Alee, and brought him to look again with favour upon the latter. During the discussions about these affairs, Munsaram had offered an increase of *Four Lakhs* of rupees in revenue, if the four Surkars were continued to Roostum Alee, when a letter came from Boorhanoolmoolk to Sufdar Jung to the effect that the Ghazipur province was to be given to Sheikh Abdoollah. Munsaram, on hearing of this project, without consulting Roostum Alee strongly objected and the argument between the Nawab' sministers and Munsaram waxed hot on the point, when suddenly Sheikh Abdoollah appeared on the scene and bid eight lakhs additional for the four Surkars. Munsaram's enemies about Roostum Alee represented to him that all these proceedings were merely dodges of Munsaram, and succeeded in causiug Roostum Alee to suspect him. An angry correspondence then began. Roostum showed displeasure openly to Bulwant Singh who was at his court, and permitted the enemies of Munsaram to attend and take part in his councils. By their advice, he sent another envoy to the Nawab, who was directed to carry on the negotiation, without consulting Munsaram, through some of the Nawab's ministers, and by no means to allow Munsaram to interfere. These things were soon known to Munsaram and

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

grieved him greatly: he consulted those of his friends who were at Nawab's court, and was advised by them that, since his principal had thrown him over, his best plan was to act for himself in the business to spend money, and court the favour of the Nawab. Accordingly, as he fully perceived that his power in the country, and influence with Roostum Alee would go with his loss of favour, and not liking to fall back into a position of inferiority, he made overtures to Nawab's ministers and obtained their consent to getting the three Surkars by paying 13 Lakhs of rupees revenue...".

भावार्थ यह है कि "११५० हिजरी अर्थात् १७३२ ई० में बादशाह मुहम्मद शाह के बुलाने से नवाब सआदत खां अपने दामाद अब्दुल मंसूर खां (सफदरजंग) को अपना नायब बनाकर दिल्ली चला गया। यह मौका पा रुस्तम अली के शत्रु सफदर जंग के कानों में शिकायतें यह कह कर भरने लगे कि रुस्तम अली राज्य कार्य की ओर कुछ भी ध्यान नहीं देता, विषयासक्ति में अपना सब समय बिताता, राज्य के नौकरों से शत्रुता रखता और मीरमुर्तजा के अधिकारों को दबा लेने के लिये सोचा करता है। इस प्रकार से उन्हों ने सफदरजंग के दिल में रुस्तमअली की ओर से अविश्वास पैदा कर दिया। जब नवाब सफदरजंग (अब्दुल मंसूरखां) के पास ये शिकायतें पहुंचीं तो वह बहुत ही रंज हुआ और तुरन्त रुस्तमअली को दण्ड देनेके लिये फैजाबाद से रवाना हुआ। जब वह जौनपुर पहुंच गया तो रुस्तमअली के खैरख्वाह ने, जो मनसाराम से सदा से विरोध रखता था, धीरे से यह उसकाया कि मनसारामहीं इस शत्रुता का कारण है। गोकि बाहर से वह मित्रता सूचित करता है परन्तु हृदयमें आपके सताने की युक्तियां सोचा करता है। यही, शख्स है जिसने सफदरजंग को आपके विरुद्ध उभाड़ा है। रुस्तमअली इन बातों को सुन कर भौंचक सा रहगया और उसने मनसाराम से पूछा कि इन सब बातों का अर्थ क्या है? मनसाराम ने, जो कि चतुर और प्रतिभाशाली पुरुष था, रुस्तमअलीको निश्चय करवाया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि उस मेरे लिये इन सब छल कपटों का अपराधी होना असंभव है, जिसे आपने एक तुच्छ दर्जे से ऊंचे दर्जे पर चढ़ाया है। यह केवल शत्रुओं की मिथ्या कल्पना है, जो आपके द्वेषी हैं और मुझे भी सताना चाहते हैं। इस पर रुस्तम अली ने उत्तर दिया कि यदि सचमुच यह बात है तो सफदरजंग को जौनपुर से फैजाबाद तुरन्त लौट जाने को रुजू करने के लिये कोई उपाय करना चाहिये। मनसाराम ने कहा कि इस विषय में सीधा यत्न कुछ काम न करेगा। लेकिन यदि आप आज्ञा देवें तो मैं स्वयं नवाब के मंत्रियों से मिलकर नवाब के पास जाऊं और उसे नजर देकर उसके संदेह दूर करूं। लेकिन अपनी अनुपस्थिति में मुझे अपने साथ आप के बर्ताव का सन्देह है; क्योंकि यह हो सकता है कि ऐसे समय में मेरे शत्रु मेरे सब कामों को आपकी दृष्टि में उलटा जँचा देवें और इस तरह से मेरे आपके बीच मनोमालिन्य पैदा करदेवें; जिस दशा में मेरा यत्न निष्फल हो जायगा। रुस्तमअलीने मनसाराम के उपाय को पसंद किया और अपनी मैत्री के स्थिर रखने का विश्वास दिलाकर बहुतसी बहुमूल्य भेंट के साथ मनसाराम को रवाना किया। मनसाराम ने जौनपुर पहुंच अवसर पाकर दर्बार में इन सब भेंटों को नवाब के सामने रख दिया और अपनी बातचीत और व्यवहार-कुशलता से नवाब के चित्त को रुस्तमअली सम्बन्धी सब संदेहों से बिल्कुल रहित कर दिया और रुस्तम पर उसकी कृपादृष्टि उत्पन्न करदी। जब कि इसी विषय के विवाद के समय मनसाराम ने कहा कि यदि चारों सरकारें रुस्तमअली के ही अधिकार में रहने दी जावें तो मैं चार लक्ष अधिक दूंगा, उसी समय एक पत्र बुरहानुल मुल्क (सआदत खां) के पास से सफदरजंग के नाम इस बात का आया कि सूबा गाजीपुर शेख अब्दुल्ला को दिया जावेगा। जब मनसारामको यह मालूम हुआ तो रुस्तमअली से पूछे बिना हीं इस बात को उसने बहुत ही रोका और मनसाराम तथा नवाब के मंत्रियों के बीच इस विषय पर बहुत कड़ा वादविवाद हुआ। परन्तु उसी समय अकस्मात् शेख अब्दुल्ला पहुंच गया और उसने चारों सरकारों के लिये ८ लाख और देने को कहा। इसी समय मनसाराम के शत्रुओं ने रुस्तम से कहा कि ये सब कार्रवाइयां केवल मनसाराम के ही छल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं और ऐसा कहकर रुस्तमअली का उसकी ओर से शक पैदा कर दिया। उस समय चिढ़ा चिढ़ी की लिखा पढ़ी होने लगी। रुस्तम ने बलवन्तसिंह के प्रति, जो उस समय दर्बार में उपस्थित थे, अपनी अप्रसन्नता सूचित की और मनसाराम के शत्रुओं को दर्बार में भाग लेने और उपस्थित होने की आज्ञा देदी और उन लोगों की राय से दूसरा राजदूत नवाब के पास भेजा, जिसको समझा दिया कि विना मनसाराम के पूछे ही नवाबके कुछ मंत्रियों द्वारा बात चीत करे और किसी प्रकार से भी मनसाराम को दखल देने न देवे। जब यह बात मनसाराम को मालूम हुई तो उसको बहुत ही दुःख हुआ। उसने अपने मित्रों, से जो कि नवाब के दर्बार में थे, सलाह की। उन्हों ने राय दी कि, जब कि आपके मालिक ने आपको बेइज्जत या अलग कर दिया, तो आपके लिये सबसे अच्छी बात यह है कि अब अपने हीं लिये इस विषय में यत्न करें, रुपये खर्चें और नवाब को अपने पक्षमें लावें। इसीके अनुसार, जब कि मनसाराम ने भी खूब विचार किया कि मेरे ऊपर रुस्तम की नामिहर्बानी के साथ उसके ऊपर मेरा प्रभाव और देश के ऊपर अधिकार भी जाता रहेगा और तुच्छ होकर रहना भी अच्छा नहीं है तो, उसने नवाब के मंत्रियों से बात चीत की और १३ लाख रुपये मालगुजारी पर तीनों सरकारों के पाने की मंजूरी उसने कर ली।"

बस, अब पाठक लोग ही निरंजनमुखोपाध्याय की दी हुई इस मामिले की तारीख और इस मामिले का मिलान कर लेवें। आप ने यह भी भूमिका ही में लिख दिया है कि खैरुद्दीन ने चेतसिंह के परमविश्वासी बाबू औसानसिंह की जो शिकायत की है उसे छोड़कर और सब कुछ उनका लिखा ठीक है। परन्तु आगे चलकर आपही लिखते हैं कि बनारस राज्य के असली अधिकारी मनिहारसिंह को छल कपट से हटाकरही औसानसिंह ने चेतसिंह को राजा बनाया। दूसरी जगह और भी लिखते हैं कि वारनहेस्टिंग्ज की तरफसे २००००००) के लिये हुकुम आदि जारी करवाना बाबू औसानसिंह का ही छल तथा द्वेष था। क्योंकि उनको गद्दी दिलवाकर उनके ऊपर वे अपना अधिकार आदि ऐसमाने की इच्छा किये हुये थे। भला इसको निन्दा नहीं कहते हैं तो क्या कहते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं ? बलिहारी है ऐसे पूर्वापरविरुद्ध लेखक की बुद्धि की ! आप लिखते हैं कि मनसाराम ने बलवंतसिंह के साथ १७३८ ई० में धूम धाम से राजा के ठाठबाट में काशी में प्रवेश किया । परन्तु उसी बलवन्तनामे के १० वें पृष्ठ में लिखा है कि 'Rajah Munsaram arrived at Benares on the 21st day of the month Safar in the year 1151 Hijree, and and at once entered upon the Government of his three provinces...' अर्थात् 'राजा मनसाराम ११५१ हिजरी (सन् १७३३ या ३४) के सफर महीने की २१ वीं तारीख को बनारस पहुंचे और उसी समय अपने तीनों सरकारों के राज्य पर अधिकार किया इत्यादि' । इसीसे विचारा जा सकता है कि ऐसे लेखक महाराज द्विजराज श्रीकाशिराज, अथवा भूमिहार ब्राह्मण समाज मात्र के विषय में, या दूसरों हीं के विषय में जो कुछ न लिख डालें उसी में आश्चर्य है। परन्तु उनकी बातें कहाँ तक सत्य हो सकती हैं, इसके कहने की अब आवश्यकता नहीं है। विशेष रीति से निरंजनमुखोपाध्याय के वाक्यों का विचार ग्रन्थ में हीं चलकर करेंगे। आश्चर्य तो इस बात का है कि ऐसे आदमियों के वाक्यों को भी ऋष्यादि वाक्यों की तरह प्रामाणिक मान और हवाला देकर बाबू हरिश्चन्द्र ऐसे लेखक भी अकांड तांडव करने में न चूके। नहीं तो भला बताइये, मुद्रा राक्षस की टीका करने में भूमिहार ब्राह्मणों की उत्पत्ति लिखकर राक्षसी मुद्रा दिखलाने की क्या आवश्यकता थी ? यदि हंसुए के व्याह में खुरपे की गीत ही गानी थी तो आप ने अपने हीं घर का विचार करके सन्तोष क्यों न कर लिया ?

बाबू रामदीन सिंह तो उनके गहरे चेले ही थे; अतः उनसे भी बिहारदर्पण में गुरुजी का अनुसरण किये बिना रहा न गया। क्या बिहार में आपका और गुरुजी का वंश नहीं है ? यदि बड़े भारी योग्य हुये तो घर तथा गुरुघराने के ही इतिहास भवन में दीपक क्यों न जलाया ? यदि हम भी 'शठे शाठ्यं कुर्यात्' के अनुसार ऐसा ही करने लगजावें तो जीतों के कौन कहे मरे हुओं के भी कलेजे फटजावें, और हाहाकार मचजावे । परन्तु हमको इस व्यर्थ तथा निष्प्रयोजन झगड़े से मतलब ही क्या है ? बहुतसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे सिर पैर की तथा द्वेषपूर्ण व्यर्थ बातोंका लिखना एवं निष्प्रयोजन किसी का कलेजा दुखाना आप जैसे ही सत्पुरुषों को मुबारक हो। बस, यहां पर इतना हीं। आप लोग घबड़ायें न। आप लोगों का विशेष विचार प्रकृत विषय को लेकर ग्रन्थ में हीं किया जावेगा।

एक और महात्मा का नाम प्रसंगवश याद आगया। अतः पाठकों को उनका भी कुछ परिचय करा देना उचित समझता हूँ। आपका शुभ नाम था पं० दुर्गादत्त परमहंस। आप डुमरांव के निवासी थे और अपने विषयमें बहुत डींगें हांका करते थे, जैसा कि आपने अपने दिग्विजय में भी लिख, लिखा दिया है। आप अपनी दिग्विजयनाम्नी उस पुस्तिका में जगत्प्रसिद्ध धुरन्धर विद्वानों की भी अवलेहना करने में न चूके। आप लिखते हैं कि हमने श्रीयुक्त गंगाधर शास्त्री, श्रीयुक्त राजाराम शास्त्री तथा श्रीबालशास्त्री प्रभृति गणनीय विद्वानों को परास्त किया। भला, इतने हीं अल्पकाल की बात की ऐसी बनावट! आपने इसके गवाह न लिख दिये, जिससे सम्भवतः किसी को शंका होती तो मिट जाती। ऐसा करने में शायद आप समझते थे कि हाल की बात है। इसलिये ढकी ढकाई बातों का भंडा फोड़ हो जावेगा तो फिर चेलों में अप्रतिष्ठा हो जावेगी। यदि आप ऐसे अद्वितीय विद्वान थे तो आप की प्रसिद्धि ब्रह्माण्डान्तर तक होनी चाहिये थी; क्योंकि पं० बालशास्त्री आदि को ही समग्र भारत वर्ष जानता है और ठहरे आप उनके विजेता! परन्तु शोक है कि आपको तो दूसरे जिले के भी लोग प्रायः न जानते होंगे।

एक बात और भी आप लिखते हैं कि उनके ही समय में भोजेन्द्र नाम का राजा डुमरांव में था जो प्रति नूतन श्लोक के लिये एक लाख मुद्रा देता था इत्यादि। भला इस बात का कोई ठिकाना है? उस समय तथा पूर्व और बाद के डुमरांवनरेशों को कौन नहीं जानता? आप समझते थे कि भारतवर्ष भोलाभाला ही है। हमारे बराबर भी किसी को सुबुद्धि नहीं है। सब लोग भोज के नाम पर ही भूल जावेंगे। इसीलिये सरासर असत्य भाषण में जरा भी न हिचके। आप ने अपनी परमहंसता खूब ही दिखलाई! अब, ऐसे महात्मा पुरुष जिस किसी के विषय में जो कुछ लिख देंगे उसमें कितना लेश सत्यांश का होगा इसे बुद्धिमान लोग स्वयं समझ लेंगे। आपकी विशेष लीला आगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आपके बनाये भानमती के पिटारे को ही खोलकर दिखलावेंगे।

यह तो हुई संस्कृत और हिन्दीदांओं की विचित्र कथा। अब अंग्रेजीदांओं का भी थोड़ा परिचय कर लीजिये। आजकल के लोग परछिद्रान्वेषण में बहुत तत्पर हो रहे हैं और 'अपना ढेंढ़र न देख कर दूसरे की फुल्ली निहारने' वाले किस्से को चरितार्थ करने में जरा भी संकोच नहीं करते। बस चट पट किसी अंग्रेज की बनाई किताब की दो चार बातें किसी जाति के विषय की देखकर तदनुसार ही फोनोग्राफ की तरह स्वर भरने लग जाते हैं। इतना भी नहीं विचारते कि मेरे विषय में उन्हीं अंग्रेजों ने क्या लिखा है, उसे भी तो जरा देखलूं। उन्हें इससे मतलब ही क्या है? दूसरे की झूठ मूँठ हँसी ठट्ठा करके केवल अपने पवित्र चित्त को सन्तुष्ट करना है। उन्हें बकरे की जान की क्या पड़ी है? केवल अपनी लोलुप जिह्वा के स्वाद से ही प्रयोजन है। साथ ही, यह भी बात है कि यदि वे लोग अपनी जाति तथा दूसरे की दुर्दशा उन्हीं अंग्रेज लिखाड़ों द्वारा की गई देख लेवें तो फिर उनकी आई बाई हजम हो जावे और लिखने का रोजगार ही मारा जावे; जिससे दूसरों के सामने पूंछ हिलाकर चार पैसे कमा सकना भी असम्भव हो पड़े। क्योंकि दूसरे की निंदा करने से ऐसी दशा में वे इसलिये डरेंगे कि इन्हीं ग्रन्थों को देखकर दूसरे भी मेरी धज्जियां उड़ाने न लगजावें। अतः वे लोग कूपमण्डूक बनना हीं अपने रोजगार कायम रखने के लिये पसन्द करते हैं। अथवा बहुतेरे जानबूझ कर भी अपनी सज्जनता का परिचय इसलिये देते हैं कि कोई मेरे विरुद्ध लिखेगा ही क्योंकर? क्योंकि वे इस मद में फूले रहते हैं कि ये पुस्तकें देख ही कौन सकता है? और यदि कोई लिखेगा भी तो यह कहकर निकल जावेंगे कि 'जूते तो उसने अवश्य मारे, परन्तु वे लाल थे'। परन्तु इसको बुद्धिमानी और भलेमानुसी नहीं कहते।

लेखक को चाहिये कि जो कुछ लिखे उसका पूर्वापर विचार लेवे। केवल अंग्रेज लेखकों की दो चार बातों पर भूल कर किसी का दिल व्यर्थ ही दुखाना या उसकी हँसी ठट्ठा करना अच्छा नहीं है। क्योंकि किसी देश की रस्म रिवाज तथा जाति पांति के विषय में लिखने वाले अंग्रेजों का यह पूर्व से ही अटल सिद्धान्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को छोड़कर सभी के देखने से यही सिद्ध होता है कि याचक ब्राह्मण (पुरोहित), भाट, नाई, बारी, भर और कुर्मियों आदि; राजपूत, जाट, कहार, भर, राजभर, अहीर, पासी और कुर्मियों; एवं कायस्थ, भड़भूंजा, और कहारादि में कुछ भी भेद नहीं है। यही लोग क्रमशः याचक ब्राह्मण, राजपूत, तथा कायस्थादि बन गये हैं। अतः इनको प्रमाण मानकर उसी आधार पर किसी की जाति का निर्णय करना सभी जातियों की संकरता का सूत्रपात करना है। अतः मेरी समझ में कमसे कम जाति तथा धर्म के विषय में इनका नाम भी लेना उचित नहीं है। हां, ऐतिहासिक अंश में वे प्रमाण माने जा सकते हैं, जिसको उन्होंने पाली तथा ग्रीक आदि ग्रन्थों और प्राचीन शिलालेखों आदि के आधार पर लिखा है। परन्तु उस आधार पर जो सिद्धान्त (theory) वे निकालने लगजाते हैं उस अंश में वे माने नहीं जा सकते। अतएव मैं इस ग्रन्थ में केवल ऐतिहासिक अंश में हीं जहां तहां उनकी संमतियाँ प्रमाण रूप से उद्धृत करूंगा। हां, उनके जो कुतर्क और कुकल्पनायें कहीं कहीं अयाचक ब्राह्मण समाज के विषय में आपाततः लक्षित हुई हैं, अथवा उन्हीं भित्तियों पर हमारे देशीय नवीन बाबुओं ने जो मानसिक प्रासाद खड़े किये हैं उनके ध्वंस करने के लिये 'मियां जी की जूती और मियां जी का ही सिर' इस न्यायानुसार उनका अवलम्बन कहीं २ करूंगा, नकि स्वतंत्र प्रमाण रूपसे। अथवा दो एक जगह 'तुष्यतु दुर्जन' न्याय से ही उन महाशयों का नाम स्मरण करूंगा, क्योंकि आजकल के जो अर्द्धदग्ध बाबू लोग उन्हीं के वाक्यों को इस विषय में भी ब्रह्मा, व्यास तथा वसिष्ठादि के वाक्यों से बढ़कर मानने वाले हैं और उन्हें उनके विना सन्तोष नहीं होता उनके मनाने को दूसरा उपाय ही क्या है? और हमको तो मनाना ठहरा सभी को।

यद्यपि ऐतिहासिक अंश में भी हम उन्हें न मानते, यदि हमारे घर में हीं पूर्ण सामग्री उसकी भी होती। परन्तु हम लोगों ने तो पौराणिक कालके बाद से या तो इतिहासों का लिखना हीं छोड़ दिया, या लिखा भी तो उसे भी उपन्यास, नाटक अथवा प्रहसन हीं बनाने में दत्तचित्त होकर सत्यांश को बिल्कुल तिलांजलि ही देदी,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और राग द्वेष में आकर जिसके विषय में जैसा मन में आया लिखकर बदला चुका लिया। इसलिये हार मानकर तत्त्वजिज्ञासुओं को आजतक के इतिहास को शृंखलाबद्ध करने के लिये पाली, ग्रीक, तथा तन्मूलक वैदेशिक वाक्यों का अवलम्बन करना हीं पड़ता है और ऐसा करने में कुछ हानि भी नहीं है। परन्तु धार्मिक तथा जातीय अंश में तो उनको मानने में विशेष कर या तो उच्चजातियों की दुर्दशा है, या जिनकी किसी प्रकार से प्रसिद्धि है और संसार में किसी २ अंश अथवा बहुत से अंशों में प्रतिष्ठित समझे जाते हैं उनकी। जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय वा राजपूत, अगरवाले, खत्री और कायस्थादि।

मैंने अंग्रेजी ग्रन्थों में लिखा हुआ प्रत्येक जाति का तत्त्व जानने के लिये जिन ग्रन्थों का प्रायः आद्योपान्त अवलोकन किया है उनके नाम ये हैं:-(१) टाड साहब का राजस्थान (Tod's Rajasthan),(२) डबल्यू. एच. ईलियट कृत भारतवर्ष का इतिहास (W. H. Elliot's History of India), (३) सन् १८६५ से १९११ तक की भिन्न भिन्न प्रान्तों तथा समस्त भारतवर्ष की मनुष्यगणना का विवरण (Census report of India, from 1865 to 1911), (४) नेविल का संयुक्त प्रांतका गजेटियर (Nevill's Gazetteer of N.W.P.), (५) फिशर का संयुक्त प्रान्त का गजेटियर (Fisher's Gazetteer of N. W. P.), (६) शेरिंग का भारतीय जाति विवरण (Tribes and Castes of India by M. A. Sherring),(७)रिजले का भारतीय मनुष्य (H. H. Risley's People of India), (८) डबोइस कृत भारतीय मनुष्य संबंधी रस्म रिवाज आदि का विवरण (Description of the Character, Manner and Customs of the People of India by J. A. Dubois), (९) क्रुक का संयुक्त प्रान्तीय जाति विवरण (Crooke's Tribes and Castes of N.W. P.), (१०) नैस्फील्ड का संयुक्त प्रांतीय संक्षिप्त जाति विवरण (Brief views of the Caste System of N.W.P. and Oudh by J. C. Nesfield M. A.), (११) डाक्टर विल्सन कृत भारतीय जाति (Dr. Wilson's Indian Caste), (१२) डाक्टर ओल्डहम कृत गाजीपुर आदि का विवरण (Dr. Oldham's Memoir of Ghazipur &c.), (१२) ईलियट की सप्लीमेन्टल ग्लासरी (H. M.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Elliot's Suplemental Glossary), (१३) बौद्धकालिक भारत (The Buddhist India by Rhys David), (१४) प्राचीन भारत, मेक्क्रिन्डिल कृत (Ancient India by J. W. Mc.Crindle), (१५) एलफिन्स्टन कृत भारतीय इतिहास (History of India by Hon. Elphinston), (१६) बलवन्तनामा (Bulwant Namah Translated by Fredrick Curven), (१७) आईन अकबरी (Ain. i. Akbari Translated by Col. Jarrett), (१८) एशिया संबंधी अन्वेषण (Asiatic Researches by Jonathan Duncan &c.) इत्यादि।

इसके अतिरिक्त और भी बहुतसी छोटी बड़ी अंग्रेजी किताबों का अवलोकन किया है। जिनमें केवल प्रायः शेरिंग को छोड़कर (क्योंकि उन्होंने बहुत जांच कर जैसा पाया है वैसा ही लिख दिया है और उससे कोई सिद्धांत (theory) सिद्ध नहीं किया है। अतः उनका लेख प्रायः विश्वसनीय है) सबोंने प्रसिद्ध जातियों का विशेष कर बहुत ही परिहास किया है और बहुतसी किम्वदन्तियों आदि के आधार पर सभी का जैसा कि पहले कह चुके हैं, एक सिद्ध करने का खूब ही यत्न किया है। बल्कि एक प्रकारसे अयाचक ब्राह्मणों (भूमिहार आदि ब्राह्मणों) को बाल बाल बचा दिया है। क्योंकि इनके विषय में दो एक किंवदन्तियाँ मात्र कहीं २ लिख भर दी हैं और फिर उनका खण्डन भी अपने आपही कर दिया है, जैसा कि आगे चलकर विदित होगा। परन्तु उन किम्वदन्तियों के आधार पर इनके विषय में कोई सिद्धान्त (theory) नहीं निकाला है। बल्कि खुले शब्दों में स्वच्छ आर्य सन्तान कहा और चेहरे मोहरे तथा चाल व्यवहार से सिद्ध भी कर दिया है। परन्तु याचक ब्राह्मण, राजपूत तथा कायस्थादि के विषय में बहुतसी किम्वदन्तियों तथा आचार व्यवहारों को लिखकर उनके आधारोंपर बहुतसे सिद्धान्त निकाले हैं, और इसतरह सभीको रसातल पहुंचाने तथा संकर कर देने में कुछ भी नहीं छोड़ रक्खा है। इसलिये मैं अथवा कोई भी आस्तिक पुरुष उनके वाक्यों को इस विषय में प्रमाण मानने का साहस भी नहीं कर सकता, उनके आधार पर किसी बात का निर्णय करना तो दूर रहा। मेरा विचार जहां तक है, ऐसी दशा में किसी भी जाति पांति के माननेवाले अस्ली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भारतसन्तान की लेखनी केवल उनके आधार पर नहीं उठ सकती और यदि उठेगी तो उसकी भारत-संतानता में ऐसी दशा में अवश्य सन्देह किया जासकता है और किया जायगा।

सारांश यह है कि उनके आधार पर कुछ भी किसी समाज के विषय में लिख डालना प्रबल निर्लज्जों का ही काम है, न कि भद्र पुरुषों का। इसलिये अन्त में मेरी प्रार्थना उन सज्जनों से, जिनको फिर भी उन्ही आधारों पर लिखने की असदाग्रहपिशाची ग्रसे हुये है, यही है कि वे लोग किसी भी समाज का व्यर्थ दिल दुखाने के लिये कुछ वाक्यवाण चलाकर अपनी सज्जनता का परिचय अवश्य देवें। परन्तु लिखने से पहले उन सभी ग्रन्थों में अपने समाज का भी किया गया सत्कार पूर्ण रीति से देख लेवें। नहीं तो मुंह की खानी पड़ जावेगी और लेने के देने भी पड़ जावेंगे। किं बहुना, 'रोजा को गये नमाज गले पड़ी' वाली कहानी चरितार्थ होने लग जावेगी।

एक बात और भी विचारने की है कि वायुपुराण के अध्याय ५९ में लिखा हुआ है कि 'इज्यावेदात्मकः श्रौतः स्मार्त्तो वर्णाश्रमात्मकः। ३९।' अर्थात्, 'यज्ञ तथा वेदादि का पढ़ना वगैरः श्रौत (श्रुतिसिद्ध) धर्म हैं और वर्णाश्रम विभागादि स्मार्त्त (स्मृति सिद्ध) धर्म हैं,। याज्ञवल्क्यस्मृति में लिखा है कि 'पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्रांग मिश्रिताः। वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश।३।' भाव यह है कि 'पुराण, न्याय, मीमांसा, धर्मशास्त्र, चारों वेद और षडंग ये ही विद्या और वर्णाश्रमादि धर्म के स्थान हैं'। मनुजी ने भी लिखा है कि 'वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः। एतच्चतुर्विधंप्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्।' अ० २ श्लो० १२। जिसका अर्थ यह है कि 'वेद, मन्वादिस्मृति तथा पुराणादि, सत्पुरुषों का आचरण और जहां पर दो कामों में से किसी एक को करना हो वहां, पर अपनी इच्छा ये ही साक्षात् जाति, वर्णादिधर्मों के बतानेवाले हैं'। सबका तात्पर्य यह है कि वर्ण, आश्रम आदि विभाग, जातिपांति का विचार तथा प्रत्येक के धर्म ये सब श्रुतियों, स्मृतियों और पुराणादि द्वाराही जाने जाते हैं; क्योंकि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ये सब विभाग आधुनिक लोगों के बनाये हुये नहीं हैं, किन्तु प्रचीन महर्षियों के ही किये हुये हैं । इनके नियमादि और पहचान पुराण तथा स्मृतियों में उन्होंने लिख दिये हैं, न कि अंग्रेजी पोथों में इनका वर्णन किया गया है । अतः जिसको जातिविभाग तथा उसके धर्म आदि जानने की इच्छा होवे वह उन्हीं आर्ष ग्रन्थों का परिशीलन करे तभी इन सबों के यथार्थ स्वरूप को जान सकेगा, न कि अंग्रेजी ग्रन्थों और अंग्रेजी महावाक्यों के भक्त होने से। अत एव भगवान श्रीकृष्ण का गीता में यह अमृतोपदेश है कि 'यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्त्तते कामकारतः । न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥ तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ । ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्त्तुमिहार्हसि ॥२४॥ अध्या०॥१६॥ जिसका भाव यह है कि 'जो कोई श्रुति, स्मृति, पुराणादि प्रतिपादित धार्मिक व्यवस्था को छोड़कर मनमाने डेढ़ चावल की खिचड़ी पकाता है, उसके न तो किसी कार्य की सिद्धि ही होती है, न उसे इस संसार में सुख ही मिलता है और न अन्त में मोक्ष ही । इस लिये अच्छे और बुरे सभी कार्यों में इन शास्त्रों को ही प्रमाण मानकर उन्हीं के अनुसार कार्य करना उचित है । मनुजी ने भी कहा है कि योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्राश्रयात् द्विजः । स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः । अ० २ । ११ ।

अर्थात् 'जो आधुनिक काल्पनिक कुतर्कोंके बल से धर्म के मूलभूत उन श्रुतिस्मृतियों का निरादर करके मनमानी करता है, सत्पुरुषों को उचित है कि उसे समाज से बाहर कर देवें, क्योंकि वह वेदादि का निन्दक होने से नास्तिक है' । अब आप ही लोग बतावें कि वैदेशिक ग्रन्थों के आधार पर जाति और धर्मकी व्यवस्था करनेवाले मानने योग्य हैं या नहीं और उन का यह कर्त्तव्य कहां तक समुचित है । इसलिये हम इस पुस्तक में, जैसा कि प्रथम भी सूचित कर चुके हैं, केवल श्रुति, स्मृति, सदाचार और दार्शनिक विचारों से ही प्रायः सर्वत्र काम लेंगे । केवल इतिहासांश में कुछ २ अन्य ग्रन्थों का अवलम्बन करेंगे, परन्तु प्राधान्य सर्वदा श्रुतिस्मृत्यादि का ही रहेगा । यों यदि प्रासंगिक वैदेशिक ग्रन्थों के भी वाक्य लिख दिये जावें सो दूसरी बात है । और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हमारी अल्प बुद्धि जहां तक जाती है, इस विषय में सभी लोगों को ऐसा ही करना उचित है। अस्तु, अब हम अपने प्रिय पाठकों को प्रकृत विषय तथा ग्रन्थ का कुछ परिचय कराकर अपने इस वक्तव्य को यहीं समाप्त करना चाहते हैं। यद्यपि हमारे इस इतने लेख से बुद्धिमानों को इस ग्रन्थ के लिखने का कारण विदित हो ही गया होगा, तथापि थोड़ा सा कह देना कोई अनुचित बात न होगी। यह बात तो सब को विदित ही है कि अयाचक ब्राह्मण समाज प्राचीन काल से भूम्यधिकारी होने और विशेषकर राजकीय झंझटों से अधिक संबन्ध रखने के कारण संस्कृत से प्रायः रहित सा हो रहा है। क्योंकि जमींदारी तथा राजपाट और संस्कृत विद्या का, विशेष कर इस समय में, नितान्त विरोध है, जिसका अनुभव प्रत्येक मनुष्य करता है।

जिनकी जीविका आजकल केवल उसी विद्या पर निर्भर है वे ही जब वास्तव संस्कृत ज्ञान से शून्यप्राय हो रहे हैं; शीघ्र-बोध, मुहूर्त्तचिन्तामणि, कुछ व्याकरण, और सत्यनारायण तथा दुर्गापाठ ही अनाप सनाप घोख घाख कर काम चला रहे और अर्थ का अनर्थ कर रहे हैं, जो कि सभी के नेत्रों के सन्मुख ही हैं। तो फिर जिनको उसका पढ़ना जीविका के लिये नहीं, वरन पारलौकिक कार्यों के ही लिये है और साथ ही बबुआनी जैसी पिशाचिनी ग्रसे हुए हैं। तथा निरक्षर भट्टाचार्य पुरोहित जी एवं गुरु जो भी, यह विचार कर कि यदि हमारे यजमान या शिष्य बाबू साहब चार अक्षर पढ़ जावेंगे तो फिर हमारे बैल न रह जावेंगे और हमारी हर बातों में नुक्ताचीनी करके हमारी फजीहत करते रहेंगे, जिससे हम मनमाने लूट न सकेंगे इत्यादि, यही दिनरात ठसने तथा पोथों में लिख तक डालते हैं कि आप तो बाबू हैं, आपको केवल साधु ब्राह्मणों की सेवा करना तथा अंग्रेजी फारसी आदि पढ़ना चाहिये। संस्कृत तो भिखमंगी विद्या है। इसे पढ़कर आप क्या करेंगे? क्या आपको दुर्गा और सत्यनारायण बाँचने, मुहूर्त्त देखना या कथा बाँचनी और पत्रे उलटने हैं? इत्यादि; उनके लिये इसका पढ़ना हीं आश्चर्य है। जब पुरोहित एवं गुरुजी ही संध्या; गायत्री के व्याज से केवल झूठे नाक दबाना और चिड़िया उड़ाना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हीं जानते हैं तो बाबू साहब क्योंकर जानने लगे ? और उन्हें यह शिक्षा ही कौन देवे ? हां कोई परोपकारपरायण विद्वान संन्यासी (दण्डी) इसका उपदेश कर सकता और संस्कृताध्ययन में बाबू साहब को लगा सकता है। परन्तु मूर्ख पुरोहितों और गुरुओंने, यह समझकर कि विद्वान् महात्मा के प्रवेश होने से हमारी टिक्की ही उड़ जावेगी, और यदि बारातों में वे लोग आकर धर्म का उपदेश करेंगे तो बहुत जगह के लोगों को एक ही साथ ज्ञान हो जावेगा, पहलेही से यह भरना प्रारम्भ कर दिया कि उनका दर्शन महा अमंगल है। यदि वे लोग श्राद्ध में आजावें तो पितृलोग भागजावें इत्यादि। फिर क्या है ? अब वहां दण्डी जी की कौन गिनती ? उनकी प्रतिष्ठा वहां कुत्ते से भी बढ़कर की जाने की तैयारियां होने लगीं। अब आप ही लोग विचारिये, इस सीधे सादे अयाचक बाबूमण्डल में अज्ञानान्धकार न छा जावे तो क्या होगा ? जहां पर श्राद्ध में सन्यासियों (दण्डियों) के विषय में ऐसा लिखा हुआ है कि:—

अकाले यदि वा काले श्राद्धं कुर्यादतन्द्रितः ।
पितॄणां तृप्तिकामस्तु यतीन्प्राप्य द्विजोत्तमः । ब्रह्मांडपुराण।
विना मांसेन मधुना विना दक्षिणयाशिषा ।
परिपूर्णं भवेच्छ्राद्धं यतिषु श्राद्धभोजिषु । दक्ष।
मुण्डं यतेन्द्रियं शान्तं ध्यानभिक्षुमकल्मषम् ।
तान्नित्यं भोजयेच्छ्राद्धे दैवे पित्र्ये च कर्मणि । स्कंदपुराण।
निवेशयेत्तु यः श्राद्धे पितृकर्मणि भिक्षुकम् ।
आकल्पकालिका तृप्तिः पितॄणामुपजायते । पराशर।

अर्थात् 'ब्रह्माण्डपुराण में लिखा है कि यदि किसी भी काल में संन्यासी द्वार पर आजावे तो पितृतृप्ति के लिये अवश्य श्राद्ध करे। दक्षस्मृति में लिखा है कि यदि दण्डी श्राद्ध में भोजन करलेवे तो विना दक्षिणा तथा मधु आदि के ही श्राद्ध पूर्ण समझा जाता है। स्कंदपुराण में लिखा है कि एक दण्डवाले शान्त और ध्यानरत संन्यासी को नित्य ही श्राद्ध और पितृकर्म में भिक्षा करानी चाहिये। पराशर ने लिखा है कि जो पितृकर्म में भिक्षु (दण्डी) को खिलाता है उसके पितरों की तृप्ति एक कल्प भर होती है इत्यादि'। वहां पर संन्यासी को देख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर पितरों के भाग जाने की शिक्षा जो अनर्थ न करवा देवे उसी में आश्चर्य है। संन्यासी लोग स्वयं श्राद्धान्न को गर्हित समझ कर नहीं ग्रहण करते यह दूसरी बात है। बारातों या अन्य कार्यों में संन्यासी का उपदेश के लिये भी जाना अमंगल है यह बात तो कहीं भी मनु आदि धर्मशास्त्रों या अन्य ग्रन्थों में नहीं लिखी हुई है। फिर यह निर्मूल प्रलाप सर्वथा अनादर योग्य और नाश करनेवाला है॥ संन्यासी का दर्शन तो शुभकार्य में निषिद्ध नहीं है, परन्तु नीचों, और शूद्रों की पुरोहिती और उनके अन्न से पेट भरनेवालों का यदि मुख कहीं दीख पड़े, तो वह महा अमंगल है, जिसके लिये मनु भगवान ने डंका पीट दिया है। परन्तु उसको तो बलात् याचक ब्राह्मणों ने सिर पर प्रायः धारण कर लिया है और अपने मुख से पण्डित कहते तथा अन्यों से कहवाते हुए जरा भी नहीं हिचकते। वे लोग न जानें किस प्रकार मुख दिखलाने और बोलने का साहस करते हैं? यदि संन्यासी का दर्शन अमंगल भी मानें तो उसका यह अर्थ तो है नहीं कि वह अमंगल बांधे फिरता है। किन्तु आंख आदि अंगों का अकस्मात् फड़कना जिस प्रकार अनिष्ट का सूचक है न कि स्वाभाविक आंखों का हिलना भी, उसी प्रकार यदि अकस्मात् संन्यासी का दर्शन हो जावेगा तो उससे सूचित हो जावेगा कि तुम्हारा कोई अनिष्ट होनेवाला है, सजग हो जाओ, ऐसी चितावनी उसे मिलजाती है और वह होशियार कर देने से उपकारक ही है। परन्तु यदि जानबूझकर संन्यासी को कहीं लावेगा तो उससे अमंगल की सूचना भी कैसे होगी? क्या अपने से आँख हिलाने पर भी अमंगल की सूचना समझी जाती है? यदि गेरुआवस्त्र निषिद्ध है तो फिर विवाहों में उससे ही मकान क्यों रँगते हैं? संन्यासी मुर्दा समान है इस निर्मूल बात के कहनेवाले ही मुर्दे हैं। यदि मुर्दा भी है तो अच्छा ही है, क्योंकि मुर्दे का दर्शन तो मंगलसूचक है। यदि कहीं पर भी काषाय वस्त्रधारी का निषेध मान भी लेवें तो वह लड़के बालों वाले गुसाइयों का होगा, क्योंकि वे लोग शास्त्र से अति निन्दित सिद्ध होते हैं।

दूसरा कारण अयाचक ब्राह्मणों के संस्कृत न पढ़ने का यह भी है कि राज्य तथा जमींदारी का संबंध होने से यवनों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुत काल तक विशेष संबंध रहा, जिससे 'संसर्गजा दोष-गुणा भवन्ति, अर्थात् 'तुख्म तासीर सुहबत असर' के अनुसार उन्हीं यवनों के बहुत से गुण आने लग गये। जैसा कि फारसी पढ़ना, राय, सिंह, ठाकुर, चौधुरी, और बाबू आदि शब्दों से ही प्रसन्न होना, न कि पाण्डे तिवारी आदि शब्दों से, तम्बाकू पीना और सलाम करना करवाना इत्यादि। जैसा कि आज तक अन्य ब्राह्मणों में भी पाया जाता है, जिसको आगे चलकर प्रसंग से दिखलावेंगे। और जब यह भी नीति है कि 'राजानमनुवर्त्तन्ते, यथा राजा तथा प्रजा'। तो इन ब्राह्मणों के इन सब आचारों के विषय में सन्देह करना और उसका और अर्थ लगाना नितांत भ्रम है। क्योंकि मिथिलादि देशों को लीजिये, तो जहां प्रथम यदि १०० पढ़नेवाले होते थे तो सभी संस्कृत ही पढ़ते थे, वहां अब केवल संस्कृत पढ़ने वाले कठिनता से १०० में १० मिलेंगे, जिनका चित्त भी अंग्रेजी की ओर लगा हुआ रहता है और अन्ततो गत्वा कुछ न कुछ उसे पढ़लेते ही हैं और ९० तो उधरही लगे हैं। यह बात क्यों होती है? आजकल सभी का संबन्ध अंग्रेज जाति के साथ समान और घनिष्ठ है और जो ही उसे पढ़ता है वही उनके दर्बार में प्रतिष्ठित है। इसीलिये सब लोग उधरही टूटते हैं। ठीक ऐसा ही यवनकाल में भी जान लीजिये। हां, उस समय इतना विशेष अवश्य था कि जोही फारसी पढ़लेवे उसी की प्रतिष्ठा नहीं होती थी, क्योंकि वे लोग अंग्रेज लोगों जैसे विद्या के प्रेमी न थे। किन्तु बड़े २ बाबुओनों की ही प्रतिष्ठा थी। इसीलिये और राजकार्य के भी उसी विद्या में होने से उन्हें फारसी अवश्य पढ़ना पड़ता था। इसीलिये अन्य ब्राह्मण या तो कुछ पढ़ते ही न थे। अथवा यदि दो एक पढ़नेवाले होते भी थे तो लाचार होकर उसी संस्कृत को ही जिलाये रखते थे।

जब इस प्रकार से अयाचक ब्राह्मणदल में संस्कृत का प्रायः अभाव होगया और उसकी विरोधिनी वह फारसी पिशाची उसकी जगह आ बैठी, तो उन लोगों को ब्राह्मण किसे कहते हैं, कौन ब्राह्मण श्रेष्ठ कहा जा सकता है और उसके धर्म या कर्म कौनसे हैं इसका यथार्थ ज्ञान न हो सका। बल्कि उसका होना एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार से असंभव सा होगया। क्योंकि ये सब बातें विना संस्कृत के जानी नहीं जासकतीं, इनका वर्णन केवल संस्कृत ग्रन्थों में हीं है। और धीरे २ उनमें से प्रायः बहुतेरे ऐसा समझने लगे (जैसा कि मुसलमान लोग समझते थे और समझते हैं तथा प्रायः अंग्रेजी ग्रन्थकारों की भी अब तक वही धारणा है) कि जो पुरोहिती आदि करे और प्रतिग्रहादि तथा भिक्षा से अपना जीवन व्यतीत करे उसे ही पक्का ब्राह्मण कहते हैं। हम लोग भी ब्राह्मण हीं हैं। परन्तु पक्के नहीं, किन्तु राजा, बाबू, जमींदार हैं। उसी दिन से विशेषकर जमींदार ब्राह्मण कहने की प्रथा पड़ गई, जैसी आज भी प्रयाग, बाँदा तथा पूर्वीय अन्य प्रान्तों में पाई जाती है। इस विषय का मुझे स्वयं अनुभव हुआ है।

मैं रेलवे ट्रेन में जाता था। इतने में दरभंगा प्रान्त के बछवारा जंकशन के पास बाजिदपुर स्टेशन पर एक मनुष्य गाड़ी पर इन्टर क्लास में चढ़ा। उसके चेहरे से प्रतीत होता था कि ब्राह्मण है। मैंने पूछा कि क्या आप मैथिल ब्राह्मण हैं? उसने कहा कि हां हम मैथिल ब्राह्मण हैं परन्तु जमींदार हैं, न कि साधारण मैथिल, और जाले जलैवार मूल के हैं। पाठक उसके इस वाक्य का अर्थ लगा लेवें। क्या मेरे बतलाये हुये अभिप्राय से दूसरा है? बस, इसी निश्चय को गुरु और पुरोहित भी बहुत दिनों तक पक्का करने लगे और धीरे २ कहने लगे कि ब्राह्मण क्या आप तो राजा बाबू हैं और बाबू, साहब भी इसी पर फूलने लगे। थोड़े दिन तक ऐसाही होते होते जब कुछ प्रमाद और बढ़ गया और संस्कृत का एकदम अभाव होकर प्रचण्ड मूर्खता सिर पर सवार हो गई और उधर पुरोहित जी वाला वह उपदेश कि ब्राह्मण क्या आप तो राजा, बाबू, जमींदार हैं, खूब दृढ़ होगया, तो उन बाबुओं को यह निश्चय हो गया कि पुरोहिती आदि करने, प्रतिग्रह लेने और भिक्षावृत्ति से जीविका करनेवाले को ही ब्राह्मण कहते हैं हम लोग तो जमींदार हैं। इस निश्चय के दृष्टान्त आज भी पाये जाते हैं। क्योंकि जब कोई किसी के द्वार पर गिरता, भिक्षादि लेने में विशेष आग्रह करता और जान देने पर तैयार हो जाता है तो उसी समय लोग कहते हैं कि यह 'बम्हनई' करता है। सदाचारी और पण्डित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के व्यवहार पर 'बम्हनई' शब्द का प्रयोग नहीं होता। दरभंगा प्रान्त में किसी मैथिल ब्राह्मण ने किसी पश्चिमा ब्राह्मण से कहा कि आप ब्राह्मण हैं या बाभन? तो उसने चट उत्तर दिया कि मैं तो बाभन हूं, ब्राह्मण आपही हैं। जब फिर उसने कहा कि ऐसा क्यों साहब? तो उसने उत्तर दिया, क्योंकि 'बराह यानी शूकर की तरह जिसका मन हो उसे ब्राह्मन कहते हैं, अर्थात् जैसे शूकर विष्ठा की ओर दौड़ा करता है वैसे ही जो दिनरात खाने के पीछे दौड़ा करे और प्रतिग्रह कमाता फिरे उसे ब्राह्मण कहते हैं और मैं वैसा नहीं हूं'। क्या ये सब बातें उपरोक्त सिद्धान्त को अक्षरशः सिद्ध नहीं करतीं?

बस इन्हीं दिनों से अयाचक ब्राह्मण दल में केवल जमींदार शब्द का प्रयोग चला जो आज तक भी बहुत जगह पाया जाता है। कुछ दिन के बाद उसी दल के (अयाचक ब्राह्मण दल के) कुछ लोगों ने विचारा कि जमींदार तो सभी जातियों को कह सकते हैं, फिर हममें और अन्य जातियों में, जो जमीन वाली हैं, भेद क्या रह जावेगा? और थोड़े दिन बाद गड़बड़ मचने लग जावेगी। इसीलिये जमींदार शब्द के ही अर्थ में संस्कृत भूमिहार शब्द का प्रयोग अपने समाज में करना प्रारम्भ कर दिया। यद्यपि भूमिहार और जमींदार शब्दों के अर्थ एक ही हैं, तथापि पृथक् संकेत कर लेने से अब सब के मिलने का डर न रह गया। क्योंकि जैसे नमस्कार और प्रणाम शब्दों के अर्थ एक ही हैं तथापि ब्राह्मण हीं परस्पर एक दूसरे को नमस्कार करते हैं और दूसरे लोग प्रणाम हीं करते हैं। मिथिला में तो यहां तक प्रचार है कि शूद्र तथा अन्त्यज भी ब्राह्मणों को प्रणाम हीं करते हैं। परन्तु यदि अन्य जाति नमस्कार शब्द का प्रयोग कर देवे तो दंगा मचजावे। हालां कि दोनों के अर्थ में कुछ भी भेद नहीं है। परन्तु सांकेतिक भेद मान लिया गया है। बस, यही दशा भूमिहार और जमींदार शब्दों की है। केवल सांकेतिक भेद मान लिया गया है जिससे भूमिहार कहने से अयाचक ब्राह्मण दल का बोध होता है, न कि जमींदारादि शब्द कहने से। इसके विषय में विशेष विचार तथा इसका प्रयोग कब से हुआ इस विषय में भी अच्छी तरह से विचार ग्रन्थ में हीं आगे चलकर किया जावेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी जगह इतना और समझ लेना चाहिये कि यवनादि काल में जहां इन ब्राह्मणों का प्राधान्य नहीं रहा है, किन्तु राजपूत आदि जातियां हीं प्रधान रही हैं, वहां ये लोग अब तक उसी पाण्डेय, तिवारी, चौबे, दूबे तथा मिश्रादि नामों से शाहाबाद आदि प्रान्तों में कहे जाते हैं, क्योंकि वहां डुमरांव राज्य का ही प्राधान्य रहा है। ऐसे ही अन्यत्र भी उन्हीं पाण्डेय आदिके घनिष्ठ संबंध से लोग प्रधान होने पर भी उसी पुराने नाम से कहे जाते हैं।

बस अब क्या है? इसी अविद्यान्धकार में स्वार्थान्ध, द्वेषी और पराहितकारी डाकुओं की बन पड़ी और बहुतसी किताबें लिखी जाने और किम्वदन्तियां रची जाने लगीं। जिनका मुख्य उद्देश्य यह था और है, कि और बातों में तो ये लोग बढ़े ही हैं, परन्तु बबुआई ठाट में विद्या नहीं पढ़ते। यहां तक मस्त हैं कि अंग्रेजी का भी नाम नहीं लेते। इसलिये सहस्रों कुकल्पनायें करके इन्हें जाति में हीं नीचा कर दो, जिसे ये लोग समझ भी न सकें और हम लोगों का स्वार्थ भी सिद्ध हो जावे और फिर इन्हें लूटकर खाजावें। क्योंकि यदि सिंह को यह अभिमान हो जावे कि मैं गीदड़ हूं तो फिर उसकी पीठ पर बोझ लादने में क्लेश ही क्या हो सकता है? इसी प्रकार ये लोग यदि जात्यभिमान में नीचे पड़जावेंगे तो इनकी सब योग्यता मिट्टी में मिल जायगी। और हम स्वार्थी गुरु, पुरोहित तथा कर्मचारियों की खूब बन पड़ेगी, फिर जैसा चाहेंगे 'चें में' बोलाया करेंगे। इसीलिये बड़े २ छल से ऐसी २ पुस्तकें बनीं जिनमें यह तो स्पष्ट रूप से लिख अथवा लिखवा दिया गया कि आप लोग केवल ब्राह्मणों की सेवा के लिये बनाये गये हैं इत्यादि। और ये अविद्याग्रस्त होने से उस आन्तरिक छल, कपट और द्वेष को या तो समझ ही न सके, अथवा इन्हें यह अवसर और सौभाग्य ही न प्राप्त हुये कि उन ग्रन्थों को देखें भी। उधर मनुष्यगणना के विवरण तथा अन्य वैदेशिकों के ग्रन्थों में भी लोगों ने कुछ झूठ सांच कह सुन कर छल कपट से उलटा पलटा कुछ का कुछ लिखवा दिया। इधर दोनवार, किनवार तथा गौतमादि नाम देख अंग्रेजों के साथ मिलकर यह विचार और निर्णय किया जाने लगा कि ये लोग क्षत्रिय हैं इत्यादि। इसी तरह की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुतसी स्वार्थ और द्वेषपूर्ण कल्पनायें होने लगीं जिनकी विस्तरशः समालोचना आगे की जावेगी। बड़ाभारी आश्चर्य तो यह है कि ये जितनी बातें की गईं वे सब इस समाज के सामने न की जाकर चोरी से परोक्ष में की गईं। इसीलिये अंग्रेज लोग अपनी सभी किताबों में यही लिख गये हैं कि 'Their Brahman and Chhatri neighbours insinuate &c...' जिसका तात्पर्य यह है कि 'इन (भूमिहार ब्राह्मणों) के पड़ोसी ब्राह्मण और राजपूत चुपकेसे इशारा करते या उसकाते हैं कि—'। इसीलिये साफ दिल होने से अन्त में लिख भी दिया है कि 'To this view, however, there is no evidence' अर्थात् 'लेकिन उन लोगों की इन उक्तियों में कोई भी प्रमाण नहीं है'।

भला जहाँ पर किसी अज्ञानान्धकार में पड़े हुए सर्वोच्च और प्रतिष्ठित समाज को नीचा दिखलाने के लिये इस प्रकार छल कपट और चोरियां की जाती हैं वहां कल्याण की कौनसी आशा की जासकती है? इन्हीं सब अनर्थों को देखकर एक ऐसे ग्रन्थ के बनाने की आवश्यकता हुई जिसमें इन सब मिथ्या कुकल्पनाओं की खुले शब्दों में निष्पक्षपात भाव से समालोचना की जावे और इस विषय पर आजतक जितनी कुशंकायें हुई हैं या हो सकती हैं उनका मुँह तोड़ उचित समाधान करदिया जावे, जिसमें भविष्य के लिये मार्ग साफ रहे। और श्रुति, स्मृत्यादि प्रमाणों से अयाचक ब्राह्मणों का उज्ज्वल और सर्वोत्तम स्वरूप प्रकाशित कर दिया जावे, जिसमें अकारण द्वेषी और स्वार्थी लोग चूं न कर सकें।

एक बात और भी है कि जैसे अन्य ब्राह्मणों तथा दूसरे समाजों का कुछ न कुछ इतिहास लिखा हुआ है और इसी कारण से उनके ऊपर विशेष रूप से कोई भी आक्रमण करने का साहस नहीं कर सकता। क्योंकि जागने वाले के गृह में चोरी करने का साहस कौन कर सकता है? वैसे ही यदि अयाचक ब्राह्मण समाज का कोई निजका टूटा फूटा भी सच्चा इतिहास होता तो आज इसकी ऐसी दुर्दशा न होती और जोही चाहता वही मनमानी निन्दायें करने का साहस नहीं करता। इसलिये इस महती त्रुटि की पूर्त्ति के लिये भी ऐसे ग्रन्थ की नितांत आवश्यकता थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सब से बड़ी बात यह है कि जिस जाति, देश या समाज का इतिहास नहीं होता, वस्तुतः उसकी स्थिति संसार में रही नहीं सकती। इसीलिये जो समाज जिसको दबाना चाहता है वह प्रथमतः उसके इतिहास को ही बिगाड़ता है, यह विषय इतिहास वेत्ताओं को परोक्ष नहीं है। क्योंकि किसी समाज का सच्चा इतिहास ही उसके पूर्वोत्तर पुरुषों की स्थिति का परिचय कराता हुआ गिरे हुओं को उठाने में संजीवनी बूटी का सा काम करता है। क्योंकि वह हमें सिखलाता है कि हमारे पूर्वपुरुष अमुक २ कार्य करने से उन्नति के शिखर पर आरूढ़ थे। इसलिये हमको भी उन्नति प्राप्त करने के लिये वैसे ही कार्य करने चाहियें। हम मृगराज के वंशज हैं, न कि शृगाल के। अतः हमको अपने वास्तव गौरव और स्वरूप का स्मरण करना चाहिये इत्यादि।

इन्हीं सब उद्देश्यों को लेकर मेरी प्रवृत्ति इस ग्रन्थ में हुई है। ताकि अयाचक ब्राह्मण समाज के सुचारु इतिहास भवन की प्रतिष्ठा (नींव) तैयार हो जावे, जिसमें भित्ति आदि द्वारा उस सुशोभा-पूर्ण रमणीय भवन के निर्माण करने वालों को भविष्य में सौकर्य हो। इस महाविशाल इतिहासागार की प्रतिष्ठा (नींव) सुदृढ़ और चारु रूप से बननी चाहिये। अतः उसकी दृढ़ता के लिये मैं उन्हीं श्रुति, स्मृति, पुराण तथा शिष्टाचार प्रणामरूप अमूल्य पाषाणों का अवलम्बन करता हुआ विषय विवेचन करूंगा। विषय का सम्यग्विभाग रहे और जन साधारण भी उसको पूर्णतया हृदयंगम कर सकें इसके लिये मैं इस ग्रन्थ को पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध इन दो विभागों में विभक्त करूंगा और अन्तमें परिशिष्ट रहेगा। जिनमें से पूर्व भाग का नाम द्विविध ब्राह्मण विचार और उत्तर का नाम कण्टकोद्धार होगा। द्विविध ब्राह्मण विचार प्रकरण में श्रुति, स्मृति, पुराण तथा सदाचारादि प्रमाणों से अयाचक और याचक इन दो प्रकार के ब्राह्मणों के स्वरूपों का सुस्पष्टतया निरूपण होगा और उसकी पुष्टि में साम्प्रतिक परस्पर दोनों के नमस्करादि के पत्रों, समाचार पत्रों तथा बड़े २ विद्वानों के हस्ताक्षर युक्त बड़ी २ व्यवस्थाओं का प्रदर्शन किया जायगा और जो सबसे प्रबल और सम्प्रति विद्यमान प्रमाण इस विषय में परस्पर विवाह सम्बन्ध है, जो जमींदार, भूमि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हार, पश्चिमा ब्राह्मणों का सर्यूपारीणों, कान्यकुब्जों तथा मैथिलों के बड़े २ कुलीनों के साथ होता था और हो रहा है और त्यागी ब्राह्मणों का गौड़ ग्राही ब्राह्मणों के साथ हो रहा है और जिसे मैथिल महासभा, मिथिला मिहिर पत्र तथा भारत मित्रादि पत्रों ने भी बिना रोक टोक स्वीकार किया है, उसके भी विस्तरशः प्रदर्शन पूर्वक रहस्यों का उद्घाटन करेंगे। इसके अतिरिक्त इस प्रकरण में बहुत से छोटे २ अवान्तर प्रकरण होंगे, जिनमें वैदिक समय से लेकर आज तक के शृंखला-बद्ध ब्राह्मणों के स्वरूप तथा आचार, व्यवहार और जीविका रूप इतिहास का वर्णन स्वदेशी तथा विदेशी प्रामाणिक ग्रन्थों के आधार पर होगा। जिसका प्रदर्शन विस्तरशः वैदिक, स्मार्त्त, पौराणिक, बौद्ध, यवन और वृटिश काल क्रम से किया जावेगा। साथही, भूमिहार, पश्चिमा, जमींदार, त्यागी, महियाल वगैरः संज्ञा संबंधी कालादि का भी विशेष विचार करते हुये ब्राह्मणों के जीविकार्थ तथा धार्मिक कर्मों का निरूपण किया जावेगा और ठाकुर आदि उपाधियों का विवेचन करते हुये साम्प्रतिक आचारों का भी दिग्दर्शन करा कर उनके औचित्यानौचित्य का विचार किया जावेगा और उस के कारण भी दिखलाये जावेंगे इत्यादि।

एवं द्वितीय प्रकरण में, जिसका नाम कण्टकोद्धार होगा, इस ब्राह्मण समाज पर आज तक जितने अनुचित और भ्रममूलक मिथ्या आक्षेप हुये हैं उनके प्रदर्शन पूर्वक उनकी कड़ी समालोचना करते हुये उनका उचित समाधान किया जावेगा और उसके बहुत से छोटे २ अवान्तर प्रकरणों में अयाचक ब्राह्मणों के उत्पत्ति विषयक प्रश्नों की समालोचना होगी और इस विषय पर कल्पित ग्रन्थों की निस्सारता का सुचारु रूप से निरूपण होगा। इसके बाद इस विषयकी तथा अन्य विषयक जितनी किम्वदन्तियाँ आदि और तन्मूलक स्वदेशी तथा विदेशी सज्जनों के जो वाक्य-वाण हैं उनके लिये उचित और अभेद्य रक्षा स्थान बनाया जावेगा। और किनवार, दोनवार, सकरवार तथा गौतमादि सदृश नाम रूप दोषों के ज्ञान चक्षु में लग जाने से लोगों को जो भ्रम उत्पन्न हो गये हैं और उसी दशा में जो कुछ वे लोग बक गये हैं, उसके लिये उचित अंजन तैयार किया जावेगा और वह ऐसा होगा कि एक बार उसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगादेने से फिर भविष्य में ऐसे रोग कभी हो ही न सकें। इसके अतिरिक्त जो स्फुट अनेक प्रकार के प्रश्न हुआ करते हैं उनकी भी उचित मीमांसा की जावेगी।

ग्रन्थान्त में परिशिष्ट होगा। जिसमें सम्पूर्ण कथन के चरम परिपाक के प्रदर्शन पूर्वक अवशिष्ट, अत्यन्तोपयोगी और अवश्य वक्तव्य तथा कर्त्तव्य विषयों का निरूपण करते हुये ग्रंथ की समाप्ति की जावेगी।

अन्त में जगदाधार सर्वान्तर्यामी से यही प्रार्थना है कि वह इस ब्राह्मण समाज तथा भारत वर्ष की अज्ञान निद्रा का भंग करके सबको यथार्थ ज्ञान और द्वेष तथा पक्ष पात शून्य बात बोलने और लिखने की सुबुद्धि प्रदान करे और साथ ही मेरे इस अल्प परिश्रम से लोगों को लाभ उठाने की भी सुमति देवे, जिसमें मेरा केवल परोपकारार्थ यह दीर्घ काल का श्रम सफल होवे। सब के पश्चात् मैं इसके अवलोकन तथा समालोचना करने वालों से यह प्रार्थना करता हूं कि वे लोग यद्यपि इसमें दोषोद्घाटन तो अवश्य करेंगे ही। क्योंकि वे भी अपनी अपरिहार्य्य छिद्राऽऽरोपिका प्रकृति रमणी के किंकर हैं। परन्तु ऐसा करने से पूर्व इस ग्रन्थ को निष्पक्षपात भाव से सम्यक्तया आलोडन कर लेवें और मेरे तात्पर्य को भली भांति हृदयंगम करके उचित दूषण देवें तो मैं उसे सहर्ष शिरोधारण करने के लिये सर्वदा कटिबद्ध हूं। क्योंकि तात्पर्य को समझ कर दूषण देने से दुःख नहीं होता। अब मैं श्रीयुक्त कुमारिल स्वामी तथा रघुनाथ शिरोमणि भट्टाचार्य के इसी विषयके वचनों को पाठकों के सन्मुख प्रदर्शित करके अनुरोध के साथ अपने इस वक्तव्य को यहीं पर समाप्त करता हूं और आशा करता हूं कि आप लोग इस धृष्टता को क्षमा करेंगे। वे वचन निम्नांकित हैं:—

* नचात्रातीव कर्त्तव्यं दोषदृष्टिपरं मनः।

---

* तात्पर्य यह है कि सभी जगह अत्यन्त दोष दृष्टि नहीं करना चाहिये, क्योंकि जिसकी दृष्टि में दोष (पित्तरोग) हो जाता है उसे सभी वस्तुओं में न रहने वाला भी दोष (पीलापन) मालूम होता है। दूसरे श्लोक का अर्थ 'परन्तु ऐसा करने' इत्यादि ऊपर ही लिखा जा चुका है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोषोह्यविद्यमानोऽपि तद्दृष्टीनां प्रकाशते ॥
मान्यान्प्रणम्य विहिताञ्जलिरेष भूयो,
भूयो विधाय विनयं विनिवेदयामि ।
दूष्यं वचो मम परं निपुणं विभाव्य,
भावावबोधविहितो न दुनोति दोषः ॥ इति ॥

॥ ॐ शम् ॥ लेखक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ श्रीहरिः ॥

ब्रह्मर्षि वंश विस्तर ।

निर्भीतिभूषितकरात्स्फटिकाभगात्रा-
दाशाम्बरादरुणपद्मदलाधरोष्ठात् ।
राकेशसुन्दरमुखात्सरसीरुहाक्षा-
च्छम्भोः परं किमपि तत्त्वमहं न जाने ॥ १ ॥

कलेः प्रभावादवलोक्य हानं धर्मस्य देवैर्मुहुरर्द्यमानः ।
समावतीर्णोम्बुधिदेश्यवर्गैर्यः शंकरो धर्मगुपे स नोऽव्यात् २
तस्यैव वैनेयपरम्परायामन्तर्गतोऽन्त्याश्रमसंज्ञितायाम् ।
श्रीविश्वरूपोननुविश्वरूपोयोऽभूदहंप्राञ्जलिरानतस्तम् ३
यस्येति वाक्यात्तत्पादपद्मेभृंगायमाणं तमनन्यभावम् ।
तच्छिष्यमानौमि गुरुं गुरोर्मे भूमादिमानन्दसरस्वतीं वै ४
क्रीडन्तमद्वयानन्देऽद्वैतानन्दसरस्वतीम् ।
तुर्याश्रमस्थं तुर्यं स्वं देशिकं प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥
क्रियते सहजानन्दसरस्वत्याख्यदण्डिना ॥
ब्रह्मर्षि वंशविस्तारोन्वसौ सर्वांगसंयुतः ॥ ६ ॥

पूर्वार्द्ध-द्विविध ब्राह्मण विचार ।

ब्राह्मणा द्विविधा राजन् धर्मश्च द्विविधः स्मृतः ।
प्रवृत्ताश्च निवृत्ताश्च निवृत्तोऽहं प्रतिग्रहात् ॥ (म.शां.)

(१) ब्राह्मणलक्षण ।

श्रुति, स्मृति तथा पुराणादि के अवलोकन से स्पष्ट है कि मैथुनी सृष्टि से पूर्व विराट् भगवान अथवा हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा वा प्रजापति)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने सांकल्पिक (मानसिक) सृष्टि की और तदनुसारही ब्राह्मणादि वर्णों को परस्पर विलक्षण सूचित करने के लिये मुखादि भिन्न अंगों से उत्पन्न किया। जैसा कि शुक्ल यजुर्वेद के ३२ वें अध्याय के १२ वें मंत्र से स्पष्ट है:-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्ययद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोअजायत॥

जिसका तात्पर्य यह है कि 'हिरण्यगर्भ वा प्रजापति के मुख से ब्राह्मण, बाहु से क्षत्रिय, जंघे से वैश्य और पाँव से शूद्र उत्पन्न हुये' क्योंकि इसके बाद के मंत्र 'चन्द्रमा मनसो जातः' में पचम्यन्त पद 'मनसः' रक्खा है, जिसका अर्थ यही हो सकता है कि मन से चन्द्रमा की उत्पत्ति हुई। तदनुसार ही इस पूर्व मंत्र में भी अर्थ करना चाहिये। इस स्थान पर जो लोग यह कहा करते हैं कि ऐसा अर्थ करने से सृष्टि क्रम से विरोध पड़ता है, क्योंकि आजकल मुखादि अंगों से किसी की उत्पत्ति नहीं देखते। उनसे पूछना चाहिये कि अच्छा, तो फिर सृष्टि प्रारम्भ काल में प्रथम स्त्री पुरुष थे ही नहीं तो सृष्टि कैसे हुई? इसलिये यह मानना हीं पड़ेगा कि प्रथमतः ईश्वर ने कुछ स्त्री पुरुषों को संकल्प से ही उत्पन्न किया। तदनन्तर सृष्टि क्रम उन्हीं से चला जो आज तक है। अतः मानसिक सृष्टि के विषय में, जिसका मानना अत्यावश्यक है, यह शंका हो ही नहीं सकती। मनु जी भी स्पष्ट रूपसे प्रथमाध्याय के ३१ वें श्लोक में यही बात कहते हैं। जैसा कि लिखा है:-

लोकानां तु विवृद्ध्यर्थं मुखबाहूरुपादतः।
ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं च निरवर्त्तयत्॥

इस श्लोक में तो स्पष्ट रूप से 'मुखबाहूरुपादतः' इस पंचम्यन्त पद का प्रयोग है। यदि मुखस्थानापन्न ब्राह्मण हुये इत्यादि रूप अर्थ पर ही आग्रह होवे तो भी हमारा कोई विरोध नहीं है। इस मानसिक सृष्टि के बाद उन्हीं उत्पन्न स्त्री पुरुष व्यक्तियों द्वारा मैथुनी सृष्टि हुई और, यद्यपि मानसिक सृष्टि में भी वर्णों का विभाग था जैसा कि अभी कह चुके हैं, अतः उसके अनुसार भी जातियों का नियम हो सकता है, या था। तथापि आजकलके जीवों में मुख आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से उत्पत्ति नहीं पाई जाती है। इसलिये महर्षियों ने 'मुख से जो उत्पन्न हुआ उसे ब्राह्मण कहते हैं' इत्यादि जातियों का लक्षण न करके 'ब्राह्मण्यां ब्राह्मणेनैवमुत्पन्नो ब्राह्मणः स्मृतः' (हारीतस्मृति १ अ० १५) अर्थात् 'ब्राह्मणी के रज और ब्राह्मण के वीर्य से जो विधिवत् उत्पन्न होता है उसे ब्राह्मण कहते हैं,' इत्यादि रूप ही लक्षण किया है। ऐसी दशा में किसी का यह कथन कि 'क्योंकि तुम दान नहीं लेते और पुरोहिती नहीं करते हो, अतः ब्राह्मण नहीं हो' केवल मूर्खता है। क्योंकि जब उसकी उत्पत्ति ब्राह्मण से है तो उसकी ब्राह्मणता में सन्देह ही क्या हो सकता है? हां इतना अवश्य हो सकता है कि यदि वह ब्राह्मणोचित कर्म न करेगा तो पतित अथवा हीन ब्राह्मण समझा जा सकता है। परन्तु प्रतिग्रहादि तो ब्राह्मणोचित कर्म नहीं हैं, प्रत्युत ब्राह्मणत्व को सत्यनाश में मिलानेवाले हैं। जैसा कि मनु जी ने कहा है और अन्यत्र भी लिखा है कि:-

प्रतिग्रहसमर्थोऽपि प्रसंगं तत्र वर्जयेत्।
प्रतिग्रहेणह्यस्याशु ब्राह्मंतेजः प्रशाम्यति॥ म. ४।१८६
पौरोहित्यमहं जाने विगर्ह्यं दूष्यजीवनम्। स्कन्दपु०

अर्थ यह है कि 'यदि प्रतिग्रह करने में सामर्थ्य भी रखता हो (अर्थात् उससे होनेवाले पाप को हटाने के लिये बहुसंख्य गायत्री-जप और तपस्यादिक भी कर सकता हो) तो भी प्रतिग्रह का नाम भी न लेवे, क्योंकि उससे शीघ्रही ब्रह्म तेज (ब्राह्मणता) का नाश हो जाता है। ब्राह्मण कहता है कि हम पुरोहिती को निन्दित और जन्म को दूषित करनेवाली जानते हैं'। जैसा रामायण में स्पष्ट लिखा है कि 'उपरोहिती कर्म अतिमन्दा। वेद पुराण स्मृति कर निन्दा'। इत्यादि। इसका विस्तार पूर्वक विचार आगे होगा। ऐसी दशा में प्रतिग्रह या पुरोहिती से रहित किसी शुद्ध ब्राह्मण या ब्राह्मणसमाज को ब्राह्मण न कहना, या हीन ब्राह्मण कहना केवल मूर्खता, द्वेष, नास्तिकता और धृष्टतामात्र है। यदि प्रतिग्रह या पुरोहिती ब्राह्मणोचित कर्म मान भी लिये जावें तो भी उनका न करनेवाला ब्राह्मण क्यों न कहा जावेगा? क्योंकि कर्म करने से जाति मानना विधर्मियों का सिद्धान्त और अनभिज्ञता है। सनातन धर्म का तो अटल सिद्धान्त है कि आम्र के बीज से जो उत्पन्न होगा वह आम्र ही होगा चाहे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसका सिंचन आदि करिये या न करिये। श्रुति भी यही कहती है कि 'अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत तं चाध्यापयीत' अर्थात् 'आठ वर्ष के ब्राह्मण का उपनयन संस्कार कराकर उसे पढ़ावे'। और मनुजी भी कहते हैं कि 'गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्'। २ अ० ३६। अर्थात् 'गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण का उपनयन करावे'। यद्यपि उपनयन संस्कार से पूर्व उसने कोई भी ब्राह्मणता-सम्पादक कर्म नहीं किये हैं और न भविष्यत् का ही निश्चय है, तथापि उसे ब्राह्मण ही, स्पष्ट शब्दों में, कह दिया है। इसलिये यही सिद्धांत है कि ब्राह्मणी और ब्राह्मण द्वारा जिसकी उत्पत्ति शास्त्रीय रीति से हो उसेही ब्राह्मण कहते हैं। जिसके धर्म संध्या-वंदनादि हैं, नकि पुरोहिती या प्रतिग्रह आदि।

२-ब्राह्मण धर्म।

(क) धर्मार्थ कर्म-अब यहां पर यह प्रश्न उत्पन्न हो सकता है कि अच्छा, ब्राह्मण जाति का यही सामान्य स्वरूप रहे। परन्तु उस में उत्तम, मध्यम तथा कनिष्ठ भाव किस प्रकार से हुआ और हो रहा है? क्या लोगों की यह धारणा कि अमुक विप्र उत्तम है और अमुक मध्यम इत्यादि, मिथ्या ही है? इस प्रश्न के हल करने का सब से उत्तम उपाय यही है कि ब्राह्मणों के स्वरूप का विचार, उनके आचार-व्यवहारों की देख भाल और उन के धर्मों के विषय में शास्त्रों की आज्ञाओं का परिशीलन (मीमांसा या विचार) कर लिया जावे कि याज्ञवल्क्यादि महर्षियों के समय से आज तक वे लोग किस मार्ग का अवलम्बन करने से कैसे माने गये हैं। उन्होंने धर्म और जीविका के लिये किन २ कर्मों का आश्रय लिया है, उन में से किसे उत्तम, मध्यम अथवा हीन समझा है और भविष्य के लिये कौन से शिक्षा रूप बीज बोये हैं। क्योंकि शिष्टों (श्रेष्ठ पुरुषों) के आचार भी प्रमाण माने जाते हैं। अतएव पूर्व मीमांसा दर्शन के प्रथमाध्याय के तृतीय पाद के अष्टम अधिकरण में 'अनुमानव्यवस्थानात्तत्संयुक्तं प्रमाणं स्यात्,॥ १५ ॥ इत्यादि सूत्रों द्वारा होलिका आदि शिष्टाचारों को प्रमाण मान कर उनके विषय में विशेष विचार किया गया है और उसी पाद के ५ वें अधिकरण में दाक्षिणात्य ब्राह्मणों में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रचलित शिष्टाचार के अनुसार मामा की कन्या के साथके विवाह को लोग उचित न समझ लेवें, इस के लिये,

मातुलस्य सुतामूढ्वा मातृगोत्रां तथैव च।
समान प्रवरां चैव त्यक्त्वा चान्द्रायणं चरेत्॥

अर्थात् 'मामा की लड़की, माता के गोत्र की लड़की और अपने गोत्र वाली लड़की से भूल कर ब्याह कर लेने पर भी उसे छोड़ कर चान्द्रायण व्रत करे,' इस स्मृतिवचन के विरुद्ध होने से उस आचार को उन्होंने अप्रामाणिक ठहराया है। परन्तु आजकल तो इतनी प्रबल मूर्खता हो गई है कि अज्ञान वश अथवा तृष्णादि में पड़ कर प्रायः सभी ब्राह्मण एवं अन्य जातियां अपने और माता के गोत्र में विवाह करने में नहीं हिचकतीं।

अस्तु, अब देखना चाहिये कि श्रुति तथा मनु आदि महर्षियों की आज्ञाएं ब्राह्मणों के प्रति धार्मिक विषयों में—विशेष कर जीविका और धर्म के लिये किये जाने वाले कर्मों के विषय में—कैसी हैं। इस जगह इतना और भी स्मरण रखना होगा कि सभी धर्म अनापत्कालिक (जो विना किसी दबाव या मजबूरी के किये जा सकें) और आपत्कालिक (जो तकलीफ या दबाव पड़ने पर हार कर किये जावें) इन दो प्रकार के हैं। इस से विषय के विवेचन (निर्णय) में आसानी होगी।

छान्दोग्योपनिषत् के द्वितीय प्रपाठक के २३ वें खण्ड में लिखा है कि:—

त्रयोधर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमः।

जिसका भाव यह है कि 'नित्य नैमित्तिकादि धर्म रूप वृक्ष की तीन बड़ी २ शाखायें हैं, जिन में पहिली शाखा यज्ञ, वेद और शास्त्रों का पढ़ना और दान रूप है'। इन्हीं में संध्या और अग्निहोत्र वगैरः भी आगये, क्योंकि अग्निहोत्र यज्ञ का स्वरूप ही है और गायत्री का जप भी उससे बाहर नहीं है। जैसा कि गीता में भगवान श्री कृष्ण जी ने कहा है कि:—

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथाऽपरे। अ० ४।२८।

भावार्थ यह है कि 'कोई द्रव्यों (काष्ठ, घृत आदि) से यज्ञ करते, कोई गायत्री जप एवं व्रतादि रूप जो तप कहलाते हैं उन्हीं यज्ञों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करते और कोई समाधि रूप ही यज्ञ करते हैं'। यदि अध्ययन को भी यज्ञ में मिला लेवें तो कोई हानि नहीं है। परन्तु, पढ़ने का फल यज्ञ है इस लिये उसे श्रुतियों और स्मृतियों में यज्ञ से पृथक् ही गिनाया है। मनुस्मृति में जो लिखा है कि,

अध्यापनमध्ययनं याजनं यजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव षट्कर्माण्यग्रजन्मनः। १०। ७५

अर्थात् 'पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान और प्रतिग्रह ये छ कर्म ब्राह्मणों के हैं'। उसका भी यही आशय है कि अध्ययन (पढ़ना), दान और यज्ञ करना यही तीन कर्म धर्म के लिये हैं, शेष तीन तो जीविका के ही लिये हैं। परन्तु जगदुत्पत्ति प्रकरण प्रथम अध्याय में इन छ कर्मों की उत्पत्ति साथ ही कही गई है। इस लिये यहां भी सभी का नाम प्रायः उसी उत्पत्तिप्रकरण के श्लोक द्वारा लिया है। वास्तव में तो यह प्रकरण (मनुस्मृति का दसवां अध्याय) उन कर्मों का है जो आपत्काल में जीविका के लिये किये जा सकते हैं। इसी लिये अगले श्लोक में लिख दिया है कि,

षण्णां तु कर्मणामस्य त्रीणि कर्माणि जीविका।
याजनाध्यापने चैव विशुद्धाच्चप्रतिग्रहः॥ म. १०। ७६

अर्थात् 'पूर्वोक्त छ कर्मों में से यज्ञ कराना, पढ़ाना और शुद्ध जनों का प्रतिग्रह करना ये कर्म तो जीविका के लिये हैं'। परन्तु यदि इन्हीं तीनों को यहां लिखते और पढ़ने, यज्ञ करने और दान को छोड़ देते तो जैसा कि लोग फिर भी आज समझने लग गये हैं, समझने लग जाते कि आपत्ति काल में पढ़ने, यज्ञ करने और दान देने की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि मनुस्मृति में उसकी आज्ञा नहीं है। इस लिये मनु भगवान ने इन तीनों को भी साथ ही लिख दिया है। अत्रि जी भी लिखते हैं कि,

कर्म विप्रस्य यजनं दानमध्ययनं तपः।
प्रतिग्रहोऽध्यापनं च याजनं चेति वृत्तयः॥ १३॥

तात्पर्य यह है कि 'ब्राह्मण के कर्म (धर्म) तो यज्ञ, दान और अध्ययन ये तीन ही हैं, प्रतिग्रह, पढ़ाना और यज्ञ कराना ये तीन तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीविकायें हैं'। अतः ब्राह्मण के धर्मार्थक कर्म यज्ञ, अध्ययन और दान तीन हीं हैं। गीता में भी लिखा है कि :—

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥ १८। ४२

अर्थ यह है कि 'मन और इन्द्रियों का विषयों से रोकना, तपस्या, आभ्यन्तर और बाह्य शौच, क्षमा, नम्रता, शास्त्र-ज्ञान और अनुभव रूप (साक्षात्कार रूप) ज्ञान ब्राह्मणों के स्वाभाविक धर्म हैं'। इन में याजन अथवा अध्यापन के तो नाम भी नहीं हैं। पराशरस्मृति के प्रथमाध्याय में भी लिखा है कि:—

संध्या स्नानं जपो होमो देवतानां च पूजनम्।
आतिथ्यं वैश्वदेवं च षट्कर्माणि दिने दिने ॥ ३८ ॥

अर्थात् 'रात और दिन की सन्धि समय में स्नान, गायत्री को जप, अग्निहोत्र, शिवविष्णवादि देवों का पूजन, यथाशक्ति अतिथि का सत्कार और बलि वैश्वदेव ये छ कर्म ब्राह्मणों को नित्य करने चाहियें'। मनु जी अन्त में भी १२ वें अध्याय में लिखते हैं कि:—

यथोक्तान्यपि कर्माणि परिहाय द्विजोत्तमः।
वेदाभ्यासे शमे च स्यादात्मज्ञाने च यत्नवान् ॥ ८२ ॥

जिस का भाव यह है कि, 'ब्राह्मणों के लिये जो बहुत से कर्म बतलाये गये हैं उनका त्याग भी कर के वे वेदाभ्यास, चित्त निरोध (समाधि) और आत्मज्ञान के लिये यत्न करें'। इस से स्पष्ट ही है, कि मनु जी को वेदाभ्यास प्रभृति कर्मों की ही प्रधानता विवक्षित है, जिन के अंतर्गत संध्या और अग्निहोत्र भी हैं। याज्ञवल्क्य जी ने भी आचाराध्याय में कह दिया है कि:—

जपन्नासीतसावित्रीं प्रत्यगातारकोदयात् ॥ २४ ॥
सन्ध्यां प्राक्प्रातरेवंहि तिष्ठेदासूर्यदर्शनात्।
अग्निकार्यं ततः कुर्यात् सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥ २५ ॥

अर्थात् 'सन्ध्या समय पश्चिम मुख बैठकर तारा के निकलने तक और प्रातः पूर्व मुख बैठकर सूर्योदय पर्यन्त गायत्रीजप करे। उसके बाद दोनों सन्धिकाल में अग्निहोत्र करे'। श्रुतियों में यही अनुशासन (आज्ञा)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्यत्र भी है, जैसा कि शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थों में लिखा है कि—

'स्वाध्यायोऽध्येतव्यः' 'अहरहः सन्ध्यामुपासीत,' 'अग्निहोत्रं जुहुयात्'।

अर्थ यह है कि 'वेद नित्य पढ़ना और सन्ध्या और अग्निहोत्र नित्य करना चाहिये'। इत्यादि शतशः श्रुति स्मृत्यादि प्रमाणों से सिद्ध है कि ब्राह्मणों के लिये धर्मार्थक कर्म केवल अध्ययन, सन्ध्यानुष्ठान, अग्निहोत्र और वैश्वदेव आदि ही हैं, न कि अध्यापन (पढ़ाना) और याजन (यज्ञ कराना) आदि भी। याज्ञवल्क्यस्मृति, आचाराध्याय के ११८ वें श्लोक के व्याख्यान मिताक्षरा में साफ २ लिखदिया है कि:—

तत्र त्रीणीज्यादीनि धर्मार्थानि त्रीणि प्रतिग्रहादीनि वृत्त्यर्थानि। षण्णांतु कर्मणामस्य त्रीणि कर्माणि जीविका। याजनाध्यापने चैव विशुद्धाच्च प्रतिग्रहः (१०।१६) इति मनुस्मरणात्, अत इज्यादीन्यवश्यं कर्त्तव्यानि न प्रतिग्रहादीनि। द्विजातीनामध्ययनमिज्यादानं ब्राह्मणस्याधिकाः प्रवचनयाजनप्रतिग्रहाः पूर्वेषु नियमः (१० अ०) इति गौतस्मरणात्।

जिसका अर्थ यह है कि 'छ कर्मों में से यज्ञ, अध्ययन और दान ये तीनों धर्म के लिये और याजन, अध्यापन एवं प्रतिग्रह ये तीनों केवल जीविका (पेट पालने) के लिये हैं, क्योंकि मनुजीने कहा है कि छ कर्मों में से विशुद्ध प्रतिग्रह आदि तो केवल जीविका के निमित्त हैं। इसलिये यज्ञ अध्ययन और दान अवश्य करने चाहियें, न कि प्रतिग्रह वगैरः भी, क्योंकि गौतस्मृति के दशम अध्याय में लिखा है कि द्विज मात्र के लिये यज्ञ, अध्ययन और दान ये तीन कर्म हैं, और ब्राह्मणों के लिये यद्यपि याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह भी हैं, तथापि उन का करना आवश्यक नहीं है, किन्तु यज्ञ आदि का ही'। यह मिताक्षराकार की सम्मति इस विषय में है।

हां, जीविका के लिये प्रतिग्रह कर कर सकते हैं। परन्तु सो भी आपत्काल में, जब उञ्छ, शिल, कृषि और आणिज्यादि एक भी न हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सके जैसा कि आगे चलकर विदित होगा। इतने पर भी प्रतिग्रह के बाद प्रायश्चित्त अवश्य ही करना होगा। क्योंकि मनुस्मृति चतुर्थ अध्याय में लिखा है कि—

अतपास्त्वनधीयानः प्रतिग्रहरुचिर्द्विजः।
अम्भस्यश्मप्लवेनेव सह तेनैव मज्जति॥ १८० ॥

अर्थात् 'जो ब्राह्मण वेदादि शास्त्रों को पढ़ने और तपस्या करने वाला नहीं है वह यदि प्रतिग्रह करे तो प्रतिग्रह के साथही उसका नाश वैसेही होजाता है जैसे पत्थर की नाव चढ़ने वाले के साथ डूब जाती है'। इसका विशेष विचार फिर करेंगे। एक बात और भी विचारने योग्य है। वह यह कि किसी भी प्रसंग में सब से प्रथम प्रधान वस्तु का ही नाम लिया जाता है, जैसे सभा में सभापति का इत्यादि। अब यदि इन षट् कर्मों के बतलाने वाले वाक्यों को देखते हैं तो सभी में प्रथम यजन, अध्ययन और दान के नाम आते हैं, पश्चात् याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह के। इतनी बात अवश्य है कि अध्यापन (पढ़ाना) तीन प्रकार के होते हैं, जैसा कि हारीत स्मृति के प्रथम अध्याय में लिखा है:—

अध्यापनं च त्रिविधं धर्मार्थमृक्थ कारणात्।
शुश्रूषाकरणं चेति त्रिविधं परिकीर्त्तितम् ॥१८॥

अर्थ यह है कि 'अध्यापन तीन प्रकार के होते हैं, (१) धर्म के लिये, (२) सेवा कराने के लिये और (३) धन प्राप्ति के लिये'। अतः प्रथम के दो अंशों को लेकर अध्यापन भी याजन (यज्ञकराने) और प्रतिग्रह की अपेक्षा उत्तम है। इसीलिये कहीं २ अध्यापन को भी प्रथम लिख देते हैं। जैसाकिः—

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥ मनु॥

यदि यज्ञ भी केवल परोपकारार्थ कराया जावे न कि दक्षिणा लेकर, तो वह भी किसी प्रकार अच्छा कहा जा सकता है। अतएव कहीं २ एकाध स्थल में उसका नाम भी प्रथम लिया है। जैसा कि हारीतस्मृति के प्रथम अध्याय में लिखा है:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्यापनमध्ययनं याजनं यजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव षट् कर्माणीति प्रोच्यते॥१८॥

परन्तु प्रतिग्रह का नाम तो कहीं भी प्रथम नहीं आया है। इस लिये वह तो महानिकृष्ट है। अध्ययन, यजन और दान इन तीनों में से भी अध्ययन (पढ़ना) सर्वोच्च है। क्योंकि उससे परमात्मा के ज्ञान द्वारा मुक्ति मिल सकती है और शास्त्र एवं कर्मों के ज्ञान से यज्ञादि का अनुष्ठान भी हो सकता है। इसीलिये यज्ञ उससे मध्यम ठहरा, क्योंकि यह उसका फल है। यज्ञ में दान भी होता है और जप, हवन आदि भी। अतएव यज्ञका एक भाग होनेके कारण दान यज्ञ से भी मध्यम अर्थात् कनिष्ठ हुआ। इस तरह से ये अध्ययन, यज्ञ और दान उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ धर्म हैं। इसीसे पूर्वोक्त श्लोकों में प्रथम अध्ययन, बाद यज्ञ और उस के अनन्तर ही दान का नाम आया है। इस प्रकार तीन प्रकार के धर्मों के हो जाने पर अब चौथे प्रकार का धर्म कहां से आ सकता है? क्योंकि संसार की सभी वस्तुएं या तो उत्तम या मध्यम अथवा कनिष्ठ इन तीनों हीं प्रकारों की होतीहैं। इसलिये जो धर्म होंगे उनका इन्हीं तीन अध्ययन आदि में अन्तर्भाव (मिलाव) करना होगा। परन्तु प्रतिग्रह वगैरः तो इन तीनों में से किसी में भी मिल नहीं सकते। अतः वे सब कर्म धर्म के लिये नहीं हो सकते। अतएव मनु भगवान ने कहा है कि:—

वेदाभ्यासो ब्राह्मणस्य क्षत्रियस्य च रक्षणम्।
वार्त्ता कर्मैव वैश्यस्य विशिष्टानि स्वकर्मसु॥१०॥

इसका तात्पर्य यह है कि 'ब्राह्मण के कर्मों में वेदाभ्यास सब से उत्तम है। एवं क्षत्रिय के कर्मों में रक्षा करना और वैश्य के कर्मों में व्यापार सर्व श्रेष्ठ हैं। अर्थात् इन तीन ब्राह्मणादि वर्णों को क्रम से वेदाभ्यास आदि तीनों में विशेष ध्यान देना चाहिये'। अतएव अब इस शंका का भी अवसर न रहा कि यदि ब्राह्मण के भी तीन कर्म हैं और क्षत्रिय, वैश्य के भी तीनहीं तो फिर उनमें भेद ही क्या रहा? क्योंकि यद्यपि तीनों के लिये अध्ययन आदि समान हीं धर्म हैं, तथापि ब्राह्मण का प्रधान धर्म वेदाभ्यास है, क्षत्रियों का तीनों से अतिरिक्त रक्षा ही प्रधान धर्म है, एवं वैश्य का व्यापार। क्योंकि यदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्षत्रिय रक्षक और वैश्य वाणिज्यकर्त्ता न होवे तो विविध उपद्रव और धन की कमी से सब धर्म हीं मिट्टी में मिल जावें। इस लिये क्षत्रिय और वैश्यों के लिये इन्हें हीं प्रधान कर्म बतलाना बहुत ही युक्तिसंगत है और इन प्रधान कर्मों के भेद से ही ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की परस्पर विलक्षणता हो गई। दूसरी बात यह है कि यदि ये धर्मार्थक कर्म तीनों के समान भी होजावें तो भी जीविका के कर्म तीनों के भिन्न २ हैं। अतः उन्हीं के भेद से तीनों का परस्पर भेद हो सकता है। क्योंकि ब्राह्मणों के ही लिये शिल, उञ्छादि बतलाये गये हैं न कि क्षत्रियों और वैश्यों के लिये भी वे जीविकायें हैं। बल्कि हमारी समझ में ऐसी शंका करना हीं न चाहिये। क्योंकि हमलोग (सनातनधर्मानुयायी) जन्म से ही जाति भेद मानते हैं, न कि कर्मों से। नहीं तो ब्राह्मण और क्षत्रियों की एकता न हो जावे इस डर से यदि ब्राह्मणों के षट् कर्म अवश्य माने जावें, तो यह पूछ सकते हैंकि अस्तु, यही बात रहे, परन्तु क्षत्रियों और वैश्यों में परस्पर भेद कैसे रहेगा? क्योंकि उन दोनों के लिये तो धार्मिक कर्म अध्ययन, यजन और दान तीन हीं हैं। अतः ऐसी शंका करना अनभिज्ञता मात्र है। याज्ञवल्क्य स्मृति के आचाराध्याय में भी लिखा है कि:—

प्रधानं क्षत्रिये कर्म प्रजानां परिपालनम् ।
कुसीदकृषिवाणिज्यं पाशुपाल्यं विशः स्मृतम् ॥११८॥

अर्थात् 'क्षत्रिय का प्रधान कर्म प्रजारक्षण और वैश्य के प्रधान कर्म सूदपर रुपया देना, कृषि, वाणिज्य एवं पशु पालन हैं।' इसी जगह मिताक्षरा में लिखा है कि:—

क्षत्रियस्य प्रजापालनं प्रधानं कर्म धर्मार्थं वृत्त्यर्थं च। वैश्यस्य कुसीदकृषिवाणिज्यपशुपालनानिवृत्त्यर्थानिकर्माणि ।

अर्थात् 'क्षत्रियका प्रजापालन हीं प्रधान कर्म है जो धर्म और जीविका दोनों के लिये है। एवं वैश्य के सूद पर रुपये देने, कृषि, वाणिज्य और पशुपालन प्रधान कर्म हैं'। इससे यह भी सूचित होता है कि कृषि वाणिज्यादि ब्राह्मणों के अप्रधान कर्म अवश्य हैं, हां वे प्रधान नहीं हो सकते यह दूसरी बात है। इन वाक्यों तथा गीता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के १८ वें अध्याय के ४२, ४३ और ४४ श्लोकों में भी लिखे गये ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के धर्मों को देखकर मूर्ख से भी मूर्ख को यह शंका नहीं हो सकती कि 'ब्राह्मणों के तीन हीं कर्म मानने से क्षत्रिय और वैश्यों से उनका भेद न रह जायगा'। इसलिये ब्राह्मणों को त्रिकर्मा कहना बहुत ही युक्तियुक्त है, न कि जीविका के कर्मों मिलाकर षट्कर्मा। क्योंकि ऐसी दशा में शतकर्मा या सहस्रकर्मा क्यों न कहना चाहिये? क्योंकि मनुस्मृति चतुर्थाध्याय के अनुसार, जैसा कि अभी जीविकार्थक कर्मों के प्रकरण में दिखलावेंगे, शिल, उञ्छ, कृषि, वाणिज्य और सूद पर रुपये देने भी ब्राह्मणों की अनापत्ति काल की जीविकायें हैं। बल्कि प्रतिग्रह वगैरह ही आपत्ति काल की जीविकायें हैं, जैसा कि वहीं विदित होगा। एवं पुराण इतिहास तथा पराशर आदिस्मृतियों और शिष्टाचारों द्वारा भी राज्य, कृषि, सेनापति के कार्य और युद्धादि भी ब्राह्मणों के कर्म बतलाये जावेंगे। यदि जीविका के कर्म भी परम्परया धर्मार्थक माने जावें तो स्नान तथा मलमूत्रादि के त्याग प्रभृति भी उसी में आ जावेंगे, जिससे बलात् षट्कर्मा मानने के बदले शत या सहस्रकर्मा मानना हीं पड़ जावेगा। अतः यह निर्विवाद सिद्ध है कि वास्तव में ब्राह्मण त्रिकर्मा हीं होते हैं, जैसे कि आज कल अयाचक (भूमिहार, पश्चिमा, तगे या दानत्यागी, महियाल, नागर, प्रायः कान्यकुब्ज और बहुत से पंक्तिबद्ध सर्यूपारी) ब्राह्मण पाये जाते हैं। अथवा यों कहना चाहिये की सभी प्रान्तों में किसी न किसी नाम या रूप में त्रिकर्मा अथवा अयाचक ब्राह्मण पाये जाते हैं।

यदि षट्कर्मा हीं मानने में आग्रह होवे तो सच्चे षट्कर्मा क्यों नहीं मानते? जैसे कि अयाचक ब्राह्मण भी पाये जाते हैं। क्योंकि मनुजी ने चतुर्थाध्याय के प्रारम्भ में शिल, उञ्छ, याचित, अयाचित, कृषि और वाणिज्य रूप छ जीविकाओं को ब्राह्मणों के निमित्त गिना कर कहा है कि,—

षट्कर्मैको भवत्येषां त्रिभिरन्यः प्रवर्त्तते।
द्वाभ्यामेकश्चतुर्थस्तु ब्रह्मसत्रेण जीवति ॥ ९ ॥

अर्थ यह है कि 'इन पूर्वोक्त चतुर्विध ब्राह्मणों में कोई तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

षट्कर्मा होता है, अर्थात् पूर्वोक्त शिल, उञ्छ आदि छ जीविकायें करता है, कोई प्रथम के शिल आदि तीन हीं, कोई दोही और कोई शिल और उञ्छ में से एक ही करता है'। इस वचन के अनुसार षट्कर्मा भी मानिये, हमें त्रिकर्मा हीं मानने में आग्रह नहीं है। क्योंकि ये छ कर्म याचक और अयाचक ब्राह्मणों में समान हीं हैं, किसी में कुछ भी कमी नहीं है।

अथवा पराशर स्मृति में कहे गये सन्ध्या-स्नान आदि छ कर्मों को, जिनका वर्णन प्रथम कर भी चुके हैं और जो केवल धर्मार्थक ही हैं, लेकर भी दोनों प्रकार के (अयाचक और याचक) ब्राह्मण षट्कर्मा कहे जा सकते हैं। क्योंकि यह नियम भी है कि "कलौ पाराशराः स्मृताः" अर्थात् 'कलियुग में पराशर स्मृति में कहेगये धर्म हीं माने जा सकते हैं' और उन्होंने स्पष्ट रूप से 'षट्कर्माणि दिने दिने" अर्थात् 'सन्ध्या-स्नानादि छ कर्म प्रतिदिन करने चाहियें' ऐसा लिख दिया है। इस लिये इन धार्मिक षट्कर्मों को लेकर ही षट्कर्मा मानना बहुत ही उचित होगा जैसा कि दिखला चुके हैं। अतः अयाचक ब्राह्मण त्रिकर्मा या षट्कर्मा दोनों हीं कहे जा सकते हैं और, साथ ही, अन्य ब्राह्मण भी। इस विषय का अवशिष्ट विवेचन अगले ग्रंथ में चल कर होगा। उपसंहार में हम केवल इतना और कह देना चाहते हैं कि जब मनु जी स्वयं लिख देते हैं कि 'धर्मस्तु दानमध्ययनं यजिः' (१०।७६) अर्थात् 'धर्मार्थक अथवा स्वयं धर्म स्वरूप कर्म तो दान, यज्ञ और अध्ययन (पढ़ना) ये तीन हीं हैं', तो फिर इस विषय में विवाद ही क्या है? क्या इन में कुछ ऐसी विशेषता है कि क्षत्रियादि के लिये ये धर्म होवें न कि ब्राह्मणों के लिये? क्या किसी विचारहीन के केवल कथनमात्र ही से प्रतिग्रह आदि भी अपने वास्तव कलुषित स्वरूप को (जैसा कि सभी जानते और मानते हैं) छिपा कर धर्म बन जावेंगे? क्या लोग नहीं जानते हैं कि धर्म के नाम पर प्रतिग्रह लेना केवल फिर से धोने के लिये पंक में पांव को घुड़ेसना है और धर्म-शास्त्रकार चिल्ला २ कर उन्हें रोकते हैं कि ऐसा न करो? क्या कोई भी विचारवान् और नैष्ठिक ब्राह्मण प्रतिग्रह को उचित समझता है?

इस विषय में एक बात और कह कर इस प्रकरण की समाप्ति और जीविकार्थक कर्मों के विचार के प्रकरण का आरम्भ करेंगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह यह कि अध्यापन (पढ़ाना), याजन (यज्ञ कराना) आदि कर्म काम्य हैं, अर्थात् इच्छा रहने पर ही किये जा सकते हैं। परन्तु अध्ययन (पढ़ना)आदि तो नित्य हैं, अर्थात् उनके करने की इच्छा न रहने पर भी उन्हें करना हीं पड़ेगा। इसी लिये अध्यापन आदि करने के लिये शास्त्र बाधित नहीं कर सकता, बल्कि अपनी इच्छा के अनुसार ही लोग उसे कर सकते हैं या नहीं। क्योंकि काम्य कर्मों में यथानुष्ठान–शक्ति का नियम है, जिसका तात्पर्य यह है कि जिस काम्य कर्म के करने की इच्छा हो उस के सांगोपांग अनुष्ठान और प्रायश्चित्त वगैरः करने की शक्ति यदि हो तो उसे करे, नहीं तो न करे। परन्तु नित्य कर्मों को तो अवश्य ही करना होगा। इसलिये उनके विषय में यथाशक्त्यनुष्ठान का नियम है, जिसका भाव है कि, नित्य कर्मों को जीवन पर्यंत करना आवश्यक है। परन्तु जीवन भर सब अंगों सहित करने की शक्ति नहीं रह सकती। क्योंकि जरावस्था में स्नान या प्राणायाम आदि नहीं कर सकते। इसलिये प्रधान कर्म को न छोड़ कर उसे करते हुए स्नान प्रभृति उसके अंगों को यथाशक्ति करना चाहिये। इसीलिये यद्यपि नित्य और काम्य दोनों प्रकार के कर्मों के फल होते हैं, तथापि दोनों में भेद होता है। इसी बात को श्री पार्थ सारथि मिश्र ने अपने मीमांसा–ग्रंथ 'न्यायरत्नमाला' में इस प्रकार लिखा है कि,

काम्ये तु निमित्तवाक्यस्य कश्चिद्विरोधो नास्तीत्यंगान्यपेक्षितान्युपसंह्रियन्ते इतिनिखिलाङ्गयुक्तस्यैव प्रयोगः नित्ये तु यथोक्तन्यायेनांगानां यथाशक्त्युपसंहार इति॥

तात्पर्य यह है कि 'जब कि काम्यकर्मों में सांगोपांग का ही अनुष्ठान करने में किसी भी निमित्त के साथ कोई विरोध नहीं है (क्योंकि जीवन रूप निमित्त तो वहां है ही नहीं, कि जीवन भर सब अंगों के न कर सकने से विरोध होगा, और कामना रूप निमित्त तो आवश्यक नहीं है; क्योंकि यदि सांगोपांग कर्म को नहीं कर सकते तो कामना को छोड़ भी सकते हैं) इसलिये सभी अपेक्षित अंगों को करना हीं पड़ता है, न कि उन्हें छोड़कर भी। परंतु नित्य कर्म तो पूर्वोक्त प्रकार से जीवन भर सब अंगों सहित लोग नहीं हीं कर सकते हैं अंगों के लिये प्रधान कर्म का भी त्याग उचित भी नहीं है और जीवन रूप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निमित्त अपरिहार्य है। अतः वहां यथाशक्ति ही अंग कियेजाते हैं'। इससे तो स्पष्ट ही है कि अध्यापन आदि कर्म उसी दशा में किये जा सकते हैं जब उनके करने की सामर्थ्य और कामना हो, न कि उनके करने के लिये शास्त्र अवश्य बाधित कर सकते हैं। जैसा कि स्वामी चित्सुखाचार्य जी ने अपने 'चित्सुखी' (तत्त्वप्रदीपिका) ग्रन्थ में स्पष्ट ही लिख दिया है कि,

किंच तमध्यापयीतेति च नायमध्यापने विधिर्वृत्त्यर्थत्वेनाध्यापनस्य याजनवत् प्राप्तत्वात्, उक्तं हि षण्णां तु कर्मणामस्य त्रीणि कर्माणि जीविका। याजनाध्यापने चैव विशुद्धाच्च प्रतिग्रह इति, तस्मात् यथैतयान्नाद्यकामं याजयेदित्यादिषु याजनं न विधीयते, किन्त्वेतयाऽन्नाद्यकामो यजेतेति वाक्यार्थ, स्तवेहाप्यष्टवर्षो ब्राह्मण उपगच्छेत्, सोधीयीतेति वाक्यार्थः स्वीकार्य इति॥

इसका अर्थ यह है कि 'अष्टवर्षब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत' इस श्रुति में उपनयन संस्कार करवाने और पढ़ाने की आज्ञा नहीं है, क्योंकि जैसे यज्ञ करवाना जीविका है, इस लिये उसका करना लोगों के लिये स्वतः (आपही आप) सिद्ध है, न कि उसके लिये शास्त्राज्ञा की आवश्यकता है, वैसे ही अध्यापन (पढ़ाना) भी जीविका के ही लिये है, क्योंकि मनु जी ने कहा है कि छ कर्मों में से अध्यापन आदि तीन कर्म तो केवल ब्राह्मणों की जीविकायें हैं। इसलिये जैसे 'एतयाऽन्नाद्यकामं याजयेत्' इस श्रुति में यह आज्ञा नहीं है कि अन्नादि चाहने वाले से 'अवेष्टि' नामक यज्ञ करवावे, क्योंकि यज्ञ करवाना तो विना कहे ही सिद्ध है, किन्तु वहां यज्ञ करने की ही आज्ञा है, कि अन्नादि चाहने वाला 'अवेष्टि' नामक यज्ञ करे, यज्ञ करवाने की आज्ञा केवल ऊपर से प्रतीत मात्र ही होती है। उसी प्रकार यहां भी यही आज्ञा है कि आठ वर्ष का ब्राह्मण गुरु के पास जावे और विद्या पढ़े, न कि, गुरुओं के लिये पढ़ाने की आज्ञा है, वह तो प्रतीत मात्र होती है।'

इसी 'चित्सुखी' ग्रन्थ की टीका 'नयनप्रसादिनी' में उसी जगह स्पष्ट शब्दों में हीं लिख दिया है कि,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यथा हि न तावद्यथाश्रुति याजनं विधातुं शक्यं वृत्त्यर्थत्वेन तत्र स्वत एव प्रवृत्तत्वात्, अतोऽप्राप्तप्रयोज्यरूपसाक्षात्कर्तृव्यापारयागपरो विधिस्तथेहाप्यन्यतोऽप्राप्तप्रयोज्यमाणवकव्यापारावुपगमनाध्ययने विधीयेते इत्यर्थः।

जिसका अर्थ यह है कि 'जैसे 'अवेष्टि' यज्ञ करवाने की आज्ञा नहीं हो सकती, क्योंकि वह तो जीविका है, इसलिये विना कहे ही उसे लोग कर सकते हैं। किन्तु यज्ञ करने की ही वहां आज्ञा है। ठीक वैसे ही गुरु को अपने पास विद्यार्थी लाने और उसके पढ़ाने की आज्ञा शास्त्रों में नहीं दी गई है। क्योंकि विना शास्त्राज्ञा के ही गुरु लोग ऐसा करनेमें जीविका के लिये तत्पर होते हैं। किन्तु विद्यार्थी स्वयं गुरु के पास जावे और पढ़े यही वेद की आज्ञा है। क्योंकि ऐसी आज्ञा के विना कोई पढ़ नहीं सकता जब कि हजार शास्त्राज्ञा के होते भी शास्त्र का पढ़ना दुःसाध्य होरहा है। पढ़ाना जीविका है इसे तो बहुत अच्छी तरह दिखला चुके हैं।

परन्तु यदि कोई यह कहे कि पढ़ाना या यज्ञ करवाना आदि काम्य कर्म नहीं हैं, तो उसके लिये भी 'चित्सुखाचार्य' जी ने पूर्वोक्त प्रसङ्ग में हीं लिखा है कि:—

तत्र संमाननोत्सञ्जनाचार्यकरणेतिसूत्रेणाचार्यकरणं नयतेरात्मनेपदविधानात्, उपनयीत तमध्यापयीतेतिचोपनयनाध्यापनयोरेकप्रयोगतावगमादुपनयनपूर्वकाध्यापनसाध्याचार्यत्वप्रतीतौ तत्कामिनो नियोज्यत्वावगमात्। अपि चाध्ययनं नित्यं, 'योऽनधीत्य द्विजोवेदानन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वय' इत्यादिनाऽकरणेप्रत्यवायस्मरणात्, अध्यापनंचानित्यंकाम्यत्वा

जिसका भावार्थ यह है कि 'उपनयीत' इस क्रियापद में जो 'आत्मनेपद' संज्ञक प्रत्यय लगा है वह 'संमाननोत्सञ्जनाचार्यकरणज्ञानभृतिविगणनव्ययेषु नियः।१।३।२६' इस पाणिनीय सूत्र के अनुसार आचार्यता सम्पादन के अर्थ में हुआ है। जिसका तात्पर्य यह है कि विद्यार्थी के उपनयन संस्कार पूर्वक पढ़ाने से वह पुरुष उसका आचार्य हो सकता है, क्योंकि उपनयन और अध्यापन (पढ़ाना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ये दोनों एक ही पुरुष के कर्त्तव्य प्रतीत होते हैं। अतः जिसको गुरु (आचार्य) बनने की इच्छा होवे वही शिष्य का उपनयन संस्कार और अध्यापन कर सकता है। और भी बात है कि, अध्ययन (पढ़ना) नित्य-कर्म है, क्योंकि उसके न करने से मनुस्मृति में यह दोष लिखा है कि जो ब्राह्मण वेदों को न पढ़ कर दूसरे विषय में परिश्रम करता है वह जीता ही सपरिवार शूद्र सदृश हो जाता है और नित्य कर्मों के ही न करने में दोष हुआ करता है, क्योंकि उनका लक्षण हीं यही है कि जिनके न करने में दोष होवे। परन्तु अध्यापन तो नित्य नहीं है, क्योंकि उसे कामना रहने पर ही कर सकते हैं।"

इससे सिद्ध हो गया कि ब्राह्मण के लिये अध्ययन (पढ़ना), यजन (यज्ञ) और दान हीं धर्म हैं। उन्हीं का करने वाला श्रेष्ठ समझा जा सकता है। प्रतिग्रह, याजन (यज्ञ करवाने) और अध्यापन (पढ़ाने) के लिये शास्त्रों की आज्ञायें तो नहीं हैं, हां, जो चाहे वह जीविका के लिये उन्हें उस दशा में कर सकता है जब अन्य कृषि आदि उपाय न हों। इसी से वैसा करने से उत्तम न हो कर मध्यम या कनिष्ठ (हीन) ही हो सकता है, जैसा कि विदित हो गया और होगा भी कि उनमें प्रायश्चित्त वगैरः के बखेड़े लगे हुये हैं, जिनका कर सकना प्रायः सब प्रतिग्राहियों के लिये असम्भव है। और यह भी विदित हो गया कि इन्हीं प्रतिग्रह आदि तीन कर्मों के न करने और करने से दो प्रकार के ब्राह्मण सृष्टि काल से ही चले आते हैं, एक निवृत्त और दूसरे प्रवृत्त, अथवा अयाचक और याचक। क्योंकि 'रुचीनां वैचित्र्यात्' अर्थात् 'सब की रुचि एक प्रकार की नहीं हो सकती,' इस नियम के अनुसार बहुत से विचारशील और शास्त्र तत्त्व के जानने वाले पुरुष पुरोहिती और प्रतिग्रह वगैरः से अलग होने लगे, जैसी इच्छा प्रथमतः वसिष्ठ और विश्वरूप जी ने भी प्रकट की थी और अब तक भी अलग होते जाते हैं, जिन अयाचकों में हीं पश्चिमा, भूमिहार, त्यागी, जमींदार आदि ब्राह्मणों को भी समझना चाहिये। इसके विपरीत बहुत से ब्राह्मण लोग विचार और शास्त्र से काम न लेकर लोभ और आलस्य वश उन्हीं पुरोहिती और प्रतिग्रह वगैरः कर्मों में प्रवृत्त हो गये और हो रहे हैं, जिनमें से ही आज कल के भिक्षुक याचक या पुरोहित दलवाले ब्राह्मण हैं। इसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेष विवरण आगे के प्रकरणों में मिलेगा।

२—ब्राह्मण धर्म।

(ख) जीविकार्थक कर्म—अब प्रसङ्ग वश इस विषय का विचार करना हम उचित समझते हैं कि ब्राह्मण किस जीविका को किस दशा में कर सक्ता है और साधारणतः कौन २ सी जीविकायें श्रेष्ठ हैं।

यहां पर इस बात के स्मरण रखने से प्रकृत विषय के समझने में सुगमता होगी कि मनुष्य मात्र के, अतएव ब्राह्मण के भी, सभी धर्म दो प्रकार के होते हैं, एक आपत्कालिक और दूसरा अनापत्कालिक। इस का तात्पर्य यह है कि कुछ धर्म ऐसे होते हैं जिन्हें मनुष्य उसी दशा में करसकते हैं जब दूसरा कोई भी उचित उपाय न मिले, अर्थात् उनके किये विना किसी प्रकार भी काम न चल सके। जैसे, यद्यपि सन्ध्या करने के लिये स्नान आदि का करना आवश्यक है, तथापि रोगावस्था में विना जल स्नान के भी सन्ध्या का करना आपत्कालिक धर्म है। दूसरे प्रकार के धर्म वे हैं जो विना किसी रोक टोक, दबाव या शर्त के ही सर्वदा किये जा सकते हैं, जैसे अध्ययन (पढ़ना) या संध्यानुष्ठान वगैरः। इन्हें अनापत्कालिक धर्म कहते हैं। बस, इसी तरह जीविका के लिये भी जिन उपायों को शास्त्रों में बताया है, उनमें भी आपत्कालिक और अनापत्कालिक ये दो विभाग किये गये हैं, जो सर्वमान्य मनु भगवान द्वारा मनुस्मृति के चतुर्थ और दशम अध्यायों में क्रमशः सुस्पष्टरीति से वर्णित हैं। वे चतुर्थ अध्याय के प्रारम्भ में हीं लिखते हैं कि:—

चतुर्थमायुषोभागमुषित्वाऽऽद्यं गुरौ द्विजः।
द्वितीयमायुषोभागंकृतदारो गृहे वसेत् ॥ १ ॥
अद्रोहेणैव भूतानामल्पद्रोहेण वा पुनः।
या वृत्तिस्तां समास्थायविप्रोजीवेदनापदि ॥२॥

जिसका अर्थ यह है कि 'ब्राह्मण अपने सम्पूर्ण आयु का प्रथम चतुर्थांश ब्रह्मचर्य आश्रम द्वारा गुरुके पास बिताकर द्वितीय चतुर्थांश में विवाह करके गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे और ऐसी दशा में जो कि उसके ऊपर किसी प्रकार की आपत्ति या दबाव न होवे, अर्थात् अनापत्काल में (जैसा कि ऊपर दिखला चुके हैं) ऐसे २ उपायों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा जीविका करे जिनसे अन्य प्राणियों को या तो पीड़ा ही न होवे, या होवे भी तो बहुत थोड़ी'। क्योंकि शिल और उञ्छ आदि में भी प्राणियों की पीड़ा अनिवार्य है। फिर लिखते हैं कि:—

यात्रामात्रप्रसिद्ध्यर्थं स्वैः कर्मभिरगर्हितैः।
अक्लेशेन शरीरस्य कुर्वीत धनसंचयम् ॥ ३ ॥

अर्थात् 'शरीर यात्रा के लिये ऐसे विहित उपायों द्वारा धन एकत्र करे जिनसे बहुत क्लेश न होवे; (क्योंकि प्रतिग्रह आदि लेने में प्रायश्चित्त करने पड़ते हैं, जिनसे शारीरक क्लेश होता है और अपने हाथों से ही हल जोतने में भी) और जिनका धर्म शास्त्रों में निषेध न होवे, (क्योंकि अपने हाथों हल जोत कर कृषि करने और प्रतिग्रह इत्यादि का निषेध है, जैसा कि विदित होगा)।' प्रथम के दो श्लोकोंमें जिन उपायों का सामान्य रूप से वर्णन किया है उन्हीं को मनु भगवान इन अगले श्लोकों में विशेष रूप से गिनाते हैं। जैसा कि:—

ऋतामृताभ्यां जीवेत्तु मृतेन प्रमृतेन वा।
सत्यानृताभ्यामपि वा न श्ववृत्त्या कदाचन ॥४॥

अर्थ यह है कि 'अनापत्काल में ब्राह्मण ऋत, अमृत, मृत, प्रमृत और सत्यानृत नामक उपायों द्वारा शरीर यात्रा करे, परन्तु श्व (श्वान) वृत्ति नामक जीविका का तो कभी भी अवलम्बन न करे।' फिर भी मनु जी ने यह विचारा कि कदाचित् ऋत आदि शब्दों के अर्थ लोग व्याकरण आदि के बल से मनमाना करने लग जावें (जैसी कि कुल्लूकभट्ट प्रभृति टीकाकारों ने फिर भी टांग अड़ाई है), इसलिये अगले श्लोकों में आप ही उन शब्दों के अर्थ बतलाते हुये यह सूचित करते हैं कि ये ऋत और अमृत आदि नाम वैसे ही हैं, जैसे अश्वगन्ध, शालपर्णी मण्डप, ओदनपाकी और गदहपूर्णा वगैरः नाम औषधियों आदि के हैं, न कि यौगिक हैं। अर्थात् उनके अक्षरों से अर्थ निकाले नहीं जा सकते, ऐसा करना नितान्त भूल है। क्योंकि गदहपूर्णा का यह अर्थ कभी नहीं हो सकता कि गदहों से भरी हुई, या मण्डप शब्द का अर्थ 'मांड़ पीने वाला' नहीं हो सकता। वे श्लोक ये हैं:—

ऋतमुञ्छशिलं ज्ञेयममृतं स्यादयाचितम्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मृतं तु याचितं भैक्ष्यं प्रमृतं कर्षणं मतम् ॥५॥
सत्यानृतं तु वाणिज्यं तेन चैवापि जीव्यते।
सेवाश्ववृत्तिराख्याता तस्मात्तां परिवर्जयेत् ॥६॥

तात्पर्य यह है कि 'ऋत नाम उञ्छ और शिल वृत्तियों का है ('उञ्छः कणश आदानं कणिशाद्यर्जनं शिलम्' इस वृद्ध वचन के अनुसार अन्न विक्रय के स्थान तथा खेतों में जाकर पड़ी हुई बालों और दानों के चुगने को उञ्छ और शिल कहते हैं) विना मांगे यदि कुछ अन्न केवल भोजनार्थ मिल जावे तो उसे अमृत, भ्रमरकी तरह द्वार २ पर जाकर मांगने से जो मिले उसे मृत, और कृषि (खेती) को प्रमृत कहते हैं। वाणिज्य अर्थात् व्यापार और उचित सूद पर रुपये देने को सत्यानृत कहते हैं। ये सभी जीविका के उपाय ब्राह्मणों के लिये हैं। परन्तु श्व (श्वान) वृत्ति तो नौकरी का नाम है, अतः उसका परित्याग कर देना चाहिये'। इन पांच नामवाली अनापत्कालिक पांच जीविकाओं में से जिसे चाहे उसेही ब्राह्मण जब चाहे तभी कर सकता है, इनमें से किसी के भी करने से उत्तम या मध्यम नहीं समझा जा सकता। क्योंकि आगे चल कर मनु भगवान हीं स्पष्ट रूप से लिखते हैं:—

अतोऽन्यतमयावृत्त्या जीवँस्तु स्नातको द्विजः।
स्वर्गायुष्ययशस्यानि व्रतानीमानिधारयेत् १३अ०

अर्थात् 'इसलिये गृहस्थ ब्राह्मण पूर्वोक्त पांच जीविकाओं में से मन चाहे जिसे करता हुआ (क्योंकि इस श्लोक में 'अन्यतम' शब्द का प्रयोग है, जो ऐसी जगह बोला जाता है जहां पर बहुतसी बराबर वस्तुओं में से जिसे दिल चाहे उसे स्वीकार कर सकें। हिन्दी में इस की जगह 'इन में कोई' ऐसा बोला जाता है) स्वर्ग, आयु और यश को देनें वाले आगे कहे गये व्रतों का पालन करे'। हां, इतनी बात तो अवश्य है कि जो प्राचीन महर्षियों (क्योंकि ऋषि लोग भी संन्यासी न थे, प्रत्युत गृहस्थ ही थे, कारण सन्तानवाले थे) की तरह उपराम रहना पसन्द करें, एवं अहर्निश शास्त्र चिंता तथा अरण्यनिवास को ही रुचिकर और सुखद समझें, उनके लिये उस दृष्टि से शिल, उञ्छ आदि ही श्रेयस्कर (कल्याण साधक वा उत्तम) हो सकते हैं, यह दूसरी बात है। परन्तु जो संसार में प्रवृत्त हैं उनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिये तो सभी बराबर हो सकते हैं और हैं भी।

यहां इतना और समझ लेना चाहिये कि प्रवृत्ति वाले जो ब्राह्मण कृषि, वाणिज्य आदि करते हैं और जो निवृत्ति वाले केवल उञ्छ, शिल वगैरः ही करते हैं, उन दोनों में से किसी अंश को लेकर प्रथम श्रेणी के श्रेष्ठ हैं और किसी अंश में द्वितीय श्रेणी के। परन्तु प्रवृत्ति वाले होकर भी केवल शिल, उञ्छ करने वाले तो किसी भी गिनती में नहीं हैं। इसी लिये भगवान मनु ने चतुर्थ अध्याय में हीं लिखा है कि:—

कुसूलधान्यको वा स्यात् कुम्भीधान्यक एव वा।
त्र्यहैहिको वापि भवेदश्वस्तनिक एव वा॥ ७॥
चतुर्णामपि चैतेषां द्विजानां गृहमेधिनाम्।
ज्यायान्परः परो ज्ञेयो धर्मतो लोकजित्तमः॥ ८॥

याज्ञवल्क्य स्मृति के आचाराध्याय में लिखा है कि:—

कुसूल कुम्भीधान्यो वा त्र्याहिकोऽश्वस्तनोऽपि वा।
जीवेद्वापि शिलोञ्छेन श्रेयानेषां परः परः॥ १२८॥

सब वाक्यों का तात्पर्य यह है कि 'गृहस्थ ब्राह्मण चार प्रकार के होते हैं, कोई तीन वर्षों तक के लिये बड़े २ कोठों में अन्न एकत्रित रखते हैं, कोई बारह या छ मासों लिये, कोई तीन दिनों के ही लिये और कोई एक दिन के लिये भी नहीं। इन चारों में से जो एक दूसरे से परे हैं वे श्रेष्ठ हैं। क्योंकि वे धर्म द्वारा स्वर्ग आदि लोकों या ब्रह्मलोक को प्राप्त कर सकते हैं'। इसके दो अभिप्राय हैं। एक तो यह है कि ७ वें श्लोक में गिनाए हुए ब्राह्मणों के प्रकार ८वें श्लोक की अपेक्षा ज्यों २ दूर होते गये हैं त्यों २ श्रेष्ठ हैं। अर्थात् एक दिन के लिये भी न रखने वाले से तीन दिन के लिये अन्न रखने वाले श्रेष्ठ हैं; उनसे छ मास वाले और उन से भी तीन वर्ष वाले। क्योंकि जिसके पास जितना हीं अधिक धन होगा वह उतना हीं दान और यज्ञ वगैरः अधिक कर के स्वर्ग आदि लोकों में जावेगा, तथा ज्योतिष्टोम आदि विशाल यज्ञों द्वारा भी वही उन विलक्षण २ लोकों को प्राप्त कर सकेगा। क्योंकि लिखा है कि:—

त्रैवार्षिकाधिकान्नो यः स हि सोमं पिबेद्द्विजः।
प्राक्सौमिकीःक्रियाःकुर्याद्यस्यान्नं वार्षिकं भवेत्॥१२४या०॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यस्य त्रैवार्षिकं भक्तं पर्याप्तं भृत्यवृत्तये ।
अधिकं वापि विद्येत स सोमं पातुमर्हति ॥७॥म० अ०
त्रैवार्षिकाधिकान्नस्तुपिबेत्सोममतन्द्रितः॥१६॥ शं० अ०

जिसका अर्थ यह कि है 'जिस ब्राह्मण के पास तीन वर्षों या उससे अधिक तक के लिये भोजन वगैरः के सामान अन्न आदि होवें वह ज्योतिष्टोम यज्ञ करे। परन्तु जिसके पास एक ही वर्षके लिये हों वह केवल अग्निहोत्र तथा दर्शपूर्णमास आदि कर्म करे'। यही अर्थ दूसरे और तीसरे महर्षि वचन रूप श्लोकों का भी है। दर्श पूर्णमास या ज्योतिष्टोम याग करने से स्वर्ग आदि लोकों की प्राप्ति होती है, इस बात में बहुत सी स्मृतियां, और 'दर्श पूर्णमासाभ्यां स्वर्गकामो यजेत्, 'ज्योतिष्टोमेन स्वर्गकामो यजेत्' अर्थात् 'स्वर्ग की इच्छा करने वाला पुरुष दर्शपूर्ण मास और ज्योतिष्टोम यज्ञ करे' इत्यादि श्रुतियां भी प्रमाण हैं इस प्रकार से बहुत धनी कृषि और वाणिज्य आदि करने वाला गृहस्थ ब्राह्मण ही उत्तम हुआ।

दूसरा अभिप्राय उन पूर्वोक्त वाक्यों का यह है कि जो एक के बाद दूसरे उस श्लोक में लिखे हुए हैं वे क्रमशः श्रेष्ठ हैं। अर्थात् तीन वर्ष वालों से छ मास वाले, उनसे तीन दिन वाले और उनसे भी जिनके पास एक दिन के लिये भी अन्न वगैरः नहीं हैं वे श्रेष्ठ हैं। इस अर्थ को कुल्लूकभट्ट नामक टीकाकार ने पसन्द किया है। परन्तु उन्हें उनके ऊपर यह संकट आपड़ा है कि ऐसे लोग उन स्वर्ग आदि लोकों को कैसे प्राप्त कर सकते हैं। जिनके प्राप्त करने से ही मनुजी ने इन्हें उत्तम बतलाया है? क्योंकि आप जिन्हें श्रेष्ठ बताते हैं वे तो क्रमशः बिल्कुल ही धनहीन हैं। तो उन्हों ने कहीं से कुछ प्रमाण न देकर (जैसा कि पूर्व के अर्थ में स्वयं मनुजी के वचन ही प्रमाण स्वरूप दिखलाये गये हैं और अन्य ऋषियों के भी) वहां पर केवल इतना ही लिख दिया है कि 'वृत्तिसङ्कोचधर्मेण स्वर्गादिलोकजित्तमो भवति' जिसका भाव यह है कि 'वह जीविका के संकोच रूप धर्म के बल से स्वर्ग आदि लोकों को प्राप्त कर सक्ता है'। परन्तु इतने से तो काम चल सकेगा नहीं; क्योंकि केवल भीख मांगने से स्वर्ग मिलता है इस बात में तो भगवान मनु तथा अन्य महर्षियों की सम्मति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहीं भी नहीं पाई जाती। इसीलिये यह दूसरे अभिप्राय वाला पक्ष दुर्बल और प्रथम हीं पक्ष प्रबल अथवा ठीक है। यदि दूसरे अभिप्राय को भी मानने में आग्रह होवे तो केवल कुल्लूकभट्ट के कथन से काम न चलेगा। हां, इतना तो अवश्य होगा कि जब जीविका का सङ्कोच होते २ ब्राह्मण चतुर्थ प्रकार का हो जावेगा, अर्थात् उसके पास एक दिन के लिये भी भोजन आदि का सामान न रहेगा, तो, जैसा कि छान्दोग्योपनिषद् के पंचम प्रपाठक के ६ वें खण्ड में लिखा है कि:—

तद्यइत्थं विदुर्येचेमेऽरण्ये श्रद्धातप इत्युपासते, तेऽर्चिषमभिसम्भवन्ति...ब्रह्मगमयति इत्यादि ॥

जिसका भावार्थ यह है कि 'जो गृहस्थ शास्त्राभ्यासी और पूर्वोक्त पञ्चाग्नि विद्या के उपासक होते हैं, तथा जो वानप्रस्थ एवं ब्रह्मचारी आदि जङ्गलों में श्रद्धापूर्वक तप करते हैं, वे अर्चिरादि मार्ग (उत्तरायण) द्वारा क्रमशः ब्रह्मलोक में जाते हैं'।

अथवा जैसा कि शतपथ ब्राह्मण में लिखा कि 'स घृतकुल्या पितॄंस्तर्पयति' इत्यादि। अर्थात् 'नियम पूर्वक प्रतिदिन वेदादि का अभ्यास करने वाला सभी कर्मों के फल प्राप्त कर लेता है,' इसके अनुसार वही प्रथम प्रकार का ब्राह्मण ब्रह्मलोकादि प्राप्त कर सकता है, न कि दूसरे और तीसरे भी। इसीलिये यद्यपि इस द्वितीय अभिप्राय के वर्णन में मनु जी के भाव का संकोच अवश्य होता है, तथापि हम इस अभिप्राय को भी स्वीकार कर लेने में कोई बाधा उपस्थित नहीं करते। अतः सिद्ध हो गया कि कृषि आदि के करने वाले भी ब्राह्मण न करने वालों से किसी प्रकार से हीन नहीं हैं। किन्तु दोनों समान हैं। उञ्छ, शिल आदि करने वाले विशेष रूप से शास्त्राभ्यास और उस के द्वारा उत्तम उत्तम फल प्राप्त कर सकते हैं यह दूसरी बात है। एतावता वह जीविका मन्वादि महर्षियों की दृष्टि में मध्यम नहीं है।

जब यह विचार उठा कि पूर्वोक्त चतुर्विध ब्राह्मण किन २ उपायों द्वारा अन्न संग्रह कर सकते हैं, तो मनु जी स्वयं उत्तर देते हैं कि:—

षट्कर्मैको भवत्येषां त्रिभिरन्यः प्रवर्त्तते।
द्वाभ्यामेकश्चतुर्थस्तु ब्रह्मसत्रेण जीवति ॥८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसका अर्थ मेधातिथि ने ऐसा लिखा है कि:—

कुसूलधान्यादीनां मध्यादेकःकुसूलधान्यकःप्रकृतैरुञ्छशिलायाचितयाचितकृषिवाणिज्यैःषट्कर्मा भवति षड्भिर्जीवति। अन्योद्वितीयःकुम्भीधान्यकःकृषिवाणिज्ययोर्निन्दितत्वात् तत्त्याग उञ्छशिलायाचितयाचितानां मध्यादिच्छातस्त्रिभिर्वर्त्तते। एकस्त्र्यहैहिको याचित लाविहायोञ्छशिलायाचितानां मध्यादिच्छया द्वाभ्यां वर्त्तते चतुर्थः पुरनश्वस्तनिको ब्रह्मसत्रेण जीवति।ब्रह्मसत्रंशिलोञ्छयोरन्यतरावृत्तिर्ब्रह्मणोब्राह्मणस्यसततभवत्वात्सत्रम्।

इसका मर्मानुवाद यह है कि 'कुसूलधान्यादि संज्ञक चार प्रकार के ब्राह्मणों में से कुसूलधान्यक पूर्वोक्त उञ्छ, शिल, अयाचित, याचित, कृषि और वाणिज्य से जीविका करता हुआ षट्कर्मा कहलाता है। कुम्भीधान्यक कृषि और वाणिज्य को छोड़कर शेष चार में से तीन हीं करता है, क्योंकि अपने हाथों उनके करने का निषेध है (और अन्य द्वारा करवाने में पराधीनता होती और द्रव्य व्यय होता है) जैसा कि आगे विदित होगा। तीसरा त्र्यहैहिक नामवाला याचित को अच्छा न समझ अवशिष्ट तीन में से दोही करता है और अश्वस्तनिक नाम का तो केवल शिल अथवा उञ्छ करता है, जिनका नाम ब्रह्मसत्र है, क्योंकि वे ब्रह्म अर्थात् ब्राह्मण के लिये सतत (सदा) होते हैं'। यह मेधातिथि का ही अर्थ यहां पर उचित है। क्योंकि इस श्लोक के अन्त में जब उनके मत से शिल, उञ्छका वर्णन आया है, तभी अगले श्लोक के साथ सङ्गति (सम्बन्ध) भी होती है। कारण उस श्लोक में भी शिल, उञ्छ का नाम लेते हुये उसके साथ कुछ विशेष बातें कही गई हैं, जैसाकि:—

वर्तयँश्च शिलोञ्छाभ्यामग्निहोत्रपरायणः।
इष्टीः पार्वायनान्तीयाः केवला निर्वपेत्सदा॥

जिसका अर्थ यह है कि 'शिल, उञ्छ वाले के पास बहुत धन न होने से वह बड़े २ यज्ञ नहीं करसकता। इसलिये वह केवल अग्निहोत्र और दर्श पूर्णमास तथा आग्रायण यज्ञ करे।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वोक्त 'षट्कर्मैको' इत्यादि श्लोक के अर्थ में कुल्लूक भट्ट ने जो याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह का नाम लिया है वह उनका अकांडतांडव मात्र है। क्योंकि याजन आदि का तो चतुर्थ अध्याय में प्रसङ्ग ही नहीं है। उनकी यह आशा कि 'अद्रोहेणैव' इत्यादि श्लोक से इनकी सिद्धि हो सकती है, निराशा मात्र है। क्योंकि वे कहते हैं कि इस 'अद्रोहेणैव' श्लोक में याजन आदि का भी सामान्य रूप से संग्रह है। यदि ऐसा बात न होती और केवल आगे कही हुई मात्र जीविकाओं का सामान्य रूप से इस श्लोक में कथन होता तो फिर इस श्लोक की आवश्यकता ही क्या थी? परन्तु विचारने की बात तो यह है कि यदि इस युक्ति से इस श्लोक से ऋत आदि से भिन्न याजन आदि की सिद्धि मानी जावे तो इससे अगले 'यात्रामात्र प्रसिद्ध्यर्थं' इस श्लोक से भी किसी और जीविका की सिद्धि होनी चाहिये। परन्तु इस श्लोक में तो वे भी यही मानते हैं कि आगे कहे हुये उपायों का साधारण रूप से कथन है।

अतएव टीका में आपही लिखते हैं कि 'कैःकर्मभिरित्यत्राहऋतामृताभ्यामिति'। अर्थात् पूर्व श्लोकों में जो 'कर्मभिः' यह पद पड़ा है उससे किन २ कर्मों को लेना चाहिये इस तात्पर्य से मनुजी 'ऋतामृताभ्यां' यह अलग श्लोक पढ़ते हैं। इससे स्पष्ट है कि 'अद्रोहेणैव' इस श्लोक में भी केवल ऋत आदि का सामान्य रूपसे कथन करते हुये यह शिक्षा दी गई है कि प्राणियों की पीड़ा का ध्यान सर्वदा रखना चाहिये और 'यात्रामात्र' इस श्लोक में 'अगर्हितैः' यह विशेषण देकर निन्दित अर्थात् अपने हाथों हल जोतकर खेती [illegible] आदि को मना किया है। बस, इतनी हीं विशेषता इन दोनों [illegible] थक् बनाने में है। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि [illegible] यह नियम सर्वदा रहता है कि प्रथम सामान्य रूप से [illegible] हैं फिर विशेष रूप से। क्योंकि सामान्य ज्ञान विना [illegible] जिज्ञासा ही नहीं होती। जो आम को ही नहीं जानता [illegible] प्रश्न नहीं कर सकता कि वे कितने प्रकार के होते हैं। [illegible] करण में प्रथम सामान्य रूप से यह कह दिया है कि,

[illegible]र्वस्यस्रष्टारं द्विजसत्तमाः। १अ०३३ म.।

[illegible]स सम्पूर्ण सृष्टि का कर्ता जानो'। फिर उसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसका अर्थ मेधातिथि ने ऐसा लिखा है कि:—

कुसूलधान्यादीनां मध्यादेकःकुसूलधान्यकःप्रकृतैरुञ्छशिलायाचितयाचितकृषिवाणिज्यैःषट्कर्मा भवति षड्भिर्जीवति। अन्योद्वितीयःकुम्भीधान्यकःकृषिवाणिज्ययोर्निन्दितत्वात् तत्त्याग उञ्छशिलायाचितयाचितानां मध्यादिच्छातस्त्रिभिर्वर्त्तते। एकस्त्र्यहैहिको याचित लाविहायोञ्छशिलायाचितानां मध्यादिच्छया द्वाभ्यां वर्त्तते चतुर्थः पुरनश्वस्तनिको ब्रह्मसत्रेण जीवति।ब्रह्मसत्रंशिलोञ्छयोरन्यतरावृत्तिर्ब्रह्मणोब्राह्मणस्यसततभवत्वात्सत्रम्।

इसका मर्मानुवाद यह है कि 'कुसूलधान्यादि संज्ञक चार प्रकार के ब्राह्मणों में से कुसूलधान्यक पूर्वोक्त उञ्छ, शिल, अयाचित, याचित, कृषि और वाणिज्य से जीविका करता हुआ षट्कर्मा कहलाता है। कुम्भीधान्यक कृषि और वाणिज्य को छोड़कर शेष चार में से तीन हीं करता है, क्योंकि अपने हाथों उनके करने का निषेध है (और अन्य द्वारा करवाने में पराधीनता होती और द्रव्य व्यय होता है) जैसा कि आगे विदित होगा। तीसरा त्र्यहैहिक नामवाला याचित को अच्छा न समझ अवशिष्ट तीन में से दोही करता है और अश्वस्तनिक नाम का तो केवल शिल अथवा उञ्छ करता है, जिनका नाम ब्रह्मसत्र है, क्योंकि वे ब्रह्म अर्थात् ब्राह्मण के लिये सतत (सदा) होते हैं'। यह मेधातिथि का ही अर्थ यहां पर उचित है। क्योंकि इस श्लोक के अन्त में जब उनके मत से शिल, उञ्छका वर्णन आया है, तभी अगले श्लोक के साथ सङ्गति (सम्बन्ध) भी होती है। कारण उस श्लोक में भी शिल, उञ्छ का नाम लेते हुये उसके साथ कुछ विशेष बातें कही गई हैं, जैसाकि:—

वर्तयँश्च शिलोञ्छाभ्यामग्निहोत्रपरायणः।
इष्टीः पार्वायनान्तीयाः केवला निर्वपेत्सदा॥

जिसका अर्थ यह है कि 'शिल, उञ्छ वाले के पास बहुत धन न होने से वह बड़े २ यज्ञ नहीं करसकता। इसलिये वह केवल अग्निहोत्र और दर्श पूर्णमास तथा आग्रायण यज्ञ करे।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वोक्त 'षट्कर्मैको' इत्यादि श्लोक के अर्थ में कुल्लूक भट्ट ने जो याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह का नाम लिया है वह उनका अकांडतांडव मात्र है। क्योंकि याजन आदि का तो चतुर्थ अध्याय में प्रसङ्ग ही नहीं है। उनकी यह आशा कि 'अद्रोहेणैव' इत्यादि श्लोक से इनकी सिद्धि हो सकती हैं, निराशा मात्र है। क्योंकि वे कहते हैं कि इस 'अद्रोहेणैव' श्लोक में याजन आदि का भी सामान्य रूप से संग्रह है। यदि ऐसा बात न होती और केवल आगे कही हुई मात्र जीविकाओं का सामान्य रूप से इस श्लोक में कथन होता तो फिर इस श्लोक की आवश्यकता ही क्या थी? परन्तु विचारने की बात तो यह है कि यदि इस युक्ति से इस श्लोक से ऋत आदि से भिन्न याजन आदि की सिद्धि मानी जावे तो इससे अगले 'यात्रामात्र प्रसिद्ध्यर्थं' इस श्लोक से भी किसी और जीविका की सिद्धि होनी चाहिये। परन्तु इस श्लोक में तो वे भी यही मानते हैं कि आगे कहे हुये उपायों का साधारण रूप से कथन है।

अतएव टीका में आपही लिखते हैं कि 'कैःकर्मभिरित्यत्राहऋतामृताभ्यामिति'। अर्थात् पूर्व श्लोकों में जो 'कर्मभिः' यह पद पड़ा है उससे किन २ कर्मों को लेना चाहिये इस तात्पर्य से मनुजी 'ऋतामृताभ्यां' यह अलग श्लोक पढ़ते हैं। इससे स्पष्ट है कि 'अद्रोहेणैव' इस श्लोक में भी केवल ऋत आदि का सामान्य रूपसे कथन करते हुये यह शिक्षा दी गई है कि प्राणियों की पीड़ा का ध्यान सर्वदा रखना चाहिये और 'यात्रामात्र' इस श्लोक में 'अगर्हितैः' यह विशेषण देकर निन्दित अर्थात् अपने हाथों हल जोतकर खेती करने आदि को मना किया है। बस, इतनी हीं विशेषता इन दोनों श्लोकों के पृथक् बनाने में है। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि शास्त्रकारों का यह नियम सर्वदा रहता है कि प्रथम सामान्य रूप से वस्तु को कहते हैं फिर विशेष रूप से। क्योंकि सामान्य ज्ञान विना उसके विशेष की जिज्ञासा ही नहीं होती। जो आम को ही नहीं जानता वह कभी भी यह प्रश्न नहीं कर सकता कि वे कितने प्रकार के होते हैं। इसीलिये सृष्टि प्रकरण में प्रथम सामान्य रूप से यह कह दिया है कि,

मांवित्तास्यसर्वस्यस्रष्टारं द्विजसत्तमाः। १अ०३३ म.।

अर्थात् 'मुझे इस सम्पूर्ण सृष्टि का कर्ता जानो'। फिर उसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बात को विशेष रूप से कहने लगे कि 'अहं प्रजाः सिसृक्षुस्तु' इत्यादि अर्थात् 'मैं सृष्टि की इच्छा से' इत्यादि। इसी प्रकार से न्याय आदि दर्शनों में प्रथम द्रव्य, गुण आदि पदार्थों को सामान्य रूप से कह कर फिर द्रव्य आदि के विशेष पृथ्वी और जल आदि को कहा है, न कि प्रथम सामान्यतया द्रव्य कहने से पृथ्वी आदि से भिन्न कोई वस्तु समझी जाती है।

दूसरी बात यह है कि अध्यापन आदि आपद्धर्म हैं। क्योंकि मनु स्मृति भर में दो ही जगह इनके नाम आये हैं, प्रथम और दशम अध्यायों में। उन में भी प्रथम अध्याय में तो उनके करने की आज्ञा नहीं है, किन्तु उत्पत्ति प्रकरण होने से उनकी उत्पत्ति मात्र लिख दी गई है। इसी लिये आज्ञा वाचक शब्द का प्रयोग भी नहीं है, किन्तु केवल उनको उत्पन्न कर दिया ऐसा लिखा है। जैसा कि,

अध्यापनमध्ययनं याजनं यजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥ १।८॥

अर्थात् 'अध्यापन आदि षट्कर्मों को उत्पन्न कर दिया'। यह बात इस श्लोक की टीका में कुल्लूक भट्ट ने भी लिखी है, जैसा कि

अध्यापनादीनामिह सृष्टिप्रकरणे सृष्टिविशेषतया ऽभिधानं विधिस्तेषामुत्तरत्र भविष्यति।

अर्थात् 'इस सृष्टि प्रकरण में सृष्टि विशेष होने से ही अध्यापन आदि का कथन किया गया है, उनके करने की विधि तो आगे चल कर दसवें अध्याय में होगी। पुनः दशम अध्याय आपद्धर्म प्रकरण में इनके नाम लिये हैं और वहां पूर्व के ही श्लोक में आज्ञा दे दी है कि

ते सम्यगुपजीवेयुः षट्कर्माणि यथाक्रमम् ।१०।७४।

अर्थात् 'वे ब्राह्मण आगे कहे हुये षट्कर्मों द्वारा जीवें'। तदनन्तर ७५ वें श्लोक में उन कर्मों के गिना लेने पर जब यह शङ्का हुई कि यज्ञ, अध्ययन और दान ये तीन क्योंकर जीविकायें हो सकती हैं? क्या इन्हें भी आपत्ति काल में हीं करना चाहिये? तो 'षण्णांतुकर्मणामस्य' इस ७६ वें श्लोक में दिखलादिया कि तीन हीं कर्म जीविकायें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं और उन्हें हीं आपत्काल में करना चाहिये। शेष तीन तो धर्मार्थक कर्म नित्य के हैं (जैसा प्रथम हीं कह चुके हैं)। परन्तु जबकि उत्पत्ति प्रकरण में इन छओं को साथ ही इसी श्लोक में पढ़ दिया था, अतः उसी श्लोक को यहां भी पढ़ मात्र दिया है, न कि छओं को ही आपत्ति काल में हीं करने में तात्पर्य है। इसके अतिरिक्त चौथे ही अध्याय में मनु भगवान लिखते हैं कि:—

राजतो धनमन्विच्छेत् संसीदन् स्नातकः क्षुधा।
याज्यान्तेवासिनोर्वापि न त्वन्यत इतिस्थितिः ३३

अर्थ यह है कि 'जब ब्राह्मण क्षुधातुर होवे तभी राजा के धन का प्रतिग्रह करे अथवा पढ़ा और यज्ञ कराकर जीविका (धनप्राप्ति) करे, और आपत्ति काल में भी जब तक इन तीन उपायों से धन प्राप्त कर सके तब तक अन्यों से न करे'। यद्यपि चतुर्थ अध्याय आपद्धर्मों का प्रकरण नहीं है तथापि, इस श्लोक का तो स्पष्ट रूप से ऐसा ही अर्थ है, और यह स्नातक के व्रत का प्रकरण था, इसीलिये व्रत के अन्तर्गत होने से यह बात भी यहां कहनी पड़ी। इसीलिये अगले श्लोक में स्पष्ट कह देते हैं कि यह आपद्धर्म है। क्योंकि लिखते हैं कि,

न सीदेत् स्नातको विप्रः क्षुधा शक्तः कथंचन।
न जीर्णमलवद्वासा भवेच्च विभवे सति॥ ३४॥

अर्थात् 'जब तक सामर्थ्य रहे तब तक गृहस्थ ब्राह्मण भूखों न मरे और धन रहने पर पुराने एवं मैले वस्त्र न पहने'। इस से तो स्पष्ट ही है कि तभी भूखों मरेगा जब कोई दूसरा उपाय न हो और जब यह बात हुई तो उसके ऊपर आपत्ति आगई। इसलिये उस दशा में याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह से जीविका करेगा। इसीतरह जब तक इन तीनों उपायों से धन मिलेगा तब तक और उपाय न करेगा। परन्तु इनके भी न होने पर दशम अध्याय में लिख दिया है कि 'सर्वतः प्रतिगृह्णीयात्' अर्थात् 'सभी से प्रतिग्रह करे' और क्षत्रिय एवं वैश्य के कर्मों को भी करने की आज्ञा दे दी गई है। इसी लिये वहां पर जो अन्य का निषेध किया है वह तीन उपायों के होने की ही दशा में है, न कि सदा के लिये। अतः 'सर्वतः प्रतिगृह्णीयात् के साथ इसका कोई भी विरोध नहीं है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके अतिरिक्त अध्याय के अन्त में भी लिखा है कि,

एते चतुर्णां वर्णानामापद्धर्माः प्रकीर्त्तिताः।
यान् सम्यगनुतिष्ठन्तो व्रजन्ति परमां गतिम्॥ १०।१२

जिसका तात्पर्य यह है कि 'इस अध्याय में पूर्वोक्त चारों वर्ण के आपद्धर्म कहे गए हैं, जिनको अच्छी तरह से करने वाले जन द्वारा मुक्ति प्राप्त करलेते हैं।' यदि मनुजी को यह विदित होता कि अध्यापन आदि अनापत्तिकाल के धर्म हैं, तो चौथे अध्याय में इनके नाम क्यों न लेते? जैसा कि कृषि आदिको कहा है। इससे तो स्पष्ट ही है कि ये धर्म ब्राह्मणों के लिये आपत्तिकाल में ही हो सकते हैं। हां, जिन क्षत्रिय आदि के किसी भी धर्म को प्रथम नहीं कहा है उनके प्रजापालनादि धर्म जो दशम अध्याय में कहे गए हैं उनको यदि अनापत्तिकालिक मानलेवें और उनका वहां कथन प्रसंगवश कहें तो उचित भी है। परन्तु ब्राह्मणधर्मों के विषय में यह बात नितान्त असंभव है। क्योंकि उनके मुख्य कर्मों को चौथे अध्याय में हीं कह चुके हैं। यदि प्रसंगवश यहां कहना भी मानें तो फिर सभी को क्यों न गिनाया? किन्तु जिन्हें कह चुके उन्हें कहा ही नहीं, बल्कि विलक्षण कर्मों को ही कहा। इससे इनके आपद्धर्म होने में कोई भी आपत्ति नहीं की जा सकती। याज्ञवल्क्यजी भी इस विषय में उदासीन हैं। क्योंकि उन्होंने सामान्यतः इन धर्मों को गिना भर दिया है, उन्हें आपद् या अनापद्धर्म नहीं कहा है। प्रत्युत प्रायश्चित्ताध्याय के ३५ वें श्लोक में लिखते हैं कि,

क्षात्रेण कर्मणा जीवेद्विशां वाप्यापदिद्विजः।

अर्थात् 'आपत्तिकाल में ब्राह्मण क्षत्रियों और वैश्यों के कर्म द्वारा भी जीवें।' इस जगह 'भी' के अर्थ में जो 'अपि' शब्द है उससे अनुक्त याजन आदि का भी समुच्चय उनको इष्ट है, जैसी कि रीति स्मृतियों में सर्वत्र ही है। अतः जबतक कृषि आदि हो सके तबतक याजन आदि से जीविका ब्राह्मण न करे। क्योंकि अनापत्ति काल में आपत्तिकालिक जीविका का निषेध मनुजीने ११ वें अध्याय के २८ और ३० श्लोकों में किया है। यदि हम 'तुष्यतु दुर्जन' न्याय से यह भी मानलेवें कि याजन आदि को आपत्तिकाल से भिन्न काल में भी कर सकते हैं, तोभी कृषि वाणिज्यादि की तुलना ये कर्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर ही नहीं सकते। क्योंकि इनका निषेध मनु आदि महर्षि बहुत ही करते हैं; जैसा कि उनके 'अतपास्त्वनधीयानः' और 'प्रतिग्रह समर्थोऽपि' इत्यादि श्लोकों का अर्थ करते हुए दिखला चुके हैं।

'प्रतिग्रह समर्थोऽपि' इस श्लोक में एक और विचित्रता है। वह यह कि जो प्रतिग्रह में समर्थ भी होवे वह भी उसका नाम तक न लेवे, इस कथन से स्पष्ट है कि प्रतिग्रहादि का करना आवश्यक नहीं है। क्योंकि आवश्यक और नित्य कर्मों में सामर्थ्य नहीं देखते, बल्कि उनके न करने से पातक होता है। हां, काम्य कर्मों में सामर्थ्य की आवश्यकता है, जैसा कि प्रथम लिख चुके हैं। इसलिये प्रतिग्रह करना शास्त्र प्रेरित न होकर अपनी इच्छानुसार है, चाहे करे या न करे। परन्तु यदि करे तो उससे होनेवाले पापों के प्रायश्चित्त की सामर्थ्य होनी चाहिये। इसलिये जो इस प्रकार की तप आदि सामर्थ्य से हीन हो वह तो इच्छा होने पर भी नहीं कर सकता। सारांश यह है कि 'प्रक्षालनाद्धि पंकस्य दूरादस्पर्शनं वरम्' अर्थात् 'कीचड़ में पांव डालकर धोने से उसका न डालना हीं उत्तम है,' इस न्यायानुसार प्रतिग्रहादि का न करना हीं अच्छा है। अतएव पार्थसारथि मिश्रजी ने कुमारिल स्वामी रचित मीमांसा दर्शन वार्त्तिककी टुप्टीका की टीका तंत्ररत्न के चतुर्थाध्याय के द्वितीयाधिकरण के 'यस्मिन्प्रीतिः पुरुषस्य तस्य लिप्सार्थलक्षणा' इस सूत्र में लिखा है कि, 'किमिदानीं प्रतिग्रहः प्रत्यवायक्षयकरः ? यद्येवमजस्रमेव यथाशक्ति प्रतिग्रहीतव्यं स्यात्, तन्न, प्रतिग्रहसमर्थोऽपि प्रसंगं तत्र वर्जयेदितिप्रतिषेधात्, तेन दायशिलोञ्छायाचिताभावे यथा कथंचिद्द्रव्योपादानेऽवश्यम्भाविनि प्राप्ते प्रतिग्रहादिनैव कुर्वतोऽदृष्टसिद्धिरिति कल्प्यते।'

जिसका भावार्थ यह है। इस ग्रन्थ में प्रथम यह विचार हो चुका है कि जैसे सन्ध्यादि के न करने से जो पाप होते हैं वे उनके करने से होते ही नहीं हैं। उसी तरह से अन्य अविहित उपायों से द्रव्यार्जन में जो पाप हो सकते हैं वे प्रतिग्रहादि करने से उत्पन्न हीं नहीं होते। इसी पर यह शंका उठी कि 'तो क्या अब प्रतिग्रह को पाप का नाशक समझना चाहिये ? यदि ऐसी बात होवे तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नित्य जहां तक होसके अवश्य प्रतिग्रह करना चाहिये। इसका उत्तर देते हैं कि यह बात नहीं है, क्योंकि 'प्रतिग्रहसमर्थोऽपि' इस वाक्य द्वारा मनुजी ने उसका निषेध किया है। इसलिये इस कथन का तात्पर्य यह है कि जब ऐसी आपत्ति का समय आ जाय कि दायभाग (पितादि की जमींदारी या धन आदि), शिल, उञ्छ और अयाचितादि कोई भी उपाय धनप्राप्ति के हो न सकें और किसी भी प्रकार से धनार्जन अत्यंतावश्यक होवे तो यदि प्रतिग्रहादि द्वारा प्राप्त किया जावे तभी उससे यज्ञादि करने से अदृष्ट (पुण्य) हो सकता है।' क्या इस कथन से यह स्पष्ट नहीं है कि प्रतिग्रहादि नहीं करने चाहियें, क्योंकि वे आपत्तिकाल के धर्म हैं इत्यादि। इस विषय में गौतम स्मृति और मिताक्षराकार की सम्मति प्रथम दिखला चुके हैं। याज्ञवल्क्य स्मृति आचाराध्याय में लिखा है कि:

विद्यातपोभ्यां हीनेन नतु ग्राह्यः प्रतिग्रहः।
गृह्णन्प्रदातारमधो नयत्यात्मानमेव च ॥ २०२॥
प्रतिग्रहसमर्थोऽपि नादत्ते यः प्रतिग्रहम्।
येलोकादानशीलानांसतानाप्नोतिपुष्कलान्। २॥

अर्थ यह है कि 'जो विद्या और तप से रहित होवे वह कभी न प्रतिग्रह करे, क्योंकि ऐसा करने से अपने आप और दाता दोनोंको नरकमें लेजाता है। जो प्रतिग्रह करनेमें सामर्थ्यवान् होकर भी उसे नहीं करता वह उन बड़े २ लोकों में जाता है जिनमें दान देनेवाले जाया करते हैं। इसका तात्पर्य स्पष्ट ही है। लघुविष्णु स्मृति में लिखा है कि:

प्रतिग्रहं न गृह्णीयात्परेषांकिंचिदात्मवान्।
दाता चैव भवेन्नित्यं श्रद्दधानः प्रियंवदः ॥८॥अ०३॥

अर्थात् 'विचारशील और आत्मज्ञानी किसी का प्रतिग्रह न करे और प्रिय वचन तथा श्रद्धापूर्वक दूसरों को नित्य ही कुछ देवे।' अत्रिस्मृति में भी यही लिखा है कि:-

पावका इव दीप्यन्ते जपहोमैर्द्विजोत्तमाः।
प्रतिग्रहेण नश्यन्ति वारिणा इव पावकः ॥१४१॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तान्प्रतिग्रहजान्दोषान्प्राणायामैर्द्विजोत्तमाः।
नाशयन्ति हि विद्वांसो वायुर्मेघानिवाम्बरे ॥१४२॥

भावार्थ यह है कि 'श्रेष्ठ ब्राह्मण जप और अग्निहोत्रादि करने से अग्निवत् तेजस्वी हुआ करते हैं। परन्तु प्रतिग्रह से ऐसे ही निस्तेज हो जाते हैं जैसे पानीसे अग्नि। इसलिये कदाचित् प्रतिग्रह कर लेने से जो पाप हो जाते हैं उनका नाश प्राणायाम द्वारा विद्वान ब्राह्मण ऐसेही कर डालते हैं जैसे प्रचण्ड वायु आकाश में रहनेवाले बादलोंका नाश करदेताहै। श्रीमद्भागवतमें भी प्रसंगवश ११ वें स्कंधके १७वें अध्यायमें लिखा है कि,

प्रतिग्रहं मन्यमानस्तपस्तेजोयशोनुदम्।
अन्याभ्यामेवजीवेतशिलैर्वादोषदुक्तयोः ॥४१॥
सीदन्विप्रोवणिग्वृत्त्यापण्यैरेवापदं तरेत्।
खड्गेनवापदामन्तो नश्ववृत्त्या कदाचन ॥४७॥

जिसका अर्थ यह है कि 'आपत्ति काल में भी प्रतिग्रह को तप, तेज और यश का नाशक समझ ब्राह्मण याजन और अध्यापनसेही जीविका करे, अथवा उनको भी दुष्ट समझकर शिल आदि वृत्तियोंसे ही शरीरयात्रा करे और वाणिज्यवृत्ति से पदार्थों को बेंचकर, क्षत्रिय धर्मसे तलवार लेकर अर्थात् युद्ध करके भी जीविका करे, परन्तु नौकरी कभी न करे'। जब विश्वरूपको देवताओंने बृहस्पतिके रुष्ट होनेपर अपनी पुरोहिती करनेको कहा तो उन्होंने उसकी बहुत ही निन्दाकीऔर कहाकि,

अकिंचनानां हि धनं शिलोञ्छनं तेनेह निर्वर्त्तत साधुसत्क्रियः। कथं विगर्ह्यं तु करोम्यधीश्वराः पौरोधसं हृष्यति येन दुर्मतिः॥ श्रीमद्भागवत।६।७।३६

अर्थ यह है कि 'हे देवगण! दरिद्र ब्राह्मण के भी धन शिल और उञ्छादि ही हैं, जिनसे मैं अच्छी तरह से अपने शरीर का निर्वाह करता हूं, इसलिये पुरोहिती क्योंकर करूं? क्योंकि उससे तो केवल मूर्ख लोग ही प्रसन्न होते हैं'। अध्यात्म रामायण के अयोध्याकाण्ड में वसिष्ठजी ने रामजी के प्रति कहा है कि 'पौरोहित्यमहं जानेविगर्ह्यं दूष्यजीवनम्। २। २८। जिसका अर्थ यह है कि 'मैं पुरोहिती को धर्मशास्त्र निन्दित और जीवन को दूषित करने वाली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समझता हूं'। जिसको गोस्वामी तुलसीदासजीने स्पष्ट कर दि
है कि 'उपरोहिती कर्म अति मन्दा। वेद पुराण स्मृति कर निन्दा

वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड के ६ठें सर्ग में अयोध्यावासी तथा रा
राज्यवासी ब्राह्मणों के आचारों का वर्णन करते हुये महर्षि लिखते हैं कि

स्वकर्मनिरतानित्यं ब्राह्मणाविजितेन्द्रियाः।
दानाध्ययनशीलाश्च संयताश्च प्रतिग्रहे॥

जिसका अर्थ यह है कि 'जितेन्द्रिय ब्राह्मण लोग अपने २ धर्म
में सदा स्थित होकर दान और अध्ययनादि करते और प्रतिग्र
नहीं लेते हैं'। इसीलिये मनु जी ने दशमाध्याय में लिखा है कि-

प्रतिग्रहाद्याजनाद्वा तथैवाध्यापनादपि।
प्रतिग्रहः प्रत्यवरः प्रेत्य विप्रस्य गर्हितः॥ १०८॥

जपहोमैरपैत्येनो याजनाध्यापनैः कृतम्।
प्रतिग्रहनिमित्तं तु त्यागेन तपसैव वा॥ १११॥

अर्थ यह है कि 'याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह इन तीनों में
प्रतिग्रह अत्यंत ही निन्दित और परलोक में ब्राह्मण के लिये दुःख
है। याजन और अध्यापन से जो पाप होते हैं वे जप और अग्नि
होत्रादि द्वारा निवृत्त हो जाते हैं। परन्तु प्रतिग्रह के पाप तो उस द्रव्य
के त्यागने और कृच्छ्रादिरूप तप करने से ही निवृत्त होते हैं'
इससे यह स्पष्ट है कि यदि सामान्य रीति से ये शास्त्रीय धर्म होते
जैसे शिल, उञ्छादि करने से पाप नहीं लिखा, वैसे इनके करने
भी पाप न लिखते; क्योंकि शास्त्रविहित कार्य करने में पाप हो
नहीं सकते। यदि कोई ऐसा अनुचित आग्रह करे कि सामान्य
प्रतिग्रह से होनेवाले पापों का वर्णन इन श्लोकों में नहीं है, किन्तु
निन्दित प्रतिग्रह की ही हीनता यहां दिखलाई गई है, तो उसको
एक तो यह विचारना चाहिये कि इन श्लोकों में प्रतिग्रह मात्र लिखा
है। दूसरे जब मनुजी यह भी प्रथम हीं इसी अध्याय में कह चुके हैं कि
'विशुद्धाच्च प्रतिग्रहः'। अर्थात् शुद्ध प्रतिग्रह करना चाहिये। तो फि
अनुचित प्रतिग्रह का प्रसंगही क्या है? और 'प्रतिग्रहसमर्थोऽपि
इत्यादि वाक्यों द्वारा सभी प्रतिग्रहों का निषेध किया है, जैसाकि अभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पार्थसारथि मिश्रादि की सम्मति इस विषय में दिखला चुके हैं। वाल्मीकि रामायण में जो उस समय के ब्राह्मणों का आचार दिखलाया गया है वहां जब यह लिखा है कि वे अपने कर्मों में स्थित हैं, तो फिर असत् प्रतिग्रह कैसे कर सकते थे? अतः सामान्य रूप से सभी प्रकार के प्रतिग्रह वे लोग भी नहीं करते थे। मत्स्यपुराण के १११ वें अध्याय में युधिष्ठर के प्रति कृष्णजी का उपदेश है कि:—

प्रतिग्रहादुपावृत्तः संतुष्टो नियतः शुचिः।
अहंकारनिवृत्तश्च स तीर्थफलमश्नुते ॥१०॥

अर्थात् 'जो प्रतिग्रह से रहित, संतोषी, नियमी, पवित्र और अभिमानशून्य होवे वह सम्पूर्ण तीर्थस्नानादि के फलों को प्राप्त कर लेता है'। स्कन्द पुराणान्तर्गत ब्रह्मखंड के धर्मारण्यमाहात्म्य प्रकरण में वाडवों (ब्राह्मणों) के आचार इस प्रकार से वर्णित हैं:—

चा०उ०। पूर्वं हि वृत्तिमस्माकं रामो वैदत्तवान् द्विजाः।
चातुर्विद्या महासत्त्वाः स्वधर्मप्रतिपालकाः ॥१४१॥
याजनाध्यापनायुक्ताः काजेशेन विनिर्मिताः।
दानं दत्त्वा तु रामेण उक्तं हि भवतां पुनः ॥१४२॥
स्थानं त्यक्त्वा न गंतव्यमित्थं हि नियमः कृतः ॥१४८॥
त्यक्तप्रतिग्रहाः शान्ताः सत्यव्रतपरायणा।
संध्यामुपासते नित्यं त्रिकालं चैकमानसाः ॥ १५०। ३६।

जिसका भावार्थ यह है कि 'उन्हीं ब्राह्मणों में से चारों वेदों के ज्ञाता एक ने कहा कि हे ब्राह्मणो! रामजी ने प्रथम हीं हम लोगों के लिये वृत्ति नियत कर दी है और हम लोग चारों वेदों के ज्ञाता और अपने धर्म के पालक हैं। याजन और अध्यापन नहीं करते और हम लोगों को यहां ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने स्थापित किया है इत्यादि'। 'वहां रहनेवाले वाडव प्रतिग्रहादि से रहित और शान्त थे और त्रिकाल संध्या एकाग्रचित्त होकर करते थे' ॥

यदि हम अध्यापनादि के स्वरूपों का विचार करते हैं तो उन ब्राह्मणों का इन से पृथक् रहना और स्मृतियों के निषेध ये दोनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुत ही उचित प्रतीत होते हैं। क्योंकि जो दान देनेवाला होता वह, जैसे बच्चे को गुड़ खिलाकर कर्णच्छेदन कराते हैं वैसेही, द्वारा अपने पातक को द्वितीय व्यक्ति के ऊपर रखता है। या यों कह चाहिये कि जैसे तृण लिखाकर गौ दूही जाती है वैसेही वह दानग्रा ब्राह्मण का तप दूह लेता है। क्योंकि जैसे प्रज्वलित अग्नि तृण नाश कर आप शान्त होती है वैसे ही ब्राह्मण की तपरूप अग्नि दाता पातक को भस्मीभूत करके आप भी समाप्त हो जाती है। इस लि यदि दानग्राही तपस्वी न होगा तो दाता का दान व्यर्थ हो जावेगा औ ग्रहण करनेवाला तो पतित होवेगा ही, जैसा कि प्रथम मन्वादि के वाक्यों द्वारा दिखला चुके हैं। यदि दान अपने पातक को दूसरे के सिर मढ़ने लिये नहीं होता है तो और किस कामके लिये होता है? यदि ऐसा नहीं, तो ब्रह्महत्यादि का प्रतिग्रह करने में लोग डरते क्यों हैं? और ज अन्न पर ही बुद्धि निर्भर है, तो फिर जैसा अन्न होगा वैसी ही बुद्धि बनेगी। क्योंकि छान्दोग्योपनिषत् के षष्ठ प्रपाठक में लिखा है कि 'अन्नमशितं त्रेधा विधीयते यदणिष्ठं तन्मनो भवति' अर्थात् 'भोजन किये गये अन्न के स्थूल, सूक्ष्म और सूक्ष्मतर तीन अंशों में से सूक्ष्मतम अंश से मन (बुद्धि) बनता है। इसी लिये महाभारतादि ग्रन्थों में चोरों का अन्न भक्षण करने से महात्माओं की भी बुद्धियों के विकृत हो जाने का वर्णन प्रायः आया करता है। इसलिये शिष्य अथवा यज्ञकर्त्ता अध्यापक और याजन के बदले जो दक्षिणा देगा वह यद्यपि मजदूरी ठहरी तथापि अपनी बुद्धि पर उसका प्रभाव अवश्य आवेगा। वह अन्न या द्रव्य उसने उत्तम रीति से ही कमाया है यह कभी हो ही नहीं सकता। क्योंकि मनुष्यों की स्वभाव सिद्ध विपरीत प्रवृत्तियों का बदल जाना एकदम असम्भव है। इसी लिये मनुजी ने श्राद्ध प्रकरण में,

याजयन्ति च ये पूगाँस्ताँश्च श्राद्धे न भोजयेत् ।३।१५।

भृतकाध्यापको यस्तु भृतकाध्यापितस्तथा ॥३।१५६।

अर्थात् 'जो बहुतों के यज्ञ करानेवाले, वेतन लेकर पढ़ाने और पढ़नेवाले हैं उनको श्राद्ध में न खिलावे'। इन वाक्यों द्वारा ऐसों को श्राद्ध में निन्दित ठहराया है। ऐसे ही याज्ञवल्क्यादि ने भी कहा है इसीलिये याजनादि अगतिक गति और आपद्धर्म कहलाते हैं जिनका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाडवों (ब्राह्मणों) ने साम्प्रतिक पश्चिमा, त्यागी, महियाल, भूमिहार ब्राह्मणों की तरह सर्वथा परित्याग या निरादर किया था। क्योंकि जैसा कि आगे विदित होगा कि, वे भी इन्हीं लोगों की तरह बड़े २ भूम्यधिपति (जमींदार) थे।

हां, इस बात में कोई विवाद या शंका नहीं है कि याजन और अध्यापन ये दोनों, जैसा कि प्रथम 'अध्यापनं च त्रिविधं' इस श्लोक में कह चुके हैं, यदि केवल परोपकारबुद्धि से किये जावें जैसा कि प्राचीन ऋषि, महर्षि दयार्द्रचित्त होकर किया करते थे और किसी २ स्थान में आज भी देख सकते हैं, तो बहुत ही उत्तम और अवश्य कर्त्तव्य हैं, जिन्हें अयाचक और याचक दोनों प्रकार के ब्राह्मण करें और तद्द्वारा प्राप्त दक्षिणा न लेकर उसे भी यदि परोपकार और अनाथपालनादि में व्यय करा दिया जावे और सर्वसाधारण का जिसमें उपकार होसके ऐसे कार्य उससे करवा दिये जावें, जैसे कि ब्रह्मचर्याश्रम, गोशालायें, धर्मशालायें और औषधालय आदि तो दक्षिणा सहित होने से यज्ञादि भी पूर्ण हो जावें। क्योंकि सम्भवतः लोगों की यह धारणा होवे कि भगवान कृष्ण ने गीता में 'मंत्रहीनमदक्षिणम्' अर्थात् 'मंत्र और दक्षिणा हीन यज्ञ को तामस यज्ञ कहते हैं' इत्यादि वाक्यों द्वारा दक्षिणा विना सद्यज्ञसिद्धि का निषेध किया है, तो वह भी धारणा पूरी हो जावे और कार्य भी चला जावे, जिससे करने वाले निष्कलंक ही रह जावें।

वस्तुतः तो गीता में जो यज्ञों की दक्षिणा का वर्णन है उसका तात्पर्य यह है कि सामान्य रीति से यज्ञादि में ऋत्विज वगैरः दक्षिणा हीं के लोभ से आते हैं। क्योंकि यदि यह बात न होती तो मीमांसा दर्शन के प्रथमाध्याय के तृतीय पाद के तृतीय अधिकरण में 'हेतुदर्शनाच्च' इस सूत्र पर भाष्यकार श्रीशबरस्वामी तथा माधवाचार्य 'वैसर्जनहोमीयं वासोऽध्वर्युर्गृह्णाति' अर्थात् 'वैसर्जनहोमसंबंधी वस्त्र को अध्वर्यु नाम का ऋत्विक् लेता है'। इस स्मृति को अप्रामाणिक ठहराते हुये यह कभी न कहते कि:—

कदाचित्कश्चिदध्वर्युर्लोभादेतद्वासो जग्राह, तन्मूलैवैषास्मृतिरित्यपि कल्पना संभवति। दृष्टानुसारिणी चैषा कल्पना, दक्षिणयापरिक्रीतानामृत्विजां लोभदर्शनात्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् 'कभी किसी अध्वर्यु ने लोभ से इस वस्त्र को ले लि होगा, तन्मूलक ही यह स्मृति भी बन गई होगी यह भी कल्पना सकती है, और यह कल्पना प्रत्यक्षानुसारिणी भी है। क्यों कि दक्षि देकर लाये गये ऋत्विजों को लोभ होता रहता है'। और इस अ करण की आवश्यकता भी न होती। इस लिये यदि यजमान के लि यज्ञ में दक्षिणा की आज्ञा न होवे तो बेचारों की मजदूरी ही मा जावे और धर्म के बदले वहां अधर्म हीं होने लग जावे। इसीलि यज्ञ प्रकरण में सर्वत्र ही दक्षिणा पर जोर दिया गया है। परन्तु य यज्ञ कराने वाला धर्म प्रिय और निर्लोभ होवे, जैसाकि पूर्व कह चु हैं, तो उसके लिये दक्षिणा की कोई आवश्यकता नहीं है। हां, यज्ञ करा वाला दक्षिणार्थ संगृहीत द्रव्य का उन ऋत्विजों की अनुमति से स द्व्यय कर सकता है। इससे यह शंका भी निर्मूल होगई कि य याजन आदि छोड़ दिये जावें तो फिर सब यज्ञ और अध्ययनादि लोपही हो जावेगा। जो कथा स्कन्द पुराण के नाम से अनादि पु वासी ब्राह्मणों के विषय में 'ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड' नामक ग्रंथ में दे गई हैं और जिसकी सविस्तर समालोचना प्रसंग वश यदि हो स तो आगे करेंगे, वह भी इस बात को पुष्ट कर रही है कि यज्ञ में दक्षि णादि लेने में विचार शील ब्राह्मण प्रवृत्ति न करते थे। अतएव यद्या दूसरे बहुत से ब्राह्मणों ने दक्षिणा सहर्ष स्वीकार की, परन्तु वाड (ब्राह्मणों) ने उससे साफ इनकार किया।

इस स्थान पर एक इस बात का ध्यान रखना भी आवश्यक होगा कि जो लोग इस बातके कहने वाले और साथही पांडित्य की दम भरने वा हैं कि यदि सभी ब्राह्मण प्रतिग्रह से रहित हो जावें तो फिर दानलेने वाल कौन होगा? फलतः दान रूप धर्म काही लोप हो जायेगा। उनको य विचारना चाहिये कि प्रथमतः तो यह कहा ही नहीं जाता है कि को भी दान लेगा ही नहीं, बल्कि हमारा तो यह कथन है कि जो विद्य और तपोबल सम्पन्न होने से दान लेने में समर्थ होवे वह अप इच्छानुसार उसे ले सकता है, न कि गायत्री तक का भी नाम जानकर धर्म भ्रष्ट और पतित शूद्रादि के प्रतिग्रह से ही पेट पाल वाला दान का कभी भी अधिकारी हो सकता है। हम तो केवल य चाहते हैं कि पात्रापात्र के विचार विना हीं जैसी अन्धपरम्परा आ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चल पड़ी है वह एकदम शास्त्रविरुद्ध होने से सर्वथा अनादरणीय है। दूसरी बात यह है कि केवल द्रव्य और अन्नादि के ही दान तो शास्त्रों में हैं नहीं, जिससे दानग्राही के न रहने से दान क्रिया का लोप हो जावेगा। क्या विद्या और सदुपदेशादि के दानों के लोप होने का भी कोई भय हो सकता है? तीसरी बात यह है कि यदि दान के योग्य ब्राह्मण न होवें तो उन्हें लेने का अधिकार क्या बलात् हो जावेगा? ऐसी दशा में दान के पदार्थों को अन्य सदुपयोगों में लगा सकते हैं जिनकी नितान्त आवश्यकता है। देखते हैं कि लोग गोशालाएँ और ब्रह्मचर्याश्रम के लिये चिल्लाते रहजाते हैं पर कुछ होता नहीं। यदि दान के सभी पदार्थ ऐसे कार्यों में लगा दिये जावें तो क्या कोई अनुचित कार्य होगा? क्या इससे भी बढ़कर कोई दान के लिये अवसर मिल सकता है? मैं तो समझता हूं कि जैसे अयाचक ब्राह्मण समाज के लोग दान ग्रहण के निकट उसे निन्दित समझ कर नहीं जाते और शास्त्रोक्त कृष्यादि द्वारा अपनी जीविका करते हैं, वैसेही यदि इतर (याचक) ब्राह्मण भी (क्योंकि वे भी तो कृषि इत्यादि करते ही हैं) करने लग जावें तो भारतवर्ष की गोहत्या विना प्रयत्न उसी द्रव्य से बन्द हो जावे। जिन द्रव्यों से वे अपना पेट पालते हैं उन्हीं से इस पुण्य भूमि में सरस्वती की पावन धारा अनवरत प्रवाहित होकर इस भूमि के सब कलमषों को दूर कर देवे और गोरक्षा द्वारा देश की निर्धनता और व्याधियों का भी विलय हो जावे। इसीलिये अग्निपुराण में लिखा है कि:-

दैवे कर्मणि पित्र्ये च ब्राह्मणो नैव लभ्यते।
तदन्नं तु गवे दद्यादथवा निक्षिपेज्जले॥

अर्थात् 'यदि देव और पितृ कर्म में योग्य ब्राह्मण न मिलें तो उस अन्न या द्रव्य को गो निमित्त प्रदान कर देवे, अथवा जल में फेंक देवे'। कि बहुना, जिस दानग्रहण से स्कन्दपुराण के ब्रह्मोत्तर खंड के छठे अध्याय में किसी ब्राह्मणी के पुत्र की दरिद्रता शांडिल्य ऋषि ने दिखलाई है, जैसा कि,

एष ते तनयः पूर्वजन्मनि ब्राह्मणोत्तमः।
प्रतिग्रहैर्वयो निन्ये न यज्ञाद्यैः सुकर्मभिः॥ ८०॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अतो दारिद्र्यमापन्नः पुत्रस्ते द्विजभामिनि ।
तद्दोषपरिहारार्थं शरणं यातु शंकरम् ॥ ८१ ॥

अर्थ यह है कि 'महर्षि शांडिल्य ने उस ब्राह्मणी से कहा कि हे द्विजभामिनि! यह तेरा पुत्र पूर्व जन्म में बहुत उत्तम ब्राह्मण था, परन्तु यज्ञादि न करके केवल प्रतिग्रह से ही जन्म बिताता था, इसलिये इस जन्म में दरिद्र होगया है। अतः इस दोष की निवृत्ति के लिये महादेव जी की शरण जावे'। और जिस प्रतिग्रह से अग्निहोत्री ब्राह्मण को भी श्मशान काष्ठ तुल्य अपवित्र मत्स्यपुराण के २०४ अध्याय में ठहराया है, जैसा कि:—

आहिताग्निर्द्विजो यस्तु तद्देयं तस्य पार्थिवः ॥ ३ ॥
तत्प्रतिग्रहविद्विद्वानाहिताग्निर्द्विजोत्तमः ।
स्नातो वस्त्रयुगाच्छन्नः स्वशक्त्या चाप्यलंकृतः ॥२०॥
अनेन विधिना दत्वा यथावत्कृष्णमार्गकम् ।
न स्पृश्योऽसौ द्विजो राजन् चितियूपसमो हि सः॥२३॥
तं दाने श्राद्धकाले च दूरतः परिवर्जयेत् ।
स्वगृहात्प्रेष्य तं विप्रं मंगलस्नानमाचरेत ॥ २४ ॥

भावार्थ यह है कि 'हे राजन् जो ब्राह्मण अग्निहोत्री होवे उसे ही कृष्ण मृग का चर्म देना चाहिये। प्रतिग्रह को जाननेवाला वह विद्वान, अग्निहोत्री ब्राह्मण स्नान करके दो वस्त्रों के साथ साथ यथा शक्ति भूषण धारण किया होवे। इस प्रकार से उसको विधिवत् कृष्णमृगचर्म देकर उसे स्पर्श न करे, क्योंकि वह उस समय चिता के काष्ठ के सदृश हो जाता है। इसलिये उस ब्राह्मण को दान और श्राद्धकाल में दूरसे ही त्याग देवे और अपने घर से उसे विदा करके मंगल स्नान करे'। ऐसे प्रतिग्रह से सर्वथा दूर रहकर कृषि वाणिज्यादि द्वारा जीवन बिताने में हीं कल्याण है।

२—ब्राह्मण धर्म।

(ग) कृषि—अब ब्राह्मण की प्रशस्त जीविका कृषि का विशेषरूप से विचार करते हैं। क्योंकि आजकल अज्ञान, स्वार्थान्धता और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अकारण परद्वेष एवं परोत्कर्षासहिष्णुतामूलक बहुतसी कुशंकायें इस विषय में हुआ करती हैं। यह स्मरण रखना चाहिये कि कृषि, वाणिज्य और एकनिर्दिष्ट व्याजपर रुपये देने ये तीनों अथवा प्रथम के दोही दो प्रकार के होते हैं,(१) स्वयंकृत अर्थात् अपने हाथों से किये गये, और (२)अस्वयंकृत अर्थात् भृत्यादि अन्यपुरुष द्वारा कराये गये। जैसा दिखला चुके हैं, उनमें से प्रथम अर्थात् स्वयंकृत तो आपत्ति काल में ब्राह्मण द्वारा किये जा सकते हैं। परन्तु क्षत्रियादि उन्हें अनापत्ति काल में भी कर सकते हैं, जिनका वर्णन ब्राह्मण के आपद्धर्म प्रकरण नामक मनुस्मृति के दशम अध्याय के ८२,८३और ८४ श्लोकों में है। परन्तु दूसरे प्रकार के अर्थात् अस्वयंकृत कृषि आदि को ब्राह्मण अनापत्तिकाल में करे, जिनका वर्णन अनापत्तिकालिक ब्राह्मणधर्म प्रकरण नामक मनुस्मृति के चतुर्थाध्याय में कियागया है; जैसा कि प्रथम दिखला चुके हैं। इस विषय में गौतमस्मृति की सम्मति देते हुये कुल्लूकभट्ट मनुस्मृति के चतुर्थाध्याय के छठें श्लोक की टीका में लिखते हैं कि:—

तेनचैवापि जीव्यतइतिचशब्देनवाणिज्यसमशिष्टत्वात्कुसीदमपि गृह्यते।पूर्वश्लोकोक्ता कृषिरेतच्छ्लोकोक्ते च कृषिवाणिज्येअनापदीत्यनुवृत्तेरस्वयंकृतान्येतानिबोद्धव्यानि, यथाह गौतमः कृषिवाणिज्ये स्वयं चाकृते कुसीदं च॥

अर्थ यह है कि इस श्लोक में पठित 'तेन चैव' इस च शब्द से वाणिज्य के साथी सूदका समुच्चय होता है। परंतु जबकि इन सभी श्लोकों में आदि के श्लोक से 'अनापदि' इस पद का संबंध है, जिसका तात्पर्य यह है कि ये जीविकायें अनापत्तिकालिक हैं। इस लिये पूर्व प्रदर्शित श्लोकोक्त कृषि और इस श्लोक में पठित वाणिज्य और वृद्धि (सूद) ये तीनों यहां पर अनापत्ति प्रकरण में अस्वयंकृत ही लिये जाते हैं, जैसा कि गौतम स्मृति में कहा है कि अस्वयंकृत कृषि, वाणिज्य और वृद्धि (सूद) भी ब्राह्मण के धर्म हैं'। इसलिये जहां कहीं भी ब्राह्मण के लिये कृषि का विधान होवे और स्पष्ट लिखा न हो वहां अनापत्ति काल में अस्वयंकृत कोही जानना चाहिये न कि स्वयंकृत को। और जहां उसके ही लिये कृषिका निषेध होवे, परन्तु स्पष्ट रूप से व्यवस्था न की गई होवे वहां पर सभी जगह केवल स्वयंकृत कृषि आदि का निषेध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समझना चाहिये। यही कारण है कि लोग विधि निषेध वाक्यों का तात्पर्य न समझ कर कहने लग गये और लग जाते हैं कि ब्राह्मण के लिये कृषि का निषेध है। हालां कि, वे भी स्वयं ब्राह्मणता की दम भरते हुये वही कर्म करते हैं। परन्तु इसमें उनका दोष ही क्या है? क्योंकि वे विवेकहीन तथा अकारण परछिद्रान्वेषी बनगगये हैं। इसलिये 'अज्ञात्वा शास्त्र हृदयं मूढो वक्त्यन्यथान्यथा,' अर्थात् 'मूर्खलोग शास्त्र के तात्पर्य को न समझ अनाप सनाप बका करते हैं,' इस न्याय के ही वे लोग दृष्टान्त हो रहे हैं। मनुस्मृति के दशमाध्याय के, 'कृषिगोरक्षमास्थाय जीवेद्वैश्यस्यजीविकाम्' अर्थात् 'आपत्तिकाल में ब्राह्मण कृषि, और गोरक्षा करके वैश्यवृत्ति से भी जीविका करे' इस ८२ वें श्लोक में भी कुल्लूक भट्ट ने स्पष्ट लिख दिया है कि:—

कृषिगोरक्षग्रहणंवाणिज्यप्रदर्शनार्थंतथाचविक्रेयाणि वक्ष्यति। स्वयंकृतं चेदं कृष्यादि ब्राह्मणापद्वृत्तिरस्वयं कृतस्यऋतामृताभ्यां जीवेतेत्यनापद्येव विहितत्वात्॥

भाव यह है कि 'इस श्लोक में कृषि, गोरक्षा पद से वाणिज्य को भी समझाना चाहिये, इसीलिये ब्राह्मण के बेंचने योग्य पदार्थों का आगे वर्णन करेंगे। स्वयंकृत ही कृष्यादि आपत्ति काल में ब्राह्मण की जीविकायें हैं; क्योंकि अस्वयंकृत कृष्यादि का तो विधान अनापत्तिकाल में 'ऋतामृताभ्यां' इत्यादि वाक्यों द्वारा चतुर्थाध्याय में कर आये हैं,। पराशरस्मृति से भी स्पष्टतया यही प्रतीत होता है। क्योंकि वहां लिखा है कि—

षट्कर्मसहितो विप्रः कृषिकर्म च कारयेत्। २।२।
हीनांगं व्याधितं क्लीबं वृषं विप्रो न वाहयेत्॥ ३।

अर्थात् 'पूर्वोक्त संध्यास्नानादि षट्कर्म करनेवाला ब्राह्मण जीविका के लिये कृषिकर्म करवावे। परन्तु रोगी, हाथ या पांव आदि अंगों से रहित, लंगड़े और नपुंसक बैलों को हल में न जुतवावे'। इस श्लोक में करवावे और जुतवावे इस अर्थवाले 'कारयेत' और 'वाहयेत्' शब्दों का प्रयोग करते हुये उन्होंने ब्राह्मण के लिये अस्वयंकृत कृषि का ही विधान किया है। इसीलिये आगे चलकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्होंने स्वयंकृत कृषि का अनापत्ति में निषेध किया है। जैसाकि,

ब्राह्मणश्चेत्कृषिं कुर्यात्तन्महादोषमाप्नुयात् ॥८॥
संवत्सरेण यत्पापं मत्स्यघाती समाप्नुयात्।
अयोमुखेन काष्ठेन तदेकाहेन लांगली ॥ ११ ॥
पाशकोमत्स्यघाती च व्याधःशाकुनिकस्तथा।
अदाताकर्षकश्चैव पञ्चैते समभागिनः ॥१३॥ २॥

अर्थ यह है कि 'ब्राह्मण अपने हाथों से हल जोतकर कृषि करे तो महापापी हो जाता है। मछलियाँ मारनेवाला एक वर्ष में जितने पाप का भागी होता है, उतने हीं का हल जोतनेवाला एक ही दिन में होता है। फन्दे से जंतुओं का पकड़नेवाला, मत्स्यघाती, बहेलिया, चिड़ीमार और कृपण होकर अपने हाथ खेती करनेवाला ये पांचों बराबर हैं।' आगे चलकर जो लिखते हैं कि:—

वृक्षंछित्वामहींभित्त्वाहत्वा च कृमिकीटकान्।
कर्षकः खलयज्ञेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १६ ॥

अर्थात् 'अपने हाथ खेती करनेवाला, वृक्षों को काट, पृथ्वी को फाड़ और कृमि, कीटों को मारकर खलयज्ञ नामक कर्म करने से पवित्र होता है'। और अन्यत्र भी जो स्मृति और पुराणों में कृषकको प्रायश्चित्त लिखे गये हैं, और कृषि की निन्दा की गई है वे सभी अपने हाथ से हल जोतनेवाले के ही लिये लिखे गये हैं। क्योंकि अस्वयंकृत कृषि को जब शास्त्र ही करने को कहता है तो उसमें दोष कहां हो सकता है? नहीं तो फिर यज्ञादि में भी अवश्य अनेक प्रकार से हिंसाओं के होने के कारण वहां भी प्रायश्चित्त करना चाहिये। यदि यज्ञ में भी हिंसादिजन्य पापों के लिये कोई प्रायश्चित्त माना जावे तो फिर अस्वयंकृत कृषि आदि में भी मानने में कोई दोष नहीं है। क्योंकि जैसे उस प्रायश्चित्त मात्र के करने से यज्ञ निषिद्ध या अधर्म नहीं समझा जाता, वैसे ही कृषि आदि भी उस प्रायश्चित्त से निषिद्ध नहीं हो सकते। बल्कि जब पराशरस्मृति के द्वितीय अध्यायभर में, केवल अन्त के श्लोकों को छोड़कर, (क्योंकि वहां क्षत्रियादि के लिये कृषि का वर्णन है)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मण के लिये कृषि का वर्णन है और अन्त में यह भी लिखा हुआ है कि 'चतुर्णामपिवर्णानामेषधर्मः सनातनः'। अर्थात् 'चारों वर्णों के यथोचित कृषिआदि सनातन धर्म हैं' और मध्य में यहांतक लिखा हुआ है कि,

स्वयंकृष्टे तथा क्षेत्रे धान्यैश्च स्वयमर्जितैः॥
निर्वपेत्पंच यज्ञांश्च क्रतुदीक्षां च कारयेत् ॥ ६ ॥

अर्थात् ब्राह्मण अपने से जुतवाये हुये क्षेत्र में स्वयं उपार्जित अन्नों द्वारा पंच यज्ञ और बड़े बड़े यज्ञ करे या 'करवावे'। क्योंकि क्षत्रियादि के लिये आगे चलकर लिखा हुआ है कि,

क्षत्रियोऽपि कृषिं कृत्वा देवान्विप्राँश्च पूजयेत्।
वैश्यःशूद्रस्तथाकुर्यात्कृषिवाणिज्यशिल्पकम् ॥ १८ ॥

अर्थात् 'क्षत्रिय भी खेती करके देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा करे। इसी प्रकार वैश्य और शूद्र भी कृषि, वाणिज्य और शिल्पादि का व्यवसाय करें'। तो फिर यह कहना कि ब्राह्मण के लिये कृषि निन्दित है, सरासर भूल है। हां, 'अनापत्तिकाल' में स्वयंकृता कृषि अर्थात् अपने हाथों हल जोतना और अपने हाथ से वाणिज्य करना निन्दित है और उसके करने से ब्राह्मण पाप का भागी अवश्य होजाता है। परन्तु इस समय प्रायः याचक ब्राह्मण दल में ऐसी बहुत जगह पाई जाती हैं। क्योंकि मैंने अपनी आंखों और कानों कानपुर के पास वाजपेयी प्रभृति उच्चश्रेणी के कान्यकुब्जों को हल जोतते देखा और सुना है। यही दशा मथुरा के आसपास और गौड़ों के देश, पंजाब एवं गुजरात में भी पाई जाती है। परन्तु कोई भी कान्यकुब्जों या गौड़ों आदि से इसका नाम भी नहीं लेते। केवल अयाचक ब्राह्मणों पर मिथ्या दोषारोपण और इन्हें नीचा दिखाने का यत्न करना यही सभी का प्रधान उद्देश्य होरहा है। परन्तु ईश्वरानुग्रह से, चाहे अन्य ब्राह्मण या अन्य वर्णों में अब तक जो कुछ भी होगया है लेकिन, इस अयाचक ब्राह्मण दलका एक बच्चा भी भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक जहां तक किसी न किसी रूपमें इन की सत्ता है, अपने हाथों हल जोतने का नाम भी नहीं जानता। और यदि कहीं जानता भी होगा तो याचक दलवाले ब्राह्मणों के ही संग से। कारण, वही गुरु, पुरोहित और उपदेशक हैं। अतःअभी तक इन ब्राह्मणों की इस शुद्धता में, ऐ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सभी अन्य ब्राह्मणों से बढ़कर है, कोई कलंक संभावित नहीं है। इतर ब्राह्मण तो चाहे ऐसा करने से भले ही दोष के पात्र बन गये हैं अथवा नहीं। क्योंकि लिखा है कि:-

आपत्कल्पेन जो धर्मं कुरुतेऽनापदि द्विजः।
स नाप्नोति फलं तस्य परत्रेति विचारितम् ॥ २८ ॥
प्रभुः प्रथमकल्पस्य योऽनुकल्पेन वर्त्तते।
नसापरायिकं तस्य दुर्मतेर्विद्यते फलम् ॥३०॥म. ११।

अर्थ यह है कि 'जो ब्राह्मणादि आपत्ति के धर्म को अनापत्ति में करते हैं उन्हें उसका फल परलोक में नहीं मिलता। जो अनापत्ति के धर्मों के करने में समर्थ होकर भी आपत्ति धर्म करता है उसे पारलौकिक फल से वंचित रहना पड़ता है'। यदि किसी प्रकार से हलवाहे आदि की सामर्थ्य या प्राप्ति न होने से उनके लिये यह भी आपत्ति काल मान लिया जावे तो किसी तरह गुजारा हो सकता है। परन्तु ऐसे कर्मों का, जहां तक हो सके, त्याग ही श्रेयस्कर है

इस प्रकार से ब्राह्मण के लिये जब कृषि मन्वादि वाक्यों द्वारा सनातन धर्म सिद्ध होगई और विशेषकर आज कल जब वेदादि का अभ्यास छोड़ने से प्रतिग्रह की योग्यता न रह गई अथवा रहने पर भी अनापत्तिकालिक जीविका का संघटन बना हुआ है। ऐसी दशा में प्रतिग्रह का अधिकार ही न रहने से, जैसा कि अभी कह चुके हैं, कृषि करना बहुत उत्तम जीविका ठहरी। तो मनुस्मृतिके दशमाध्याय में वा अन्यत्र जो कृषि का निषेध प्रतीत होता है अथवा उसकी निन्दा मात्र प्रतीत होती है वह केवल, जैसा कि प्रथम कह चुके हैं, स्वयं कृता कृषि की निन्दा है। क्योंकि दशमाध्याय आपद्धर्म प्रकरण है। इस लिये पूर्वोक्त व्यवस्थानुसार स्वयंकृत कृषि आदि का ही प्रकरण है। क्योंकि अस्वयंकृत कृष्यादि को अनापद्धर्म प्रकरण चतुर्थ अध्याय में मनुजी स्वयं हीं कह चुके हैं। परन्तु कोई ऐसा न विचार लेवे, जैसाकि आजकल के बहुतेरे नवशिक्षितों का विचार हो रहा है, कि सर्वदा हीं अपने हाथ से ब्राह्मणादि को हल के जोतने में कोई हर्ज नहीं है, इसीलिये मनुजी उस कृषि को निन्दित और अगतिक गति ठहराते हुये केवल आपत्ति में हीं उसे करने की आज्ञा देते हैं। क्योंकि प्रथम यह कहते हैं कि:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उभाभ्यामप्यजीवँस्तु कथंस्यादिति चेद्भवेत् ।
कृषिगोरक्षमास्थाय जीवेद्वैश्यस्य जीविकाम् ॥ ८२

अर्थात् 'यदि यह संशय हो कि आपत्ति में अपनी वृत्ति और क्षत्रिय की भी विशेष वृत्ति न मिल सके तो ब्राह्मण कैसे जीवे ? उसका समाधान यह है कि वैश्य वृत्ति अर्थात् अपने हाथों से जोतकर कृषि और गोरक्षा एवं वाणिज्य द्वारा जीविका करे'। यों सामान्यतः सभी प्रकार की कृषि वैश्य के ही लिये होती तो क्यों कहते कि वैश्य की वृत्तिरूप जो कृषि और गोरक्षा हैं उन्हें जीवे ? क्योंकि आप तो सभी को एकसी ही मानते हैं। परन्तु हमारे मत से तो खेती दूसरे द्वारा करना ब्राह्मण का भी कर्म है। इस लिये वैश्य की वृत्तिरूप खेती कहने से अपने हाथोंवाली ही ली जायगी और वही आपद्धर्म है। अब अगले श्लोकों में पूर्वोक्त इस कृषि में भी विशेष प्रकार की कृषि करने को कहते हैं। क्योंकि लिखते हैं कि:-

वैश्यवृत्त्यापि जीवँस्तु ब्राह्मणः क्षत्रियोऽपि वा ।
हिंसाप्रायां पराधीनां कृषिं यत्नेन वर्जयेत् ॥८३॥

तात्पर्य यह है कि 'अपने हाथसे खेती करके जीनेवाले ब्राह्मण भी उस कृषि का बहुत यत्न से परित्याग करें जिसमें बहुत ही हिंसा की संभावना होवे, अथवा जमीन इत्यादि भी अपनी न होने से सभी प्रकार से पराधीनता ही होवे'। क्योंकि मनु जी प्रथम भी कह चुके हैं कि

यद्यत्परवशं कर्म तत्तद्यत्नेन वर्जयेत् ।
यद्यदात्मवशंतु स्यात्तत्तत्सेवेत यत्नतः ॥ १५८ । ४

अर्थात् 'जो जो काम एकदम पराधीन होवें उनका यत्नपूर्वक त्याग और जो जो स्वाधीन होवें उनका सेवन करे'। इसके बाद लिखते हैं कि,

कृषिं साध्विति मन्यन्ते सा वृत्तिः सद्विगर्हिता।
भूमिं भूमिशयाँश्चैव हन्तिकाष्ठमयोमुखम् ॥८४॥

इसलिये इसका प्रकरण वश उचित अर्थ यही है कि 'बहु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लोग ऐसा समझते हैं कि स्वयं अर्थात् अपने हाथ से हल जोतकर कृषि करना सर्वदा ही उत्तम है। परन्तु ऐसी वृत्ति की आपत्तिकाल से भिन्न काल में सत्पुरुष लोग निन्दा करते हैं, क्योंकि फालसहित जो हल का भाग है वह भूमि का विदारण और उसमें रहनेवाले जीवों का नाश करता है। अतः अपने हाथ से हल जोतनेवाला हिंसक हो जावेगा'। यही बात पराशर स्मृति में भी प्रथम दिखला चुके हैं। यदि ऐसा अर्थ न मानेंगे तो मनु जी की इस सामान्य निंदा से सभी के लिये कृषि निन्दित समझी जावेगी, क्योंकि इसमें किसी ब्राह्मण आदि का नाम नहीं है। ऐसी दशा में जो गीता और मनुस्मृत्यादि ग्रन्थों में सामान्य रूप से लिखा है कि—

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यंवैश्यकर्मस्वभावजम्। गीता। ४४।१८।
शस्त्रास्त्रभृत्त्वं क्षत्रस्य वणिक्पशुकृषिर्विशः। म० ७८।१०॥

अर्थात् 'कृषि, गोरक्षा और वाणिज्य ये कर्म वैश्यों के स्वाभाविक हैं। शस्त्र और अस्त्र धारण करना क्षत्रिय की जीविका है और वाणिज्य, कृषि तथा पशुपालन वैश्य की'। इन सबों का तात्पर्य यह है कि स्वयंकृत (अपने हाथ से किये गये) कृषि, वाणिज्य और पशुपालन वैश्यों की स्वाभाविक जीविकायें हैं, परन्तु अस्वयंकृत कृष्यादि तो ब्राह्मण की भी जीविकायें हैं। नहीं तो उन्हीं मनुस्मृति आदि ग्रंथों का पूर्वापर अथवा परस्पर विरोध होगा।

एक बात और ध्यान देने की है कि जैसे ब्राह्मणत्व, ब्राह्मणता या ब्राह्मण्य यह ब्राह्मण का असाधारण कर्म है, अर्थात् ऐसा धर्म है जो उसे छोड़कर अन्यत्र नहीं पाया जा सकता। ऐसी ही क्षत्रियत्वादि की भी दशा जाननी चाहिये। इसी प्रकार यदि कृषि भी करना केवल वैश्य (वणिक्) का ही असाधारण कर्म होता तो वाणिज्य कहने से ही उसका भी बोध होजाता, क्योंकि त्व, तल् और ष्यञ् प्रत्यय जिन शब्दों के आगे लगते हैं उनके प्रतिपाद्य अर्थों के असाधारण धर्मों और कर्मों को कहते हैं। जैसे ष्यञ् प्रत्ययान्त काव्य शब्द कवि के ही असाधारण कर्म (क्रिया) को कहता है। इसमें पाणिनि महर्षि जी के 'तस्यभावस्त्वतलौ' (५।१।११९) 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' (५।१।१२४) ये दोनों सूत्र प्रमाण हैं। और फिर 'कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यम्' इस वाक्य में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाणिज्य से पृथक् कृषि और गोरक्षादि के कथन की आवश्यक न होती, क्योंकि वाणिज्य शब्द भी ष्यञ् प्रत्ययान्त है। इस स्पष्ट है कि कृष्यादि वैश्य के असाधारण धर्म नहीं हैं; कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यादि के साधारण धर्म हैं अर्थात् उन्हें स कर सकते हैं। बृहस्पतिस्मृति के प्रारम्भ के बीसों श्लोकों भूमिदान की बहुत ही प्रशंसा की गई है, जैसा कि:—

सुवर्णरजतं वस्त्रं मणिं रत्नं च वासव।
सर्वमेव भवेद्दत्तं वसुधां यः प्रयच्छति ॥५॥

अर्थात् 'हे इन्द्र! सोना, चांदी, वस्त्र, मणि और रत्न इन स के दान का फल भूमिदान से प्राप्त होता है' इत्यादि, और इ भूमि दान का पात्र ब्राह्मण हीं हो सकता है। बल्कि इस बात को उसी जगह लिख भी दिया है कि:—

विप्राय दद्याच्च गुणान्विताय तपोनियुक्ताय जितेन्द्रियाय
यावन्मही तिष्ठति सागरान्ता तावत्फलं तस्य भवेदनन्तम्१०

जिसका अर्थ यह है कि 'गुणवान्, तपस्वी और जितेन्द्रि ब्राह्मण को पृथ्वी दान देवे जिसका अनन्त फल जब तक साग पर्यन्त पृथ्वी स्थित रहेगी तब तक होगा'। अब ब्राह्मण उस पृथ्वी का या तो राजा बने या उसमें कृषि करवावे, तीसरी बात तो हो सकती नहीं। यदि दूसरे को दे देना चाहे सो तो उचित नहीं है क्योंकि याज्ञवल्क्यस्मृति के ३१८ वें श्लोक के 'पार्थिवः' इस प को लेकर मिताक्षरा में लिखा है कि 'अनेनभूपतेरेव भूमिदानेऽधि कारो न भोगपतेरिति दर्शितम्'। अर्थात् स्मृति के 'पार्थिव' पद से यह सूचित किया है कि राजा को ही भूमिदान का अधिकार है न कि जिन जमींदारादि को केवल भोग के लिये मिली है उनको भी यदि कुछ द्रव्य उसके बदले लेकर उसे बेंचना चाहे तो पृथ्वी बेंच का निषेध है, क्योंकि याज्ञवल्क्यादि स्मृतियों में लिखा है कि,

मृच्चर्म पुष्पकुतपकेशतक्रविषक्षितीः ॥ ३७ ॥
वैश्यवृत्त्यापिजीवन्नोविक्रीणीतकदाचन॥३८॥ या० प्रा०।
नित्यंभूमिव्रीहियवाजाव्यश्वर्षभधेन्वनडुहश्चैके। गौ.अ.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात्, 'वैश्यवृत्ति से जीविका करनेवाला भी ब्राह्मण, मिट्टी, चमड़ा, फूल, कम्बल, चमर, मट्ठा, विष और पृथिवी का विक्रय कदापि न करे'। 'सर्वदा ही पृथिवी, धान, यव, बकरी, भेड़ी, घोड़ा, बैल, धेनु, और सांड़ों को बेंचना न चाहिये'। यदि वह भी पृथ्वी का दान करे, तो विरोध होगा, क्योंकि यहां तो लिखा हुआ है कि,

'यथाप्सु पतितः शक्र तैलविन्दुः प्रसर्पति।
एवं भूम्याः कृतं दानं शस्ये शस्ये प्ररोहति॥१॥ बृह०।

अर्थात् 'हे इन्द्र! जैसे जल में गिरा हुआ तेल फैलता है वैसे ही भूमि का दान ज्यों ज्यों उसमें अन्न उत्पन्न होकर बढ़ता है त्यों त्यों बढ़ता है'। इससे तो जिसे प्रथम दी गई है वह कृषि करने केलिये बाध्य है। यदि वह दान भी करेगा तो ब्राह्मण को ही करेगा। इसलिये यदि प्रथम ने न की तो दूसराही कृषि करेगा। अन्ततोगत्वा जब करेगा तो ब्राह्मण हीं। और भी आगे स्पष्टरूप से लिखा है कि:—

त्रीण्याहुरतिदानानि गावःपृथ्वीसरस्वती।
तारयंतीह दातारं जपवापनदोहनैः॥ १८॥

अर्थात् 'तीन दान अतिदान कहे जाते हैं यानी गौ, पृथ्वी और विद्या, जो क्रमशः दूहने, बोने और जपने से दाता को तार देते हैं'। इससे तो स्पष्ट ही है कि पृथ्वी दानग्राही दाता को उसके फल की प्राप्ति के लिये अवश्य उसमें अन्न बोवे अर्थात् कृषि करे। अग्निपुराण के ११३ वें अध्याय में लिखा है कि,

भूमिं दत्वा सर्वभाक् स्यात्सर्वशस्यप्ररोहिणीम्।
ग्रामं वाथ पुरं वापि खेटकं वा ददत्सुखी॥८॥

अर्थ यह है कि 'सब शस्य से युक्त पृथ्वी का दान देनेसे सब वस्तुओं का भागी होता है और गांव, टोला अथवा खेटक (खेड़ा) इत्यादि देने से भी सुखी होता है'। उसी के २११ वें अध्याय में लिखा है कि,

संयुक्तहलपंक्त्याख्यं दानं सर्वफलप्रदम्।
पंक्तिर्दशहला प्रोक्ता दारुजा वृषसंयुता॥७॥

जिसका अर्थ यह है कि 'संयुक्तहलपंक्ति नाम का दान सब फलों का प्राप्त कराने वाला होता है। लकड़ी के दस हल जो बैलों के साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment:-Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होवें उनका नाम पंक्ति है'। भला बैल के साथ हल का दान सि
ब्राह्मण के कृषि करने के और किस काम का होगा ? अग्निपुराण
ही १२५ वें अध्याय में लिखा है कि,

कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यं कुसीदं च द्विजश्चरेत्।
गोरसं गुडलवणलाक्षामांसानि वर्जयेत् ॥ २॥
हलमष्टगवं धर्म्यं षड्गवं जीवितार्थिनाम्।
चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवं धर्मघातिनाम्।
ऋतामृताभ्यां जीवेत मृतेन प्रमृतेन वा।
सत्यानृत्याभ्यामपि वा न श्ववृत्त्या कदाचन ॥

अभिप्राय यह है कि 'ब्राह्मण कृषि, गोरक्षा और वाणिज्य
परन्तु गोरस, गुड़, लवण, लाक्षा और मांस की विक्री न करे।
बैलोंवाला हल धर्मयुक्त, छ बैलोंवाला केवल जीने के लिये, चार
वाला हत्यारों का और दो बैलोंवाला धर्मनाशकों का कहलाता
ऋत, अमृत, मृत, प्रमृत (कृषि) और सत्यानृत (वाणिज्य) से जी
का करे, परन्तु श्ववृत्ति अर्थात् नौकरी से जीविका कभी भी न
मत्स्यपुराण के २८० वें अध्याय में पंचलांगलक नाम के दान से
ब्राह्मण का कृषि करना स्पष्टरूप से सिद्ध है। वह इस प्रकार है

अथातः संप्रवक्ष्यामि महादानमनुत्तमम्।
पंचलांगलकं नाम महापातकनाशनम् ॥१॥
पुण्यां तिथिमथासाद्य युगादिग्रहणादिकाम्।
भूमिदानं नरो दद्यात्पंचलांगलकान्वितम् ॥२॥
खर्वटं खेटकं वापि ग्रामं वा शस्यशालिनम्।
निवर्त्तनशतं वापि तदर्द्धं वापि शक्तितः ॥३॥
सारदारुमयान्कृत्वा हलान्पंच विचक्षणः।
सर्वोपकरणैर्युक्तानन्यान् पंच च काञ्चनान् ॥४॥
कुर्यात्पंचपलाद्वूर्द्ध्वमासहस्रपलावधि।
वृषान् लक्षणसंयुक्तान्दश चैव धुरन्धरान्।
सुवर्णशृंगाभरणान् मुक्तालांगूलभूषणान् ॥५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रौप्यपादाग्रतिलकान् रक्तकौशेयभूषणान् ।
स्रग्दामचन्दनयुक्तान् शालायामधिवासयेत् ॥६॥
ततो मंगलशब्देन शुक्लमाल्याम्बरो बुधः ।
आहूय द्विजदाम्पत्यं हेमसूत्रांगुलीयकैः ॥ ८ ॥
कौशेयवस्त्रकटकैर्मणिभिश्चाभिपूजयेत् ।
शय्यां सोपस्करां दद्याद्धेनुमेकां पयस्विनीम्॥ १०॥
ततः प्रदक्षिणीकृत्य गृहीतकुसुमाञ्जलिः ।
इममुच्चारयेन्मंत्रमथसर्वं निवेदयेत् ॥ ११ ॥
यस्माद्देवगणाः सर्वे स्थावराणि चराणि च ।
धुरन्धरांगे तिष्ठन्ति तस्माद्भक्तिः शिवेऽस्तुमे॥१२॥
यस्माच्चभूमिदानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।
दानान्यन्यानि मे भक्तिर्धर्म एव दृढा भवेत् ॥१३॥
दंडेन सप्तहस्तेन त्रिंशद्दण्डं निवर्त्तनम् ।
त्रिभागहीनं गोचर्ममानमाह प्रजापतिः ॥१४॥
मानेनानेन यो दद्यान्निवर्त्तनशतं बुधः ।
विधिनानेन तस्याशु क्षीयते पापसंहतिः ॥१५॥
तदर्द्धमथवा दद्यादपि गोचर्ममात्रकम् ।
भवनस्थानमात्रं वा सोऽपि पापैः प्रमुच्यते ॥१६॥
यावन्ति लांगलकमार्गमुखानिभूमे,
भासां पतेर्दुहितुरंगजरोमकाणि ।
तावन्तिशंकरपुरे स समाहितिष्ठेद्,
भूमिप्रदानमिह यः कुरुते मनुष्यः ॥१७॥
इन्द्रत्वमप्यधिगतं क्षयमभ्युपैति
नोभूमिलांगलधुरन्धरसंप्रदानात् ।
तस्मादघौघपटलक्षयकारिभूमे-
र्दानंविधेयमिति भूतिभवोद्भवाय ॥ १८ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सब का भावार्थ यह है कि, 'अब पंचलांगलक नामक महादान वर्णन करते हैं, जो महापातक का नाशक है। ग्रहणादि पुण्य तिथि मनुष्य पांच हलों सहित भूमिदान करे। वह भूमि चाहे ऊंची, नीच खेड़ा, शस्य से पूर्ण ग्राम अथवा सौ निवर्त्तन होवे, अथवा यथाश उसका आधा भी हो। पांच हल लकड़ी के सार के और पांच सोने बनवावे, जिनमें से लकड़ीवाले जोतने की सब सामग्री के सहित हो परन्तु सोने के तो पांच पल से लेकर १००० पल (परिमाण विशे तक के बनवावे। लकड़ी के पांच हलों के लिये दस धुरन्धर (हल जूआ खींचने वाले), सुवर्ण लगी सींग और मुक्ता लगी पूंछवाले, पांवों के अग्र में चांदी मढ़े और लाल रेशम ओढ़ाये हुये तथा चन्दन अ मालाआदि से भूषित बैलों को भी दानशाला में लाकर रखे। उसके शुक्ल वस्त्र और माला पहन मंगल जनक शब्दों से ब्राह्मणी और ब्राह्म को बुलाकर सोने की करधनी, जनेऊ और आभूषण एवं रेशमी व मणि और कंगनों से उनकी पूजा करे। सब सामान के स एक शय्या और एक दूध देने वाली धेनु का दान करे। उसके प्रदक्षिणा कर अंजली में पुष्प लेकर इस अगले मंत्र का उच्चारण के सब वस्तुयें दे देवे। हल की जूआ खींचनेवाले बैल के अं में सब देवता, स्थावर और जंगम निवास करते हैं, इसलिये मेरी भ शिव में उत्पन्न होवे। और अन्य दान भूमिदान के सोलहवें अंश भी बराबर नहीं होते, इसलिये मेरी दृढ़ भक्ति धर्म में होवे। सात हाथ वाले दण्ड से तीस दण्ड नपी भूमि एक निवर्त्तन कहलाती है अ उसीका तीसरा भाग उसमें घटा देने से वही भूमि गोचर्म प्रमाणवा कही जाती है। इस परिमाण से जो विचारवान् १०० निवर्त्तन पूर्वो विधि से दान करता है उसका पापसमुदाय नष्ट हो जाता है। जो उ का आधा, गोचर्म मात्र अथवा मकान बनाने भर भी देता है उसके पाप नष्ट हो जाते हैं। जो मनुष्य इस प्रकार से हल आदि के सहि भूमि दान करे वह उतने हीं वर्ष कैलाश में निवास करता है जित हड्डियां उस भूमि पर जोतने समय बार२ पड़ा करती हैं, अथवा जित यमुना के रोम (शीकर) हैं। हल और जोतनेवाले बैलके सहित भूमि दान करने से प्राप्त इन्द्र पदवी का भी नाश नहीं होता, इसलिये सब पा का नाशक ऐसा भूमिदान ऐश्वर्य प्राप्ति के लिये अवश्य करना चाहिये

जब२ परशुरामने पृथ्वीको निःक्षत्रिया करके उसे कश्यपादि ब्राह्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को दिया, जिसका विवरण वाल्मीकीय रामायण के बालकांड के ७५ वें सर्ग, स्कन्दपुराणके नागरखंड के ६८ वें अध्याय, ब्रह्मवैवर्त्त पुराण और महाभारतादि सभी ग्रन्थों में पाया जाता है। तो फिर उन लोगों ने भूम्यधिपतित्व (राज्य या जमीदारी) अवश्य ही स्वीकार किया और उनमें से बहुत से कृषि भी करते ही थे। इसके अतिरिक्त बहुत सा शिष्टाचार भी कृषि में प्रमाणरूप से मिलता है। दृष्टान्तार्थ धर्मारण्यस्थ ब्राह्मणों को लीजिये, जिनके याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह के त्याग की बात प्रथम कह चुके हैं। उन्हीं के विषय में स्कन्दपुराण के ब्रह्मखण्ड के धर्मारण्यमाहात्म्यवर्णन प्रसंग में ऐसा लिखा है कि,

पंचदशसहस्राणि मध्ये ये के च वाडवाः ॥८६॥
कृषिकर्मरता आसन् केचिद्यज्ञपरायणाः।
केचिन्मल्लाश्च संजाताः केचिद्वै वेदपाठकाः ॥८८॥
स्वकर्मनिरताः शान्ताः कृषिकर्मपरायणाः।
धर्मारण्यान्नातिदूरे धेनूः संचारयन्ति ते ॥३००॥
बहवस्तत्र गोपालाबभूवुर्द्विजबालकाः।
तेषु ग्रामेषु ते विप्राश्चातुर्विद्याद्विजोत्तमाः३०१॥अ०४०

जिसका भावार्थ यह है कि 'उन १५ हजार वाडवों (ब्राह्मणों) में से कोई कृषि करते, कोई यज्ञ में लीन रहते, कोई पहलवानी करते और कोई वेदपाठ करते थे। वे लोग अपने २ धर्म में निरन्तर संलग्न हुये, शान्त और कृषिकर्म में दत्तचित्त थे। उन ब्राह्मणों के बहुत से बालक गायों की रक्षा करते और धर्मारण्य के पास ही गायें चराया करते थे और रामचन्द्रजी के दिये हुये उन्हीं ग्रामों में चारों वेदों के ज्ञाता सर्वोत्तम वाडव (ब्राह्मण) रहा करते थे'। इससे जो कोई ऐसा कहा करते हैं कि कृषि करने और दान आदि त्यागने से अयाचक ब्राह्मण कट्टर ब्राह्मण न रहकर हीन समझे जाने लगे, उनका स्पष्टरूप से खण्डन होगया। एक तो जब पूर्वोक्त रीति से कृषि कर्म ब्राह्मण का सनातन-धर्म है, तो फिर उस के करने से कट्टरपना कहां चला गया ? दूसरे अभी इन और पूर्वके श्लोकों से स्पष्ट ही विदित हुआ है कि धर्मारण्यवासी वाडव (ब्राह्मण) प्रतिग्रहादि तीन कर्मों के त्यागी और कृषि तथा गोपालनादि करते हुये यज्ञ दानादि के कर्त्ता थे और साथही, चारों वेदों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के ज्ञाता थे, न कि मूर्ख, जिससे भूलकर ऐसा करते रहे हों एवं श्रीरामचन्द्र द्वारा वहां स्थापित किये गये थे, फिर भी उनको 'द्विजोत्तमाः' अर्थात् सभी ब्राह्मणों से उत्तम कहा है। ठीक उनकी सी ही दशा तथा आचार विचार और कर्म इन अयाचक ब्राह्मणों के भी हैं तो इनकी कहां ब्राह्मणता चलीगई और हीन समझे जाने लगे, इस कहने की जगह 'ये बहुत ही कट्टर और सब ब्राह्मणों से उत्तम ब्राह्मण हैं' यही कहना न्याय संगत है। वाल्मीकि रामायण के बालकांड के प्रारम्भ में हीं जब दशरथजी ने 'पुत्रेष्टि' नामक यज्ञ कराकर उसकी दक्षिणा में पृथ्वी दान को सर्वोत्तम समझ उसी का देना प्रारम्भ किया है तो, ब्राह्मणोंने यह कहकर उसका इनकार किया है कि हमलोग तपस्वी आदि हैं, अतः हमलोगों से भूमि का प्रबन्ध नहीं हो सकता। इसलिये उसके बदले अन्न, द्रव्यादि दीजिये। न कि भूलकर भी यह कहा है कि भूमिपतित्व अथवा उस में कृषि करना हमलेगों के लिये शास्त्रनिन्दित है। इससे आप की दी हुई पृथ्वी हमारे किसी काम की न होगी। अतः अन्नादि ही दक्षिणा में दीजिये। इस विषय में जिसे सन्देह होवे वह वाल्मीकि रामायण का बालकाण्ड आदि में हीं देखकर अपनी तुष्टि करलेवे। उसी रामायण के अयोध्याकांड के ३२ वें सर्ग में जब श्रीरामजी बनजाते हुये अपने महल की सब वस्तुयें याचकों को देनेलगे हैं, उस समय उनके पास कुछ द्रव्य प्राप्ति के निमित्त आये हुये एक ऐसे ब्राह्मण का वर्णन है, जिससे उन युगों में भी कृषि करना ब्राह्मण का उत्तम धर्म सिद्ध होता है। क्योंकि वहां लिखा है कि

क्षत्रवृत्तिर्वने नित्यं फालकुद्दालहलांगली।
तत्रासीत्पिंगलो गार्ग्यस्त्रिजटोनाम वै द्विजः॥२८॥

कहीं २ 'क्षतवृत्तिः' ऐसा भी पाठ मिलता है। उसका अर्थ यह है कि 'उस जगह अथवा उस समय गर्गगोत्री पीतवर्ण का एक त्रिजट नामवाला ब्राह्मण था, जो अस्त्रादि द्वारा अथवा कन्दमूल खोदकर, अथवा फाल, कुदाल और हल से अर्थात् कृषि करके नित्य हीं वन में रहता हुआ अपनी जीविका करता था'। उसी जगह यह भी लिखा हुआ है कि जब उसकी स्त्री ने बहुत दुखी होकर उसे भगवान रामचन्द्र के पास याचना करने के लिये कहा तो प्रथम उसने वहां न जाने के लिये बहुत ही आग्रह किया है, परन्तु स्त्री के आग्रह से अन्त में हारकर भगवान के पासगया है और जब वहां उस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के विलक्षण वेष को देखकर उस की उत्तम ब्राह्मणता में शंका करके परीक्षार्थ श्रीरामजीने कहा है कि बहुत दूर तक ये गायें खड़ी हैं तुम अपना दण्ड फेंको, जहां तक वह पड़ेगा उतनी गायें लेजाना। इसपर उसने उनके भाव समझ दण्ड ऐसा फेंका है कि वह कई कोस दूर जाकर पड़ा है। इसलिये उसकी शुद्धता देखकर श्रीरामजी बहुत प्रसन्न हुये हैं इत्यादि। क्या इससे यह सिद्ध नहीं होता कि कृषि करना और अस्त्रादि धारण करना कट्टर ब्राह्मणपने के लक्षण हैं, न कि हीनता के? इस आख्यान से यह भी स्पष्ट है कि दान लेना प्रभृति अगतिक गति हैं, और काल पाकर याचक ब्राह्मण अयाचक और अयाचक ब्राह्मण याचक हो सकते हैं और इसी प्रकार अयाचक और याचक ब्राह्मणों के पृथक् २ दल बनते और वे घटते बढ़ते जाते हैं। इसलिये यदि कोई अयाचक ब्राह्मण आवश्यकता पड़ने पर अपनी वंशावली आदि से यह सिद्ध करता है कि कुछ दिन पूर्व उसके पूर्वज याचक दलवाले ब्राह्मण थे और अपना विवाह सम्बन्ध याचक दलवालों से सिद्ध करता है तो जो विचारविकल पण्डितमानी यह कहकर उसकी हँसी उड़ाते हैं कि 'लो, कहां तो अयाचक ब्राह्मण बनते थे, कहां अब याचक बननेलगे इत्यादि'। उनको पूर्व निर्णीत विषय और आख्यान से अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय कर उस कुशाग्र बुद्धि को इस रसायन द्वारा सुधार लेना चाहियें।

महाभारत के सभापर्व के ५१ वें अध्याय में लिखा है कि:—

गोवासना ब्राह्मणाश्च दाशनीयाश्च (दर्शनीयाश्च) सर्वशः।
प्रीत्यर्थं ते महाराज धर्मराज्ञो महात्मनः ॥ ५ ॥
त्रिखर्वं बलिमादाय द्वारि तिष्ठन्ति वारिताः।
ब्राह्मणा वाटधानाश्च गोमन्तः शतसंघशः ॥ ६ ॥
कमण्डलूनुपादाय जातरूपमयान् शुभान्।
एवं बलिं समादाय प्रवेशं लेभिरे न च ॥ ७ ॥

इसका भावार्थ यह है कि 'जब दुर्योधन युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ से लौटकर गया है तो वहां उनकी जो सम्पत्ति उसने देखी थी उससे उसे बड़ा संताप हुआ है, जिसका कारण पूछने पर शकुनि से उन्हीं सम्पदाओं का वर्णन करता है कि 'हे महाराज! पृथिवी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और गाय बैलों के संस्कारवाले (क्योंकि गो नाम पृथ्वी और गाय बैलों का भी है) अर्थात् बड़े२ राजा और कृषि करनेवाले एवं दर्शनीय अर्थात् दिव्य शरीरवाले अथवा बड़े२ दाता ब्राह्मण युधिष्ठिर महाराज की प्रसन्नता के लिये तीन खर्व द्रव्य बलि (नजर) लिये हुये द्वार पर इसलिये रोके गये हैं कि बाहर ही बलि देकर उसके बाद भीतर जावें *। और वाटधान देश में रहनेवाले पूर्ववत् भूमि और गाय बैलोंवाले ब्राह्मणों के सैकड़ों झुण्ड यज्ञ के लिये बहुत से सोने के कमण्डलु और दूसरी बलि (नजर) लेकर पूर्वोक्त कारण से भीतर जाने नहीं पाते हैं '। इससे पूर्वके ४६ वें अध्याय में कह चुके हैं कि:—

ब्राह्मणावाटधानाश्च गोमन्तः शतसंघशः ।
त्रिखर्वं बलिमादाय द्वारि तिष्ठन्ति वारिताः ॥ २५ ॥
कमण्डलूनुपादाय जातरूपमयान् शुभान् ।
एतद्धनं समादाय प्रवेशं लेभिरे न च ॥ २६ ॥

इसका अर्थ पहलेसा ही है। वाटधान देश उत्तर भारत में गान्धार, काश्मीर के पास में महाभारत के युद्धक्षेत्र के पास ही संभवतः कहीं था अथवा है। क्योंकि महाभारत के सभापर्व के ३२ वें अध्याय में हीं नकुल के दिग्विजय प्रसंग में लिखा है कि जब इन्द्रप्रस्थ से पश्चिम की ओर दिग्विजय करने को निकले हैं तोः—

तथामध्यमकेयाँश्च वाटधानान् द्विजानथ ।
पुनश्चपरिवृत्याथ पुष्करारण्यवासिनः ॥ ८ ॥

अर्थात् ' मध्यमक देशवासियों को जीत, वाटधान देश के ब्राह्मणों को जीता। उसके बाद घूमकर पुष्करारण्य वासियों को भी जीता'। फिर उद्योगपर्व में, जब हस्तिनापुर में कौरव सेना को अन्धकार

* क्योंकि सभी बलि (नजर) लानेवाले बड़े २ राजाओं का वर्णन करके अन्त में ५२ वें अध्याय में लिखा है कि:—

तत्रस्था द्वारपालैस्ते प्रोच्यन्ते राजशासनात् ।
कृतकालाः सुबलयः ततो द्वारमवाप्स्यथ ॥ १९ ॥

अर्थात् उन सभी को युधिष्ठिर महाराज की आज्ञा से द्वारपालों ने यही कहा कि आप लोग बाहर ही बलि देकर अन्दर जाने पावेंगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न मिला तो वह इधर उधर के उसके पास के ही देशों में फैल गई है, तो वहां पर वह मिला तो वाटधान देश का भी नाम आया है। जैसा कि:-

ततः पञ्चनदञ्चैव कृत्स्नं च कुरुजांगलम् ॥२८॥
तथारोहितकारण्यं मरुभूमिश्च केवला।
अहिच्छत्रं कालकूटं गंगाकूलं च भारत ॥३०॥
वारणं वाटधानश्च यामुनश्चैव पर्वतः।
एष देशः सुविस्तीर्णः प्रभूतधनधान्यवान् ॥ ३१ ॥
बभूव कौरवेयाणां बलेनातीव संवृतः ॥ ३२ ॥

अर्थात् 'हस्तिनापुर में न अँटने पर, पञ्चनद, सम्पूर्ण कुरुजांगल, रोहितकारण्य, केवल मरुभूमि, अहिच्छत्र, 'कालकूट, गंगातट, वारण, वाटधान और यमुना के उद्गम स्थान का पर्वत इन सुविस्तीर्ण और बहुत धनधान्यवाले देशों को कौरव सेना ने छेंक लिया'। पण्डित-वर नीलकण्ठजी ने भी अपने 'भारत भाव प्रदीप' में इस जगह यही लिखा है कि, 'अहिच्छत्रादयः प्रदेशविशेषाः,' अर्थात् 'ये अहि-च्छत्रादि नाम प्रदेश विशेष के हैं'। मत्स्यपुराण के ११३ वें अध्याय में भी ऐसा ही लिखा है कि,

वाल्हीका वाटधानाश्च आभीराः कालतोयकाः।
पुरन्ध्राश्चैव शूद्राश्च पल्लवाश्चात्तखण्डिकाः ॥४०॥
गान्धारा यवनाश्चैव सिन्धुसौवीरमद्रकाः।
शका द्रुह्याः पुलिन्दाश्च पारदाहारमूर्त्तिकाः ॥४१॥
रामठा कंटकाराश्च कैकेया दशनामकाः।
क्षत्रियोपनिवेश्याश्च वैश्याः शूद्रकुलानि च ॥४२॥
अत्रयोऽथभरद्वाजाः प्रस्थलाः सदसेरकाः।
लम्पकास्तलगानाश्च सैनिकाः सहजांगलैः।
एतेदेशाउदीच्यास्तु ... ... ॥ ४३ ॥

अर्थात् 'वाल्हीक, वाटधान, आभीर, कालतोयक, पुरन्ध्र, शूद्र, पल्लव, आत्तखंडिक, गान्धार, यवन, सिन्धु, सौवीर, मद्रक, शक,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्रुह्य, पुलिन्द, पारदाहारमूर्त्तिक, रामठ, कण्टकार, केकय, दशनामक, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के देश, अत्रि, भरद्वाज, प्रस्थल, सदसेरक, लम्पक, तलगान. सैनिक और जांगल ये उत्तर भारत के देश हैं'॥

इसी वाटधान देश के राजा और जमींदार (भूमिपति) ब्राह्मण नकुल विजय के बाद बलि लेकर आये थे। गान्धारादि देशों में ब्राह्मण रहते हैं इसमें चीनी यात्री 'हुईसंग' (Hwi Seng) और 'संगयुन' (Sungyun) आदि की भी सम्मति मिलती है, जो सन् ५१८ ई० के लगभग भारतयात्रा को आये थे। यह बात 'फाहियान और संगयुन की यात्रा' (Travels of Fah-Hian and Sungyun) नामक पुस्तक में मिलती है। उसमें काश्मीर, गान्धार, बुखारा आदि कई देशों में जहां तहां ब्राह्मणों का वर्णन करते हुये १६७ वें पृष्ठ में गान्धार के विषय में लिखा है कि:—'The people of the country belonged entirely to the Brahman caste. They had a great respect for the law of Buddha, and loved to read the Sacred books.' अर्थात् 'गान्धार देश वासी सभी के सभी ब्राह्मण थे और बुद्ध के अनुशासन से बहुत प्रेम रखते और पवित्र पुस्तकें पढ़ा करते थे'। और यह उचित भी है। क्योंकि उन देशों में एक प्रकार के सारस्वत विप्र, जिनकी संज्ञा 'भूमिहार' शब्द के सदृश और इसी अर्थवाली 'महियाल या महीवाल' है, रहा करते हैं। इसलिये 'भारतभ्रमण' ग्रन्थ के ५२ वें पृष्ठ में जो पूर्वोक्त मत्स्यपुराण के ११३ वें अध्याय के नाम पर मिथ्या ही यह लिखा गया है कि वाह्लीक, वाटधान, आभीर, कालतोयक यह शूद्रों के देश हैं और पल्लव, आत्त खण्डिक, गांधार यह यवनों के देश हैं'। वह असंगत है। साथ ही उस ११३ वें अध्याय का अर्थ भी अभी कर चुके हैं। उसमें इस प्रकार से कहीं भी नहीं लिखा है।

अस्तु, उस प्रकृत 'त्रिखर्वं बलिमादाय' इस श्लोक में जो 'त्रिखर्वं' यह पद है, उसका किसी ने ऐसा भी अर्थ किया है कि खर्व शब्द संख्यावाचक न होकर 'खर्वोह्रस्वश्चवामनः'[1] (अम०)

---

[1] पण्डितवर श्री नीलकंठ ही वहां पर अपने 'भारत भाव प्रदीप' में लिखते हैं कि, 'त्रिखर्वं त्रीणियाजनाध्यापनप्रतिग्रहाःखर्वाणि न्युब्जानि धनलाभरूपफलहीनानि येषां ते त्रिखर्वा याजनादिहीना इत्यर्थः'। इसका तात्पर्य ऊपर ही लिखा गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कां० मनु०४६) इस कोष के अनुसार ह्रस्व का वाचक है और ह्रस्व शब्द छोटे या कम अर्थ में प्रयुक्त होता है। अतः 'त्रिखर्व' शब्द का यह अर्थ हुआ कि 'त्रीणिकर्माणि खर्वाणि ह्रस्वानि न्यूनानि येषां ते त्रिखर्वाः' अर्थात् जिनके तीन कर्म याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह न्यून यानी छूट गये हैं उनका नाम त्रिखर्व है। सारांश, त्रिकर्मा यानी केवल यजन, अध्ययन और दान करनेवाले ब्राह्मण। यद्यपि 'त्रिखर्वं' यह शब्द जब बलि का विशेषण होकर संख्या वाचक होता है तो जैसा बलि शब्द द्वितीयान्त एकवचन है वैसा ही 'त्रिखर्वं' यह शब्द भी है, अतः अर्थ ठीक बैठता है। परन्तु पूर्वोक्त अर्थ में 'ब्राह्मणाः' शब्दका विशेषण होने से 'त्रिखर्वाः' ऐसा होना चाहिये। क्योंकि उसका विशेष्य 'ब्राह्मणाः' यह शब्द प्रथमान्त बहुवचन है। तथापि 'त्रीणिकर्माणिखर्वाणि ह्रस्वानिन्यूनानियस्मिन्कर्मणितद्यथास्यात्' अर्थात् 'जिस क्रिया में तीन कर्म न्यून होवें उसकी तरह से' ऐसा विग्रह करके 'त्रिखर्वं' पद को 'तिष्ठन्ति' इस क्रियापदका विशेषण करदेने से 'सामान्ये नपुंसकम्' इस व्याकरण वार्त्तिक (कात्यायनवचन) मूलक 'क्रियाविशेषणानां कर्मत्वं क्लीवत्वं च' अर्थात् 'क्रियाविशेषणवाचक पद नपुंसक द्वितीयान्त हुआ करते हैं' इस न्याय के अनुसार 'त्रिखर्वं' यह नपुंसक द्वितीयान्त एकवचन ठीक होगया और इसका अर्थ भी पूर्वोक्त ही रहा। बल्कि जब 'त्रिखर्वं' शब्द को संख्यावाचक मानते हैं तभी त्रि शब्दका खर्व शब्द के साथ कर्मधारय समास नहीं होसकता। क्योंकि 'दिक्संख्येसंज्ञायाम्'। (२।१।५०) इस पाणिनिसूत्रानुसार दिशावाचक और संख्यावाचक शब्दों का कर्मधारय समास तभी होता है जब वह समस्त पद किसी प्रसिद्ध वस्तु का नाम होवे, जैसे 'सप्तर्षि' 'त्रिगुण' और 'त्रिदेव' आदि शब्द प्रसिद्ध नाम हैं। परन्तु त्रिखर्व शब्द तो किसी का नाम नहीं है। इसलिये जैसे 'अष्टौ ब्राह्मणाः' इस जगह समास नहीं होता वैसे ही यहां भी नहीं होना चाहिये। दूसरे इस 'त्रिखर्व' पद में समाहार द्विगु नामक कर्मधारय समास मानना होगा। क्योंकि 'संख्यापूर्वो द्विगुः' (पा०२।१।५२) अर्थात् 'संख्यापूर्वक कर्मधारय समास द्विगु कहलाता है' ऐसापाणिनि का सूत्र है। तो फिर जैसे 'सप्त-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शती' शब्द स्त्रीलिंग हो गया है वैसे ही 'अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः' इस महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि जी के अथवा महर्षिकात्यायन के वचनानुसार 'त्रिखर्व' पद का 'त्रिखर्वी' ऐसा स्त्रीलिंग रूप होना चाहिये। क्योंकि उस वाक्य का ऐसा अर्थ ही है कि अकारान्त उत्तरपदवाला द्विगु समास स्त्रीलिंग होता है और खर्व शब्द अकारान्त है। इसलिये इन सब दोषों के वारण करने के लिये जैसे 'पंचपात्र', 'त्रिभुवन' 'चतुर्युग' इत्यादि शब्दों में स्त्रीलिंग नहीं होता वैसे ही इसका भी स्त्रीलिंग रूप हटाने के लिये उनकी तरह 'पात्रादि गण' में खर्व शब्द का पाठ मानना पड़ेगा। जिससे 'पात्राद्यन्तस्य न' यह व्याकरण का वार्त्तिक स्त्रीलिंग रूप का निषेध करेगा, क्योंकि उस का अर्थ यह है कि पात्र आदि शब्द जिस समाहार द्विगुसमास के अन्त में होवें उसका स्त्रीलिंग रूप नहीं होता, जैसा कि ऊपर दिखला चुके हैं।

अथवा 'जैसे देवपूजको ब्राह्मणो देवब्राह्मणः' इस जगह मध्यमपदलोपी समास होता है वैसेही 'त्रिसहितं त्रिरावृत्तं वा खर्वं त्रिखर्वम्' अर्थात् तीन के सहित अथवा तीन आवृत्ति जिसकी की गई हो ऐसा जो खर्व उसको त्रिखर्व कहते हैं। इस प्रकार से बड़े कष्ट से 'त्रिखर्व' शब्द की सिद्धि होगी। इसलिये इस अर्थ की अपेक्षा ह्रस्ववाला ही अर्थ अच्छा है, जिससे सिद्ध होता है कि पश्चिमी, भूमिहारादि ब्राह्मणों की तरह वे भी त्रिकर्मा थे और कृषि करते तथा भूमिपति थे। इस प्रकार से धर्मशास्त्र, पुराण, महाभारत, वाल्मीकीय रामायणादि इतिहास और शिष्टाचार से सिद्ध है कि कृषि करनेवाले ब्राह्मण बहुत कट्टर ब्राह्मण होते हैं, क्योंकि वह सनातन धर्म है और प्रतिग्रहादि उस हालत में जीविकार्थ के लिये किये जा सकते हैं जब कोई दूसरा उपाय कृष्यादि उसके लिये न होवे। अभी आगे भी इस विषय में कुछ कहेंगे।

२—ब्राह्मणधर्म।

(घ) राज्य और युद्ध—अब हम प्रसंग वश यह भी दिखला देना चाहते हैं कि युद्ध करना और भूमिशासन (प्रजापालन या राज्य) भी ब्राह्मण का धर्म है, जिसे स्मृति, पुराण, इतिहास और सदाचार वगैरा सभी करने की आज्ञा देते हैं। साथ ही, यह भी स्मरण रखना चाहिये कि यदि राज करना ब्राह्मण का धर्म सिद्ध हो जावेगा तो फिर उसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिये युद्ध अपरिहार्य हो जावेगा, क्योंकि राजा का ऐसा धर्म ही है। इसके लिये प्रथम हम यह दिखला देना उचित समझते हैं कि 'राज' शब्द क्षत्रियमात्र का वाचक है या नहीं। यदि परम प्रसिद्ध और सर्वमान्य अमरकोष के द्वितीयकाण्डांतर्गत क्षत्रिय वर्ग में देखते हैं तो वहां 'क्षत्रिय' और 'राजा' ये दोनों शब्द भिन्न २ अर्थवाले मालूम होते हैं। क्योंकि लिखा है कि:—

मूर्द्धाभिषिक्तो राजन्यो बाहुजः क्षत्रियो विराट्।
राजा राट्पार्थिवक्ष्माभृन्नृपभूपमहीक्षितः॥ १॥

अर्थात 'मूर्द्धाभिषिक्त, राजन्य, बाहुज, क्षत्रिय और विराट् ये क्षत्रियों के नाम हैं। और राट्, पार्थिव, क्ष्माभृत्, नृप, भूप और महीक्षित् ये राजाके पर्याय हैं।'। इससे स्पष्ट है कि क्षत्रिय से भिन्न भी राजा होता है। आगे चलकर और भी सफाई है। क्योंकि लिखते हैं कि:—

अथ राजकम् ५ राजन्यकंचनृपतिक्षत्रियाणांगणेक्रमात्६

अर्थात् 'राजक शब्द नृपतिसमूह का वाचक है और राजन्यक शब्द क्षत्रिय समूह का'। इस से स्पष्ट है कि राजन्य शब्द ही क्षत्रिय मात्र का वाचक है न कि राज शब्द भी। मेदनीकोष में लिखा है कि:—

राजा प्रभौ च नृपतौ क्षत्रिये रजनीपतौ।

अर्थात् 'राजा प्रभु, नृपति, क्षत्रिय और चन्द्रमा को कहते हैं' एक जगह और भी मेदिनीकोष में हीं लिखा है कि '**मूर्द्धाभिषिक्तो भूपाले मंत्रिणि क्षत्रियेऽपि च**'। अर्थात् 'मूर्द्धाभिषिक्त भूपाल, मंत्री और क्षत्रिय को कहते हैं'। इससे जो कोई यह शंका करते कि पूर्वोक्त अमर कोष में जो क्षत्रिय से पृथक् राजा को गिनाया है उस का यह तात्पर्य है कि सभी क्षत्रियों को राजा नहीं कहते, किन्तु जिन क्षत्रियों का अभिषेक किया जाता है और जो नरों के पति होते हैं उन्हें हीं कहते हैं। उसका भी खण्डन हो गया। क्योंकि मेदिनी कोष से स्पष्ट है कि क्षत्रियमात्र को भी राजा कहते हैं। इसके बाद क्षत्रिय से पृथक् नृपति, भूपाल या राजा को कहते हुये यह झलका रहे हैं कि क्षत्रिय से भिन्न भी राजा होता है। मनुस्मृति के ७ वें अध्याय राज धर्म प्रकरण में स्पष्ट लिखा है कि:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजधर्मान्प्रवक्ष्यामि यथा वृत्तो भवेन्नृपः ॥१॥

अर्थात् 'राजा के धर्मों का अब कथन करते हैं कि नृप यथोचि आचार वाला होवे'। इस श्लोक में राज धर्म की प्रतिज्ञा करके धर्म का कथन करते हुये यह दिखला रहे हैं कि प्रजापालक मात्र राजा कहलाता। कुल्लूक भट्ट भी यहां पर टीका में लिखते हैं कि-

राजशब्दो नात्र क्षत्रिय जाति वचनः किन्त्वभिषिक्त जनप पुरपालयितृपुरुषवचनः, अतएवाह यथावृत्तोभवेन्नृपइति

अर्थ यह है कि 'इस श्लोक में राज शब्द क्षत्रिय जाति का वाचक होकर उस पुरुष मात्र का वाचक है जिसका अभिषेक देश, ग्रामादि पालन के लिये किया जाता है। इसी लिये श्लोक में लिखते हैं कि नृप यथोचित आचारवाला होवे'। ऐसा ही मेधातिथि ने भी य लिखा है। परन्तु अगले श्लोक में जो कुल्लूकभट्ट लिखते हैं 'ए क्षत्रिय एव राज्याधिकारी नान्य इति दर्शितम्'। अर्थात् 'द्वि श्लोक में क्षत्रिय पद से यह सूचित किया है कि क्षत्रिय ही राज धिकारी हो सकता है, न कि दूसरा'। वह उनकी विचित्र बुद्धि महिमा है, कि अगले और पिछले श्लोकों के अपने लेखोंको भूल पूर्वापर विरुद्ध बक डालते हैं। उस श्लोक में तो क्षत्रिय पद 'ब्राह्म वसिष्ठ' न्याय से आदर और विशेष दृष्टि का सूचक है। जैसे राम ने या किसी अन्य ने हीं कह दिया कि ब्राह्मणों को बुला लाइये गुरु महाराज वसिष्ठजी को भी बुलाते आइयेगा। तो यद्यपि वसिष्ठ भी ब्राह्मण हीं हैं, अतः उनके लिये पृथक् आज्ञा की आवश्यकता है। तथापि उनका आदर और उन पर विशेष दृष्टि सूचित करने लिये उनका पृथक् नाम लिया है। वैसे ही यद्यपि के राजा कहने क्षत्रिय राजा भी लिया जा सकता है, तथापि जब कि मनुजी स्व मेव दशमाध्याय में, जैसा कि हम पूर्व कह चुके हैं, कहेंगे कि,

वेदाभ्यासो ब्राह्मणस्य क्षत्रियस्य च रक्षणम्।

अर्थात् 'ब्राह्मण का वेदाभ्यास और क्षत्रिय का प्रजापालन स त्तम धर्म है'। इसलिये उसी विशेषता और आदर की सूचना लिये पृथक् क्षत्रिय शब्द का उल्लेख है। और भी जो कुछ यहां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भट्ट जी ने लिखा है वह सब कुछ विस्मरण मूलक है जिसको हम पहले ही दिखला चुके हैं। १२ वें अध्याय में भी मनुजी ने ऐसा ही सूचित किया है कि:—

राजनः क्षत्रियाश्चैव राज्ञां चैव पुरोहिताः।
वादयुद्धप्रधानाश्च मध्यमा राजसी गतिः॥ ४६॥

अर्थात् 'राजा, क्षत्रिय, राजाओं के पुरोहित और दिन रात शास्त्र में कलह करने वाले ये लोग राजसों में मध्यम कहे जाते हैं'। यहां भी क्षत्रिय से पृथक् राज शब्द है। ऐसाही स्मृतियों में बहुत जगह मिला करता है। आगे चल कर इसी १२वें अध्याय में मनु जी स्पष्ट लिखते हैं कि:-

सेनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति॥ १००॥

अर्थ यह है कि, 'सेना संचालन, राज्य, न्याय और सब लोगों का आधिपत्य वेद शास्त्रादि का ज्ञाता ही ब्राह्मणादि कर सकता है, न कि क्षत्रियादि जाति विशेष'। यही बात स्पष्ट रूप से भट्टजी ने टीका में लिख दी है कि 'एतत्सर्वं वेदात्मकशास्त्रज्ञ एवार्हति'। अर्थ वही है जो कह चुके हैं। मनुस्मृति के ९ वें अध्याय में भी यही लिखा है:—

प्रजापतिर्हि वैश्याय सृष्ट्वा परिददे पशून्।
ब्राह्मणाय च राज्ञे च सर्वाः परिददे प्रजाः॥३२७॥

अर्थात् 'ब्रह्मा ने वैश्य को उत्पन्न करके उसके अधिकार में पशु और ब्राह्मण तथा क्षत्रिय के अधिकार में सर्व प्रजा पालन दिया'॥ प्रथमाध्याय में भी लिखा है कि:—

ब्राह्मणो जायमानो हि पृथिव्यामधिजायते।
ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोषस्य गुप्तये॥ ९९॥
सर्वस्वं ब्राह्मणस्येदं यत्किंचिज्जगतीगतम्।
श्रैष्ठ्येनाभिजनेनेदं सर्वं वै ब्राह्मणोऽर्हति॥१००॥
स्वमेव ब्राह्मणो भुंक्ते स्वं वस्ते स्वं ददाति च।
आनृशंस्याद्ब्राह्मणस्य भुञ्जते हीतरे जनाः॥१०१॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिसका तात्पर्य यह है कि 'राजा के दो काम होते हैं, (१) प्र
रक्षण, (२) कोषरक्षण । इसलिये मनु जी कहते हैं कि उत्पन्न होते
साथ ही ब्राह्मण सब प्राणियों का स्वामी और धर्मरूप कोष का र
होता है । जो कुछ इस पृथ्वी पर है सभी ब्राह्मण का है, क्योंकि
के सब से श्रेष्ठ स्थान मुख से उत्पन्न होनेसे ही वह सब से बड़ा
इसलिये प्रथम सब का अधिकारी वही हो सकता है और उ
अभाव में हीं दूसरा (क्योंकि यही उचित है कि प्रथम राजा का
पुत्र ही अधिकारी होवे)। जो कुछ ब्राह्मण खाता, पहनता या देत
वह उसका ही है, बल्कि अन्य लोगों को जो कुछ मिला है
ब्राह्मण की कृपा ही समझनी चाहिये'। महाभारत के शान्ति प
राजधर्मानुशासन भाग में ऐल और वायु देवता के सम्वाद में
अध्याय में भी यही लिखा है कि:-

ऐलउवाच । द्विजस्य क्षत्रबंधोर्वा कस्येयं पृथिवी भवे
धर्मतः सह वित्तेन सम्यग्वायो प्रचक्ष्व मे ॥८॥
वा० उ० । विप्रस्य सर्वमेवेदं यत्किञ्चिज्जगतीगतम् ।
ज्येष्ठेनाभिजनेनेह तद्धर्मकुशला विदुः ॥ १० ॥
स्वमेव ब्राह्मणो भुंक्तेस्वंवस्तेस्वंददाति च ।
गुरुर्हि सर्ववर्णानां ज्येष्ठः श्रेष्ठश्च वै द्विजः ॥
पत्यभावे यथैव स्त्री देवरं कुरुते पतिम्
आनन्तर्यात्तथा क्षत्रं पृथिवी कुरुते पतिम् ॥
नारी तु पत्यभावे वै देवरं कुरुते पतिम् ।
पृथिवी ब्राह्मणालाभे क्षत्रियं कुरुते पतिम् ॥१३॥

जिसका तात्पर्य यह है कि 'ऐल (पुरूरवा) ने वायु से पूछा कि
पृथिवी वास्तव में धर्म दृष्टि से ब्राह्मण की है या क्षत्रिय की इसे
रूप से कहिये । वायु ने उत्तर दिया कि जो कुछ इस पृथिवी में
उसे धर्म ज्ञान में कुशल लोग ब्राह्मण का ही बतलाते हैं, क्योंकि
सबकी अपेक्षा ज्येष्ठ है । ब्राह्मण जो कुछ खाता, पहनता अथवा
है वह सब उसका ही है, क्योंकि वह सब वर्णों से ज्येष्ठ, श्रेष्ठ
सबका गुरु है। जिस प्रकार पूर्व निश्चित पति के न रहने
(मर जाने पर) उस कन्या का देवर से विवाह हो जाता है,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही ब्राह्मण राजा के न रहने पर ही क्षत्रिय पृथ्वी का पति होता है। यही अर्थ बाद के श्लोक का भी है'। 'पत्यभावे यथैव स्त्री' का यह तात्पर्य भगवान मनु ने कहा है कि:—

यस्या म्रियेत कन्याया वाचा सत्ये कृते पतिः।
तामनेन विधानेन निजो विन्देत देवरः ॥६९॥ अ०९॥
कन्यायां दत्तशुल्कायां म्रियेत यदि शुल्कदः।
देवराय प्रदातव्या यदि कन्यानुमन्यते ॥९७॥ अ०९॥

तात्पर्य यह है कि 'जिसके साथ विवाह की बात चीत की गई हो वह पुरुष (पति) यदि वैवाहिक कार्य सप्तपदी आदि समाप्त होने से प्रथम हीं मर जावे तो उसी सामग्री और उसी प्रकार से उसका यथोचित रीति से विवाह देवर (उक्त पति के छोटे भाई) से कर देना चाहिये। यदि किसी ने कन्या के बदले किसी कारण से कुछ ले लिया होवे (यद्यपि कन्या विक्रय का निषेध इसी अध्याय के ९८ वें श्लोक में है, जैसा कि:—

आददीत न शूद्रोऽपि शुल्कं दुहितरं ददत्।
शुल्कं हि गृह्णन् कुरुते छन्नं दुहितृविक्रयम् ॥

अर्थात् 'शूद्र भी द्रव्य लेकर कन्या न देवे, क्योंकि इससे कन्या का विक्रय हो जाता है'। अथवा आर्ष विवाह में १ या २ जोड़े बैल लेने की आज्ञा है। जैसा कि मनुस्मृतिके तृतीय अध्याय में लिखा है कि,

एकं गोमिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मतः।
कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते ॥२९॥

अर्थात् 'वर से एक या दो जोड़े बैल धर्म पूर्वक लेकर कन्यादान को आर्ष विवाह कहते हैं'। परन्तु वे बैल भी विवाह काल में कन्या के पति को देने अथवा आवश्यक विवाह रूप यज्ञकार्य संपादन के ही लिये लिये जाते हैं, न कि अपने काम के लिये। क्योंकि मनुजी ने हीं आगे चल कर लिखा है कि,

आर्षे गोमिथुनं शुल्कं केचिदाहुर्मृषैव तत्।
अल्पोप्येवं महान्वापि विक्रयस्तावदेव सः। ५३। ३।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् 'जो किसी ने आर्ष विवाह में दो बैल लेने को कहा वह मिथ्या ही है, क्योंकि ऐसा करने से चाहे थोड़ा हो या बहु कन्या विक्रय तो हो ही गया'। इस बात को इसी श्लोक की टीका में कुल्लूकभट्ट ने स्पष्ट कर दिया है। ऐसी दशा में यदि उसने बैल लिये हों परन्तु विवाह कृत्य से प्रथम हीं भावी पति का शरीर पात हो जावे) तो यदि कन्या चाहे तो देवर से उसे व्याह देना चाहिये'। इस लिये जो कोई पूर्वोक्त महाभारत के श्लोकों को देख कर अपनी अभिज्ञता से कटाक्ष करता था कि वे श्लोक सनातन धर्म की दृष्टि से प्रमाण नहीं हो सकते, क्योंकि उनके मानने से विधवा विवाह व नियोग सिद्ध हो जावेगा, उसे इस पूर्व व्याख्यान रूप अंजन से अपने ज्ञान चक्षु के दोषों का मार्जन कर लेना चाहिये। राजधर्म प्रकरण नामक ८वें अध्याय में भी मनु जी ने स्पष्ट ही कह दिया है कि:-

यदा स्वयं न कुर्यात्तु नृपतिः कार्यदर्शनम्।
तदा नियुंज्याद्विद्वांसं ब्राह्मणं कार्यदर्शने ॥ ९ ॥
सोऽस्य कार्याणि संपश्येत्सभ्यैरेव त्रिभिर्वृतः।
सभामेव प्रविश्याग्र्यामासीनः स्थित एव वा ॥१०॥

अर्थ यह है कि 'जब राजा किसी कारण से राज्य प्रबन्ध न कर सके तो विद्वान् ब्राह्मण को उस जगह नियुक्त कर देवे। वह ब्राह्मण उन कार्यों को तीन सभ्यों के सहित उत्तम सभा में बैठ अथवा खड़ा होकर उचित रीति से करे'। इसीलिये वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड के ६७ वें सर्ग में राजा दशरथ के कोपभवन से लौटने पर लिखा है कि:—

व्यतीतायां तु शर्वर्यामादित्यस्योदये ततः।
समेत्य राज्यकर्त्तारः सभामीयुर्द्विजातयः ॥
मार्कण्डेयोऽथ मौद्गल्यो वामदेवश्च कश्यपः।
कात्यायनो गौतमश्च जावालिश्च महायशाः ॥

अर्थात् 'उस दिन रात बीतने पर सूर्योदय समय राज्य करने वाले (राज्यप्रबन्ध करनेवाले) सभी महान् ब्राह्मण मार्कण्डेय, मौद्गल्य, वामदेव, कश्यप, कात्यायन, और जावालि प्रभृति मिलकर सभा में आये'। इन 'श्लोकों में राज्यकर्त्तारः' लिखा है, जिसका अर्थ राज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करनेवाले ब्राह्मण' ऐसा होता है। इससे स्पष्ट है कि मुख्य राज्यकर्त्ता ब्राह्मण हीं हैं। परन्तु उसमें बहुत झंझट और तपस्या तथा विचारादि में विघ्न देखकर जो लोग उससे उपराम हो जाते हैं वे क्षत्रियों के हाथ में उसे सौंप देते हैं। जैसे अपने भृत्यों के हाथ में किसी कार्य का प्रबन्ध सौंप दिया जाता है। अथवा आज कल भी बहुत से अन्य देशों में राजाके प्रतिनिधि जैसे शासन करते हैं वैसे ही ब्राह्मण लोग क्षत्रियादि को अपना प्रतिनिधि बनाकर स्वच्छन्द वेदाभ्यासादि करते थे। परन्तु जब किसी कारण वश उनके प्रतिनिधि स्वरूप क्षत्रियादि उसका प्रबन्ध न कर सकते थे तो स्वयं वे विचार शील गौतम और कात्यायनादि जैसे ब्रह्मर्षि उसका प्रबन्ध कर लेते थे। महर्षियों के इस राज्य प्रबन्ध से उस कुकल्पना का भी खण्डन होगया जो लोग किया करते हैं कि राज्य और युद्ध करने से ही भूमिहारादि ब्राह्मण कट्टर न रहकर हीन होगये। यदि यह कार्य कट्टर ब्राह्मणता का विरोधी होता तो क्या उन महर्षियों से भी कोई अधिक कट्टर हो सकता है जिन्होंने इसे किया है? क्या वे शास्त्र ज्ञाता न थे जिस से इसे निन्दित समझ कर छोड़ देते? इस विषय में अभी बहुत वक्तव्य है।

प्रायः लोगों की यही धारणा है कि पुरोहिती ब्राह्मण को अवश्य कर्त्तव्य है। यद्यपि शास्त्रों का मत इस विषय में दिखला चुके हैं और दिखलावेंगे भी; तथापि इतना तो निर्विवाद है कि यदि किसी दशा में भी पुरोहित हो सकता है तो ब्राह्मण हीं। क्योंकि मनुस्मृति के दशमाध्याय में लिखा है कि:—

त्रयो धर्मा निवर्त्तन्ते ब्राह्मणात्क्षत्रियं प्रति।
अध्यापनं याजनं च तृतीयश्च प्रतिग्रहः॥७७॥
वैश्यं प्रति तथैवैते निवर्तेरन्निति स्थितिः।
न तौ प्रति हि तान्धर्मान्मनुराह प्रजापतिः॥७८॥

अर्थात् 'ब्राह्मण के तीन कर्म याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह क्षत्रिय और वैश्य के लिये नहीं हैं, यही सिद्धान्त है, क्योंकि प्रजापति मनु जी ने उनके लिये वे धर्म नहीं बतलाये'। अत्रि संहिता में भी लिखा है कि:—

प्रतिग्रहोऽध्यापनं च तथाऽविक्रेयविक्रयः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

याज्यं चतुर्भिरप्येतैः क्षत्रविट्पतनं स्मृतम् ॥२०॥

अर्थात् 'याजन, अध्यापन, प्रतिग्रह और निषिद्ध पदार्थों के विक्रय से क्षत्रिय और वैश्य पतित हो जाते हैं'।

अब उस पुरोहित के स्वरूप को विचारिये तो उससे भी ब्राह्मण का राज्य सम्बन्ध घनिष्ठ सिद्ध होता है। क्योंकि अमरकोष में 'पुरोधास्तुपुरोहितः' अर्थात् पुरोहित का नाम पुरोधा भी है, यह क्षत्रिय वर्ग में लिखा है, न कि ब्राह्मण वर्ग में और पुरोहित शब्द का अर्थ भी यह है कि जो युद्धादि सब व्यवहारों में अग्रणी होवे, अर्थात् उसकी सम्मति सभी कार्यों में ली जावे। क्योंकि पुरस् अव्यय पूर्व 'धा' धातु से 'क्त' प्रत्यय करने पर पुरोहित शब्द सिद्ध होता है जिसमें अव्यय का अर्थ 'आगे' है, और 'धा' धातु का अर्थ धारण करना वा रखना। अर्थात् जो प्रथम रक्खा वा माना गया होवे। राजधर्म प्रकरण में ही मनुजी ने लिखा है कि 'पुरोहितं प्रकुर्वीत'(अ०७:७) अर्थात् राजा पुरोहित बनावे। और फिर लिखते हैं कि,

सर्वेषां तु विशिष्टेन ब्राह्मणेन विपश्चिता।
मंत्रयेत्परमं मंत्रं राजा षाड्गुण्यसंयुतम् ॥५८॥
नित्यं तस्मिन्समाश्वस्तः सर्वकार्याणि निःक्षिपेत्
तेन सार्द्धं विनिश्चित्य ततः कर्म समारभेत् ॥५९॥

जिसका अर्थ यह है कि 'सर्व मंत्रियों में श्रेष्ठ पण्डित ब्राह्मण मंत्री से राजा संधि विग्रहादि संबन्धी बड़ी २ सलाह करे। सर्वदा ही उसका विश्वास करके सब काम करे और उसके साथ सलाह करके ही उसके बाद कार्य प्रारम्भ करे'। याज्ञवल्क्य स्मृति के आचाराध्याय में लिखा है कि,

स मंत्रिणः प्रकुर्वीत प्राज्ञान्मौलान्स्थिराञ्छुचीन्।
तैः सार्द्धं चिन्तयेद्राज्यं विप्रेणाथ ततः स्वयम् ॥३१२॥
पुरोहितं प्रकुर्वीत दैवज्ञमुदितोदितम्।
दण्डनीत्यां च कुशलमथर्वांगिरसे तथा ॥३१३॥
अपश्यता कार्यवशाद्व्यवहारान्नृपेण तु।
सभ्यैः सहनियोक्तव्यो ब्राह्मणः कार्यदर्शने॥३॥ व्यव-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थ यह है कि 'वह राजा श्रेष्ठ, स्थिर और पवित्र स्वभाव वाले मंत्री रखे। उनसे विचारने के बाद ब्राह्मण मंत्री से विचार कर अपने आप भी कार्य विचार करे। ज्योतिष विद्या जानने वाला, शास्त्रोक्त कर्मकारी, अर्थ शास्त्रज्ञ और साम दानादि गुणों से युक्त पुरोहित रूप मंत्री राजा बनावे। राजा यदि किसी कारण से राज्य कार्य न देख सके तो अन्य सभ्यों सहित ब्राह्मणमंत्री को उसमें नियुक्त करे'। बौधायनस्मृति के १० वें अध्याय में लिखा है कि:-

सर्वतोधुरं पुरोहितं वृणुयात् ॥ १० ॥

अर्थात् 'राज्य के सर्व कार्यों का करने वाला पुरोहित बनावे'। अग्नि पुराण में लिखा है कि:-

अभिषिञ्चेदमात्यानां चतुष्टयमथो घटैः।
पूर्वतो हेमकुम्भेन घृतपूर्णेन ब्राह्मण :।१८।अ०२१८।

अर्थात् 'उसके बाद चारों वर्ण वाले चार मंत्री राजा का अभिषेक करें। उनमें से प्रथम ब्राह्मण मंत्री घृतपूर्ण स्वर्ण घट से अभिषेक करे'। इन सब प्रमाणों से क्या यह सिद्ध नहीं होता कि ब्राह्मणों का राज्य से बहुत संबंध और उसमें अधिकार पूर्व काल में भी था। इन अयाचक ब्राह्मणों के पूर्वज प्रथम इसी प्रकार के पुरोहित, ऋत्विक् और मंत्री भी थे जिससे इनका व्यवहार राजसी था, जैसा कि मनु वाक्यों द्वारा दिखा चुके हैं कि क्षत्रिय, राजा और राज पुरोहित राजस कहलाते हैं और शान्ति पर्व के ७६ वें अध्याय में भी लिखा है कि:-

ऋत्विक् पुरोहितो मंत्री दूतो वार्त्तानुकर्षकः।
एते क्षत्रसमा राजन्ब्राह्मणानां भवन्त्युत ॥ ७ ॥

अर्थात् 'ऋत्विक्, पुरोहित, मंत्री और दूत इतने ब्राह्मण क्षत्रिय के सदृश राजस होते हैं'। इस प्रकार वे क्रमशः धनवान्, बड़े २ भूमिपति और जमींदार या राजे हो गये, जिससे पीछे उस राज पुरोहिती आदि को भी छोड़कर एकदम अलग होगये। महाभारत के शान्तिपर्व के ७३ वें अध्याय राजधर्मानुशासन प्रकरण में लिखा है कि,-

तञ्चैवान्वभिषिञ्चेत् तथा धर्मो विधीयते।
अग्र्यं हि ब्राह्मणे प्रोक्तं सर्वस्यैवेह धर्मतः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वं हि ब्रह्मणः सृष्टिरिति ब्रह्मविदो विदुः ॥२८॥
ज्येष्ठेनाभिजनेनास्य प्राप्तं पूर्वं यदुत्तरम् ।
तस्मान्मान्यश्च पूज्यश्च ब्राह्मणःप्रसृताग्रभुक्॥२९॥

अर्थ यह है कि 'उस पुरोहित का अभिषेक राजा करे, क्योंकि राजपाट सभी का प्रथमाधिकारी धर्म विचार से ब्राह्मण हीं है क्योंकि यह वार्त्ता वेदवेत्ता लोग जानते हैं कि प्रथम ब्राह्मण हीं उत्पन्न हुआ। इसलिये ज्येष्ठ होने से जो कुछ मिले वह पहले ब्राह्मण का ही है, पीछे दूसरे का। इसलिये उसे मानना और पूजना चाहिये क्योंकि वह सब वस्तुओं का प्रथमाधिकारी है'। स्कन्दपुराण के धर्मारण्य माहात्म्य में वाडवों (ब्राह्मणों) के विषय में बहुत से विवरण ग्राम और गोत्रपूर्वक दिया गया है और यह भी लिख दिया गया है कि अमुक ग्राम का अधिपति अमुक ब्राह्मण हुआ। साथ ही, स्पष्टतया लिखा गया है कि 'राज्यं चक्रुर्वनस्य' अर्थात् उस धर्मारण्य का राज्य वही ब्राह्मण करते थे। महाभारत के आदि पर्वके ११३वें अध्याय में स्वपुत्र अश्वत्थामा को दूध पीने के लिये एक गौ की आवश्यकता होने पर वह द्रोणाचार्य को द्रुपद से मित्रता मांगनी पड़ी है। वे चाहते तो आजकल की भांति उन्हें सहस्रों गाय मिल जातीं। परन्तु उन्हें प्रतिग्रह से डरकर ऐसा करना पड़ा। उन्हें द्रुपद ने कोरा जवाब दिया कि राजा का मित्र भिक्षु (ब्राह्मण) होकर राजा ही होता है, इस लिये आप से मेरी मैत्री नहीं हो सकती। हां एक दिन के लिये भोजन मिल सकता है, तो द्रोणाचार्य रुष्ट होकर लौट गये हैं। इसी समय भीष्मपितामह ने उनसे मिल सब हाल जानकर कहा है कि:—

अपज्यं क्रियतां चापं साध्वस्त्रं प्रतिपादय ।
भुंक्ष्व भोगान् भृशं प्रीतः पूज्यमानः कुरुक्षये ॥६४॥
कुरूणामस्ति यद्वित्तं राज्यंचेदं सराष्ट्रकम् ।
त्वमेव परमो राजा सर्वे च कुरवस्तव ॥ ६५ ॥

अर्थात् 'आप धनुष रख दीजिये, इन बच्चों को शस्त्रास्त्र विद्या सिखलाइये और कौरवों द्वारा पूजित हो कर इन के देश में प्रसन्न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वक भोग भोगिये। कौरवों का जो धन और राज्य है वह सब आपही का है और वे लोग भी आपके ही हैं'। इसके बाद जब कौरव पाण्डवों को युद्ध विद्या में कुशल कर के पुराना बदला चुकाने के लिये उन्हें द्रुपद को पकड़ने को भेजा है और अर्जुन उसे परास्त कर के पकड़ लाये हैं, तब द्रोणाचार्य ने शान्ति पर्व के १४० वें अध्याय में कहा है कि:-

अराजा किल नो राज्ञः सखा भवितुमर्हति।
अतः प्रयतितं राज्ये यज्ञसेन मया तव ॥६८॥
राजासि दक्षिणे कूले भागीरथ्याहमुत्तरे।
सखायं मां विजानीहि पाञ्चाल यदि मन्यसे ॥६९॥
माकन्दीमथ गंगायास्तीरे जनपदायुताम्।
सोऽध्यावसद्दीनमनाः काम्पिल्यं च पुरोत्तमम्॥७२॥
दक्षिणांश्चापि पाञ्चालान्यावच्चर्मण्वतीनदीम्।
अहिच्छत्रं च विषयं द्रोणः समभिपद्यत ॥ ७५ ॥
एवं राजन्नहिच्छत्रा पुरी जनपदायुता।
युधि निर्जित्य पार्थेन द्रोणाय प्रतिपादिता ॥७६॥

जिसका अर्थ यह है कि 'हे द्रुपद! क्योंकि जो राजा नहीं है वह राजा का मित्र नहीं हो सकता, इस लिये ही मैं ने तुम्हारा राज्य लेने का यत्न किया है। यदि तुम चाहो तो गंगा से दक्षिण के देश का राजा रहो और मैं उत्तर का और मुझे अब से मित्र समझो। इस के बाद वह द्रुपद खिन्न चित्त होकर गंगा तट में माकन्दी में राजधानी बनाकर रहने लगा, जिसके आश्रित बहुत से प्रान्त थे। और काम्पिल्यपुर और दक्षिण पाञ्चाल भी चर्मण्वती (बेतवा) नदी तक उसीके अधिकार में था। उत्तर पाञ्चाल अर्थात् अहिच्छत्रादि प्रदेशों के राजा द्रोणाचार्य हुये। इस प्रकार से बहुत से प्रदेशों सहित अहिच्छत्रापुरी को अर्जुन ने युद्ध में जीत कर द्रोणाचार्य को उसका राजा बना दिया'।

स्कन्दपुराण के नागर खंड के ६८ और ६९ वें अध्याय में लिखा है कि:-

सूतउवाच। भार्गवोऽपि च तं हत्वा रक्तमादाय कृत्स्नशः।
तत्र संप्रेषयामास यत्र गर्ताथ पैतृकी ॥ २ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न स बालं न वृद्धं च परित्यजति भार्गवः।
यौवनस्थं विशेषेण गर्भस्थं वाथ क्षत्रियम् ॥ ३ ॥
प्रत्यक्षं सर्वविप्राणां तथान्येषां तपस्विनाम्।
प्रतिज्ञां पूरयित्वाथ स विशोको बभूव ह ॥ ८ ॥
ततो निःक्षत्रिये लोके कृत्वा हयमखं च सः।
प्रायच्छत्सकलामुर्वीं ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम् ॥८॥
अथ लब्धवराविप्रास्तमूचुर्भृगुसत्तमम्।
नास्मद्भूमौ त्वया स्थेयमेको राजा यतः स्मृतः॥१०
सोऽपि बाढमिति प्रोच्य हर्षेण महतान्वितः।
महीपर्यन्तमासाद्य प्रोवाचाथ नदीपतिम् ॥ ११ ।
आरोप्य सुमहच्चापमाग्नेयास्त्रं प्रयुज्य च।
त्रिशिखां भ्रुकुटीं कृत्वा कोपेन महतान्वितः॥१२
रामउवाच। मया निःक्षत्रिया भूमिःकृता शैलवनान्विता।
ब्राह्मणेभ्यस्ततो दत्ता वाजिमेधे महामखे ॥ १३ ।
तस्मात्त्वं देहि मे स्थानं कृत्वाऽपसरणं स्वयम्।
नहि दत्त्वा ग्रहीष्यामि विप्रेभ्यो मेदिनीं पुनः ॥१४
न करोष्यथवा वाक्यं ममाद्य त्वं नदीपते।
स्थलरूपं करिष्यामि वह्न्यस्त्र परिशोषितम् ॥१५
सूतउवाच। तस्य तद्वचनं श्रुत्वा समुद्रो भयसंकुलः।
अपसारं ततश्चक्रे यावत्तस्याभिवाञ्छितम् ॥१६॥
ततश्चकार तत्रैव वसतिं स भृगूद्वहः।
तपश्चर्या समायुक्तःपितुर्वधमनुस्मरन् ॥१७॥अ. ६८
सूतउवाच। ततोनिःक्षत्रिये लोके क्षत्रियो वंशकारणात्
क्षेत्रजान् ब्राह्मणेभ्यश्च सुषुवुस्तनयान्वरान् ॥ १ ॥
ते च वृद्धिं समासाद्य क्षेत्रजाः क्षत्रियोपमाः।
जगृहुर्मेदिनीं वीर्यात्संनिरस्य द्विजोत्तमान् ॥२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे परिभूतिपदं गताः ।
प्रोचुर्भार्गवमभ्येत्य दुःखेन महतान्विताः ॥ ३ ॥
राम राम महाबाहो यत्त्वया वसुधा च नः ।
वाजिमेधे मखे दत्ता हृता सा क्षत्रियैर्बलात् ॥४॥
तस्मान्नो देहि तां भूयो हत्वा तान्क्षत्रियाधमान् ।
कुरु श्रेयोऽभिवृद्धिं तां यद्यस्ति तव पौरुषम् ॥५॥
ततो रामः क्रुधाविष्टो भूयस्तैः शबरैः सह ।
पुलिन्दैर्मेदकैश्चैव क्षत्रियान्ताय निर्ययौ ॥ ६ ॥
तत्रैव क्षत्रियान् हत्वा रक्तमादाय तद्बहु ।
तां गर्त्तां पूरयामास चकार पितृतर्पणम् ॥७॥
प्रददौ ब्राह्मणेभ्यश्च वाजिमेधे धरां पुनः ।
तैश्च निर्वासितस्तत्र जगामोदधिसन्निधौ ॥ ८ ॥
एवं तेन कृता पृथ्वी सर्वक्षत्रविवर्जिता ।
त्रिःसप्तवारंविप्रेन्द्राः!द्विजेभ्यश्चनिवेदिता।८।अ०६८।

भावार्थ यह है कि, 'सूतजी ने कहा कि परशुराम ने सहस्रार्जुन को मार सब रक्त लेकर जहां पितृ तर्पण के लिये कुरुक्षेत्र में पांच कुंड बनाये थे वहां भेज दिया। वे बाल, वृद्ध, गर्भस्थ और विशेष कर युवा क्षत्रिय को मारे बिना न छोड़ते थे। इस तरह सब ब्राह्मणों और तपस्वियों के सन्मुख अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर वे शोक रहित होगये। इस प्रकार लोक को क्षत्रिय शून्य बना अश्वमेध यज्ञ कर के उस में उन्हों ने सब पृथ्वी कश्यप प्रभृति ब्राह्मणों को दक्षिणा दे दी। अब पृथ्वी का राज्य पाने पर उन ब्राह्मणों ने परशुराम जी से कहा कि हमारे राज्य में मत रहिये, क्योंकि एक राज्य में एक ही राजा रह-सकता है। वे भी बहुत प्रसन्नता पूर्वक अच्छा कह पृथ्वी के किनारे समुद्र तट पर आकर, जिस समय उससे बोले उस समय वे महान् धनुष को चढ़ा, आग्नेयास्त्र का प्रयोग कर और भ्रुकुटी टेढ़ी कर के महान् कोपयुक्त हो रहे थे। उन्हों ने कहा कि मैंने पर्वत और वन सब के सहित पृथ्वी क्षत्रिय रहित कर के अश्वमेध यज्ञ में ब्राह्मणों को दे दी। इसलिये तुम मुझे वासस्थान दो और यहां से हट जाओ,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि ब्राह्मणों को देकर फिर मैं उन से भूमि छीन नहीं सकता यदि तू मेरी बात न मानेगा तो आज ही अग्न्यस्त्र से तुझे सुखाकर स्थलरूप बना दूंगा । समुद्र उनका वचन सुन डरकर उतनी दूर हट गया जितना उन्हें इष्ट था । उस के बाद परशुरामजी उसी जगह वासस्थान बना पिता के वध का स्मरण करते हुये तपस्या करने लगे । इस प्रकार जब पृथ्वी क्षत्रियों से रहित होगई तो उनकी स्त्रियों ने ब्राह्मणों द्वारा श्रेष्ठ क्षत्रिय पुत्र उत्पन्न किये, क्योंकि क्षेत्रज भी पुत्र हुआ करते हैं । वे क्षेत्रज बालक क्षत्रिय सदृश हुए और उन्हों ने बल पूर्वक उन ब्राह्मणों को निकाल कर पृथ्वी दबा ली । उस के बाद वे ब्राह्मण हार मान बहुत दुखी हो परशुराम जी के पास आकर उनसे कहने लगे कि हे राम ! जो पृथ्वी आपने हम लोगों को अश्वमेध में दक्षिणा दी थी उसे क्षत्रियों ने छीन लिया । इसलिये यदि आप में बल है, तो उन नीच क्षत्रियों को मार हमें पृथ्वी का राज्य पुनः देकर हमारा कल्याण करिये । यह सुनते ही परशुराम जी क्रोध से लाल हो बहुत से शबरों, पुलिन्दों और मेदकों के साथ उन क्षत्रियों का नाश करने के लिये निकले और उसी जगह उन क्षत्रियों को मार उनका रक्त लेकर उन पांच गर्त्तों को भर दिया और उसी से पितृतर्पण किया । जब फिर उन्हें ब्राह्मणों ने अपने राज से निकाल दिया तो उसी समुद्र के पास चले गये । इसी प्रकार उन्होंने क्रमशः २१ बार पृथिवी को क्षत्रिय शून्य कर उसका राज्य ब्राह्मणों को दे दिया ।

महाभारत के शान्ति पर्व में भी जहां पर पूर्वोक्त परशुराम जी का आख्यान है वहीं ४९ वें अध्याय में सहस्रार्जुन के यज्ञ में भी ब्राह्मणों को पृथ्वी राज्य की प्राप्ति इस प्रकार लिखी है कि:—

एतस्मिन्नेव काले तु कृतवीर्यात्मजो बली ।
अर्जुनो नाम तेजस्वी क्षत्रियो हैहयाधिपः ॥३५
दत्तात्रेय प्रसादेन राजा बाहुसहस्रवान् ।
चक्रवर्त्ती महातेजा विप्राणामाश्वमेधिके ॥ ३६
ददौ स पृथ्वीं सर्वां सप्तद्वीपां सपर्वताम् ।
स्वबाहुस्त्रबलेनाजौ जित्वा परमधर्मवित् ॥ ३७

इसका अर्थ यह है कि 'इसी समय (जिस समय परशुराम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का जन्म हुआ) कृतवीर्य का पुत्र, महाबलवान् और तेजस्वी अर्जुन नाम का क्षत्रिय हैहय देश का राजा था। दत्तात्रेय की कृपा से जिसे सहस्रबाहु मिले थे, ऐसे चक्रवर्त्ती राजा अर्जुन ने अश्वमेध यज्ञ में, अपने बाहु और अस्त्र के बल से पर्वत सहित सप्तद्वीपवती पृथ्वी जीत कर ब्राह्मणों को यज्ञ में दक्षिणा दे दी'। क्या इन सब आख्यानों से ब्राह्मणों के राजा होने में अब भी कोई सन्देह रह गया? इससे स्पष्ट है कि प्रथम जो ब्राह्मण अयाचक दल वाले थे, वे मंत्री हो और अस्त्र शस्त्रादिविद्या द्वारा, एवं जो याचक दल वाले थे वे ऋत्विक् और पुरोहित हो बड़े २ राज्याधिकारी और जमींदार होकर एकही अयाचक दल वाले होते गये और पश्चात् पुरोहिती और याजनादि भी उनका इसी लिये छूटता गया। विष्णुपुराण के चतुर्थांश के २४ वें अध्याय में लिखा है कि 'मगधायां तु विश्वस्फटिकसंज्ञोऽन्यान्वर्णान् करिष्यति ॥६१॥ कैवर्त्तवटुपुलिन्दब्राह्मणान्राज्ये स्थापयिष्यति' ॥ ६३ ॥ अर्थात् 'कलि में मगधा पुरी अथवा मगध देश में विश्वस्फटिक नाम का एक प्रतापी पुरुष क्षत्रिय से अन्य वर्ण कैवर्त्त, वटु, पुलिन्द और ब्राह्मणों को राजा बनावेगा'। वायुपुराण के ५८ वें अध्याय में लिखा है कि:—

गोत्रेण वै चन्द्रमसो नाम्ना प्रमितिरुच्यते।
माधवस्य तु सोंऽशेन पूर्वं स्वायम्भुवेऽन्तरे ॥७६॥
सप्ताः स विंशतिं पूर्णाः पर्यटन्वै वसुन्धराम्।
आचकर्ष च वै सेनां सवाजिरथकुञ्जराम् ॥७७॥
प्रगृहीतायुधैर्विप्रैः शतशोथ सहस्रशः।
स तदा तैः परिवृतो म्लेच्छान्हन्ति सहस्रशः ॥७८॥

अर्थ यह है कि 'प्रथम स्वायम्भुव मन्वन्तर में चन्द्र गोत्र में प्रमिति नामका (कल्किभगवान की जगह) विष्णु के अंश से एक ब्राह्मण उत्पन्न हुआ था। जिसने पूरे बीस वर्ष पृथ्वी में घूम कर घोड़े और हाथी सहित सेना एकत्रित की और आयुध धारण करने वाले हजारों ब्राह्मणों को साथ ले बहुत से म्लेच्छों का नाश किया'। फिर ६० वें अध्याय में चलकर लिखते हैं कि:—

उर्व्यां जातास्तु ये शूद्रा ब्राह्मणानां निवेदिताः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वृत्त्यर्थं ब्रह्मयज्ञार्थं करस्तेषु कृतो महान् ॥ ७४ ॥
अनेन विधिना जातं विप्राणां शासनं महत् ॥७५

अर्थात् 'उस कलि में जब प्रायः सब शूद्रही ब्राह्मणों के अधी रह गये तो ब्राह्मणों ने जीविका और यज्ञादि के लिये उन्हीं पर ट लगाया। इस प्रकार से पृथ्वी में ब्राह्मणों का राज्य स्थिर हुआ' और उसी के ५७ वें अध्याय में भी लिखा है कि:-

श्रयन्ते हि तपःसिद्धा ब्रह्मक्षत्रमया नृपाः ॥१२१॥

अर्थात् 'बहुत से ब्राह्मण और क्षत्रिय राजे तपोबल से सि होगये सुने जाते हैं'। मत्स्यपुराण के २७२ वें अध्याय में लिखा है कि

ब्राह्मणास्तु चतुर्विंशा भविष्यन्ति शतं समाः।
ततः प्रभृत्ययं लोकः सर्वो व्यापत्स्यते भृशम् ॥४४॥
चत्वारिंशद्द्विजा ह्येते काण्वा भोक्ष्यन्ति वै महीम्
चत्वारिंशत्पंच चैव भोक्ष्यन्तीमां वसुन्धराम् ॥३५॥२७

अर्थात्, १०० वर्षों तक २४ ब्राह्मण राज्य करेंगे, इसके बाद सम लोक विपत्ति ग्रस्त होगा। कण्ववंशीय ४० ब्राह्मण ४५ वर्षों तक पृथ्वी का राज्य करेंगे'।

'ब्राह्मण राजपरिचय' नामक ग्रन्थ में एक मैथिल परमहं महोपदेशक ने ब्राह्मणों के राज्याधिकार में श्रुतियां भी लिखी हैं। य 'ब्रह्मणे प्रथमो गा अविन्दत' (ऋग्वेद) और इस प्रकार का अर्थ किया है, कि, 'पृथ्वी का राज्य प्रथम ब्राह्मणों ने प्र किया'। एवं और भी लिखकर उस का अर्थ बतलाया है। य 'अस्माकं ब्राह्मणानां राजा' (यजुर्वेद), 'ब्राह्मण एव पतिर्न जन्यो न वैश्यः' (अथर्व वेद)। अर्थ यह है कि 'हम ब्राह्मणों में वह राजा है। राजा ब्राह्मण हीं है, क्षत्रिय वा वैश्य नहीं'। इस प्रक से श्रुति, स्मृति, पुराण और सदाचारों से सिद्ध है कि ब्राह्मण रा होते थे और होते हैं, तथा यह उनका शास्त्रोचित धर्म है। इस कट्टर ब्राह्मणता में कोई धब्बा नहीं लग सकता। इस विषय में अ से नये एवं प्राचीन इतिहास भी दिखावेंगे

जब ब्राह्मण का राज्य करना सिद्ध होगया तो युद्ध तो उ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिये अर्थ सिद्ध हो गया। क्योंकि राज्यके साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसके विषय में प्रथम वायुपुराण का प्रमाण भी दिखला चुके हैं। महाभारत के शान्तिपर्व में लिखा है कि:—

ब्राह्मणस्यापि चेद्राजन् क्षत्रधर्मेण वर्त्ततः।
प्रशस्तं जीवितं लोके क्षत्रंहि ब्रह्मसम्भवम् ॥६॥अ०॥२२॥

जिसका अर्थ यह है कि अर्जुन ने युधिष्ठिर महाराज से कहा है कि हे राजन्! जब कि ब्राह्मण का भी इस संसार में क्षत्रियधर्म अर्थात् राज्य और युद्धपूर्वक जीवन बहुत ही श्रेष्ठ है, क्योंकि क्षत्रिय ब्राह्मणों से ही हुये हैं, तो आप क्षत्रियधर्म का पालन करके क्यों शोक करते हैं?'। आगे चलकर ७८ वें अध्याय में लिखा है कि:—

ब्राह्मणस्त्रिषु वर्णेषु शस्त्रं गृह्णन् न दुष्यति।
एवमेवात्मनस्त्यागान्नान्यं धर्मं विदुर्जनाः ॥ २८ ॥
ब्राह्मणस्त्रिषु कालेषु शस्त्रं गृह्णन् न दुष्यति।
आत्मत्राणे वर्णदोषे दुर्दर्म्यानियमेषु च ॥३४॥
उन्मर्य्यादे प्रवृत्ते तु दस्युभिः संगरे कृते।
सर्वे वर्णा न दुष्येयुः शस्त्रवन्तो युधिष्ठिर ॥१८॥

अर्थात् 'अन्य तीन वर्णों के ऊपर शस्त्र चलानेवाला (युद्धकर्त्ता) ब्राह्मण दूषित नहीं होता, क्योंकि किसी आवश्यक काय वश इस प्रकार आत्मत्याग करने से बढ़कर कोई भी धर्म नहीं माना जाता। युद्ध करनेवाले ब्राह्मण को तीनों काल में कोई दोष नहीं है, विशेषकर अपनी रक्षा, वर्णों की रक्षा और बड़े २ दुष्टों को दबाने के लिये। जब दुष्ट लोगोंके युद्ध करने से शास्त्रीय मर्यादा टूटने लगे तो सभी ब्राह्मणादि युद्ध करने से दूषित नहीं होते'। मत्स्यपुराणके १०३वें अध्याय में लिखा है कि

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि क्षत्रधर्मव्यवस्थितिम्।
नैव दृष्टं रणे पापं युध्यमानस्य धीमतः ॥ २१ ॥
किं पुना राजधर्मेण क्षत्रियस्य विशेषतः ॥ २२ ॥

अर्थात् 'हे राजन् (युधिष्ठिर) क्षत्रिय धर्म की व्यवस्था सुनिये। जब कि किसी भी लड़ाई में युद्ध करने वाले को पाप नहीं होता, तो राजा हो कर युद्ध करने वाले का क्या कहना है, उस पर भी विशेष कर क्षत्रिय का?'।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मत्स्य पुराण के २१४ वें अध्याय राजधर्म प्रकरण में लिखा है कि:-

कुलीनः शीलसम्पन्नो धनुर्वेदविशारदः।
हस्तिशिक्षाश्वशिक्षासु कुशलः श्लक्ष्णभाषिता ॥८॥
निमित्ते शकुने ज्ञाता वेत्ता चैव चिकित्सिते।
कृतज्ञः कर्मणां शूरस्तथा क्लेशसहो ऋजुः ॥९॥
व्यूहतत्त्वविधानज्ञः फल्गुसारविशेषवित्।
राज्ञा सेनापतिः कार्यो ब्राह्मणः क्षत्रियोऽथवा ॥१०॥

अर्थात् 'कुलीन, शीलवान्, धनुर्वेद में निपुण, हस्तियों और अश्वों की शिक्षा में कुशल, मधुरभाषी, शकुनादि तथा चिकित्सा का ज्ञाता, कृतज्ञ, लड़ने में बहादुर, क्लेश सहन करने वाला, सरल स्वभाव, सेनारचना की विधि का ज्ञाता और छोटी बड़ी बातों का विचार करने वाला सेनापति ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय को रखना राजा के लिये उचित है'। अग्निपुराण के २२० वें अध्याय में भी लिखा है कि-

सोभिषिक्तः सहामात्यो जयेच्छत्रून्नृपोत्तमः।
राज्ञा सेनापतिः कार्यो ब्राह्मणः क्षत्रियोऽथवा ॥१॥

अर्थात् 'अभिषेक के अनन्तर राजा मंत्रियों सहित होकर शत्रुओं को जीते, जिसके लिये ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय को सेनापति बनावे'।

जब कर्ण ने द्रोणाचार्य से ब्रह्मास्त्र का ज्ञान माँगा है तो उन्हों ने उत्तर दिया है कि:—

ब्रह्मास्त्रं ब्राह्मणो विद्याद्यथावच्चरितव्रतः।
क्षत्रियो वा तपस्वी योनान्योविद्यात्कथंचन ॥ १३ ॥
स तु राममुपागम्य शिरसाभिप्रणम्य च।
ब्राह्मणो भार्गवोऽस्मीति गौरवेणाभ्यगच्छत ।१५ शां.।

अर्थात् 'ब्रह्मास्त्र केवल शास्त्रोक्ताचार वाला ब्राह्मण हीं जान सकता है, अथवा क्षत्रिय जो तपस्वी होवे, दूसरा नहीं। यह सुन वह परशुरामजी के पास मैं भृगु गोत्री ब्राह्मण हूं ऐसा बनकर ब्रह्मास्त्र सीखने गया है'। अंत में जब उन्हें उसका छल विदित हो गया तो उन्हों ने शाप दिया है कि

तस्मादेतन्न ते मूढ ब्रह्मास्त्रं प्रतिभास्यति ॥३०॥
अन्यत्र वधकालात्ते सदृशेन समेयुषः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अब्राह्मणे नहि ब्रह्म ध्रुवं तिष्ठेत्कथंचन॥३१॥शां.३॥

अर्थात् 'हे मूढ़, इसलिये ब्रह्मास्त्र का ज्ञान तुझे न रहेगा, केवल उस काल को छोड़कर जब तेरे बराबर वाले से तेरा वध होने लगेगा। क्योंकि यह ब्रह्मास्त्र ब्रह्म ठहरा। इसलिये ब्राह्मण से भिन्न के पास नहीं रह सकता'। इसके अतिरिक्त परशुराम, द्रोण, कृपाचार्य और अश्वत्थामाआदि विप्र धुरन्धरों के युद्धों को कौन नहीं जानता? इन पूर्वोक्त पुराण और महाभारतादि के वचनों और द्रोणादिक दृष्टांतों से ऐसा कहने वालों का मत निर्मूल होगया कि यदि ब्राह्मण को युद्ध करना है भी तो केवल आपत्ति काल में। क्योंकि द्रोणादि के ऊपर कौनसी आपत्ति थी? और जब राजा का सेनापति ब्राह्मण हीं हो सकता है, तब तो युद्ध ब्राह्मणों के लिये आपद्धर्म बतलाना नितान्त भूल है। किं बहुना, जब उन के लिये राज्य आपद्धर्म नहीं है तो युद्ध कैसे आपद्धर्म हो सकता है? अतएव मनुस्मृति में स्पष्ट रूप से ८वें अध्याय में लिखा है कि,

शस्त्रं द्विजातिभिर्ग्राह्यं धर्मो यत्रोपरुध्यते।
द्विजातीनां च वर्णानां विप्लवे कालकारिते॥३४८॥
आत्मनश्च परित्राणे दक्षिणानां च संगरे।
स्त्रीविप्राभ्युपपत्तौ च घ्नन्धर्मेण न दुष्यति॥३४९॥

कुल्लूकभट्ट ने भी टीका में साफ लिखा है कि 'ब्राह्मणाद्यैस्त्रिभिर्वर्णैः'। अर्थात् 'जिस समय वर्णाश्रम धर्म में कोई विघ्न उपस्थित हो, कालवश ब्राह्मणादि वर्णों में परस्पर युद्ध छिड़जावे, अन्नादि द्वारा अपनी जीविका तथा शत्रु से रक्षा करने का अवसर होवे, दक्षिणा में प्राप्त गौ प्रभृति को कोई छीनने लग जावे, अथवा चतुर लड़ाकों से काम पड़ जावे, एवं स्त्रियों और ब्राह्मणों पर विपत्ति पड़ जावे, तो ब्राह्मणादि तीनों वर्णवाले सभी युद्ध कर सकते हैं, और धर्म युद्ध से शत्रुओं को मारने में दोष भागी नहीं होते हैं'। इस पूर्वोक्त मनुवाक्य से जो बुद्धिमान् ऐसा अर्थ निकालते हैं कि इतना अवसर गिनाने से युद्ध ब्राह्मण का आपद्धर्म सिद्ध होता है, उनकी बुद्धि की बलिहारी है। क्योंकि इतने हीं तो अवसर युद्ध के लिये क्षत्रियों को भी पड़ते हैं। क्या उनके लिये व्यर्थ भी लड़ने की आज्ञा है? गिनाने का तात्पर्य तो केवल यह है कि जिसमें कोई भी वर्ण मनमाना हरघड़ी शस्त्रादि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेकर धूम न मचाता रहे।

इस प्रकार जब ब्राह्मण का शास्त्रोक्त धर्म युद्ध सिद्ध हो गया, तो जो कहीं २ महाभारतादि में इसकी नाम मात्र को कुछ निन्दा आती है, उसका सामान्य रीति से युद्ध को निन्दित ठहराने में तात्पर्य नहीं है, किन्तु दशा विशेष के लिये है। अर्थात् उसका मुख्य तात्पर्य यह है कि ब्राह्मण भी यह न समझ लेवे कि क्षत्रिय की तरह मेरा भी मुख्य धर्म युद्ध ही है। क्योंकि ऐसा समझने से अपने मुख्य धर्म वेदाभ्यास से वञ्चित हो जावेगा। जैसा जब कृषि वाणिज्यादि को ब्राह्मणों का सनातन धर्म सिद्ध कर चुके हैं, तो उसके विषय में जो कुछ निन्दा कहीं २ आती है कि:—

गोरक्षकान्वाणिजिकाँस्तथाकारुकुशीलवान् ।
प्रेष्यान्वार्धुषिकाँश्चैवविप्राञ्छूद्रवदाचरेत्।१०२म. ॥८॥

कृषिकर्मरतो यश्च गवां च प्रतिपालकः ।
वाणिज्यव्यवसायश्च स विप्रोवैश्यउच्यते।३७८अत्रिसंहिता

अर्थात् 'गोरक्षक, वाणिज्य करनेवाले, नट, दूत और सूदखोर ब्राह्मण के साथ गवाही के समय शूद्रवत् व्यवहार करना चाहिये। कृषि करनेवाला, गोपालक और वाणिज्य करनेवाला ब्राह्मण वैश्य कह लाता है'। इन सभी का तात्पर्य केवल अनापत्ति काल में अपने हाथ से (स्वयंकृत) कृषि, वाणिज्य, गोपालन और कुसीद (सूद का व्यवहार) करने में है। यानी अनापत्ति काल में अपने हाथ से कृष्यादि करने से ब्राह्मण वैश्य या शूद्रवत हो सकता है, परन्तु आपत्ति काल में तो उसे करने से भी नहीं। क्योंकि अनापत्ति में अस्वयंकृत और आपत्ति में स्वयंकृत कृष्यादि का विधान पूर्व सिद्ध कर आये हैं, और विहित कर्म करने से कोई भी दोष भागी या नीच, ऊंच नहीं हो सकता।

अतः यह भी कथन, कि युद्धादि करने के कारण हीं ये अयाचक ब्राह्मण अपने समाज में नीचे देखे जाने लगे, सर्वथा असंगत है। क्योंकि द्रोण और कृपाचार्य को कौन नीचा देखने वाला था, है या होगा। इस प्रकार यदि कोई शास्त्रोक्त धर्म करने से समाज में हीन समझा जावे तो संध्या, अग्निहोत्रादि जो कुछ अवशिष्ट हैं वे भी रसातल को ही पहुंच जावें। यदि कोई ब्राह्मण सांसारिक झंझटों से उपराम है तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह युद्धादि मत करे और उसके लिये वह उचित भी नहीं है। परन्तु जो लोग सांसारिक पदार्थों से विरक्त न हो कर प्रतिष्ठा, राज्य और लक्ष्मी प्रभृति पदार्थों के अभिलाषी हैं, उनके लिये युद्ध क्यों उचित नहीं और वे उसे क्यों न करें, एवं ऐसा करने से हीन क्यों समझे जावें? शास्त्रीय रीति से तो हमें इसमें कोई कारण देख नहीं पड़ता। अतः निर्विवाद सिद्ध है कि इस प्रकार बहुत से अयाचक और याचक दल वाले भी ब्राह्मण युद्धादि द्वारा समय २ पर राज्य और जमींदारी स्थापित करते और फलतः एक पृथक् दल वाले बनते गये।

३-अयाचकब्राह्मणोंके भूमिहार, त्यागी आदिविशेषण।

यद्यपि यह वार्ता विविध प्रमाणों और युक्तियों से सिद्ध कर चुके हैं और अभी करेंगे भी कि प्रतिग्रहादि कर्मों से निवृत्त होकर कृष्यादि द्वारा जीवन व्यतीत करना यही ब्राह्मणों का शास्त्रोचित उत्तम धर्म है। तथापि 'रुचीनां वैचित्र्यात्', अपनी २ रुचि विचित्र होती है, इस नियमानुसार सब लोग प्रतिग्रहादि से निवृत्त रहें यह बात कब होने की? जब कि शास्त्रों द्वारा अत्यंत निषिद्ध और महान् दण्ड योग्य चोरी, द्यूत, मद, हिंसा और व्यभिचारादि से ही लोग निवृत्त नहीं होते, प्रत्युत उन्हीं की संख्या अधिक है। क्योंकि 'दुरत्यया प्रकृतिः' अर्थात् प्रकृति मिट नहीं सकती। इसी से भगवान कृष्ण ने कहा है कि:—

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥३।३३॥

अर्थात् 'जानकार (ज्ञानी) पुरुष भी उत्तम, मध्यमकार्यों के करने से नहीं रुक सकता, क्योंकि सभी प्राणी अपनी २ प्रकृति (स्वभाव) के आधीन हैं, इसलिये वे रुक नहीं सकते'। भगवान श्रीगौडपादाचार्य ने भी माण्डूक्य कारिका में कहा है कि,

नभवत्यमृतं मर्त्यं न मर्त्यममृतं तथा।
प्रकृतेरन्यथा भावो न कथंचिद्भविष्यति (तृती० २१)॥

अर्थात् 'जो अमर है उसका नाश नहीं हो सकता और जो नाश होने वाला है वह अमर नहीं हो सकता, क्योंकि प्रकृति (स्वभाव) का अन्यथाभाव नहीं हो सकता'। तो फिर चाहे कैसे हू हों परन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्ततो गत्वा जो शास्त्रोक्त धर्म प्रतिग्रहादि हैं उन में भी लोगों की प्रवृत्ति क्यों न हो ? बल्कि स्वभावतः मनुष्य आलसी होनेके कारण जिस में विना कष्ट द्रव्यादि मिल जावें उसीका करना पसन्द करते हैं, लोक परलोक का विचार कौन करने लग जाता है ? यदि कोई करता भी है तो विचार लेता है कि इस के लिये कुछ प्रायश्चित्तादि कर लेंगे। इसीलिये यद्यपि सकाम कर्मों की निन्दा गीता, स्मृतियों एवं पुराणों में बहुत ही की गई है और साथ ही निष्काम कर्मों की यहां तक प्रशंसा की गई है कि,

स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥ गी०२॥

अर्थात् 'थोड़ा भी निष्काम कर्म जन्म मरण तक के महान् भय को छुड़ा देता है'। तथापि यदि देखा जावे तो ९९ प्रति सैकड़े सकाम कर्मों के ही करनेवाले हैं और निष्काम कर्म का करनेवाला तो बड़े क्लेश से एक भी नहीं मिल सकता। इसीलिये यह भी शंका करना मूर्खता मात्र है कि यदि प्रतिग्रह को अनुचित समझ सभी दान त्यागी ही हो जावें तो दान कौन लेगा ? क्योंकि प्रकृति दुरत्यया है। इसलिये सभी दान लेनेवालों को शास्त्र नहीं हटा सकता।

इस से यह सिद्ध होगया कि सृष्टि के प्रारम्भ से ही दो प्रकार के धर्म ब्राह्मणों के चले आते हैं, (१) प्रवृत्ति अर्थात् प्रतिग्रह, याजनादि द्वारा जीवन व्यतीत करना, (२) निवृत्ति अर्थात् प्रतिग्रहादि के त्याग पूर्वक शिल, उञ्छ, वाणिज्य, कृष्यादि द्वारा जीविका करना। तदनुसार ही ब्राह्मण भी दो प्रकार के तभी से होते आये हैं, (१) प्रवृत्त अर्थात् प्रतिग्रहादि में प्रवृत्ति पूर्वक जीवन बिताने वाले, जिन्हें याचक भी कह सकते हैं। (२) निवृत्त अर्थात् प्रतिग्रहादि की निवृत्ति पूर्वक शिल, उञ्छ, कृष्यादि द्वारा यथा सम्भव जीवन व्यतीत करने वाले, जिन्हें अयाचक भी कह सकते हैं और जिसी दल के प्रकृत भूमिहार ब्राह्मण भी हैं। यद्यपि याचक दल में सभी याचक ही नहीं हैं, किन्तु आज कल बहुत से अयाचक भी हैं, एवं अयाचक दल में भी बहुतसे याचक हैं *। क्योंकि, जैसा कि आगे दिखलाया

* हजारीबागके इटखोरी और चतरा थाने के ८-१० कोसमें बहुत से भूमिहार ब्राह्मण राजपूत, कायस्थ और माहुरी आदि की पुरोहिती सैकड़ों वर्ष से करते चले आ रहे हैं और गजरौला, तांसीपुर के त्यागी राजपूतों की।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जावेगा कि, बहुत से अयाचक ब्राह्मणों का याचक दल के मैथिल, कान्यकुब्ज, सूर्यपारी, गौड़ आदि से विवाह सम्बन्ध है। यद्यपि सक्षात् तो जो याचक दल में भी इस समय अयाचक हैं उन्हीं के साथ है, तथापि उनका पुनः याचकों के साथ होने से परम्परया मिल जाता है। तो भी इस अयाचक ब्राह्मण दल में प्राधान्य अथवा आधिक्य अयाचकों का ही है और याचक (पुरोहित) दल में याचकों का ही और उस में बहुत से अयाचक समय पाकर अभी हाल में धन के कारण हो गये हैं। इसीलिये हमने इस ग्रन्थ में 'भूयसा हि व्यपदेशा भवन्ति' अर्थात् 'जिस दल में जो अधिक होता है उसी के नाम से उसका व्यवहार होता है; जैसे जिस ग्राम में ब्राह्मण अधिक होते हैं वह ब्राह्मणों का ग्राम कहलाता है'। इस महाभाष्योक्त न्यायानुसार पुरोहित दल से विशेष मिले हुए अर्थात् भूमिहार, त्यागी, पश्चिमा, जमींदारादि ब्राह्मणों से अतिरिक्त ब्राह्मणों का याचक पद से व्यवहार किया है और भूमिहारादि ब्राह्मणों का अयाचक पद से और यही उचित भी है, जैसा कि दिखला चुके हैं और वृद्ध लोग करते भी आये हैं। इस लिये दोनों दल के ब्राह्मणों के लिये क्रमशः याचक और अयाचक शब्द इस ग्रन्थ के ही लिये नहीं, किन्तु बाहर भी प्रयोग करने के लिये हैं और किये जाने चाहियें।

इसी से इन्हीं दो प्रकार के ब्राह्मणों और इनके धर्मों के विचार से मनुजी ने भी दो प्रकार के कर्म बतलाये हैं। जैसा कि—

सुखाभ्युदयिकं चैव नैःश्रेयसिकमेव च।
प्रवृत्तं च निवृत्तं च द्विविधं कर्म वैदिकम् ॥८८॥
इहचामुत्र च काम्यं प्रवृत्तं कर्म कीर्त्यते।
निष्कामं ज्ञानपूर्वं तु निवृत्तमुपदिश्यते ॥८९॥
अकामोपहतं नित्यं निवृत्तं च विधीयते।
कामतस्तु कृतं कर्म प्रवृत्तमुपदिश्यते ॥ मनु० अ०१२॥

अर्थात् 'स्वर्गादि सांसारिक सुख, ब्रह्म लोकादि और परम्परया मुक्ति प्राप्त कराने वाले कर्म दो प्रकार के होते हैं, (१) प्रवृत्त, (२) निवृत्त। पूर्वोक्त स्वर्ग, पुत्र एवं धनादि सांसारिक वस्तु तथा ब्रह्मलोकादि की कामना पूर्वक जो कर्म प्रतिग्रह, याजन तथा यज्ञादि किये जाते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं, वे प्रवृत्त कहलाते हैं और पूर्वोक्त सुख तथा तदर्थक कर्मों में दोष ज्ञान द्वारा जो निष्काम शिल, उञ्छ, कृष्यादि से जीविका करके किये जाते हैं, वे निवृत्त कहलाते हैं। धनादि की कामना छोड़ कर केवल धर्म बुद्धि से धर्मार्थ (धर्मसाधनार्थ) जो कर्म किये जाते हैं वे निवृत्त कहलाते और जो धर्म का विचार न करके केवल धनादि के लिये प्रतिग्रहादि किये जाते है वे प्रवृत्त कर्म कहलाते हैं '। अग्नि पुराण में इसी अभिप्राय का प्रायः यही श्लोक है, जैसेः—

प्रवृत्तं च निवृत्तं च द्विविधं कर्म वैदिकम् ।
काम्यं कर्म प्रवृत्तं स्यान्निवृत्तं ज्ञानपूर्वकम् ।१६।२४॥

देवलस्मृति में इसको स्पष्ट रूप से कह दिया है किः—

द्विविधो गृहस्थो यायावरःशालीनश्च । तयोर्यायावरः प्रवरो याजनाध्यापनप्रतिग्रहरिक्थसंचयवर्जनात्। षट्कर्माधिष्ठितःप्रेष्यचतुष्पदगृहग्रामधनधान्ययुक्तोलोकानुवर्त्तीशालीनः

अर्थ यह है ' कि ब्राह्मणादि गृहस्थ दो प्रकार के होते हैं, (१) शालीन, (२) यायावर। इन दोनों में से यायावर श्रेष्ठ होता है क्योंकि वह याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह द्वारा धन संचय नहीं करता (किन्तु अन्य कृष्यादि उपायों द्वारा), और जो याजनादि अथवा ऋत, अमृतादि षट्कर्मों का करने वाला और नौकर चाकर पशु, गृह, ग्राम (जमींदारी) धन और धान्य युक्त होवे उसे शालीन कहते हैं'। इससे स्पष्टही है कि याजनादि करने से ब्राह्मण हीन होजाता है और पशुपालन तथा जमींदारी आदि भी करना ब्राह्मण का शालीन धर्म है। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि याजनादि करने और न करने वाले, किन्तु कृष्यादि करने वाले ये दो प्रकार के ब्राह्मण अनादि काल से ही चले आते हैं। इसीलिये वैशेषिक दर्शन के भाष्य में महर्षि प्रशस्त पाद ने धर्म निरूपण प्रकरण में स्पष्ट ही कह दिया है किः—

विद्याव्रतस्नातकस्यकृतदारस्यशालीनयायावरवृत्त्युपार्जितैरर्थैर्मनुष्यभूतदेवपितृब्रह्माख्यानां महायज्ञानां सायम्प्रातरनुष्ठानम् ।

अर्थात् ' जिस ब्राह्मण या क्षत्रियादि गृहस्थ ने ब्रह्मचर्यके नियमों की समाप्ति पूर्वक विवाह किया है, उसे पूर्वोक्त शालीन अथवा यायावर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर की वृत्ति से धनोपार्जन कर उसी से प्रतिदिन सायंकाल और प्रातःकाल मनुष्य, भूत, देव, पितृ और ब्रह्म (वेद) इन पाचों के निमित्त पांच महायज्ञ करने चाहिये"। इससे शालीन और यायावर ये दो प्रकार के ब्राह्मण सिद्ध हैं।

यद्यपि पूर्वोक्त देवल स्मृति में यायावर के लिये केवल प्रतिग्रहादि का निषेध ही स्पष्ट रूप से दिखलाया है और कृष्यादिका नाम नहीं लिया है। परन्तु शालीन का पशुपालन और जमींदारी आदि करना स्पष्ट शब्दों में कहा है। तथापि प्रतिग्रहादि के त्यागने पर अवश्य ही मनुस्मृति के चतुर्थाध्यायोक्त उञ्छ, शिल और कृष्यादि करने पड़ेंगे। साथ ही, समय पाकर शालीन की वृत्तियां भी जमींदारी प्रभृति यायावरों के हाथ में जा सकती हैं, या चली गईं। क्योंकि समय २ पर वृत्तियों या हर प्रकार के धर्मों का विनिमय (उलट फेर) हुआ ही करता है, यह प्रकृति का दृढ़तम नियम है। इसीलिये सम्प्रति ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन सभी की वृत्तियां (जीविकायें) प्रायः एकसी होगई हैं और जिस सेवावृत्ति (नौकरी) का ब्राह्मण के लिये अत्यन्त निषेध है और था, आज वे प्रायः उसी के करनेवाले पाये जाते हैं। इसलिये यायावर ब्राह्मण प्रतिग्रह त्यागी और कृषक होगये, एवं शालीन प्रतिग्रहादि करनेवाले तथा कृषक होगये। जो बात आज भी अयाचक ब्राह्मणों और याचक (पुरोहित दल के) ब्राह्मणों में स्पष्ट रूप से पाई जाती है। क्योंकि कृषि दोनों ही करते हैं, परन्तु एक (अयाचक या भूमिहार, त्यागीआदि) प्रतिग्रहादि से रहित हैं और दूसरे (याचक) प्रतिग्रहादि करने वाले हैं। इस से स्पष्ट है कि प्रायः सभी अयाचक दल के ब्राह्मण देवल स्मृत्युक्त यायावर ब्राह्मण हैं और याचक (पुरोहित) ब्राह्मण शालीन ब्राह्मण हैं।

अथवा यों भी कह सकते हैं कि शालीन ब्राह्मण के लक्षण में जो यह लिखा है कि 'षट्कर्माधिष्ठितः' अर्थात् षट् कर्मों का करने वाला। उस के दो अर्थ हो सकते हैं, एक तो यह कि याजनादि षट् कर्मों का कर्त्ता, और दूसरा यह कि उञ्छ, शिलादि षट्कर्मों का कर्त्ता। क्योंकि पूर्व ग्रन्थ में हीं यह सिद्ध कर चुके हैं कि याजनादि भी शास्त्रों में षट् कर्म कहे जाते हैं और उञ्छ, शिलादि भी, और दोनों के करने वाले ही षट् कर्मा कहे जाते हैं। इसलिये शालीन ब्राह्मणों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में हीं दो भेद सिद्ध होगये, एक तो उञ्छ, शिल, कृष्यादि पूर्वक जमींदारी और पशु पालन के करने वाले, जो कि सम्प्रति प्रायः अयाचक (त्यागी, भूमिहार, पश्चिमादि) ब्राह्मण कहे जाते हैं, और दूसरे प्रतिग्रहादि पूर्वक पशुपालनादि करने वाले, जो कि सम्प्रति याचक (पुरोहित) ब्राह्मण कहे जाते हैं। अतः यह तो निर्विवाद रूप से केवल स्मृति से ही सिद्ध हो गया कि पुरोहित दल वाले ब्राह्मण शालीन कहलाते हैं और इस अयाचक दल के ब्राह्मण यायावर संज्ञक ब्राह्मण हैं। अथवा दो प्रकार के पूर्व निर्दिष्ट शालीन ब्राह्मणों में से ही हैं। साथ ही, याचक और अयाचक दो प्रकार के ब्राह्मण सिद्ध हो गये।

अथर्ववेदान्तर्गत आश्रमोपनिषद्, अथवा कात्यायन स्मृति के देखने से भी यही वार्त्ता सिद्ध होती है, केवल संज्ञाओं में भेद पाया जाता है। क्योंकि लिखा है कि:—

गृहस्था अपि चतुर्विधा भविन्त, वार्त्ताकवृत्तयः शालीनवृत्तयो यायावरा घोरसांन्यासिकाश्चेति। तत्र वार्त्ताकवृत्तयः कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यमगर्हितमुपयुञ्जानाश्शतसम्वत्सराभिः क्रियाभिर्यजन्त आत्मानं प्रार्थयन्ते। शालीनवृत्तयो यजन्तो न याजयन्तोऽधीयाना नाध्यापयन्तो ददतो न प्रतिगृह्णंतः शतसंवत्सराभिः क्रियाभिर्यजन्त आत्मानं प्रार्थयन्ते। यायवरा यजन्तो याजयन्तोऽधीयाना अध्यापयन्तो ददतः प्रतिगृह्णन्तः शतसंवत्सराभिः क्रियाभिर्यजन्त आत्मानं प्रार्थयन्ते। घोरसांन्यासिका उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वन्तः प्रतिदिवसमास्तृतोञ्छवृत्तिमुपयुञ्जानाः शतसंवत्सराभिः क्रियाभिर्यजन्त आत्मन प्रार्थयन्ते॥

इस वचन को स्वामी परमानन्द तीर्थ अथवा स्वामी महादेवानन्द तीर्थ ने 'यतिधर्म निर्णय' ग्रन्थ में अथर्व वेद के आश्रमोपनिषद् का बताया है। परन्तु पण्डित वर श्रीराम मिश्र शास्त्री ने अपने 'तुरीयमीमांसा' नामक ग्रन्थ में कात्यायन स्मृति का बताया है। एक नाम वाली लघु तथा बृहत् वगैरः कितनी हीं स्मृतियां और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संहितायें हैं, जैसे लघुविष्णुस्मृति और विष्णुस्मृति प्रभृति और एक ग्रन्थ के वाक्य दूसरे ग्रन्थों में भी पाये जाते हैं. जैसा कि प्रथम 'ऋतामृताभ्यां' इस श्लोक को मनुस्मृति और अग्निपुराण दोनों में दिखला चुके हैं। इसलिये कोई विरोध नहीं हो सकता। अस्तु, पूर्वोक्त उस वचन का अर्थ यह है कि 'ब्राह्मणादि गृहस्थ भी चार प्रकार के होते हैं, (१) वार्त्ताकवृत्ति, (२) शालीनवृत्ति, (३) यायावर और (४) घोर सांन्यासिक। उन में से वार्त्ताक वृत्ति उन का नाम है जो अनिन्दित अर्थात् अस्वयंकृत कृषि, गोरक्षा और वाणिज्य करते हुये सैकड़ों वर्ष में समाप्त होनेवाले यज्ञों द्वारा अन्तःकरण को शुद्ध करके आत्मज्ञान की इच्छा करते हैं। जो यज्ञ करते हैं परन्तु करवाते नहीं, अध्ययन करते हैं परन्तु अध्यापन नहीं करते और दान देते हैं परन्तु लेते नहीं और पूर्वोक्त बड़े २ यज्ञों द्वारा आत्म ज्ञान की इच्छा करते हैं, वे शालीन वृत्ति कहलाते हैं। जो यजन, याजनादि षट्कर्म कर के पूर्वोक्त बड़े २ यज्ञों द्वारा आत्मज्ञान की अभिलाषा करते हैं, उन्हें यायावर कहते हैं। और घोर सांन्यासिक वे हैं जो कूप या नदी से जल निकाल उसे शुद्धकर उसी से नित्यक्रियादि करते हुये प्रतिदिन उञ्छ वृत्ति से जीविका करते और उन यज्ञों द्वारा आत्मज्ञान चाहते हैं'।

इस से सिद्ध है कि केवल यायावर संज्ञक ब्राह्मण प्रतिग्रहादि करते हैं और शालीनवृत्ति, वार्त्ताकवृत्ति एवं घोरसांन्यासिक ये तीनों प्रतिग्रहादि का नाम न लेकर केवल कृष्यादि द्वारा जीवन व्यतीत करते हैं। यद्यपि देवलस्मृति में प्रतिग्रह शालीन का धर्म और यायावर का धर्म उस का त्याग कहा है, परन्तु यहां उस के विपरीत शालीन को ही प्रतिग्रह त्यागी और यायावर को प्रतिग्राही कहते हैं। तथापि संज्ञा में विवाद होने पर भी धर्म में विवाद नहीं है, जिस से अयाचक और याचक ये दो प्रकार के ब्राह्मण निर्विवाद सिद्ध हो गये। जिनका धर्म यह है कि याचक प्रतिग्राही और अयाचक उसका त्याग करके कृष्यादि द्वारा अपनी जीविका करते हैं, जिन्हीं अयाचकों में से यह भूमिहारादि ब्राह्मण हैं, जिन्हें यायावर या शालीन भी प्रथम हीं सिद्ध कर आये हैं।

इसी विषय को साफ़ शब्दों में महाभारत के शान्तिपर्वान्तर्गत मोक्ष धर्म पर्व के १९९ अध्याय में राजा इक्ष्वाकु और एक अयाचक ब्राह्मण के संवाद द्वारा दिखलाते हुये प्रतिग्रह को बहुत ही हीन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बतलाया है। जैसा कि:—

ब्राह्मणो जापकः कश्चिद्धर्मवृत्तो महायशाः।
षडंगविन्महाप्राज्ञः पैप्पलादिः स कौशिकः॥ ४॥
तस्यापरोक्षं विज्ञानं षडंगेषु बभूव ह।
वेदेषु चैव निष्णातो हिमवत्पादसंश्रयः॥ ५॥
सोऽन्त्यं ब्राह्म्यं तपस्तेपे संहितां संयतो जपन्।
तस्य वर्षसहस्रन्तु नियमेन तथा गतम्।
स देव्या दर्शितः साक्षात्प्रीतास्मीति तदा किल॥७॥
अथ वैवस्वतः कालो मृत्युश्च त्रितयं विभो।
ब्राह्मणं तं महाभागमुपागम्येदमब्रुवन्॥ २८॥
तस्मिन्नेवाथ काले तु तीर्थयात्रामुपागतः।
इक्ष्वाकुरगमत्तत्र समेता यत्र ते विभो॥ ३४॥
सर्वानेव तु राजर्षिः संपूज्याथ प्रणम्य च।
कुशलप्रश्नमकरोत्सर्वेषां राजसत्तमः॥ ३५॥
राजोवाच। राजाहं ब्राह्मणश्च त्वं यदा षट्कर्म संस्थितः।
ददानि वसु किंचित्ते प्रथितं तद्वदस्व मे॥ ३८॥
ब्राह्मणउवाच। द्विविधाब्राह्मणाराजन्धर्मश्चद्विविधःस्मृतः
प्रवृत्ताश्च निवृत्ताश्च निवृत्तोऽहं प्रतिग्रहात्॥ ३९॥
तेभ्यः प्रयच्छ दानानि ये प्रवृत्ता नराधिप।
अहं न प्रतिगृह्णामि किमिष्टं किं ददामि ते॥४०॥
बाल्ये यदि स्यादज्ञानान्मया हस्तः प्रसारितः।
निवृत्तिलक्षणं धर्ममुपासे संहितां जपन्॥ ७८॥
निवृत्तं मां चिराद्राजन् विप्रलोभयसे कथम्।
स्वेन कार्यं करिष्यामि त्वत्तो नेच्छे फलं नृप॥
तपःस्वाध्यायशीलोऽहं निवृत्तश्च प्रतिग्रहात्॥ ७९॥

अर्थ यह है कि 'पिप्पलाद ऋषि का पुत्र कौशिक गोत्री एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मण था, जो बहुत ही धर्मात्मा, यशस्वी, महाबुद्धिमान्औरषडंगों का ज्ञाता, एवं चारों वेदों की संहिताओं का जपने (पढ़ने) वाला था। उसे षडंग विषयक अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) ज्ञान था और चारों वेदों में भी कुशल होकर हिमालय की तराई में वह रहता था। वह पवित्रता पूर्वक संहिता का जप करता हुआ वेदाध्ययन कालिक कठिन तपस्या करता था। इस प्रकार से नियम पूर्वक उसके सहस्र वर्ष व्यतीत हो गये। इस पर प्रसन्न होकर सरस्वती ने उसे दर्शन दिया और मैं प्रसन्न हूं ऐसा कहा। इसके बाद यम, काल और मृत्यु ये तीनों उसके पास आ उससे अपने २ आने का प्रयोजन कहने लगे। इसी समय तीर्थ यात्रार्थ पर्यटन करते हुए राजा इक्ष्वाकु उसी जगह आगये जहां पर वे सब एकत्रित थे। राजर्षि इक्ष्वाकु ने सभी को नमस्कार कर पूजा करके पुनः उनसे कुशल प्रश्न इत्यादि किया। फिर राजा ने उस तपस्वी ब्राह्मण से कहा कि मैं राजा हूं और आप षट् कर्म करनेवाले ब्राह्मण हैं; इस लिये आपको कुछ धन देने की इच्छा है। जो आपकी इच्छा हो सो कहिये। ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि हे राजन्! प्रतिग्रहआदि लेने में प्रवृत्ति और उनसे निवृत्ति ये दो प्रकार के धर्म ब्राह्मणों के हैं, इसलिये ब्राह्मण भी तदनुसार ही दो प्रकार के होते हैं। एक प्रतिग्रहादि में प्रवृत्त और दूसरे उनसे निवृत्त, उनमें से मुझे प्रतिग्रहादि से निवृत्त जानिये। इसलिये दान उन ब्राह्मणों को दीजिये जो प्रतिग्रहादि में प्रवृत्त हैं, मैं प्रतिग्रह नहीं कर सकता। हां आपको क्या चाहिये जो दूं। यदि मैंने सम्भवतः बाल्यावस्था में भूलकर हाथ पसार दिये हों (दान लिया हो) तो पसार दिये, परन्तु अब वेदोंकी संहिताओं का पाठ करता हूं। इसीलिये धर्म का सेवन करता हूं। हे राजन्! मैं बहुत काल से निवृत्ति रूप धर्मका ज्ञाता होकर प्रतिग्रहादि से निवृत्ति रूप धर्म का सेवन करता हूं। अतः मुझे क्या लालच दिखाते हो? मैं अपने हीं सामर्थ्य से उपार्जित अन्नादि द्वारा शरीर यात्रा करने वरने वाला हूं, आपसे कुछ नहीं चाहता। मैं तो केवल तपस्या करने और वेदादि पढ़ने वाला हूं और प्रतिग्रह से निवृत्तहूं।

इस सम्पूर्ण कथन का सारांश यह है कि अयाचक और याचक ये दो प्रकार के ब्राह्मण सर्वदा से होते चले आये हैं। उनमें से याचक तो प्रतिग्रहादि अवश्य करते थे, परन्तु कृष्यादि करते थे और न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी करते थे। लेकिन अयाचक दल वाले तो प्रतिग्रहादि को गर्हित समझ कृषि, वाणिज्यादि द्वारा ही अपनी जीविका करते थे और करते हैं। साथही, जैसे याचक लोग शास्त्राभ्यास करते थे वैसेही अयाचक दलवाले भी। जिन्हीं में से हमारे यह पश्चिमा, भूमिहारादि ब्राह्मण हैं। उन दिनों इन अयाचक ब्राह्मणों में त्यागी, पूर्ण शक्ति थी कि कृष्यादि भी करवाते और वेदाध्ययनादि भी करते थे। इसीलिये बौधायन-स्मृति के पंचमाध्याय में लिखा हुआ है कि—

वेदः कृषिविनाशाय कृषिर्वेदविनाशिनी।

शक्तिमानुभयं कुर्यादशक्तस्तु कृषिं त्यजेत्। १०१प्र०१।

अर्थात् 'निरन्तर वेदाभ्यास कृषि का विरोधी है और निरंतर कृषि भी वेद की विरोधिनी है, इसलिये अपने अपने समय पर यदि दोनों को साथ करने की सामर्थ्य होवे तो साथ २ करे। परन्तु दोनों के एक साथ निबाह सकने की शक्ति यदि न हो तो ऐसी दशा में वेद के लोभ से कृषि का परित्याग भले ही करदेवे'। इसीलिये उस स्मृति के तृतीय प्रश्न के प्रथमाध्याय में भी ९ वृत्तियों को गिनाकर द्वितीयाध्याय में उनका लक्षण करते हुए स्पष्ट रूप से कृषि का विधान किया है। यदि बिल्कुल ही कृषि वेदाभ्यास की विरोधिनी होती तो इससे पूर्व वेदाभ्यासादि पंचमहायज्ञों के विषय में 'अथेमे पंचमहायज्ञाः' अर्थात् अब इन स्वाध्याय (वेदाभ्यास) प्रभृति महायज्ञोंको कहेंगे, ऐसा कह कर कभी भी कृष्यादि का निरूपण न करते। परन्तु वे तो स्पष्ट लिखते हैं कि:

ता अनुव्याख्यास्यामः॥६॥ षण्निवर्त्तनी, कौद्दाली, ध्रुवा, संप्रक्षालनी, समूहा, पालनी, शिलोञ्छा, कापोता, सिद्धेच्छेति नवैताः।७।तृतीयप्रश्नेप्रथमाध्यायः॥कौद्दालीति।६। जलाभ्याशे कुद्दालेन वा फालेन वा तीक्ष्णकाष्ठेन वा खनति वीजान्यावपति॥७॥ कन्दमूलफलशाकौषधीर्निष्पादयति ।८। कुद्दालेनकरोतीति कौद्दाली॥९॥तृतीयप्रश्ने द्वितीया०॥

अर्थ यह है कि 'अब यायावर तथा शालीन प्रभृति की वृत्तियां (जीविकाओं) का निरूपण करते हैं। वे षण्निवर्त्तनी, कौद्दाली, ध्रुवा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संप्रक्षालनी, समूहा, पालनी, शिलोञ्छा, कापोता, और सिद्धेछा ये नव हैं। उनमें से कौद्दाली वृत्ति यह है कि जल के समीप (बीज बोने योग्य गीली भूमि में) कुदाल, फाल या चोखे काष्ठ से खोदना (भूमि जोतना) और बीज बोकर कन्द, मूल, फल, शाक और अन्नादि को उत्पन्न करना। यह काम कुदाल प्रभृति से ही होता है, इसलिये इस जीविका का नाम कौद्दाली है'। उसी जगह शालीन और यायावर का अर्थ कर के ये वृत्तियां गिनाई गई हैं। वे लिखते हैं कि 'शालाश्रयत्वाच्छालीनत्वम्।३।वृत्त्या वरया यातीति यायावरत्वम्'।४। अर्थात् 'जो बड़े २ प्रासादों में निवास करे उसे शालीन कहते हैं, और कौद्दाली आदि श्रेष्ठ वृत्तियों द्वारा जो जीवन व्यतीत करता है उसे यायावर कहते हैं'।

इसी प्रकार याचक ब्राह्मण भी प्रतिग्रहादि के साथ कृष्यादि भी करते हुये, या केवल प्रतिग्रहादि करते हुये वेदाभ्यास से चूकते न थे। बहुत दिनों क्या युग युगान्तरों तक यही बात होती रही। परन्तु काल क्रम से दोनों दलों में वेदादि के अभ्यास का ह्रास होने लगा। परन्तु प्रतिग्रहादि तथा कृष्यादि विना शरीर स्थिति ही नहीं हो सकती थी, इस लिये उसका ह्रास या त्याग असम्भव था। हां उस में भी कुछ न कुछ उलट फेर अवश्य होने लगा। जहां लोग दो चार बैलों के हल को अनुचित तथा महा पाप समझते थे वहां उसे ही उचित समझने लगे। आज तक अयाचक (त्यागी, भूमिहारादि) और याचक (पुरोहित) दोनों दलों में दो ही बैलों द्वारा हल का चलाया जाना उसी वेद शास्त्रादि के अनभ्यास मूलक धर्म के अज्ञान में प्रमाण हो रहा है। साथही, ब्राह्मणों की आजतक सेवावृत्ति (नौकरी) में स्वाभाविक प्रवृत्ति भी उसी शास्त्र के सम्यक् ज्ञानाभाव को सूचित कर रही है, जिससे अब धर्मज्ञान होने पर भी वह पड़ा हुआ स्वाभाविक अभ्यास नहीं छूटता। यहां पर यह बात भी भूलना न चाहिये कि अयाचकों तथा याचकों का संबंध प्रथम से लेकर उस समय तक भी घनिष्ठ था और परस्पर विवाह संबंध तथा खान पान प्रायः हुआ करते थे। कुछ भी रोक टोक न होकर यह वार्त्ता प्रत्येक की इच्छा पर निर्भर थी, नकि आज कल की तरह वह संबंध बहुत ढीला हो रहा था। हां कुछ २ मत भेद के विचार इस विषय में अवश्य उठ रहे थे जो आज बहुत बढ़गये हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और उन्होंने परस्पर के संबंध को बहुत स्थलों में अधिक ढीला कर दिया और बहुतेरी जगहों में तो उसका अभावही कर दिया है और करना चाहते हैं। इसी समय लोग यथार्थ धर्मज्ञान न होने के कारण धनोपार्जन तथा जीविका के लिये अन्यान्य उपायों का भी अवलम्बन करने लगगये।

यह बात मनुभगवान् के बाद की और पौराणिककाल और बौद्ध काल से पूर्व तथा बाद मुसल्मानों के समय तक की है। इस विषय को अनेक ग्रीक, पाली तथा जैन ऐतिहासिक ग्रन्थों के (क्योंकि हम लोगों का लिखा इतिहास उस समय का मिलता ही नहीं), एवं प्राचीन शिलालेखादि के आधार पर बहुत से अंग्रेज विद्वानों ने इस प्रकार लिखा है:—

जे. डबल्यू. मेक् क्रिण्डिल एम. ए. (J. W. Mc. Crindle M. A.) ने अपनी 'प्राचीन भारत' (Ancient India) नामक अंग्रेजी पुस्तक में मेगस्थनीज़ और एरियन Megasthenes and Arrian) नामक यूनानी (ग्रीक) यात्रियों के सन ईस्वी से लगभग ३०० वर्ष पूर्व के भारतीय जाति विवरण का अनुवाद १३६ पृष्ठ में इस प्रकार किया है:—

For among the more civilized Indian communities life is spent in great variety of separate occupations. Some till the soil; some are soldiers; some traders; the noblest and the richest take part in the direction of state affairs, administer justice, and sit in council with the kings. A fifth class devotes itself to the philosophy prevalent in the country, which almost assumes the form of a religion and the members always put an end to their lives by a voluntary death on a burning funeral pile.

इसका मर्मानुवाद यह है कि 'क्योंकि बहुत ही शिक्षित भारत वासी अपने जीवन को विविध प्रकार के भिन्न व्यापारों में बिताते हैं, कोई जमीन जोतते अर्थात् कृषि करते हैं, कोई सिपाही और व्यापारी (वाणिज्यकर्त्ता) होते हैं और जो सब से धनी और श्रेष्ठ हैं वे राज्य कार्य के सुधार में लगे रहते, न्याय करते और राजा के साथ राज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सभा में बैठते हैं। एक पांचवां दल है जो उन दर्शनों (धर्मशास्त्र और ज्योतिषादि) में संलग्न रहता है जो इस समय देश में प्रचलित हैं और धार्मिक कार्य का एक अंश माने जाते हैं। समाज के बहुत से लोग सर्वदा स्वच्छन्दता पूर्वक जलती चिता पर आरूढ़ हो कर प्राणान्त करते हैं'।

उसी पुस्तक के ८३ वें पृष्ठ में लिखा है कि:—

The philosophers are first in rank, but form the smallest class in point of number. Their services are employed privately by persons who wish to offer sacrifices or perform other sacred rites, and also publically by the kings at what is called the great Synod, where-in at the beginning of the new year all the philosophers are gathered together before the kings at the gates, when any philosopher, who may have committed any useful suggestion to writing or observed any means for improving the crops and cattle, of promoting the public interests, declares it publically.

इसका भाव यह है कि 'इस समय दार्शनिकों (मंत्र, तंत्र और ज्योतिषादि केज्ञाताओं) का दर्जा सब से ऊंचा है, परन्तु वे संख्यामें सब से कम हैं। उनका काम विशेष २ रूप से उन लोंगों के यहां पड़ता है, जो कुछ पूजा या धार्मिक कार्य करना चाहते हैं। एवं सर्व साधारण रूप से राजा के यहां भी उन धर्म सभाओं में उनका काम पड़ाकरता है जिन में वर्ष के प्रारम्भ में सभी दार्शनिक राजाके सामने राजद्वार पर एकत्रित किये जाते हैं। उस समय कोई भी दार्शनिक, जो लेख के लिये कोई उपयोगी बात सोचे होता, सर्व साधारण की कृषि या पशुओं की उन्नति का कोई साधन विचारे होता, अथवा किसी भी सर्व साधारण के हित को विचारे होता है, उसे सर्व साधारण के सन्मुख वर्णन करता है'। इस से स्पष्ट है कि सन ईसवी से ३०० वर्ष पूर्व केवल पुरोहिती आदि से जीविका करने वालों की संख्या बहुत ही कम थी और ब्राह्मणादि राज काज, कृषि, वाणिज्यादि में बहुत ही प्रवृत्त थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साथ ही, वेदादि का अभ्यास इतना कम हो रहा था कि पुरोहिती करने और मंत्र, तंत्रादि जाननेवालों को भी दार्शनिक कहा करते थे।

महाराज श्री काशिराज की जो वक्तृता सभापति के रूप में काशी में होनेवाली भूमिहार ब्राह्मण महासभा में यूनानी यात्री अरस्तू (Aristotle) या किसी अन्य और फाहियान (Fahian) नामक चीनी यात्री इन दोनों के लेखों के आधार पर सन १९०० ई० में हुई थी, वह भी इस सिद्धान्त को पुष्ट करती है। वह इस प्रकार है:-

In the year 331 B. C. Aristotle visited India in company of Alexandar the Great, and he wrote that, now the ideas about castes and professions, which have been prevalent in Hindustan for a very long time, are gradually dyiny out, and the Brahmans neglecting their education,... ... live by cultivating the land and acquiring the territorrial possessions, which is the duty of Kshatriyas. If things go on in this way, then instead of being (विद्यापति) i. e. master of learning, they will become (भूमिपति) i. e. master of land.

अर्थात 'सन् ईस्वी से ३३१ वर्ष पूर्व सिकन्दर बादशाह के साथ अरस्तू भी भारतवर्ष में आया था। उसने उस समय भारतवर्ष में घूम कर ऐसा लिखा है कि जो बन्धन जाति और उसके कर्म विषयक भारत वर्ष में बहुत दिनों से प्रचलित थे, वे अब धीरे२ ढीले होते जाते हैं और ब्राह्मण लोग विद्या विमुख हो पुरोहिती वृत्ति छोड़ कर कृषि और राज्यादि द्वारा अपना जीवन बिताते हैं जो क्षत्रियों के काम समझे जाते हैं। यदि यही दशा रही तो ये लोग विद्यापति होने के बदले भूमिपति हो जावेंगे'। इसी प्रकार:—

In the year 399 A. D. a Chinese traveller named Fahian come to India, and he wrote in his book of travels, after giving vivid description of Magadha that owing to the families of the Kshatriyas being almost extinct, great disorder has crept in. The

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Brahmans having given up asceticism ... ... are ruling here and there in the place of Kshatriyas, and are called 'Sang he Kang,' which has been translated by professor Hoffman as "Land seizer."

अर्थात् 'सन् ३९९ इस्वी में फाहियान नाम का जो चीनी यात्री भारतवर्ष में आया था, उसने अपने भ्रमण वृत्तान्त में मगध देश का वृत्तान्त वर्णन करते हुये लिखा है कि इस देश में क्षत्रिय वंशों के नष्टप्राय हो जाने से बहुत ही गड़ बड़ी मच गई है। ब्राह्मण लोग दान ग्रहण रूप अपना निजी कर्म छोड़ कर क्षत्रियों की जगह राज्य करते और 'सांग हे कांग' कहे जाते हैं। जिसका अनुवाद प्रोफेसर 'हाफमन' (Hoffman) ने भूमि छीनने वाला (land seizer) किया है'

इस से यह भी सिद्ध है कि कम से कम दो सहस्र वर्षों से तो अवश्य ही अयाचक ब्राह्मणों में बहुतेरों की संज्ञा भूमिपति या भूम्यधिकारी है। क्योंकि 'लैंड सीज़र' (land seizer) शब्द का अर्थ भूमि पर अधिकार जमा लेने वाला अर्थात् भूम्यधिकारी है, कारण, कि अधिकार जमाने या बलात् छीन लेने को ही अंग्रेजी में सीज़ (seize) कहते हैं। इस जगह पर लैंड सीज़र (land seizer) इस पद को देख झटपट उसका 'भूमिहार' ऐसा अर्थ करके किसी ने ऐसा अनुमान किया है कि अयाचक ब्राह्मणों की भूमिहार संज्ञा भी दो सहस्र वर्षों से कम की नहीं है। परन्तु यह बात उचित नहीं है। क्योंकि जिस मगध देश में ब्राह्मणों के लिये लैंड सीज़र (land seizer) शब्द आया है वहां आज तक भूमिहार शब्द का प्रयोग हुआ ही नहीं। किन्तु वहां तो ब्राह्मण मात्र के लिये ब्राह्मण, अथवा बाभन, या बाम्हन शब्द आया करता है। हां, अब कहीं २ भूमिहार ब्राह्मण महा सभा के प्रचार से उसका भी प्रयोग होने लगा है। परन्तु जिस वंगदेश में मगध है, उसी में, मगध में, या उसके आसपास के प्रान्तों में अधिकारी अथवा भूम्यधिकारी ब्राह्मण शब्द अयाचक ब्राह्मण जमींदारों के लिये आया करता है। इसी लिये जयपुर राज्यान्तर्गत फुलेरा स्थान से प्रकाशित 'जात्यन्वेषण' नामक ग्रन्थ के प्रथम भाग में अकारादि नामवाली जातियों में अधिकारी या भूम्यधिकारी ब्राह्मणों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का भी निरूपण आया है। इस विषय का विशेष निरूपण आगे करेंगे।

अस्तु, इसी प्रकार टी० डबल्यू० ह्विसडेविड्स, एल० एल० डी०, पी० एच० डी० (T. W. Rhys Davids L. L. D., Ph. D.) ने जो अंग्रेजी पुस्तक 'बौद्धकालिकभारत-राज्यवंश-इतिहास' (The Story of the nations, Buddhist India) नामक लिखी है, उसमें 'जातक' प्रभृति पाली तथा अन्य ग्रन्थों के आधार पर इस प्रकार लिखा है कि:- "The carpenters, smiths, and potters, for instance, had villages of their own. So had the Brahmins, whose services were in request at every domestic events. Khomadussa, for instance, was a Brahmin settlement." (Pages 20,21)

"The Angraja, in the Buddha's time, was simply a wealthy nobleman, and we only know of him as the grantor of a pension to a particular Brahmin." (Page 24)

"A very old text (Sa. B.XIII-7-15) apparently implies that a piece of ground was given as a sacrificial fee" (Page 47)

"Great importance was attached to these rights of postures and forestry. The priests claimed to be able, as one result of performing a particular sacrifice, to ensure that a widet ract of such land should be provided. (Sat. B. 13-3-7). And it is often made a special point, in describing the grant of a village to a priest, that it contained such commoneand." (Dialogue of Buddha. Page 48).

"It will have been seen, however, that the masses, the people, the villagers, occupied a social grade quite different from and for above, our village folk. They held it degradation, to which only dire misfortune would drive them, to work for hire. They were proud of

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

their standing, their family, and their village. And they were governed by headmen of their own class, and village, very probably selected from themselves, in accordance with their own customs and ideals." (Vinaya-Jatakas. Page 51).

"Then came the Brahmins, claiming descent from the sacrificing priests, and though the majority of them followed then other pursuits, they were equally with the nobles (Chattris), distinguished by high birth and clear complexion. People could and did change their vocations by adopting one or other of these low trades. Thus at Jat. 5. 290, a love lorn Kshatriya works successfully (without any dishonour or penalty) as a potter, basket-maker, reed-worker, garland-maker, and cook. Also at Jat.6.372, a Sethi works as a tailor and as a potter, and still retains the respect of his high born relations." (Page 57).

"The three upper classes had originally been one; for the nobles and priests were merely those members of the third class, the Vessas, who had raised themselves into a higher social rank. And though more difficult probably than it had been, it was still possible for analogous changes to take place. Poor men could become nobles, and both could become Brahmins."(55).

"That there was altogether a much freer possibility of change among the social rank than is usually suppossed is shown by the following instances of occupation:(1)A Kshatriya, a king's son, apprentices himself successively, in pursuance of a love affair, to a potter, a basket-maker, a floorist and, a cook, without a word being added as to loss of caste, when his action

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

becomes known. (Jat. II. 5. 290). (2) Another prin resigns his share in the kingdom in favour of his siste and turns trader-(Jat. 4. 84). (3) A third prin goes to live with a merchant and earns his living b his hands. (Jat. 4. 169). (4) A noble takes, for salary, as an archer (Jat. 2. 8). (5) A Brahmi takes to trade to make money to give away, (Jat.4.13 (6) Two other Brahmins live by trade without an such excuse. (Jat. 5. 22. 47.). (7) A Brahmin take the post of an assisstant to an archer, who had hi self been previously a weaver. (Jat. 5. 127). (8-9 Brahmins live as hunters and trappers. (Jat 2. 20 6.170). (10) A Brahmin is a wheel-wright. (Ja 4.207). Brahmins are also frequently mentioned engaged in agriculture and as hiring themselves o as cow-herds and even goat-herds. These are instances from the Jatakas." (Page 56).

इस पूर्वोक्त अंग्रेजी ग्रन्थका भाषानुवाद इस प्रकार है:-"जैसे बढ़ई, सोनार और कुम्हारों के गांव थे, वैसेही उन ब्राह्मणों को गांव मिले थे जिनकी आवश्यकता प्रत्येक गृह कार्य में होती थी दृष्टान्तार्थ खोमडुस्सा नामक एक ग्राम ब्राह्मणों की जमींदा थी (पृष्ठ २०, २१)। बुद्ध देव के समय में जो अंग देश का राजा उसके विषय में हमें इतनाही विदित है कि वह केवल एक धनाढ और प्रतिष्ठित पुरुष था और किसी विशेष ब्राह्मण को पेन्शन दे था (पृ० २४)। एक प्राचीन ग्रन्थ (शतपथ ब्राह्मण १३ । ७ । १ से यह स्पष्ट विदित होता है कि दक्षिणा में कुछ भूमि ब्राह्मणों को जाती थी " (पृष्ठ ४७)।

" चरागाह और जंगलों के अधिकार की ओर ब्राह्मणों का विशे ध्यान था। पुरोहित सर्वदा इस बात का दावा करते थे कि जि यज्ञादि कराने के बदले उन्हें ऐसी ही भूमि की प्राप्ति हो (शतप ब्राह्मण १३।३।७)। दानपत्र लिखने में इस विषय का विशेष ध्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहता था कि इसमें इस प्रकार के एकाध चरागाह या जंगल भी रहें। (बुद्धदेव के उपदेश पृ० ४८)। देखने से प्रतीत होता है कि उस समय के सामान्य ग्रामीण जनों की सामाजिक अवस्था आधुनिक ग्रामीणों की अवस्था से बिल्कुल ही मिलती जुलती न थी, प्रत्युत बहुत ही चढ़ी बढ़ी थी। यदि वे दुर्दैव वशात् वेतन (तनखाह) पर काम करते तो उससे अपनी हतभाग्यता और अप्रतिष्ठा समझते थे। उनको अपनी सामाजिक अवस्था, कुटुम्ब और ग्राम का बड़ा गर्व था। बहुधा उन का शासन वे ही स्ववर्गीय तथा स्वग्रामीण नेता करते थे, जिनको वे लोग अपनी परम्परा प्राप्त रीतियों और सिद्धान्तों के अनुसार अपने में से चुनते थे" (विनय जातक पृ० ५१)।

"ब्राह्मण लोग अपने को पुरोहितों के वंशज कहा करते थे। और यद्यपि उस समय अधिकांश में वे लोग अन्यान्य व्यवसाय किया करते थे, तथापि भद्र पुरुषों (क्षत्रियों) की भांति वे भी अपने उच्चवंश और गौरव के लिये प्रसिद्ध थे। लोग इन नीच व्यवसायों में से किसी को करलेते और फिर अपने व्यवसाय को बदल सकते और बदल लेते थे। जैसा कि 'जातक' ग्रन्थ के ५।२९० से विदित होता है कि एक स्त्री परित्यक्त क्षत्रिय निरन्तर (विना किसी मानहानि वा दण्ड का भागी हुये) कुम्हार, धरिकार, चाण्डाल, माली तथा रसोई दार का काम करता था। यहां तक कि 'जातक' ग्रन्थ के ६।३७२ से विदित है कि सेठी (श्रेष्ठी या श्रेष्ठ पुरुष अथवा सेठ) दर्जी और कुम्हार का काम करते हुये भी अपने को निज के उच्च श्रेणी वाले संबन्धियों की भांति गौरवान्वित ही समझते थे" (पृष्ठ ५७)

"पहले द्विजाति लोग एकही थे, कारण कि तृतीय अर्थात् वैश्य वर्ग में से वे ही क्षत्रिय और ब्राह्मण (पुरोहित) हो जाते थे जो अपनी सामाजिक अवस्था में उन्नति कर लेते थे। यद्यपि अब यह बात सम्भवतः प्रथम से कठिन हो गई थी, फिर भी ऐसे परिवर्त्तनों की सम्भावना रहा करती थी। निर्धन लोग क्षत्रिय और दोनों हीं ब्राह्मण हो सकते थे" (पृ० ५५)

(नोट)–यहां इस विषय को समझ लेना चाहिये कि 'सब द्विज एकही थे' इस कथन का तात्पर्य यह नहीं है कि वस्तुतः वे लोग एकही थे, किन्तु उनके व्यवसाय ऐसे मिले जुले थे और सभी का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदादिका अभ्यास ऐसा छूटा था कि सभी एक से ही प्रतीत होते थे अतः वास्तव में ब्राह्मणों में से ही जो कुछ थोड़ा बहुत पढ़ लेते थे, पुरोहित कहलाते थे और ऐसा प्रतीत होता था कि वे वैश्यों में से ही हुये हैं। इसी प्रकार जो वास्तव क्षत्रिय ही बलवान, प्रतिष्ठित और धनी हो जाता था वही क्षत्रिय प्रतीत होता था न कि दूसरे उसके जाति लोग। इसीलिये निर्धन से क्षत्रिय और ब्राह्मण होना लिखा है, न कि वास्तव में अन्य जाति अन्य हो सकती थी। इस कथन से इस बात की पुष्टि होती है कि उस समय ब्राह्मणता का चिन्ह केवल पुरोहिती या भिक्षावृत्ति न थी, किन्तु वे लोग पूर्ण धनवान और प्रतिष्ठित, एवं बलवान भी हुआ करते थे।

"निम्न लिखित व्यवसाय (व्यापार, काम) सम्बन्धी उदाहरण से प्रकट होता है कि उस समय सामाजिक दशा में परिवर्त्तन होने का अधिकांश सम्भावना थी"। उदाहरण ये हैं:—

(१) "कोई किसी के प्रेम में बँधा हुआ क्षत्रिय राजकुमार धरिका माली और रसोई दार का काम निरन्तर करता है, किन्तु उसका यह कर्म लोगों पर प्रकट हो जाने पर भी जातिच्युत होने का दोष उसपर लगाया नहीं जाता (जातक २।५।२९०)। (२) कोई राजकुमार राज पाट का अपना अंश अपनी भगिनी को देकर स्वयं वाणिज्य में प्रवृत्त हो जाता है (जातक ४।८४)। (३) कोई राजकुमार व्यापारियों के साथ रहता और अपने हाथों से कमाकर जीवन बिताता है (जातक ४।६९)। (४) कोई क्षत्रिय वेतन (तनखाह) पर तीर चलाता है (जातक २। ८)। (५) एक ब्राह्मण दान देने के लिये व्यापार (वाणिज्य) द्वारा धनोपार्जन करता है (जातक ४। १५)। (६) दो ब्राह्मण ऐसे मिलते जो बिना किसी विचार या शंका के व्यापार (वाणिज्य) द्वारा जीविका करते हैं (जातक) ५।२२।४७)। (७) एक ब्राह्मण, जो प्रथम कपड़ा बुनता था, किसी तीर चलाने वाले का सहायक बनता है (जातक ५। १२७)। (८, ९) ब्राह्मण लोग व्याधा और शिकारी (जाल फैलाने वाले) का काम करते हैं" (जातक २। २००, ६। १७०)।

(नोट)—इस दृष्टान्त से स्पष्ट है कि शास्त्राभ्यास की कमी से धार्मिक भाव बहुतही शिथिल हो रहा था जिससे ब्राह्मणादि अपने को ही न पहचान सकते थे। " (१०) कोई ब्राह्मण पहिया बनाने का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करता है (जा० ४।२०७)। ब्राह्मण लोग बहुधा कृषि करनेवाले पाये जाते हैं और वेतन पर अहीर और गड़ेरिये का काम भी करते हैं। ये सब उदाहरण जातक नामक पाली भाषा के ग्रन्थों से उद्धृत हैं।" (पृ० ५६)।

इस पूर्व कथन से यह बात स्पष्ट झलक रही है कि बौद्धकाल में ब्राह्मणों में वैदिक एवं स्मार्त्त भाव कैसा मन्द हो रहा था और शास्त्रीय ज्ञान से विमुख हो सभी लोग कैसे स्वेच्छाचारी हो रहे थे। साथही, ब्राह्मण लोग भी विशेष रूप से कृषि और वाणिज्य में हीं दत्तचित्त थे। यह दशा सनातनधर्म की केवल बौद्ध धर्म के प्रभावसे ही नहीं हुई थी, किन्तु 'आगमापायिनोऽनित्याः' अर्थात् सभी सांसारिक पदार्थ एक से रहने वाले नहीं हैं, इस प्रकृति के अटल नियमानुसार बौद्धधर्म के आगमन से पूर्व ही थी। जैसा कि हम कह चुके हैं कि सनातनधर्म ह्रासोन्मुख हो रहा था। इसी बात को पूर्वोक्त ही अंग्रेजी ग्रन्थ में इसप्रकार कहा है:—

And a fortiori–unless it be maintained that Buddhism brought about a great change in this respect–the state of things must have been even more lax at the time when Buddhism arose. (Page 56).

इस का भाव यह है कि 'पृष्ठ ५६ में लिखा है कि जब तक प्रबल प्रमाण से यह सिद्ध न हो जावे कि पूर्वोक्त विषयों में बौद्धधर्म ने बहुत बड़ा उलट फेर किया, यह बात अवश्य स्वीकार करनी होगी कि जिस समय बौद्धधर्म भारत में आया उस समय प्राचीन बातें बहुत ढीली पड़ रही थीं'। इसके बाद पूर्वोक्त ही ग्रन्थ के Brahmin Position अर्थात् 'ब्राह्मणों की स्थिति' नामक प्रकरण में २४६ वें पृष्ठ में ब्राह्मणों या पुरोहितों के विषय में विशेष रूप से सन् ईस्वी से ६०० वर्ष पूर्व की बात यों लिखी है:—

In any case there was no central organisation of the priest-hood;there were no permanent temples to their gods, and such sacred shrines as the people could frequent were the sacred trees or other objects of veneration belonging to the worship of the local gods and quite apart from the cultus or influence of the

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

priests. And the latter were divided against them selves. They vied with one another for sacrificial fees. The demand for their services was insufficient to maintain them all. Brahmins followed, therefore, all sorts of other occupations; and those of them not continually busied about the sacrifice were often inclined to views of life, and of religion, different from the views of those who were. We find Brahmins ranking tappas, self-torture, above sacrifice (Page 249).

इसका अर्थ यह है कि 'किसी दशा में भी पुरोहितों की कोई प्रधान संस्था न थी। उनके देवताओं के निमित्त कोई स्थायी मन्दिर न थे। ऐसे पवित्र देव स्थान, जहां पर लोग प्रायः जाया करते थे, या तो पवित्र वृक्ष थे' या स्थानीय देव पूजा सम्बन्धी पवित्र पदार्थ जो कि पुरोहितों के अन्ध विश्वास और प्रभावों से बिल्कुल अलग थे। पुरोहित लोगों में परस्पर विरुद्ध दल बन्दी थी और वे लोग दक्षिणा के लिये परस्पर एक दूसरे से स्पर्धा रखते थे। पुरोहितों की गणना इतनी कम थी कि पुरोहिती से सब की जीविका न हो सकती थी। इस लिये ब्राह्मण लोग सभी प्रकार के अन्य व्यवसाय (कृषि, वाणिज्यादि) करते थे। उनमें से जो निरन्तर ही पुरोहिती न करते थे अर्थात् अन्य उपायों द्वारा जीविका करते थे, उनके धार्मिक और आध्यात्मिक विचार प्रायः उन लोगों के विचारों से विपरीत थे, जो पुरोहिती में दिन रात लगे हुए थे। उस समय ऐसे भी ब्राह्मण पाये जाते थे जो पूजा पाठ की अपेक्षा तपस्या को श्रेष्ठ समझते थे'। इसके बाद ही लिखते हैं कि:—

Unable, therefore; to stay the progress of new ideas, the priests strove to turn the incoming tide into the channels favourable to their orders.

अर्थात् 'इन पूर्वोक्त नये विचारों की उन्नति रोकने में असमर्थ हो पुरोहित लोग इन नये विचारों को अपने समाज के अनुकूल परिवर्तित करने के यत्न करने लगे'। तात्पर्य यह है कि जिस किसी प्रकार से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्य विचार वाले पुरोहितों के फन्दे में आ फँसें उसी का यत्न करने लगे। पुरोहिती की प्रशंसा करने तथा अन्य व्यवसाय वाले ब्राह्मणादि वर्णों को किसी तरह नीच बनाने का यत्न करने लगे, जिससे वे लोग उन्हें मानने और पूजने लगें। यही कारण है कि सम्पूर्ण शास्त्र, पुराण निन्दित भी पुरोहिती आज श्रेष्ठ मानी जा रही है और जो उसका न करने वाला होवे वह ब्राह्मण हीं नहीं समझा जाता। क्योंकि यही समझने और समझाने लग गये थे और लग गये हैं कि दान लेना हीं ब्राह्मणता का चिन्ह है। यद्यपि इस विषय का सूत्रपात पूर्वोक्त लेखानुसार बौद्ध काल में हीं हुआ था, परन्तु आते २ यवन काल में उसकी पुष्टि होगई, जिसका निरूपण आगे करेंगे।

आनरेब्ल मौंट स्टुअर्ट एलफिन्स्टन साहब ने (Hon. Mount Stuart Elphinstone) भी अपने 'भारतवर्ष का इतिहास' (History of India) नामक अंग्रेजी ग्रन्थ में मनु भगवान के बाद से लेकर आज तक के परिवर्त्तनों का निरूपण इसी प्रकार ग्रीक तथा पाली आदि ग्रन्थों के आधार पर किया है। उन्हों ने अपनी पुस्तक के ५४, ५५ पृष्ठों में, मनु भगवान् के बाद से आजतक जो उलट फेर हमारे रस्म रिवाजों में हो गये हैं, उन का वर्णन करते हुये ब्राह्मणों के विषय में लिखा है कि:—

The Bramins themselves, although they have preserved their own lineage undisputed, have, in a great measure, departed from the rules and practices of their predecessors. In some particulars they are more than formerly, being denied the use of animal food, and restrained from inter-marriages with the inferior class; but in most respects their practice is greatly relaxed. The whole of the four-fold division of their life, with all the restraints imposed on students, hermits, and abstracted devotees, is now laid aside as regards the community; though individuals, at their choice, may still adopt some one of the modes of life which formerly were to be gone through in turn by all.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Bramins now enter into services, and are to be found in all trades and professions. The number of them supported by charity, according to the original system, is quite insignificant in proportion to the whole. It is common to see them as husbandmen, and, still more, as soldiers; and even of those trades which were expressly forbidden to them under severe penalties, they only scruple to exercise the most degraded, and in some places not even those. In the south of India however, their peculiar secular occupations are those connected with writing and public business. From the minister of state down to the village accountant the greater number of situations of this sort are in their hands, as in all interpretations of the Hindu Law, a large share of the ministry of religion, and many employments (such as farmers of the revenue &c.) where a knowledge of writing and business is required. In the parts of Hindostan where the Moghal system was fully introduced, the use of the Persian language has thrown public business into the hands of Mussulmans and Cayets (a caste of sudras). Even in the Nizam's territorries in the Deckan the same cause has in some degree diminished the employment of the Bramins, but still they must be admitted to have every where a more avowed share in the government than in the time of Menu'scode, when one Bramin counsellor, together with the judges, made the whole of their portion in the direct enjoyment of power.

It might be expected that this wordly turn of their pursuits would deprive the Bramins of some part of their religious influence; and accordingly, it is stated

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

by a very high authority (Prof. Wilson, Asiatic Researches) that (in the provinces on the Ganges, at least) they are nul as a hierarchy, and as literary body few and little countenanced. Even in the direction of consciences of families and of individuals they have there been supplanted by Gosayens and other monastic orders.

Yet even in Bengal they appear still to be the objects of veneration and of profuse liberality to the laity. The ministry of most temples, and the conduct of religious ceremonies, must still remain with them; and in some parts of India no diminution whatever can be perceived in their spiritual authority. Such is certainly the case in the Maratta country and would appear, to be so like-wise in the west of Hindostan. The temporal influence derived form their number, affluence, and rank su bsists in all parts; but even where the Bramins have retained their religious authority they have lost much ef their popularity.

इसका मर्मानुवाद यह है कि 'यद्यपि ब्राह्मण अपनी वंश परम्परा पर स्थित हैं, तथापि अपने पूर्वजों की अपेक्षा उनके आचार व्यवहारों में बहुत भिन्नता पाई जाती है। मांस न खाने और नीचों के साथ विवाह न करने में अपने पूर्वजों से बढ़ गये हैं, परन्तु बहुत सी बातों में प्रथम की अपेक्षा उनके आचार व्यवहार ढीले हो गये हैं। साधारणतः समाज भर में चारों आश्रमों और उनके नियमों का पालन नहीं होता। हां, कोई २ स्वेच्छानुसार किसी २ आश्रम का अनियमित रूप से पालन करता है, जिनका पालन पहले सभी क्रमशः करते थे। ब्राह्मण लोग अब नौकरी, एवं अन्य वाणिज्य, व्यापार करने वाले पाये जाते हैं। प्राचीन प्रथाके अनुसार दान द्वारा जीवन व्यतीत करनेवालों की संख्या अब बहुत कम हो गई है। साधारणतः कृषि और युद्ध विद्या वाले पाये जाते हैं, और वे लोग उन वस्तुओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का भी विक्रय करते हैं जिनका विक्रय प्रथम निषिद्ध और दण्डनीय समझा जाता था। कहीं २ वे लोग ऐसा करना घृणित समझते हैं और कहीं २ नहीं। दक्षिण भारत में उन लोगों के काम लिखने और जन साधारण के कार्य हैं। मंत्री पद से लेकर ग्राम कार्यकर्त्ता तक के पद बहुधा उन्हीं के हाथों में रहते हैं और जिनमें लिखने और व्यवहार की निपुणता अपेक्षित है ऐसे कर्य भी । जैसे धर्म शास्त्रों के अनुवाद, धार्मिक प्रबन्ध का अधिकांश और अन्य बहुत से व्यापार, जैसे मालगुजारी का उगाहना आदि। भारत वर्ष के उन भागों में जहां मुगल राज्य पूर्णतया स्थापित था, फारसी भाषा के प्रचार से जन साधारण का कार्य मुसल्मानों और कायस्थों (एक प्रकार से शूद्रों) के हाथों में डाल दिया है। इसी प्रकार निजाम सरकार के राज्य में भी इसी कारण ने ब्राह्मणों के इन व्यवसायों को घटा दिया है। तथापि मनु के समय की अपेक्षा उनको राज्य प्रबन्ध का अधिक भाग मिला है इस बात को मानना पड़ेगा। क्योंकि उस समय ब्राह्मण मंत्री न्याय कर्त्ताओं के सहित राज्य के सब अधिकार अपने आधीन रखते थे । इससे मालूम पड़ता है कि ब्राह्मणों की सांसारिक व्यवहार संबन्धिनी प्रवृत्ति ने उनकी धार्मिक प्रवृत्तियों से उन्हें रहित कर दिया है और इसके अनुसार, जैसा कि एक अत्यन्त माननीय लेखक (प्रोफेसर विलसन) ने (एशिया सम्बन्धी अन्वेषण नामक ग्रन्थ में) लिखा है कि (कम से कम गंगा के निकटवर्त्ती प्रदेशों में) पुरोहित के रूप में वे लोग नहीं हैं अर्थात् पुरोहिती नहीं करते, और विद्वान भी बहुत कम हैं। वंशों और व्यक्तियों को धार्मिक उपदेश उनकी जगह गोसाईं (साधु) लोग करते हैं। तथापि बंगाल में ये प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखे जाते हैं और गृहस्थ इन्हें दान देने में बहुत उदार होते हैं।

(नोट)–'इससे मालूम पड़ता है,' तथा विलसन की सम्मति आदि सभी कथन इन त्यागी, भूमिहारादि ब्राह्मणों को ही विशेष रूप से उद्देश्य कर के है, क्योंकि ठीक २ यही स्थिति इस समय इनकी और इससे कुछ दिन प्रथम भी थी।

'बहुत से मंदिरों तथा धर्म सम्बन्धी कार्यों के अधिकार इन्हीं के हाथ में अब तक हैं और भारत के बहुत से भागों में इनके धार्मिक अधिकार में कुछ भी कमी नहीं है। यही दशा महाराष्ट्र देश और भाग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के पश्चिमी भाग में भी है। भारत वर्ष के सभी भागों में इनकी संख्या, धन और सामाजिक अवस्था के कारण इनकी सांसारिक प्रतिष्ठा है। परन्तु जहां ब्राह्मणों का धार्मिक अधिकार जमा है वहां भी लोक प्रियता अधिकांश में चली गई है'।

(नोट)–ये सब बातें भी विशेष कर अयाचक ब्राह्मणों में हीं पाई जाती हैं।

इस पूर्व कथन से स्पष्ट है कि मनु भगवान के बाद से आज तक ब्राह्मणों की दशा में पृथ्वी आकाश का सा अन्तर हो गया है, सभी रीतियां दूसरी ही हो गई हैं और ब्राह्मणों में कृषि, वाणिज्यादि करने वाला एक अयाचक दल प्रबल हो गया है, जो आज भी स्पष्ट ही देखने में आ रहा है। जिसी दल के अन्तर्गत हमारे प्रकृत अयाचक दलके ब्राह्मण भी हैं।

इसके बाद विशेष रूप से मेगस्थनीज आदि ग्रीक (यूनानी) लेखकों के ही आधार पर सन ईस्वी से ३०० पूर्व की दशा का ऐसा ही वर्णन पूर्वोक्त ही पुस्तक के २३६, २३७ वें आदि पृष्ठों में इस प्रकार है :—

They suppose, as has been mentioned, that those who were the kings' councillors and judges formed a separate class. It is evident, also, that they classed the Bramins, who exercised civil and military functions, with the casts to whom those employments properly belonged.

They appear to have possessed separate villages as early as the time of Alexander; to have already assumed the military character on occasions ; and to have defended themselves with that fury and desperation which sometime still characterises. Hindus. Their interference in politics likewise, is exhibited by their instigating Sambus to fly from Alexander and Musicanus to break the peace he had concluded with that conqueror. Strabo mentions a sect called Pramnæ,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

who were remarkable for being disputious, and who derided the Bramins for their attention to physics and astronomy. He considers them as a separate class, but they were probably Bramins themselves, only attached to a particular school of Philosoply.

तात्पर्य यह है :—वे (यूनानी लेखक) ऐसा समझते थे, जैसा कि लोगों ने कहा है, कि जो राजाओं के मंत्री और न्याय कर्त्ता थे उनकी अलग जाति थी। लेकिन यह बात भी स्पष्ट है कि वे लोग (मंत्री आदि) उन ब्राह्मणों को जो न्याय और युद्ध कार्य किया करते थे उन जातियों में सम्मिलित करते थे जिनके वे समुचित धर्म समझे जाते थे। अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रियादि युद्ध वगैरः किया करते थे।

ब्राह्मणों के पास पृथक् २ ग्राम सिकन्दर के समय से ही थे और समय पर वे लोग युद्ध करते और उस साहस और वीरता के साथ शत्रुओं से अपनी रक्षा करते थे जो आज भी कभी २ हिन्दुओं की प्रशंसा करवाता है। राजनीति में भी उनके हाथ डालने का पता इसी से चलता है कि उन्हों ने सम्बुस को सिकन्दर और म्यूजिकेनस के यहां से इसलिये भाग जाने को दबाया कि जिस में सिकन्दर के साथ उस की सन्धि न हो सके। स्ट्रैबो (यूनानी यात्री) ने एक ऐसे दल का वर्णन किया है जो प्रामणी (प्रामाणिक या नैयायिक) कहलाता और अपने झगड़ालू (वादविवादासक्त) स्वभाव के लिये प्रसिद्ध था, और ज्योतिषी तथा वैद्यकादि शारीरक विज्ञान में आसक्त ब्राह्मणों की हँसी उड़ाया करता था। वह (स्ट्रैबो) उन की अलग जाति समझता था। परन्तु वे लोग ब्राह्मण हीं थे। हाँ, केवल भिन्न दर्शन (न्याय) के अभ्यासी थे'।

अंग्रेज लेखकों की अब तक दी गई इतनी सम्मतियों से यही बात निर्विवाद रूपसे सिद्ध होगई कि मनु भगवान के पश्चात् बौद्धकाल से लेकर यवन काल तक ब्राह्मणों के विचारादि पूर्व से बहुत अंशों में एकदम विपरीत होगये थे और उनका धार्मिक, शास्त्रीय तथा सामाजिक बन्धन ढीला होगया था। इसीलिये एक प्रकार की स्वच्छन्दता (उच्छृंखलता) पिशाची ने उन्हें ग्रस लिया था। साथ ही, स्वार्थ और परस्पर ईर्ष्या तथा राग द्वेष की मात्रा भी बढ़ती गई और पुरोहित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दल अपने प्रभाव को सभी दूसरे दल वालों पर जमाने के लिये दान लेने आदि के ही महत्त्वके स्वर को अलापने लगा और तदनुसार ही दान त्यागियों (अयाचकों) के दबाये जाने की चेष्टा की जाने लगी, इस को भी दिखला चुके हैं। इतना हीं नहीं, बल्कि उस राग द्वेष की मात्रा इतनी बढ़गई कि याचक (पुरोहित) दलवाले ही ब्राह्मण अपने २ प्रकर्ष के लिये परस्पर ही एक दूसरे को इतना दबाने लगे कि एक दूसरे को नीच बनाते २ यह भी कहने लगे कि हम हीं असल ब्राह्मण हैं। दूसरों का तो कुछ पता ही नहीं है, वे लोग तो बनावटी हैं इत्यादि। यह बात आजतक भी याचक ब्राह्मणों में सभी जगह घूमकर आखों देखी और कानों सुनी है।

यदि यह बात न होती तो आज सवा लक्खी (१२५०००) बनाये हुये ब्राह्मणों की किम्वदन्ती क्यों मैथिल, कान्यकुब्ज, दाक्षिणात्य और सर्यूपारीणादि सभी ब्राह्मणों में पाई जाती? क्या सभी जगह वस्तुतः ऐसी ही अन्धेर थी, यह संभावना भी हो सकती है? सभी ब्राह्मणों के विषय में ऐसी किम्वदन्तियां देखने या सुनने की जिन्हें इच्छा हो वे अंग्रेजों के लिखे हुये सभी देशके ब्राह्मणों के इतिहासों को पढ़ लेवें। क्योंकि वे लोग इस देश के हैं नहीं, कि अपने आप भी बना लेंगे, किन्तु लोगों से जैसा सुना वैसाही लिख दिया और उसी आधार पर अपने इस सिद्धान्त को पुष्ट करने लगे कि हिन्दुओं में भी प्रथम जाति विभाग न था इत्यादि। क्या ही आश्चर्य है कि जरासन्ध वाली जो किम्वदन्ती आजकल इन अयाचक (भूमिहारादि) ब्राह्मणों के विषय में रची गई है और जिसका विशेष रूप से खण्डन द्वितीय परिच्छेद में करेंगे, वही राजा सेवई सिंह के नाम पर मैथिलों में, शालिवाहन या किसी अन्य के नाम पर सर्यूपारियों में आदि आदि, सर्वत्र ही अविकल रूप से प्रचलित है! क्या यह याचक ब्राह्मणों के पूर्वोक्त प्रचण्ड राग द्वेष और ईर्ष्या को पुष्ट नहीं कर रही है? इससे आज १० या २० वर्षों से इन अयाचक (भूमिहारादि) ब्राह्मणों के इतर ब्राह्मणों द्वारा वे तरह दबाये जाने का कारण पाठक अवश्य ही समझ गये होंगे।

क्या कारण है कि २० या २५ वर्षों से पूर्व प्रायः जिन अंग्रेजोंने जातीय इतिहास या मनुष्य गणना की रिपोर्ट लिखी है, उन्होंने इन त्यागी,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पश्चिमा, भूमिहारादि ब्राह्मणों को साफ २ कान्यकुब्जों, मैथिलों, गौड़ या अन्य प्रतिष्ठित ब्राह्मणों हीं की श्रेणी में रक्खा है, जैसा कि आगे विदित होगा, और इनके विषय में इधर प्रचलित किम्वदन्तियों का नाम भी न लिया है, चाहे अन्य ब्राह्मणों के विषय में कहीं कहीं पर कुछ ऐसी किम्वदन्तियां आ भी गई हैं ? परन्तु जिस तिथि से भूमिहार या त्यागी ब्राह्मण सभा का जन्म हुआ उसी दिन से हवा ही पलट गई, किम्वदन्तियों की झड़ लगगई और कहीं कहीं इधर के विदेशी एवं स्वदेशी लेखकों की लेखनी भी विपरीत दिशा में चलने लगी और याचक (पुरोहित) ब्राह्मणों द्वारा बहुतसी मिथ्या उपन्यास सदृश पुस्तकें इनके विपरीत धड़ाधड़ लिखी जाने और प्रकाशित होने लगीं। जैसी पुस्तकों के २०वर्ष पूर्व नाम भी न थे। क्या यह वही बात नहीं है जैसा कि पूर्व में 'ह्विसडेविड्स' (Rhys-Davids) के लेखों से दिखा चुके हैं कि पुरोहित लोग इन नये विचारों को पसन्द न कर उन सबको अपने अनुकूल बनाने के लिये बहुत से यत्न और कल्पनायें करने लगे।

अस्तु, इस प्रकार जब शास्त्राभ्यास लुप्त प्राय होकर स्वच्छन्द और कृषि, वाणिज्य, एवं राज्य तथा भूमिप्रियता ब्राह्मणों में बेतरह गई और प्रतिग्रहादि की प्रशंसा और उसी के ब्राह्मणता के चिह्न होने की तान कहीं २ सुनाने लगी, तो, जैसा कि भूमिका में हीं कह चुके हैं कि, जो अयाचक ब्राह्मण बड़े २ जमींदार और राजे महाराजे थे, बहुत दिनों बाद उनकी क्रमशः यह धारणा होने लगी कि प्रतिग्रह विशेष रूप से ब्राह्मणता का चिन्ह है। अतः प्रतिग्राही ही माननीय ब्राह्मण हैं। हमलोग भी यद्यपि ब्राह्मणहीं हैं तथापि ब्राह्मणानुचित कर्म राज्य एवं कृष्यादि करने से हमारी स्थिति वैसी नहीं रह गई। अतः हम में पूज्यता भी नहीं रह गई। इस भ्रम में उनका बड़ा भारी सहकारी शास्त्रों का अज्ञान था जिससे वे स्वयं पवित्र, एवं पूज्य ब्राह्मण शब्द के शुद्ध अर्थ को समझ नहीं सकते थे, किन्तु जो कोई उन्हें जैसा समझा देता था वैसा समझ लेते थे। विशेष कर गुरु तथा पुरोहितों के वचनोंपर उनका पूर्ण विश्वास था और वे लोग अपने अर्थ की सिद्धि के लिये ऐसाही करते थे। यहां तक कि उनके दिन रात के इस आन्दोलन से प्रजा में भी यही भाव भर रहा था, क्योंकि वे लोग ही उपदेष्टा थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यद्यपि पुरोहित लोग भी शास्त्राभ्यासी न होने के कारण और स्वार्थ वश ही ऐसा करते थे। तथापि उनमें अपनी पवित्र (पूज्य) ब्राह्मणता के अभिमान के बने रहने में एक तो उनकी वही धारणा कारण थी और दूसरे पुरोहिती के कारण कुछ न कुछ शास्त्रों का सम्पर्क उनके साथ रह गया था। अतः उनका वह अभिमान बना रह गया। परन्तु जो उनके दल से बाहर अयाचक ब्राह्मण थे, उनको अपनी पूज्य ब्राह्मणता का अभिमान निरवलम्ब होने से क्रमशः जाता रहा। इसी प्रकार होते २ यवन (मुसलमान) राज्य काल आ गया, और शास्त्रों का कौन कहे संस्कृत विद्या का भी अभाव सा हो गया। प्रत्युत उसकी विरोधिनी फारसी भाषा का साम्राज्य होने लगा। जिससे राजकार्य में विशेष संबन्ध रखने वाले ब्राह्मण विशेष रूपसे फारसी के प्रेमी हो गये, जो बात आज तक भी विशेषतः इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों और पश्चिम भारत के भी प्रायः सभी ब्राह्मणों में पाई जाती है। क्योंकि वे लोग भी बड़े २ जमींदार होने से यवनों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते थे। इसी लिये उनमें और इनमें भी यवनों के बहुत से धर्म आगये। जैसा कि फारसी का पढ़ना, तम्बाकू पीना और प्रणाम, नमस्कार की जगह सलाम करना इत्यादि। क्योंकि 'राजानमनुवर्त्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा,' 'संसर्गजादोषगुणाभवन्ति,' अर्थात् 'प्रजा राजा की अनुसारिणी होती है और जिसका विशेष संग किया जावे, उसके गुण और दोष अपने में आजाया करते हैं,' इस नियम को सभी लोग मानते हैं। इसीलिये आज जिन मिथिलादि देशों में पूर्ववत् संस्कृत के ही विद्वान् होने चाहियें, वहां आज जिस ओर देखिये अंग्रेजी का ही साम्राज्य है। इस बात को भूमिका में हीं विस्पष्ट रूप से दिखला चुके हैं और यह भी वहीं लिख चुके हैं कि प्रायः इस देश के पुरोहित दल वाले ब्राह्मणों में फारसी का विशेष रूप से प्रचार न होकर क्यों कहीं २ संस्कृत का प्रचार रह गया। क्योंकि जैसा कि आजकल जो ही अंग्रेजी पढ़े उसी की अंग्रेजी राज्य में प्रतिष्ठा होती है, इसलिये सभी अंग्रेजी पढ़ते हैं, वैसी बात प्रथम न थी। किन्तु जो लोग बड़े २ जमींदार और राजे महाराजें थे उन्हीं की प्रतिष्ठा फारसी पढ़ कर भी होती थी। इसीलिये लाचार होकर और अपनी पुरोहिती को स्थित रखने के लिये भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुरोहित ब्राह्मण संस्कृत में हीं थोड़ा बहुत लगे रहते थे ।

इस प्रकार जब प्रथम हीं अयाचक भूमिपति ब्राह्मण राजाओं महाराजाओं के प्रसंग वश पूछने पर कि 'हम लोग कैसे ब्राह्म कहे जा सकते हैं?, गुरु या पुरोहित यह कह दिया करते थे कि धा वतार! आप तो ब्राह्मण क्या राजा बाबू हैं और हमलोग भिक्षु हैं तो इसे सुन वे लोग फूलकर कुप्पा होजाया करते थे । जब य राज्यकाल में पूर्वोक्त दशा होगई, तो प्रसंगवश बहुधा उन्हीं गुरु तथा पुरोहितों के बारबार कहने, अपनी स्थिति के भी वैसा होने और फारसी के प्रचार से भी जिन ब्राह्मणों में प्रथम अ चक शब्द का प्रयोग होता था और पीछे भूमिपति या भूम्यधिका ब्राह्मण शब्द का । अब उन्हीं के लिये जमींदार ब्राह्मण शब्द का प्रयो होने लगा । जो आजतक प्रयागादि प्रान्तों में इन अयाचक दलवा ब्राह्मणों और अन्य मैथिल तथा कान्य कुब्जादि ब्राह्मणों में भी कहीं पाया जाता है, जैसा कि भूमिका में दिखला चुके हैं। इस के थोड़े दिन बाद जब शास्त्रानभिज्ञता पिशाची जमींदार ब्राह्मणों पर और सव हो गई और उन की यह धारणा होने लगी कि प्रतिग्रह लेने और पु हितो करने वालों को ही ब्राह्मण कहते हैं, जैसा कि जमींदार ब्राह्म से अन्य ब्राह्मणों में सभी जगह वे देखते थे, तो निश्चय कर लि कि ब्राह्मण जाति तो भिक्षु हुआ करती है । परन्तु हम लोग धनाढ्य और जमींदार हैं । क्या हमलोग दूसरों के घर दान लेने ज हैं कि अपने को ब्राह्मण कहें? इसलिये हम लोग जमींदार हैं। बसह समय से केवल जमींदार शब्द का प्रयोग अयाचक ब्राह्मणों में ह लगा । जो आज तक इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों में बहुत ज केवल स्वतंत्र रूप से और बहुत जगह भूमिहार, बाभन, पश्चिमा, ब्राह्म बाम्हन, तगा या त्यागी शब्दों के साथ प्रचलित है। इसलिये ल कभी उसका और अन्य शब्दों का भी कभी २ प्रयोग किया करते हैं

इसी जगह यह बात भी स्मरण रखने योग्य है कि, यद्यपि अया ब्राह्मणों की संज्ञा प्रभृति में बहुत सा उलट फेर हो गया, तथापि सा या परम्परा से अयाचक और याचक ब्राह्मणों के विवाह सं और खान पान आदि बहुत जगह मिले हुये थे । हां, कहीं २ ढीले पड़ थे । परन्तु एक दम छूट न गये थे और न आज तक छूट गये हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसीलिये पश्चिम के अम्बाला, प्रयागादि प्रान्तों और पूर्व में मिथिला प्रान्त में अब तक बहुत जगह खान पान तथा विवाह सम्बन्ध परस्पर प्रचलित हैं, जैसा कि आगे मालूम होगा। इन सब व्यवहारों के बने रहने में कारण यह था, कि यद्यपि इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों के एक पृथक् दल के बनने का सूत्रपात अभी हो रहा था–सभी ब्राह्मणों में से, चाहे वे गौड़देशीय, पञ्जाबी, कान्यकुब्ज देशीय अथवा मिथिला देशीय हों, जो अयाचक थे और जिनके पास बड़ी २ भूसम्पत्ति या प्रतिष्ठा थी, उनका एक पृथक् दल भविष्य में बन जावेगा ऐसे चिन्ह प्रतीत हो रहे थे–तथापि ऐसे सभी अयाचक ब्राह्मणों को ब्राह्मण शब्द से घृणा नहीं हो रही थी और न आजतक हुई ही है। किन्तु जहां प्रचण्ड अविद्या, या राज्य एवं भूमि मद था, वहीं पर कहीं २ इसके लक्षण दिखलाई देते थे। जैसा कि काशी के आसपास के ५, ७ या १० जिलों में अब तक प्रायः पाया जाता है। परन्तु इससे पूर्व और पश्चिम दोनों तरफ बराबर अयाचक, जमींदार, त्यागी महियाल, भूमिहार या पश्चिमा शब्द के साथ अथवा केवल ही ब्राह्मण या बाभन शब्द का प्रयोग किया जाता है। क्योंकि मिथिला (तिर्हुत) में पश्चिमा ब्राह्मण, प्रयागादि में जमींदार ब्राह्मण, मगध में केवल ब्राह्मण या बाभन, मेरठप्रभृतिमें त्यागी और झेलम आदि जिलों में महियाल शब्द अब तक पाया जाता है, जो इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों के लिये आता है।

इन प्रान्तों में ब्राह्मण शब्द से घृणा न होने, या उसके प्रयोग बने रहने में बड़े भारी सहकारी वही पुरोहित दलवाले ब्राह्मणों के साथ साक्षात् या परम्परया विवाह सम्बन्ध और खानपान समझे जाने चाहियें और अन्य किसी भी याचक ब्राह्मण या दूसरी जातियों के विषय में आज कल ऐसी शंका न हो कर कहीं २ इस अयाचक नामधारी ब्राह्मण जाति के विषय में जो यह उत्तम, मध्यमादि की शंका उत्पन्न होने लग गई है, उसमें भी यही कारण है कि बहुत जगह इस समाज के लोगों ने अपने को ब्राह्मण कहने से घृणा कर उस शब्द का प्रयोग उठा दिया है। परन्तु फिर भी साक्षात् या परम्परया अन्य ब्राह्मणों के साथ विवाहादि पाये जाते हैं। और साथ ही लोगों की यह भी मिथ्या धारणा होगई है कि दान लेने वाले कोही ब्राह्मण कहते हैं और कृष्यादि ब्राह्मणों के धर्म नहीं हैं। यदि हैं भी तो दान के साथ ही इत्यादि। ये ही दोनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार की बातें आजकल की समस्त कुशंकाओं और कुकल्पनाओं से जड़े हैं। ऐसी बात किसी भी समाज में नहीं पाई जाती कि उसके जिस जाति का वाचक शब्द कहीं न हो उसके साथ भी खान पान और विवाह सम्बन्ध होवें, और यदि ऐसी बात कहीं है, तो उसके विषय में शंका भी अवश्य है या होगी।

कहीं २ केवल जमींदार, भूमिहार, त्यागी (तगा), महियाल या बाभन अथवा ब्राह्मणादि शब्दों के प्रयोग करने का एक यह भी कारण समझ लेना चाहिये कि, 'नामैकदेशेन नामग्रहणम्' अर्थात् 'समस्त यौगिक नाम की जगह उसी अर्थ में उसके एक अंश का प्रयोग भी होता है,' ऐसा व्याकरण महाभाष्य में बहुत जगह लिखा है। जिसका दृष्टान्त यह है कि 'भीमसेन' की जगह 'भीम,' भीष्मपितामह की जगह 'भीष्म' सत्यभामा की जगह 'सत्या' अथवा 'भामा,' राम चरित्र की जगह 'चरित्र' इत्यादि। परन्तु इससे कोई यह नहीं कह सकता कि भीम का नाम वास्तव में भीमसेन नहीं है, या चरित्र का रामचरित्र। इसी बात को महर्षि कात्यायन ने भी व्याकरण वार्त्तिक में कहा है कि 'विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तरयोः पदयोर्लोपो वक्तव्यः'। अर्थात् यौगिक नामों के पूर्व अथवा उत्तर भागों का यों हीं लोप होकर केवल एक भागका ही प्रयोग हुआ करता है। इन्हीं सब रीतियों के अनुसार भी लोगों ने कहीं केवल त्यागी (तगा) या भूमिहार और कहीं केवल बाभन या ब्राह्मण शब्द का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया, परन्तु उनके व्यवहार पूर्ववत् ही रहगये।

जब कुछ दिन बाद लोग भ्रम वश ऐसा समझने लगे कि वास्तव नाम उतने हीं बड़े हैं, तो भूमिहार या त्यागी ब्राह्मण महासभा, या अन्य उपदेशकों ने उन्हें सिर्फ चिता भर दिया। परन्तु उनकी इस अज्ञान निद्रा के खुलने और नूतन दृष्टि के फिर हो जाने से स्वार्थान्ध और अकारण विद्वेषी रूप चोरों के लूटने में बाधा उपस्थित होने की सम्भावना होने लगी, कि ऐसा न हो कि कभी गुरुआई और पुरोहिती से हाथ धोना पड़ जाय। क्योंकि उनकी दशा तो ठीक ऐसी ही है जैसा कि तुलसीदासजी ने कहा है कि:—

सूख हाड़ ले भाग शठ, श्वान निरखि मृगराज।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छीनि लेइ जिमि जानि जड़, तिमिसुरपतिहिंनलाज ॥

और यदि ऐसा कदाचित् हो गया तो हमारी अथवा हमारे वंशजों की बड़ी भारी आमदनी मारी जावेगी। इसलिये 'अग्रशोची सदासुखी' इस नियम के अनुसार वे लोग, जैसा कि बौद्ध काल में 'ह्विस डेविड्स' के वचन दिखला चुके हैं, आजकल भी इनके विषय में धड़ाधड़ कल्पित पुस्तकें रचने और प्रकाशित करने लगे और अपनी या अपने अयोग्य पुरोहित भाइयों की सेवा ही इन लोगों का मुख्य कर्त्तव्य बतलाने लगे। परन्तु दुर्बुद्धि वश यह नहीं विचार सके, विचार सकते या विचारते, कि जो समाज अनुचित रीति से बहुत दबाया जाता है वह अन्त में उतनाहीं शीघ्र नल के जल की तरह ऊंचा उठ खड़ा होता है जितना हीं दबाया गया है और उस दबाव को कुछ नहीं समझता। और यह भी नहीं विचारते कि इन लोगों ने जब प्रथम से ही इस प्रतिग्रहादि को तुच्छ और गर्हित समझ उसे त्याग कर स्वात्मावलम्बन किया है तो उस तुच्छ कार्य में क्योंकर प्रवृत्त हो सकते हैं ? परन्तु यदि ऐसी ही दुर्बुद्धि और ऐसा ही दुराग्रह रहा और बारम्बार इतने पर भी यही रटना बना रहा कि बिना पुरोहिती करवाने के ब्राह्मण कहलाता ही नहीं, तो वह दिन दूर न होगा जब कि इन दान त्यागी, पश्चिमा, जमींदार, भूमिहार, महियाल ब्राह्मणों को भी हारकर यज्ञादि करवा लेना हीं पड़ेगा। क्योंकि अयाचकता या याचकता किसी विप्र समाज या जातिका धर्म न होकर व्यक्ति का धर्म है। जो आज अयाचक है कल वह चाहे तो याचक हो सकता है और याचक अयाचक। यद्यपि इस समय याचक और अयाचक दल हो गये हैं। पर, शास्त्र दृष्टि से ऐसा दल हो नहीं सकता। नहीं तो फिर अयाचक ब्राह्मण दल और क्षत्रियादि में व्यवहार में भेद ही क्या रह जायगा ? इसके सिवाय श्रीतुलसीदासजी की उक्ति है कि:—

यद्यपि जगत दुसह दुख नाना।
सब से कठिन जाति अपमाना ॥

इसलिये यद्यपि ये लोग भरसक प्रतिग्रह तो न लेंगे, किन्तु उसद्रव्य को विद्यालय और धर्मशाला इत्यादि में लगवा देंगे, तथापि इनमें बहुतेरे विद्वान लोग यज्ञ करवाकर दक्षिणा ले लेंगे, क्योंकि वह तो एक प्रकार की मजदूरी (वेतन) है। जैसा कि प्रथम दिखला चुके हैं और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्यत्र भी तंत्ररत्न नामक मीमांसा ग्रन्थ में श्री पार्थसारथि मिश्र ने मीमांसा दर्शन के दशमाध्याय के तृतीय पाद में लिखा है कि,

दक्षिणाशब्दोऽयं यद्भृतित्वेन दीयते तस्यैव वक्ता

अर्थात्, 'दक्षिणा शब्द यज्ञ कराने के बदले जो भृति (वेतन मजदूरी) दीजाती है केवल उसी का वाचक है'। और शास्त्रोक्त मजदू लेने में समयानुसार कोई भी हानि नहीं है, क्योंकि आजकल स लोगों ने पैसे पर काम कर देना परम धर्म मान रक्खा है। प्रत्यु ऐसा करने से ही जातिरक्षा हो सकेगी, संस्कृतका प्रचार हो और बहुतसी त्रुटियों और कठिनाइयों से बच जाना हो जिनका अनुभव प्रतिदिन विचारशील गृहस्थ किया करते हैं। इ लिये अब मेरी यही प्रार्थना है कि चाहे याचक (पुरोहित) अथ अयाचक दलवाले ब्राह्मण दोनों में से कोई भी होवे, उसे स्म्भाल और विचार कर काम करना चाहिये, जिसमें भविष्य पश्चात्ताप करना न पड़े।

अस्तु, यहां एक बात और ध्यान देने योग्य है कि जिस समय विचार हम अभी कर रहे हैं, वह ऐसा था कि जब केवल ब्राह्मण, क्षत्रि यादि संज्ञाओं के सिवाय ब्राह्मणों की जो अवान्तर (बीच की) संज्ञा हैं, जैसे कान्यकुब्ज, गौड़, अवस्थी, वाजपेयी, राय, सिंह आदि क्षत्रियादि की राठौर, चौहान प्रभृति। उनका या तो अभी तक प्रा प्रचार ही नहीं हुआ था, या यदि किसी २ का हुआ, या हो रहा तोभी लोगों का उस तरफ विशेष ध्यान न था। यद्यपि प्राचीन ग्रं या लोगों में केवल 'भट्ट' या 'मिश्र' पदवी पाई जाती है, जैसे भट्ट मण्डनमिश्र, वाचस्पति मिश्र, तथापि ये विशेषण उन लोगोंकी प्र लभता या प्रतिष्ठा के सूचक हैं। जैसे कि गोमतल्लिकादि शब्दों 'मतल्लिका' विशेषण प्रभृति, और जैसे कि पितृचरण, पितृपादा पाद, या चरण शब्द। इसी लिये वार्त्तिककार कुमारिल स्वामी व को कभी कभी ग्रन्थकार लोग, वार्त्तिककारमिश्र' ऐसा लिखाकरते जैसे 'यथाहुर्वार्त्तिककार मिश्राः' अथवा 'वार्त्तिककारपादाः'। इ प्रकार मण्डनमिश्रादि का भी 'मिश्र' विशेषण है। इसीलिये दो को छोड़ अन्यत्र ये मिलते ही नहीं। अतः ऐसे अर्थ में भी मिश्र शब्द उस समय विशेष प्रचलित न थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि अभी तक प्रत्येक वर्णों में न तो इतने छोटे २ और परस्पर विलक्षण दल ही बन गये थे, जैसे कि आजकल पाये जाते हैं और न संज्ञाओं तथा पदवियों की इतनी गिनती या प्रतिष्ठा ही थी, जैसी कि आजकल या इससे कुछ पूर्व थी। उस समय तो सभी ब्राह्मणों का व्यवहार परस्पर मिला हुआ था। एवं क्षत्रियादि का भी। इसीलिये यद्यपि इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों को जमींदारादि संज्ञायें प्रचलित भी हुईं, तथापि उनका इतना प्रबल प्रचार उस समय न हुआ, जितना आज है। क्योंकि अभी तक चाहे जो कुछ परिवर्त्तन हुआ था, परन्तु ये लोग हर प्रकार से सभी ब्राह्मणों में मिले भी थे। लेकिन उसके बाद ही एक ऐसा समय आया जिसको लगभग ६, ७ या ८ सौ वर्षों से अधिक न हुये होंगे, जब कि विशेष कर ब्राह्मणों में अथवा अन्य सभी जातियों में भी बहुत से अवान्तर (छोटे २) दल तैयार होगये, या होने लग गये, जिनका परस्पर खान पान आदि व्यवहार भी ढीला होने लगा और जिनमें बहुत सी उपाधियां (पदवियां) नई २ चल पड़ीं, जिनका प्रथम नाम भी न सुना गया था। उन छोटे २ दलों के अलग २ नाम भी पड़ने लगे या पड़ गये। अथवा जो पूर्वके भी नाम थे, या पदवियां थीं उन सभी का प्रबल प्रचार हो उठा, क्योंकि समय सब की प्रतिष्ठा कभी न कभी करा ही देता है। आचार विचारों में बहुत से भेद पड़ गये। आज जो कहीं था, वही कल कहीं अन्यत्र जा बसा। जिससे बहुत दिनों बाद उस के इतिहास का भी पता लगाना कठिन होगया। धार्मिक उपद्रव बहुत उठने लगे, जिस से व्यवहारों में अधिक कट्टरता दिखलाने की आवश्यकता पड़ी और धर्म रक्षार्थ ब्राह्मणादि समाजों के छोटे २ दल बनाने हीं पड़े। क्योंकि बड़े की सर्वात्मना रक्षा का होना असम्भव होजाता है। 'जिस की लाठी उस की भैंस' वाली कहानी की आलाप प्रकृति में गूंज रही थी। साथ ही, प्राचीन आध्यात्मिक विचार और धर्म की वास्तव कट्टरता ढीली हो रही थी, क्योंकि शास्त्राभ्यास बिल्कुल छूट रहा था। इसलिये ब्राह्मणादि सभी वर्णों को जमींदारी, प्रतिष्ठा, आधिपत्य और मार काट की विशेष सूझी, और उन सब बातों ने उन के रूप, स्थिति और अभिमान में एक विशेष परिवर्त्तन कर दिया।

इस सब कथन का तात्पर्य यह है कि जब यवनों (मुसलमानों)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का राज्य कुछ दिन बीत गया और उन की जड़ यहां अच्छी तरह ज
गई, या जमने लगी, तो उन्हों ने दूरतक अपने राज्य के विस्तार त
प्रबन्ध के लिये बड़े २ वीरों और प्रबन्ध कुशलों, एवं रईसों का सन्मा
तथा अपनी सेना में और राज्यान्तर्गत विविध पदों का स्थापित क
और साथ ही उत्साहित एवं अपनी ओर आकर्षित करने के लिये सि
खां, राय, चौधुरी, दीवान और बाबू इत्यादि पदवियों का प्रदान क
ना प्रारम्भ करदिया। जिस से उनकी प्रतिष्ठा बढ़ने लगी और उ
देख उन के लिये दूसरे योग्य लोग भी लालायित हो यत्न करने औ
प्राप्त करने लगे।

बस अब क्या था, जितने वीर लोग थे, चाहे ब्राह्मण हों
क्षत्रियादि, उनकी सिंह और खां इत्यादि पदवियां होने लगी
जो आजकल प्रायः सभी ब्राह्मणों में पाई जाती हैं, और जिन
आगे चलकर दिखलावेंगे। और वे लोग उसी में अपने को कृ
कृत्य मानने लगे। बल्कि जिसको वे उस समय न मिलीं वह अ
को महा अभागी समझता था। इसी प्रकार जो लोग रईस या प्र
न्धकर्त्ता वगैरः थे उन्हें राय, चौधुरी और शाह इत्यादि पदवि
मिलीं और इसी नूतन पदवी रूप भादों के महाजल प्रवाह में प्राचीं
शर्मा, वर्मा, तथा ऋषि प्रभृति पदवी रूप कितने हीं ग्रामादि बह
जगह से साफ ही हो गये, जिनका आज तक पता ही न लगा
इधर जब नवीन पदवियों की प्रतिष्ठा राज दर्बारों में होने लगी
'राजानमनुवर्त्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा' इस पूर्वोक्त नियमानुस
विशेष कर ब्राह्मणादि रूप प्रजाओं में भी नई पदवियों की
समा गई। क्योंकि उस समय की प्रकृति में यही भाव गूंज रहा
जिससे लोगों को विवश होना पड़ा। बस जैसे उधर कामों के क
से ही राय, सिंहादि उपाधियां मिलती थीं और प्राचीन काल में

उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः।
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते ॥ १४० ॥
एकदेशं तु वेदस्य वेदांगान्यपि वा पुनः।
योऽध्यापयति वृत्त्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते ॥ १४१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि।
संभावयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते ॥१४२॥म.अ.२॥

अर्थात् 'जो ब्राह्मण शिष्य का उपनयन संस्कार करके उसे यज्ञविद्या और उपनिषदों के सहित वेदों को पढ़ाता है उसे आचार्य कहते हैं। जो अपनी जीविका के लिये शिष्य को वेद का केवल मंत्र या ब्राह्मण भाग ही, अथवा व्याकरणादिअंगों को ही पढ़ाता है, उसे उपाध्याय कहते हैं। जो ब्राह्मणरूप पिता पुत्र का गर्भाधानादि संस्कार करता और उत्पन्न होने पर उसे अन्न वस्त्रादि द्वारा पालता है, उसको ही गुरु कहते हैं, न कि कान फूंकने वाले वञ्चक को भी'। इत्यादि व्यवहार था। जिससे काम करने से ही आचार्य, गुरु प्रभृति संज्ञायें हुआ करती थीं। वैसेही जो अच्छा विवेकी हुआ उसे पाण्डेय[1] कहने लगे, चारों वेदों के ज्ञाता को चतुर्वेदी, तीन के ज्ञाता को त्रिवेदी और दो के जानने से और पढ़ाने एवं पढ़नेसे द्विवेदी एवं थोड़ा २ सभी में से जानने और पढ़ाने वाले को मिश्र, वाजपेय यज्ञ करने वाले को वाजपेयी, अग्निष्टोमादि करने वाले को आवसथ्यी, जो विगड़ कर अवस्थी होगया। क्योंकि अग्निष्टोम के पांचवें (अन्तिम) दिन का नाम आवसथ्य दिन है। इसी प्रकार जो अन्य छोटे मोटे यज्ञ करता था उसे दीक्षित कहते थे। क्योंकि यज्ञारम्भ से प्रथम दीक्षा रूप संस्कार हुआ करता है। जैसा कि 'ब्रह्मा यजमानंदीक्षयति इत्यादि, अर्थात् 'ब्रह्मा नामक ऋत्विक् यजमानकी दीक्षा करता है', इत्यादि श्रुतियों में आता है और उस संस्कार के बाद ही 'दीक्षणीया' नामक यज्ञ हुआ करता है। इसीलिये क्षत्रिय भी कहीं २ दीक्षित कहलाते हैं। क्योंकि उनको राजसूय यज्ञ का अधिकार है, इससे उसके करवाने में उनकी भी दीक्षा होने से वे भी दीक्षित कहलाने लगे, इत्यादि। कुछ दिन में यही नवीन उपाधियां विगड़ते २ पांड़े, चौबे, दूबे इत्यादि कहलाने लगीं, जैसे ब्राह्मण शब्द भ्रष्ट होकर बाभन या बाम्हन और वाराणसी शब्द बनारस हो गया।

इसलिये इस बात के कहने वाले नितान्त भूले हुए हैं कि शब्द में विकार होने से उसके अर्थ में (जाति में) भी विकार होजाता है।

---

१ क्योंकि पण्डा सदसद्विवेक करने वाली बुद्धि को कहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जैसा कि मिस्टर बीम्स वगैरः ने अपने पूर्वोक्त ग्रन्थों में कहीं भूमिहार ब्राह्मणों के प्रसंग में लिखने का साहस किया है क्योंकि ऐसा मानने से सभी तिवारी, चौबे, राजपूत, बनियां और कायस्थादि की जातियों में फर्क मानना पड़ जावेगा। कारण कि ये सभी शब्द बिगड़ रहे हैं और ब्राह्मण शब्द की जगह प्रायः सभी लोग कुछ पठित व्यक्तियों को छोड़कर, सर्वत्र ही बाभन या बाम्हन शब्द का प्रयोग करते हैं। इसलिये यही मानना होगा कि धीरे २ काल पाकर शब्द विशेष रूप से अपने आप ही बदलते जाते हैं।

अस्तु, ये पूर्वोक्त पांडे, तिवारी आदि पदवियां नवीन हीं हैं। अतएव स्मृतियों और पुराणों में ब्राह्मण, क्षत्रियादिके लिये शर्मा और वर्मा आदि शब्द ही आये हैं और पूर्वोक्त आचार्यादि शब्द। पुराणों के पश्चात् के ग्रन्थों में भी ये पांडेय आदि शब्द नहीं मिलते। यहां तक कि वंगदेशीय ब्राह्मणों के इतिहास में भी जब उस समय के बनाये हुये 'कुलदीपिकादि' ग्रन्थों में ९९९ शकाब्द में अर्थात् लगभग आज से ८३८ वर्ष पूर्व कान्यकुब्ज देश से पांच ब्राह्मणों के वंगाल (गौड़देश) में आने का हाल लिखा है, तो केवल भट्ट नारायण प्रभृति उनका नाम हीं लिखा है। पांडेय, तिवारी इत्यादि उपाधियों का नाम भी नहीं है। हां, इतना पता अवश्य चलता है कि, वंगदेश में आने पर उनके घोष, गांगुली, इत्यादि पुत्र हुये और प्रत्येकको जो ग्राम महाराज आदि शूर की ओर से मिले उनके भी वही नाम थे जिससे पीछे उन ग्रामों में रहने वाली उनकी सन्तान उसी घोष गांगुली, बागछी इत्यादि उपाधियों से भूषित हुई। अतः वंगदेशीय ब्राह्मणों की पदवियां भी गांगुली, बागछी वगैरः नूतन और उस समय की हैं जिसका हम वर्णन कर रहे हैं। उन्हीं वंगीय ब्राह्मणों के इतिहास से यह भी विदित होता है कि उस समय सभी ब्राह्मण वगैरः अस्त्र, शस्त्रादि धारी हो रहे थे। क्योंकि आदि शूर महाराज के यज्ञ के लिये कान्यकुब्ज देश से जब महाराज वीरसिंह ने उस समय ५ गोत्रों के ५ ब्राह्मण भेजे, तो उन यज्ञ कराने वालों के वेषका वर्णन 'देवीवरघटक कृत कारिका' में ऐसा है कि:—

वेदशास्त्रेष्ववगतान्, सर्वास्त्रे च विशारदान्।
गोयानारोहितान्विप्रान् खड्गचर्मादिभिर्युतान्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् 'वे लोग सब वेद शास्त्रों में और सभी अस्त्र, शस्त्र में भी निपुण, तलवार और ढाल आदि से सजे हुये और बैलों की गाड़ी पर सवार थे' इत्यादि। भला जहां यज्ञ करवाने वालों की यह दशा है, वहां उनसे अन्यों का क्या कहना है?

अस्तु, इससे निर्विवाद सिद्ध है कि ब्राह्मणों की ये द्विवेदी प्रभृति पदवियां भी उसी समय की हैं जिस समय की राय, सिंह इत्यादि। इसी लिये इनका वर्णन यदि कहीं आता है तो केवल कान्यकुब्ज और सर्यूपारी प्रभृति की वंशावलियों में हीं। उस समय इतना हीं नहीं होता था कि, जो जैसा काम करता था उसे वैसी ही पदवी मिलती थी और उसके पुत्र, पौत्रादि में बराबर चली जाती थी। किन्तु वे पदवियां बदल जाया करती थीं। इसी लिये जो ब्राह्मण पाण्डेय या तिवारी, होते थे, समय पाकर राजदर्बार में प्रतिष्ठा होने से उनको राय, सिंह और चौधरी आदि की पदवी मिल जाती थी। अथवा उनके लड़कों को ही ये पदवियां भाग्यवश प्राप्त हो जाती थीं। क्योंकि इन्हें आजकल की राय बहादुर और के. सी.आई. ई. इत्यादि उपाधियों की तरह राजा की दी हुई समझ सभी परम प्रतिष्ठा जनक समझते और तदनुसार ही उनकी प्राप्तिके लिये महान् यत्न करते थे, जैसाकि आज कल हो रहा है। और जब भाग्यवश ये मिल जातीं तो पूर्व के पाण्डेय प्रभृति आस्पदों (पदवियों) का प्रयोग छूट जाता था। केवल इतना हीं नहीं कि राज पदवियों के ही पाने से इनका परित्याग हो, किन्तु कर्म करने से ही पाण्डेय का पुत्र त्रिवेदी और उसकी सन्तान अवस्थी आदि कहलाती थी। क्योंकि उस समय उन कर्मों के कर्त्ताओं के कम होने से जो ही उन्हें करता था उसी का नाम प्रख्यात हो जाता था और वही उसकी पदवी हो जाती थी जैसाकि कान्यकुब्ज वंशावली के एक ही काश्यपगोत्र के देखने से स्पष्टप्रतीत होता है कि मदारपुर के अधिपति भुइंहार (भूमिहार) ब्राह्मणों के बालक गर्भू नामक ब्राह्मण के पुत्र कुतमऊ के तिवारी और उनके लड़के विनौर के अग्निहोत्री और आगे चलकर उनके ही पुत्र, पौत्रादि विनहारपुर के दूबे, कृपालपुर के मिश्र, भागीर के दीक्षित, विधौली के शुक्ल, और मिगलानी के अवस्थी इत्यादि कहलाये। यह दशा केवल कान्यकुब्ज ब्राह्मणान्त-र्गत काश्यप गोत्रीय भूमिहार ब्राह्मणों की सन्तानों की है कि जिनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पूर्वज गर्भू की कोई ऐसी उपाधि (पदवी) नहीं, उसके ही वंश कितने ही तिवारी आदि होगये।

इस बात को जिसे देखना होवे वह 'हरिप्रसाद भागीरथ' अथवा खेमराज के यहां छपी हुई कान्यकुब्जों की सभी वंशावलियों में देख सकता है। यह मदारपुराधिपति कान्यकुब्ज भूमिहार ब्राह्मणों के वंशज गर्भू की बात अभी बहुत दिनों की नहीं है, किन्तु बाबर बादशाह के समय सन १५२७ ई० में हुई थी। ऐसा उन्हीं वंशावलियों में लिखा है। परन्तु उस समय भी जहां तहां उपाधियों का विशेष रूप से प्रचार न हुआ था। इस लिये ब्राह्मणों की ये कोई शास्त्रीय पदवियां नहीं हैं, जिनके न रहने से ब्राह्मण हीं नहीं कहा जा सकता। किन्तु जैसे राय, सिंह, चौधुरी और खां आदि उपाधियां ब्राह्मणों आदि की हैं, वैसी ही ये भी। हां, भेद इतना हो सकता है कि प्रथमतः ये मुसल्मानों द्वारा दी गई हैं और ये त्रिवेदी प्रभृति पदवियां ब्राह्मणादि हिंदू समाजों की दी हुई हैं। परन्तु अशास्त्रीयता दोनों में समान है। इस विषय में विशेष बात आगे कहेंगे।

अस्तु, जैसा इन उपाधियों का हाल है, वैसाही ब्राह्मणादि वर्ण में छोटे २ दल बनने और उनकी नाना संज्ञायें पड़ने का भी वृत्तान्त जान लेना चाहिये। सम्भवतः बहुत से लोगों की यह धारणा है अथवा होगी कि कान्यकुब्ज, गौड़ इत्यादि ब्राह्मणों के अवान्तर दल और उनके नाम प्राचीन हैं। परन्तु मेरी समझ से यह बात सरासर मिथ्या है। क्योंकि जैसा अभी पदवियों के विषय में दिखला चुके हैं कि वे आधुनिक हैं, इसीलिये प्राचीन ग्रन्थों में उनका पता भी नहीं है वही दशा ब्राह्मणों और अन्य वर्णों के इन छोटे २ दलों और उनके नामों की है। वे भी उन ग्रन्थों में कहीं नहीं पाये जाते।

सारस्वताः कान्यकुब्जा उत्कला गौडमैथिलाः।
पंच गौडाः समाख्याता विंध्यस्योत्तरवासिनः॥

इत्यादि रूप जो श्लोक स्कन्द पुराण के सह्याद्रि खण्ड और भविष्य पुराण के नाम पर अब मिलने लगे हैं, वे आधुनिक और कल्पित हैं क्योंकि राठौर, चौहान वगैरः नाम कहीं न आकर ये ब्राह्मणों के ही नाम क्यों आए।

इसलिये वे भी उपाधियों की तरह आधुनिक हैं। उनमें से एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि कुछ दिन प्रथम से थे भी तो उनका प्रचार न था। या यों कहिये कि लोगों का उनकी तरफ ध्यान नहीं था। परन्तु कालचक्र ने हीं उनकी उत्पत्ति या प्रचार यों करवाया कि जब यवन राज्य काल में, जैसा कि पूर्व दिखला चुके हैं, शास्त्राभ्यास से रहित और प्रकृति में भरे हुये मार काट और राजस, तामस भावों से प्रेरित हो जहां तहां ब्राह्मणादि वर्ण अस्त्र, शस्त्रादि से सुसज्जित हो आक्रमण करने और दुर्बलों के अधिकारों को दबाने लगे। उन लोगों में शारीरक अभिमान और युद्धप्रियता बहुत बढ़कर पराकाष्ठा को प्राप्त हो गई। इसलिये वे उसी अभिलाषा से बलात् अपना एक देश छोड़ दूसरे प्रदेशों (प्रान्तों) में जाने के लिये बाध्य होने लगे। जहां हीं दुर्बल देखा वहां हीं चढ़ दौड़े। आज यहां हैं तो कल कितनी दूर निकल गये इसका पती ही नहीं।

इस के अतिरिक्त यवनों के अत्याचार हिन्दू धर्म पर कभीकभी हुआ करते थे। उनकी नव प्रादुर्भूत शक्ति और नवीन सञ्चारित धर्म हिन्दूधर्म पर बड़े २ आघात करने लगे। यह बात उस समय के इतिहासवेत्ताओं से छिपी नहीं है। जब बलपूर्वक अन्य धर्मावलम्बियों को मुसलमान बनाना भी वे अपना परम धर्म मानते थे, तो फिर बेचारे अनाथ हिन्दू क्यों न सताये जावें? ऐसी दशा में धर्म भीरु ब्राह्मणों को विशेष कर और प्रायः कहीं २ क्षत्रियों को भी धर्म रक्षा के लिये छोटे २ दल बनाने पड़े। क्योंकि जैसी देख भाल, या प्रबन्ध छोटे राज्यों या भूभागों का हो सकता है वैसा बड़े का नहीं। इसीलिये बड़े २ राज्यों को भी सूबों, जिलों और तहसीलों वगैरः में बांट देते हैं। बड़े विस्तृत ब्राह्मण साम्राज्य में यह पता चलना कठिन था कि कौन प्रदेश अपने धर्म पर स्थित है और उसके साथ खान पान आदि किये जा सकते हैं। अतः धर्म दृष्टि से छोटे २ विभाग बनाने पड़े और अपने विभाग से बाहर खान पान या विवाह सम्बन्ध छोड़ना पड़ा। इसी से यद्यपि पूर्वकाल में सभी ब्राह्मणों के खान पान आदि साथ होते थे, परन्तु आज न तो गौड़ों के कान्यकुब्जों के साथ और न दोनों के दक्षिणात्यों के साथ, खानपान या विवाह संबन्ध आदि होते हैं।

जब एक देश से दूसरे देश (प्रान्त) में ब्राह्मणादि, पूर्वोक्त कारणों से, चले जाते थे तो उनका पता लगना उस समय कठिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

या असंभव था। क्योंकि उस समय आज कल की तरह रेल तार न थे। इसलिये प्रत्येक दल वाले ब्राह्मणादि जिस देश से आरम्भ करते थे उसी देश के नाम से अपना व्यवहार करते थे। जैसे जो सर्यूपार से अन्य प्रान्तों में चले गये थे वे अपने को सर्यूपारवाले, सर्यूपारीण, सर्यूपारी या सरवरिया इत्यादि कहने लगे। इसी प्रकार जो कान्यकुब्ज देश से गये थे वे अपने को कनौजिया या कान्यकुब्ज कहने लगे। ऐसे ही मैथिल, गौड़ और सारस्वतादि नामों को भी जान लेना चाहिये। क्योंकि किसी आदमी या वस्तु के नाम वा ठिकाने की हुलिया तभी होती है, जब वहां से भागकर अन्यत्र चला जाता है और उसका पता चलना कठिन हो जाता है। और चूंकि पूर्व समय में ब्राह्मणों को एक स्थान छोड़ कर दूसरे स्थान में जाने की प्रायः आवश्यकता न होती थी। केवल ऋषि, मुनि या तपस्वी लोग ही राक्षस वगैरः के भय अथवा अन्य कारणों से इधर उधर जाया करते थे। क्योंकि उस समय हिन्दू धर्म का प्रबल प्रतापादित्य द्वादश कला युक्त था। इसलिये एक देश से दूसरे देश में विना तीर्थ यात्रादि के जाने में बहुत बड़ा विचार उपस्थित हो पड़ता था। क्योंकि ऐसी आज्ञायें थीं और हैं कि:—

अंग वंग कलिंगेषु सौराष्ट्र मगधेषु च।
तीर्थ यात्रां विना गत्वा पुनःसंस्कारमर्हति॥

अर्थात्, 'अंग, वंग, कलिंग, सौराष्ट्र और मगधादि देशों में बिना तीर्थ यात्रा के जाने से उसका पुनः यज्ञोपवीतादि संस्कार करना चाहिये' इत्यादि। परन्तु जिस समय का वर्णन करते हैं, उस समय न तो इतना धार्मिक भय ही था और न लोगों को इन उपदेशों का यथावत् ज्ञान हीं था। प्रत्युत पूर्वोक्त धर्म रक्षा के लिये, तथा अन्य प्रयोजनों से भी एक स्थान से दूसरे स्थान में जानेके लिये बाध्य होना पड़ता ही था। इसलिये यद्यपि जो लोग कान्यकुब्ज प्रभृति देशोंसे आ गये थे, उनके ही नाम कान्यकुब्जादि पड़ने उचित थे, तथापि कान्यकुब्ज देश में रहनेवालों और उन भगेड़ों के सम्बन्ध कभी हो जाया करते थे, इसलिये एक ही होने से एक देशवाले कहीं हों उसी नाम से पुकारे जाते थे। इस से खान पान और विवाह सम्बन्ध में आसानी भी होती थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु एक देश में रहने वाले ब्राह्मण से अन्य भी हो सकते हैं, जैसे कान्यकुब्ज हलवाई और कान्यकुब्ज कहार भी बोले जाते हैं। इसी प्रकार मैथिल कायस्थ और मैथिल ब्राह्मण इत्यादि। अथवा देशों के बड़े होने से अमुक देश का ब्राह्मण हूं ऐसा कहने से भी पता ठीक न चल सकता था। इसलिये फिर भी परस्पर व्यवहारों में बहुत क्लेश होने लगा, तो गोत्र और डीह के साथ अमुक जगह का दूबे और अमुक जगह का तिवारी मैं हूं ऐसा कहने का संकेत किया गया। क्योंकि एक गोत्र में विवाह नहीं होता, इसलिये गोत्रादि बताने की आवश्यकता थी। इसी प्रकार अन्य बातों को भी जान लेना चाहिये। अब ऐसा करने से कोई भी ब्राह्मण कहीं भी होवे, जहां पिंडीका तिवारी या त्रिफला का पांडे मैं हूं ऐसा उसने बताया, वहां हीं सब कठिनाइयां दूर हो गईं। क्योंकि अन्य सर्यूपारी आदि भी उन्हीं ग्रामों में या उन के पास के ही रहनेवाले होते थे।

इससे यह भी सिद्ध होगया कि ब्राह्मणों में अपने २ डीह(प्राचीन स्थान) के व्यवहार की प्रथा भी बहुत दिनोंसे नहीं है। इसलिये यह कोई आवश्यक नहीं है कि जिस ब्राह्मण में अपने डीह का व्यवहार किसी कारण से न होवे वह इसी कारण से ब्राह्मण न कहा जावे कि उसका डीह ही नहीं है। हां, इतने के लिये वह खान पान आदि दूसरे दल वाले से न करके अपने ही दल में कर सकता है। प्रथम तो यह बात कहीं पाई नहीं जाती। परन्तु सम्भव होने पर उसके विषय में भूल न हो इसीलिये ऐसा कह दिया है। और ऐसा होता भी है कि लोग अपने पूर्व डीह को भूल जाते हैं और दूसरे ही डीह का नाम लिया करते हैं। जैसे कि निमेज के ओझा और मचैयां पांडे अपने डीह निमेज और मचियांव बतलाते हुये अपने को सर्यूपारी कहते हैं, परन्तु ये डीह सर्यूपार में न होकर शाहाबाद जिले में पाये जाते हैं,

अस्तु, अब इसी स्थान पर भूमिहार, त्यागी, महियाल, पश्चिमा आदि संज्ञा वा विशेषण सम्बन्धी विषय का विचार करलेना चाहिये। अभी कह चुके हैं कि यवनकाल में हीं ५ या ७ सौ वर्ष पूर्व ब्राह्मणों में बहुत से अवान्तर दल कैसे बन गये और यद्यपि दूर देश में गये हुए ही कान्यकुब्जादि कहे जाने चाहियें, तथापि सभी एक देश वाले कैसे उसी नाम से कहे जाने लगे। बस, इन्ही दो बातों के सम्बन्ध में यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी एकबात है कि, जब ब्राह्मणोंमें पूर्वोक्त कारणों से छोटे२ दल बनने लगे और कहीं २ अन्य जातियों में भी, तो चूंकि केवल धर्मरक्षा की दृष्टि से यह काम हुआ, इसलिये दलों के बनाने में इस बात का पूर्णतया ध्यान रक्खा गया कि जिसमें धर्म का पालन ठीक २ होसके। इसी लिये जो जो दल बने उनमें ऐसे २ ब्राह्मण प्रत्येक दल में मिलाये गये जिनके आचार विचार, या चाल चलन और खान पान प्रायः एक प्रकार के थे। इसी लिये भिन्न २ प्रदेशों के भिन्न भिन्न दल बन गये जैसे गौड़ देश, कान्यकुब्ज, मिथिला अथवा सरस्वती के पास के प्रदेशों आदि के। और एक प्रान्त के ब्राह्मणों में भी आचार व्यवहार प्रायः सब के समान न होने से बहुत से अवान्तर भेद बन गये। जैसे मैथिलों में श्रोत्रिय, योग्य इत्यादि। एवं गौड़ों में आदि गौड़, गूजर गौड़, चमर गौड़ इत्यादि। इसी प्रकार वंगदेशीयों में राढ़ी आदि तथा गुजरात के नागरों में सिपाही नागर वगैरः। एवं कान्यकुब्जों में दूबे, तिवारी, अग्निहोत्री प्रभृति। इसी तरह सर्वत्र सभी ब्राह्मणों में जान लेना चाहिये। और जैसे एक देश से दूसरे में जानेसे एक देश के नाम से नाम पड़ा, वैसे ही एक दल को दूसरे दल से बिलगाने के लिये भी अपने २ देशों से अपने २ नाम कहे जाने लगे इसलिये भी एक देश वाले जहां कहीं रहे, एकही नाम से कहे जाने लगे। इसी तरह अपनी क्रियाओं से भी एक दल के दूसरे दल से भिन्न नाम होते थे, जैसे त्रिवेदी, द्विवेदी इत्यादि प्रथम हीं कह चुके हैं।

यहां पर ध्यान देने की बात है कि, जैसे मैथिलों में केवल वेद पढ़ने वाले श्रोत्रिय और वेदों तथा अन्यकार्यों में योग्यता रखने वाले योग्य इत्यादि अपने २ कर्मों से भिन्न २ दल बने और नाम पड़े। एवं गौड़ों में गूजर प्रभृति की पुरोहिती करनेसे गूजरगौड़ आदि नाम पड़े। नागरों में लड़ने भिड़ने वाले सिपाही नागर कहलाने लगे और उनका दूसरे नागरों से पृथक् दल होगया और जिस प्रकार द्विवेदी, त्रिवेदी प्रभृति कान्यकुब्जादि ब्राह्मणों के पृथक् २ दल अपने २कर्मों और आचारों से बने। ठीक उसी प्रकार सब से प्रथम कान्यकुब्ज ही ब्राह्मणों में जो दल जमींदारी से घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाला, अतएव वीर और राज दर्बार में प्रतिष्ठित था और इसी लिये उसके आचार विचार में भी कुछ विलक्षणता थी, वह भी समय भूमिहार या भुइंहार नाम से प्रसिद्ध हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जैसे एक प्रान्त के सभी ब्राह्मणों का जब उसी प्रान्त के नामानुसार कान्यकुब्ज या मैथिल नाम पड़ गया, तो फिर उनके छोटे २ दलों के भिन्न २ नाम उस देश के नामानुसार न हो सकने के कारण कर्मानुसार ही, द्विवेदी, त्रिवेदी, श्रोत्रिय और योग्य प्रभृति हुये। उसी प्रकार उन्हीं कान्यकुब्जों में एक दल अब देश के नामानुसार न कहे जा सकने के कारण भूमि के ऊपर अपने बल से या अन्य प्रकार से अधिकार करलेने और विशेष रूप से कृष्यादि करने के कारण औरों से विलक्षण होने से भूमिहार या भुइंहार कहलाने लगा और जितने बलवान् या श्रीमान् और प्रतिष्ठित राजसी कान्यकुब्ज ब्राह्मण एक आचार वाले थे, वे इसी नाम से कहे जाने लगे।

यद्यपि इनकी संज्ञा प्रथम जमींदार या जमींदार ब्राह्मण थी। लेकिन एक तो, जैसा पूर्व कह चुके हैं कि उसका प्रथम इतना प्रचार न था; दूसरे यह कि जब पृथक २ दल बन गये तो उनके नाम भी ऐसे होने चाहियें जो एक दूसरे के न हो सकें। परन्तु जमींदार शब्द तो जो ही जाति भूमिवाली होवे उसे ही कह सकता है। इस लिये विचारा गया कि जमींदार नाम ठीक नहीं है। क्योंकि पीछे से इस नामवाले इन अयाचक कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के पहचानने में गड़बड़ होने लगेगी। इसलिये ऐसा न हो कि व्यवहार में गड़बड़ मच जावे। इसी कारण से इन लोगों ने अपने को भूमिहार या भुइंहार कहना प्रारम्भ कर दिया।

यद्यपि जो अर्थ जमींदार शब्द का है, अर्थात् जमीन का मालिक या उसका रखने वाला, वही भूमिहार शब्द का भी, जैसा कि अभी विदित हो जावेगा, तथापि, जैसा कि भूमिका में हीं कह चुके हैं कि, जिस अर्थ में जिस शब्द का संकेत कर लिया, उस शब्द से वही समझा जाता है। जैसे, यद्यपि नमस्कार और प्रणाम शब्दों का अर्थ एक ही है, तथापि ब्राह्मणों ने यह संकेत कर लिया है कि हम लोगों में परस्पर नमस्कार शब्द का ही प्रयोग होना चाहिये। इसलिये नमस्कार शब्द बोलने से ही विदित हो जाता है कि इसका उच्चारण करनेवाला ब्राह्मण है। परन्तु उसी के अर्थ में यदि प्रणाम शब्द को बोलें तो प्रायः अन्य जाति ही का बोध होता है। मिथिला में तो यहां तक देखा जाता है कि शूद्र लोग भी ब्राह्मणों को 'प्रणाम' हीं कहा करते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं और कोई भी बुरा नहीं मानता। परन्तु यदि कोई अन्य उसी के अर्थ वाले नमस्कार शब्द का प्रयोग करे, तो फिर देखिये। ऐसा ही आर्य समाज के नमस्ते और सनातन धर्म प्रणाम शब्द का हाल जान लीजिये। यदि किसी सनातनधर्मी सन्मुख 'नमस्ते' शब्द बोला जावे तो वह बहुत ही रञ्ज होता न कि प्रणामादि शब्दों से। इसका कारण जैसे एक मात्र संकेत है। उसी प्रकार, यद्यपि जमींदार और भूमिहार शब्द समानार्थक हैं, तथापि जमींदार शब्द से ब्राह्मण से अन्य भी जातियां समझी जाती हैं, या जा सकती हैं, परन्तु भूमिहार शब्द से साधारण प्रायः केवल अयाचक ब्राह्मण विशेष ही। क्योंकि उसी समाज लिये उसका संकेत किया गया है।

इससे सिद्ध हो गया कि, यद्यपि नियत तिथि विदित नहीं तथापि जैसे यवन राज्य काल में हीं आज से लगभग ६, ७ या वर्ष पूर्व गौड़, कान्यकुब्ज, सर्यूपारी, मैथिल तथा सारस्वतादि, एवं तिवारी आदि नाम प्रायः ब्राह्मणों में प्रचलित हुये, वैसे ही भूमि या भुइंहार नाम भी सबसे प्रथम कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के एक अव दल विशेष में प्रचलित हुआ। इसीलिये जैसे ये सब नाम केवल कान्यकुब्जादि की वंशावलियों में हीं पायेजाते हैं, न कि अन्यत्र भी। वैसे भूमिहार शब्द भी सबसे प्रथम उन्हीं कान्यकुब्ज वंशावलि काश्यप गोत्र के व्याख्यान में मिलता है, न कि अन्यत्र। जैसे 'गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास' के यहां छपी हुई, और पं० दु त्रिपाठी एवं पं० मुकुन्दराम द्वारा सम्वत् १९६४ में छपवा कान्यकुब्ज वंशावली के १०५ वें पृष्ठ में लिखा है कि:—

अथ काश्यपमाख्यास्ये गोत्रं तु मुनिसम्मतम्।
पूर्ववंशावलिं दृष्ट्वा ज्ञातं षष्टिशतत्रयम् ॥ १ ॥
मदारादिपुराख्यस्य भुइंहारा द्विजास्तु ये।
तेभ्यश्च यवनेन्द्रैश्च महद्युद्धमभूत्पुरा ॥ २ ॥
तेभ्यश्चब्राह्मणाः सर्वे परास्ता अभवँस्ततः ॥ इत्यादि

जिसका अर्थ यह है कि जैसा कि 'हरिप्रसाद भागीरथ' यहां छपे हुए 'बृहत्कान्यकुब्जकुलदर्पण' के ११७ वें पृष्ठ में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि, विक्रमीय सम्वत् १५८४ (सन् १५२७) में मदारपुर के अधिपति भूमिहार ब्राह्मणों और यवनों से महायुद्ध हुआ और सब ब्राह्मण परास्त हुये। यह बात ३६० वंशावलियों को देखकर लिखी गई है, इत्यादि। यह मदारपुर गंगा के समीप कानपुर जिले में अथवा उस जिले के समीप ही है।

इसके बाद आगे चलकर, जैसा कि दिखला चुके हैं, इन्हीं भूमिहार ब्राह्मणों के वंशज गर्भू के वंश में कुतमऊ के तिवारी इत्यादि ७ या ८ स्थान वाले तिवारी, विनौर इत्यादि ५ या ६ स्थानों के अग्निहोत्री, गलहैया इत्यादि १० स्थानों के दूबे, कृपानपुर, नगरा आदि ३ स्थानों के मिश्र, क्यूना, मदारपुरादि १४ स्थानों के दीक्षित, विधौली और रिवाड़ी के शुक्ल, मिगलानी प्रभृति ५ स्थानों के अवस्थी इत्यादि हुये, जो सभी कान्यकुब्जों में पाये जाते हैं। क्योंकि प्रथम हीं यह बात कह चुके हैं कि, यद्यपि इन भूमिहार नामधारी ब्राह्मणों के साथ भी गौड़ादि की तरह अन्य ब्राह्मणों के खान पान आदि तथा विवाह संबन्ध ढीले पड़ रहे थे तथापि एक देशीय होने से इन के साथ सम्बन्ध एकदम टूट न गया था। इसलिये पूर्वोक्त तिवारी प्रभृति उसी दल में मिलते गये और आज तक भी भूमिहार नामधारी ब्राह्मणों के साथ विवाह सम्बन्ध याचक दलवालों का इसी कारण से बना है। परन्तु गौड़ प्रभृति तो दूर देशीय थे। अतः उन के साथ का सम्बन्ध एकदम टूट गया।

एक बात यह भी विचारने योग्य है कि, जैसे कान्यकुब्ज देश में ब्राह्मणों के कर्मानुसार दूबे, तिवारी प्रभृति संज्ञाएँ हुईं और जब वहां से वे लोग अन्य देशों में फैले तो वहां अमुक स्थान के दूबे और तिवारी कहलाने लगे। इसीप्रकार जब पूर्वोक्त युद्ध में मदारपुर के अधिपति बहुतेरे ब्राह्मण मारे गये, और पं० अनन्तरामजी की एक गर्भिणी स्त्री के सिवाय बहुतेरे जान लेकर वहां से एकदम भाग गये। क्योंकि युद्ध में सभी मारे गये, कोई भी न बचा, यह तो कहीं हुआ नहीं, इसलिये असंभव है। हां, बचे बचाये जान लेकर केवल गर्भू की माता को छोड़कर, क्योंकि वह पिता के घर थी, सभी भागगये और वहां एक भी न रहा। इसलिये लोगों ने समझा कि सभी मारे ही गये। परन्तु चूंकि वहां कोई न रहा, इसलिये उस तरफ भूमिहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नामवाले ब्राह्मण पाये नहीं जाते, और भागकर काशी के आस प
निरुपद्रव जानकर आ बसे, जैसे दूसरे दूबे, तिवारी प्रभृति आये
इसलिये काशी के आस पास ही इस नाम के ब्राह्मण पाये जाते
और गर्भू की सन्तानों में हीं दूबे, तिवारी हुये, प्रथम यह संज्ञा न
किन्तु यवन राजाओं के काल की ये पदवियां थीं। इसलिये और
हेतुओं से भी इस प्रान्त में ये लोग प्रायः दूबे, तिवारी न कहे जा
अब तक राय, सिंह इत्यादि पदवियों से ही पुकारे जाते हैं।

इस के बाद बहुत से अन्य स्थानों के भी कान्यकुब्ज या स
पारी इस देश में आते गये और क्रमशः जमींदार हो होकर
में मिलते गये। जैसे कि सर्यूपार पिपरा के मिश्र, गौतम गो
कृष्ण या कित्थू मिश्र के वंशज द्विजराज महाराज श्री काशि
और काशी प्रान्त के अन्य गौतम भूमिहार ब्राह्मण। यह
विजयानन्द त्रिपाठी कृत पंक्ति पावन परिचय नामक सर्यूपार
वंशावली और पं० शिवराज मिश्र कृत गौतम चन्द्रिकादि ग्रन्थों
स्पष्ट है। जैसा आगे भी दिखलाया जावेगा। इसी प्रकार देवकल
वत्स गोत्रीय, पाण्डेय आस्पद वाले दोनवार ब्राह्मण भी इनमें आ
जिनका निरूपण प्रसंगवश आगे करेंगे। इसीतरह क्यूना के दी
काश्यप गोत्रीय भी इन में आ मिले। जिनका नाम संभवतः क्यूना
से बिगड़ते २ किनवार होगया। किनवार शब्द के विषय में आगे
शेष बात कहेंगे। अस्तु, इन सबों का निरूपण आगे होगा। और
जो ब्राह्मण मिलते जाते थे, वे अपनी मिश्र, दीक्षित प्रभृति उपा
को छोड़ राय, सिंह वगैरः पदवियों को ही प्रतिष्ठित जानकर
करते थे। और जैसे अन्य दल वाले ब्राह्मण अपने को अमुक स्थान
दूबे, तिवारी इत्यादि बतलाते थे, वैसे ही इन्होंने भी अपने २ स
सूचित करने के लिये किनवार या दोनवार आदि कहना प्रारम्भ
दिया। जिसका अर्थ क्यूना अथवा ओकनी स्थान वाले इत्यादि है।
प्रकार अन्य संज्ञाओं में भी समझना चाहिये। इस का भी वि
निरूपण आगे होगा।

इसलिये यह निर्विवाद सिद्ध है कि इन प्रकृत अयाचक ब्रा
की यह वर्त्तमान भूमिहार संज्ञा या विशेषण यवन काल से
है। तथा कान्यकुब्ज, दूबे, तिवारी प्रभृति संज्ञा समकालिक हीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कान्यकुब्ज, देश में हीं इस नाम का भी जन्म हुआ है। इसलिये यदि कोई इस नाम के विषय में विवाद करे कि कब से हुआ इत्यादि। तो या तो प्रथम उसे कान्यकुब्जादि नामों के काल का पता लगाकर इस विषय में पूछना चाहिये। क्योंकि उन सबों के भी समय निश्चित नहीं हैं, फिर केवल इसी के लिये झगड़ा क्यों ? या हमारे पूर्व कथन से सभी को निश्चय करके संतोष करना चाहिये।

इस भूमिहार संज्ञा विषयक पूर्वोक्त कथन की पुष्टि में यह भी जान लेना चाहिये कि, पूर्व ग्रन्थ में धर्मारण्य में स्थापित और वाडव शब्द बोधित ब्राह्मणों का वर्णन कर चुके हैं और उनके विषय में यह भी कह चुके हैं कि वे लोग याजन, अध्यापन और प्रतिग्रह से रहित होकर श्रीरामजी का दिया धर्मारण्य का राज्य करते थे। जैसा कि धर्मारण्य माहात्म्य के ३५ वें अध्याय में लिखा है कि:—

ना०उ०। स्वस्थाने ब्राह्मणास्तत्र कानि कर्माणि चक्रिरे।
ब्रह्मो०। इष्टापूर्त्तरताः शान्ताः प्रतिग्रहपराङ्मुखाः ॥३॥

राज्यं चक्रुर्वनस्यास्य पुरोधा द्विजसत्तम।
उवाच रामपुरतस्तीर्थमाहात्म्यमुत्तमम् ॥४॥

अर्थात् 'नारद ने ब्रह्मा से पूछा कि धर्मारण्य में रहनेवाले वे सब ब्राह्मण कौन काम करते थे ? ब्रह्मा ने उत्तर दिया कि वे लोग यज्ञदानादि करने और वापी, कूप, तड़ाग वगैरः बनाने में दत्तचित्त थे और प्रतिग्रह से बिल्कुल हटे हुए उस वनका राज्य करते थे। इसके अनंतर रामजी के पुरोहित वसिष्ठजी ने उस तीर्थ के और माहात्म्य सुनाये'।

इतना और भी जान लेना चाहिये कि जैसा कि पूर्व कह चुके हैं कि हस्तिनापुर से धर्मारण्य का सम्बन्ध महाभारत के आदिपर्व के द्वितीयाध्याय से सिद्ध होता है। क्योंकि वहां 'समन्तपञ्चक' क्षेत्र के माहात्म्य में यही लिखा है कि,

त्रेताद्वापरयोः सन्धौ रामः शस्त्रभृतां वरः।
असकृत्पार्थिवं क्षत्रं जघानामर्षचोदितः ॥३॥
स सर्वं क्षत्रमुत्साद्य स्ववीर्येणानलद्युतिः।
समन्तपंचके पंच चकार रौधिरान् ह्रदान् ॥४॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेषां समीपे यो देशो ह्रदानां रुधिराम्भसाम्।
समन्तपञ्चकमिति पुण्यं तत्परिकीर्त्तितम् ॥१२॥
अन्तरे चैव सम्प्राप्ते कलिद्वापरयोरभूत्।
समन्तपञ्चके युद्धं कुरुपाण्डवसेनयोः॥१३॥इत्यादि

अर्थात् 'त्रेता और द्वापर की सन्धि में परशुरामजी ने बहुत क्रोध कर कई वार क्षत्रियों का नाश करके उनके रक्तों को पांच कुण्डों में भर कर पितृतर्पण किया। तभी से उसके आस पास का देश समन्तपञ्चक कहलाया। जिसमें कलि और द्वापर की सन्धि में कौरव और पाण्डवों का परस्पर युद्ध हुआ'। और यही बात, जैसा कि पूर्व कह चुके हैं, स्कन्द पुराण में धर्मारण्यान्तर्गत हाटकेश्वर क्षेत्र के माहात्म्य में वर्णित है। इसलिये यद्यपि धर्मारण्य का कुरुक्षेत्र तक कुछ सम्बन्ध प्रतीत होता है तथापि स्कन्द पुराण के धर्मारण्य माहात्म्य नामक भाग के पढ़ने से स्पष्ट होता है कि बरेली प्रभृति प्रान्त सहित कान्यकुब्ज देश वर्त्तमान कानपुर प्रान्त को लेकर ही प्रधान धर्मारण्य कहलाता था। इसमें इसी प्रान्त के गांवों और वहां के रहनेवाले (अधिपति) ब्राह्मणों के गोत्रादि की व्यवस्था धर्मारण्य खंड में सविस्तर निरूपित है। और यह भी वहीं ग्रन्थान्त में लिखा है कि * कन्नौज का राजा अ

* यथा, 'इदानीं च कलौ प्राप्ते आमो नाम्ना बभूवह। कान्यकुब्जाधिपः श्रीमान्धर्मज्ञो नीतितत्परः ॥ ११ ॥ प्रजानां कलिना तत्र बुद्धिरजायत। वैष्णवं धर्ममुत्सृज्य बौद्ध धर्ममुपागताः ॥ ३५ ॥ राज्ञो महादेवी मामानाम्न्यतिविश्रुता। गर्भं दधार सा राज्ञी लक्षण संयुता ॥ ३७ ॥ सम्पूर्णे दशमे मासि जाता तस्याः सुरूपिणी रत्नगंगेति नाम्ना सा मणिमाणिक्यभूषिता ॥ ३६ ॥ ब्रह्मावर्त्तपतये कुम्भीपालाय धीमते। रत्नगंगां महादेवीं ददौ तामिति विक्रमो हेरकं ददौ तस्मै विवाहे दैवमोहितः ॥ ४४ ॥ धर्मारण्ये समाप्य राजधानी कृता तदा। देवांश्च स्थापयामास जैनधर्मप्रणीतकान्॥ लुप्तशासनका विप्रा लुप्तस्वाम्या अहर्निशम्। समाकुलितचित्ता नृपमामं समाययुः ॥ ४८ ॥ कान्यकुब्जपुरं प्राप्य कतिभिर्वासरैर्ते गंगोपकण्ठे न्यवसञ्छ्रान्तास्ते मोढवाडवाः ॥४६ अ० ३६॥ इत्युक्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बौद्ध (जैन) मतानुयायी होगया और अपनी कन्या का विवाह एक जैन (बौद्ध) मतानुयायी कुमारपाल नामक राजा से किया, जो ब्रह्मावर्त्त (बिठूर के पास के प्रान्त) का निवासी था। और जब उसने धर्मारण्य को उसे दायज में दिया तो उसके दामाद (जमाता) ने वहां के पूर्वोक्त वाडवों (ब्राह्मणों) से कर मांगा, एवं अपने देश से चले जाने और उनकी भूमि को (जिसे श्रीरामजी ने दिया था) छीन लेने की आज्ञा दी और कहा कि आप लोग जाइये, हम ऐसे नहीं मान सकते। परन्तु यदि अपने राम और हनुमान् को यहां लावेंगे, तभी हम आपके धर्म और बातों का विश्वास करेंगे। उस पर बहुत से वाडव (ब्राह्मण) रामेश्वरजी की ओर श्रीरामजी की प्राप्ति के लिये गये और अन्त में हनुमान्जी की सहायता से उन्हें उनकी पूर्व की भूमि प्राप्त हुई।

इस आख्यान से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त धर्मारण्य के ब्राह्मण गंगा के उत्तर तट में कान्यकुब्ज देश (कानपूर आदि प्रान्तों) में रहते और इन भूमिहार कहलाने वाले ब्राह्मणों की तरह याजनादि कर्मों से रहित होकर राज्य या भूमिपतित्व करते थे। और जिस मदारपुर में भूमिहार ब्राह्मणों का वर्णन आया है वह भी कानपुर जिले में गंगा से उत्तर ही है, और धर्मारण्य का नाम मोहेर भी है, क्योंकि लिखा है कि,

धर्मारण्यं कृतयुगे त्रेतायां सत्यमंदिरम्।

द्वापरे वेदभवनं कलौ मोहेरकं स्मृतम् ॥२७॥अ ४०॥

अर्थात् 'सत्ययुग में जिसका नाम धर्मारण्य था, उसी का त्रेता में सत्य मंदिर, द्वापर में वेदभवन और कलि में मोहेर नाम पड़ा'। इसी लिये वहां उसकी राजधानी का नाम भी मोहेरपुर लिखा है। तात्पर्य यह है कि धर्मारण्य में जो प्रसिद्ध स्थान होता था, उसी का नाम मोहेरपुर होता था। और वाडव ब्राह्मण वहां के राजा थे। अतः जिस राजधानी में वे रहते थे, वह मोहेरपुर कहलाते २ मदारपुर

हनुमद्दत्ता वामकक्षोद्भवा पुटी। प्रक्षिप्ता चास्य निलये व्यावृत्ता द्विजसत्तमाः॥ १७ ॥ अग्निज्वालाकुलं सर्वं संजातं तत्र चैवहि। जाह्नवीतीरमासाद्य त्रैविद्येभ्यो ददौ नृपः॥ १८ ॥ अ० ३७ ॥ इत्यादि॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहलाने लगी। और चूंकि वे लोग राजा या जबरदस्त थे, इसी यवनों ने उनसे युद्ध किया। क्योंकि साधारण लोगों से राजा लो युद्ध नहीं करते। इस लिये जैसा कि कह चुके हैं कि समय पा कुछ ग्रामों में रहने वाले उन्हीं ब्राह्मणों का नाम भूमिहार ब्राह्म पड़ गया, इसके मानने में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता।

क्योंकि भूमिहार शब्द 'भूमि' शब्द को पूर्व में रखकर हृ हरणे धातु से 'कर्मण्यण्' (पा० ३। २। १) इस पाणि सूत्रानुसार 'अण्' प्रत्यय लगाने पर 'भारहार' आदि शब्दों तरह बना है। यह हृञ् धातु हरण रूप अर्थ का बोधक है। हरण का अर्थ पण्डित प्रवर भट्टोजिदीक्षित ने स्वकृत सिद्धा कौमुदी के उत्तरार्द्ध के भ्वादि गण में इसी हृञ् धातु के प्रक में लिखा है कि 'हरणं प्रापणं, स्वीकारः, स्तेयं, नाशनं च' जिसका तात्पर्य यह है कि, जिस हरण रूप अर्थ का वाचक 'ह धातु है, उस हरण के चार अर्थ हैं; (१) प्राप्त करना अर्थात् प चाना, (२) स्वीकार करना, (३) चुराना और (४) नाश करना। चारों अर्थों के उदाहरण 'तत्त्वबोधिनी' प्रभृति ग्रन्थों में ऐसे लि हैं कि, जैसे, (१) 'भारं हरति' अर्थात् बोझे को हरण करता या पहुंचाता है, (२) 'भागं हरति' अर्थात् अपने हिस्से को ह करता या स्वीकार करता है, (३) 'सुवर्णं हरति' अर्थात् सो हरता या चुराता है और (४) 'हरि हरति पापानि' अर्थात् वि पापों को हरते या उनका नाश करते हैं। परन्तु जब कि रुपये, इत्यादि की तरह पृथिवी की चोरी या नाश हो नहीं सकता। इसलि प्रकृत में हृ धातु के दोही अर्थ हो सकते हैं, प्रापण अर्थात् पहुंचा या बल से अधिकार कर लेना और स्वीकार।

इसलिये भूमिहार शब्द का यह अर्थ हुआ कि 'भूमिं ह प्रापयति बलादधिकरोति केनचिदुपायेन स्वीकरोति वेति भूमिहा अर्थात् जो ब्राह्मण पृथिवी के ऊपर अस्त्र, शस्त्रादि के बल से अधिक कर लेवे, अथवा उपायांतर से प्राप्त पृथ्वी का स्वीकार कर लेवे जैसा कि योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य की भी सम्मति इस विषय में ग्रन्थ अन्त में दिखलावेंगे कि, जिन ब्राह्मणों ने जागीर वगैरः में भूमि प्र की, वे भूमिहार कहलाए—उसे भूमिहार कहते हैं। और ये दोनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धर्मारण्य के पूर्वोक्त ब्राह्मणों में घटती भी हैं। क्योंकि श्रीरामजीके यज्ञ में दक्षिणा स्वरूप भी पृथिवी उन्हें यज्ञ करवाने के बदले मिली थी, और पीछे उस जैनी राजा के तंग करने पर उन्हें उस के गृह इत्यादि को जलाना और रुद्ररूप धारण करना पड़ा, जिस से उस की सब सेनायें नष्ट होगईं। यह बात उसी धर्मारण्य माहात्म्य ग्रन्थ से विदित होती है। और पश्चात् भी उन्हों ने यवन राज्य काल में पृथ्वी पर बहुत सा अधिकार करलिया था। इसलिये उसी समय (यवन काल में) ये मदारपुर के अधिपति ब्राह्मण भूमिहार कहलाये और इसीलिये उन लोगों को यवनों ने बली जान घोर युद्ध किया।

इसी जगह इतना और भी जान लेना चाहिये कि जिस प्रकार अयाचक वीर ब्राह्मण दल के लिये यह भूमिहार या भुइंहार शब्द आया है। क्योंकि संस्कृत भूमिहार शब्द के भूमि शब्द का अपभ्रंश 'भुइं' शब्द होगया है। परन्तु हार शब्द दोनों में ज्यों का त्यों पड़ा है। उसी प्रकार उसी दल के लिये 'महियाल' और 'तगा' अथवा दान त्यागी शब्द आते हैं। जिन में से 'महियाल' शब्द पञ्जाब प्रान्त निवासी सारस्वत ब्राह्मणों के एक प्रतिष्ठित दल के लिये आता है। जिस दल में काशी के भूतपूर्व विद्वन्मंडली मंडन श्रीयुत् काका राम शास्त्री जी होगये हैं। जिनके सुकर्मपुष्प के कीर्तिगन्ध में आज भी विद्वन्मानस-चंचरीक लुब्ध हो रहा है। और तगा या दानत्यागी, अथवा त्यागी शब्द प्रायः मेरठ की कमिश्नरी और उसके समीपवर्त्ती अन्य प्रान्त निवासी गौड़ ब्राह्मणों के उसी अयाचक, कर्म वीर दल के लिये आता है। इन में से 'महियाल' शब्द का ठीक वही अर्थ है जो भूमिहार शब्द का। क्योंकि उसका शुद्ध संस्कृत शब्द 'महीवार' है, जो मही (भूमि का पर्याय) पूर्वक वृञ् अथवा वृङ् धातु से उसी पूर्वोक्त 'कर्मण्यण्' इस सूत्र से अण् प्रत्यय करने से बना है। जिन में से वृञ् धातु का वरण अर्थात् प्रार्थना या स्वीकार अर्थ है, और वृङ् धातु का भी संभक्ति अर्थात् स्वीकार, सम्मान अथवा याद करना अर्थ है। अथवा वृ या वृञ् धातु से भी अण् प्रत्यय करने से यह शब्द बन सकता है। इन दोनों के भी अर्थ पूर्वोक्त ही हैं और धारण करना (रखना) भी है। इसलिये सम्पूर्ण शब्द का यह अर्थ हुआ कि 'महीं भूमिं वृणोति स्वीकरोति प्रार्थयते वा, वृणाति वृणीते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वीकरोति सम्मानयति धारयति वेति महीवारः' अर्थात् जो भूमि का जागीर वगैरः की तरह, जैसाकि इस प्रकरण के अन्त में योगेन्द्र नाथ भट्टाचार्य एम० ए० की सम्मति दिखलायेंगे, स्वीकार या उसके लिये प्रार्थना करे, अथवा उसका सम्मान या पालन करे, उस अयाचक ब्राह्मण दलका नाम महीवार है। यही महीवार शब्द बिगड़ते २ महीवाल होकर आजकल महियाल होगया है। र, ल, तथा ड वर्णों का उलट फेर संस्कृत में भी हुआ करता है। जैसे बिलार और बिडाल। जैसे जमींदार, भूमिहार, पश्चिमादि ब्राह्मणों में कहीं२ लोगोंको ब्राह्मण शब्द कहने से घृणा होती है, जैसा कि प्रथम हीं दिखला चुके हैं, वैसे ही महियाल और त्यागी लोग भी अपने को ब्राह्मण कहने से घृणा करते हैं। केवल महियाल या त्यागी मात्र ही कहते और मनुष्य गणनादि के विवरणों में लिखवाते हैं। क्योंकि उनमें तो संस्कृत का अत्यन्त अभाव सा हो रहा है। इसलिये वे लोग ब्राह्मण शब्द के पवित्र अर्थ को न जान उसे विपरीत ही समझे हुये हैं। इसीलिये उससे घृणा करते हैं। पञ्जाब में जमीन खरीदने वगैरः के लिये यह कानून है कि ज़राअत पेशा (कृषक) जातियां हीं उसे कर सकती हैं न कि दूसरे लोग भी और ब्राह्मणों की गिनती ज़राअत पेशा कौम में न होने एवं तगे और महियालों की गिनती उसमें होने से वहां के बहुत से गौड़ और सारस्वत अपने को महियाल और तगाही कहना और उन्हीं से विवाह करना पसंद करते हैं।

यही दशा गुजरात देशीय सिपाही नागर संज्ञक ब्राह्मणों की भी है। वे लोग भी बड़ौदा प्रभृति राज्यों में बड़े २ जमींदार रहे हैं और संस्कृत तो प्रायः जानते ही नहीं। तथापि वाणिज्य, व्यापार में बहुत ही कुशल होने से लक्ष्मीपात्र हैं और प्रायः बहुत से मजूमदार कहे जाते हैं, जिस का जमींदार ही अर्थ होता है। उन में भी प्रायः राय अथवा भाई पदवी वाले होते हैं, अमुकराय, अमुकभाई इत्यादि। वे लोग भी अपने को 'कौन हैं' ऐसा प्रश्न करने पर केवल 'नागर' कहा करते हैं बल्कि ब्राह्मण कहने से बुरा भी मानते हैं। हां, अब द्वारिका के गोवर्धन पीठ के श्रीशंकराचार्य जीके समझाने से कुछ २ समझने लगे हैं। यह दशा महियालों की है। अन्य सारस्वतों के हजार कहने पर भी अपने को केवल महियाल ही लिखवाते हैं। हां, वे भी अब कुछ २ समझने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगे हैं। उन में बड़े २ जमींदार और राजे होगये हैं और हैं, जिनका विशेष विवरण पं० दुर्गादत्त जोपी रचित 'सारस्वत ब्राह्मण इतिहास' में मिलता है। जो अंग्रेजी और हिन्दी मिश्रित उर्दू में छपा है और १) में स्थान-हाथी बड़कला जिला देहरादून में मिलता है।

उन्हों ने तो उस पुस्तक में जमींदार, भूमिहारादि ब्राह्मणों के सभी दोनवार, किनवार प्रभृति भेदों को लिखकर और बड़े२ राजों, महाराजों तथा बाबुआनों को भी, जैसे कि महाराज द्विजराज श्रीकाशिराज, महाराजा हथुआ, एवं बाबुआन जगतगंज, चितईपुर इत्यादि, लिखकर सभीको सारस्वत ब्राह्मण सिद्ध किया है। जिसे इच्छा हो मंगाकर देखलेवे। उसी पुस्तक के तृतीय सर्ग (अध्याय, बाब) के १६ वें से २६ वें पृष्ठ तक गोत्र और उपाधियों आदि को बतलाकर युक्ति और प्रमाणों से यह सिद्ध किया है कि महाराज पोरस, जो सन ईस्वी ३०० वर्ष पूर्व हुआ, सुधाजोझा सो सन् ५०० ई० में हुआ, राजा छाच जो सन् ७०० ई० में और जैपाल, आनन्द पाल और सुखपाल जो सन १००१ ई० में हुए, ये सभी महियाल आदि सारस्वत ब्राह्मण थे। उनके कुरसीनामे को भी वहां लिखा है और मिलान किया है। यहां तक कि उन्हों ने 'राजर्षि' शब्द भी उन सारस्वत ब्राह्मणों के ही लिये रक्खा है, जिनका वर्णन उस पुस्तक भर में है।

डाक्टर विल्सन की 'भारतीय जातियां' नामक अंग्रेजी ग्रन्थ में महियालों के विषय में द्वितीय भाग के १३४ वें पृष्ठ में इतना हीं लिखा है कि :—

Saraswat Brahmans. 'Another class of the character referred to is that of the Moyals, or movals. They are extensively scattered over the Punjab.'

अर्थात् 'सारस्वत ब्राह्मणों की एक और जाति है जो मोहियाल या मोयाल कहलाती और सम्पूर्ण पञ्जाब में फैली हुई है'। उसी जगह तगा ब्राह्मणों के विषय में लिखा है कि, 'Taga Brahmans of the Punjab are generally cultivators. They belong to the Gauda division of the Brahman-hood. They care little about religious rites of any kind. Yet, as if compensating for their indifference in this matter, they pro-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

fess to obstain from flesh and fish.....They are found principally on the banks of the Saraswati, near Thanesar. Some of the less pure agricultural Brahmans of these villages are called Taga or Gauda Tagas.'

इसका अर्थ यह है कि 'पंजाब के तगे ब्राह्मण प्रायः कृषक हैं, वे गौड़ ब्राह्मण दल के हैं और सभी प्रकार के धार्मिक कार्यों पर कम ध्यान देते हैं। तथापि गोया इसी अपराध के प्रायश्चित्त के लिये, वे लोग मांस, मछली नहीं खाते.....। वे विशेष कर थानेसर के पास सरस्वती नदी के किनारे पाये जाते हैं। इन ग्रामों में बहुत से जो पक्के कृषक ब्राह्मण नहीं हैं वे तगा या गौड़ तगा कहलाते हैं'।

अस्तु, इसी प्रकार तगा या त्यागी ब्राह्मणों का विशेष विवरण यों है कि, महाराज आदि शूर ने ९९९ शकाब्द में कान्यकुब्ज देश से पांच गोत्र के पांच ब्राह्मणों को वहां बुला कर यज्ञ करवाया और युक्तिसे उन्हें वहां स्थापित किया। जिन के उस वंगदेशान्तर्गत गौड़ देश में (ढाका, राजशाही, मुर्शिदाबाद प्रभृति प्रान्तों का नाम गौड़ देश है) कई भिन्न २ कारणों के वश दो दल होगये, जो गंगा के इस और उस पार में वारेन्द्र और राढ़ देश में बसे। इसीलिये वारेन्द्रीय और राढ़ीय कहलाये। उन्हीं मेंसे मनुस्मृति के टीकाकार कुल्लूक भट्ट वारेन्द्र श्रेणी के ब्राह्मण थे। अतएव अपनी टीका के प्रारम्भ में ही वे लिखते हैं कि:—

गौडे नन्दनवासिनाम्नि सुजनैर्वन्द्ये वरेन्द्र्यां कुले।
श्रीमद्भट्टदिवाकरस्य तनयः कुल्लूकभट्टोऽभवत् ॥

जिस का अर्थ यह है कि गौड़ देशके वारेन्द्र श्रेणी के ब्राह्मणों के नन्दनवासी नामक कुल में श्रीमद्भट्ट दिवाकर के पुत्र कुल्लूक भट्ट हुये।

जब कन्नौज से इस देश में ब्राह्मण आये, तो उन के विषय में भिन्न २ मत हैं कि वे लोग फिर गौड़ देश से कन्नौज में लौटे। परन्तु उन के देश वालों ने मगध और वंगादि देशों में जाने के कारण उनका सत्कार न किया। इसलिये फिर लौट गये और गौड़ देश में हीं स्थित हुये। किसी का मत उन के वहां ठहरने के विषय में भिन्न हीं है और किसीका और ही। यह बात 'गौड़ हितकारी' मासिक पत्र के देखने से स्पष्ट विदित होती है; जो मैनपुरी से निकलता है। उस में गौड़

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देश में ब्राह्मण' शीर्षक लेख में जो अप्रैल सन् १९१५ ई० से प्रतिमास प्रकाशित होने लगा है, बहुत से प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर इन बातों को दिखलाया है। उसी पत्र के सितम्बर सन १९१५ ईस्वी के अंक के दूसरे पृष्ठ में लिखा है कि 'बल्लालसेन के पिता विजयसेन के पश्चात् बल्लालसेन ने राढ़ी एवं वारेन्द्र श्रेणी विभाग, एवं वारेन्द्र कुल में कौलीन मर्यादा स्थापित की एवं राढ़ीय श्रेणी में दानत्यागी कुलीन ब्राह्मणों का आदर सत्कार किया'। 'कहते हैं कि बल्लालसेन ने एक स्वर्ण निर्मित गोमूर्त्ति दान की। परन्तु कतिपय राढ़ी ब्राह्मणोंने इस स्वर्ण निर्मित्त धेनु के टुकड़े २ करके स्वस्वभाग ग्रहण किया। इस से बल्लालसेन को दुःख हुआ और दान ग्राही ब्राह्मणों को उन्हों ने समाज से बहिष्कृत करदिया'। इस से उस समय गौड़ देशीय राढ़ीय ब्राह्मणों का एकदल दान त्यागी था और दूसरा दान ग्राही ऐसा प्रतीत होता है। इस के अनन्तर, ऐसा मालूम होता है कि जब यवनों का आधिपत्य वंगदेश में विशेष हुआ, जिस के आजतक अनेकों प्रमाण हैं और जो बात इतिहासज्ञों से छिपी नहीं है, तब, अथवा अन्य उन्हीं कारणों से, जिनका वर्णन अन्य ब्राह्मणों के विषय में पूर्व कर चुके हैं, वे गौड़ देशीय ब्राह्मण गौड़ देश से पश्चिम को चले हैं। परन्तु कान्यकुब्ज प्रभृति ब्राह्मणों ने वंगादि देशों में जाने और रहने से अपने पास रहने नहीं दिया है। इसलिये और कुरुक्षेत्र के पास के देशों को किसी और कारण से भी अनुकूल जान कर वे गौड़ देश के दोनों दलवाले दानत्यागी और ग्राही ब्राह्मण वहीं रहगये हैं। इसमें प्रबल प्रमाण यह है कि, जहां अन्य गौड़ पाये जाते हैं वहीं तगे लोग भी। 'कान्यकुब्जा द्विजाः सर्वे' यह प्रसिद्ध होने और उन्हीं के एक दल के पीछे से गौड़ नाम वाला प्रसिद्ध और पंच द्राविड़ों तक विस्तृत होने से प्रथम जिन पांच दलों का नाम कान्यकुब्ज था, वे ही अब गौड़ भी कहलाए। जैसे सूर्य वंश का नाम पीछे से रघुवंश भी हुआ। इसी से शक्ति संगम तन्त्र में 'पंचगौडाः' इत्यादि लिखा है, जिसे लोग सह्याद्रि खंड और भविष्यपुराण का बताते हैं।

अस्तु, बल्लालसेन के समय में दान त्याग से उनका नाम प्रसिद्ध हो गया। इसलिये वे लोग दान त्यागी कहलाने लगे और दूसरे लोग ज्यों के त्यों कहलाते थे। परन्तु जब गौड़ देश से कुरुक्षेत्र के आस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पास आ बसे, तो अन्य ब्राह्मण तो पूर्वोक्त नियमानुसार गौड़ देश के नाम से गौड़ कहलाने लगे और दान त्यागी लोग गौड़ दान त्यागी, जो बिगड़ते२ काल पाकर गौड़त्यागी होकर फिर त्यागी,तागी, तगा इत्यादि हो गया। इसलिये अब वे लोग गौड़ तगा या तगा कहलाते हैं। यदि उनमें भी कहीं ब्राह्मण शब्द से घृणा है, तो उस का कारण दिखलाही चुके हैं। वे लोग बड़े २ जमींदार हैं, और उनके व्यवहार राजसी हो रहे हैं। गौड़ों में जो आदि गौड़ कहलाते हैं उनका भी यही अर्थ है कि जिनको आदि शूर ने गौड़ देश में बुलाया था अथवा जो प्रथम गौड़ देश में गये, या वहां से प्रथम आकर इन देशों में बसे। इन दान त्यागी गौड़ों के विवाह सम्बन्धादि प्रायः अन्य गौड़ों के साथ सहारनपुर, अम्बाला आदि जिलों में होते हैं। परन्तु महियाल लोग तो अन्य सारस्वतों के यहां अपने पुत्रों का ही प्रायः विवाह करते, अपने को उनसे श्रेष्ठ समझते और प्रायः लड़कियां उन्हें नहीं देते हैं। इस तरह से उत्तर भारत के (१) भूमिहार, (२) दान त्यागी या तगे, (३) महियाल, (४) जमींदार (५) पश्चिमा आदि नाम धारी अयाचक ब्राह्मण हीं इस समय एकसे हैं और इनके आचार विचार, नाम और प्रतिष्ठा इत्यादि भी समान हीं हैं।

इसी प्रकार यदि वंगदेशीय ब्राह्मणों को देखिये तो वहां भी दो दल हैं, अयाचक लोग देवशर्मा कहे जाते हैं, तथा याचक दलवाले भट्टाचार्य। एवं दक्षिण में अयाचक लोग प्रायः राव कहलाते हैं तथा याचक दल वाले भट्ट। महाराष्ट्र के चितपावन लोग, जिनमें लोक मान्य तिलक हुए हैं, अयाचक ही हैं। गुजरात देश के नागरों का हाल कह ही चुके हैं। उस गुजरात में मुझे बहुत से ऐसे ब्राह्मण मिले जिनकी वंश परम्परा की पदवी अयाची है, जिसका अर्थ अयाचक है। कान्यकुब्जों और सर्यूपारियों में भी इन जमींदार और भूमिहार ब्राह्मणों को छोड़कर और भी प्रायः बहुत से ऐसे ब्राह्मण सर्यूपार और कान्य कुब्ज देश में अधिक तर पाये जाते हैं, जो प्रतिग्रह से घृणा करते हुये केवल कृषि, वाणिज्यादि द्वारा ही जीविका करते और कुलीन समझे जाते हैं। मैथिलों में भी प्रायः श्रोत्रिय तथा अन्य भी बहुत से अयाचक ही हैं। एवं उत्कल ब्राह्मणों में भी बहुत से अयाचक हैं जो जाजपुर स्थान के नाम से जाजपुरी कहे जाते हैं और पंड्या भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी तरह इस समय भी कान्यकुब्जों में बहुत से दान त्यागी ब्राह्मण जगद्वंशी और धनंजयी कहलाते हैं।

यद्यपि इन सबों के साथ इन भूमिहार, जमींदार, तगे और महियाल आदि अयाचक विप्रों के खान पान आदि नहीं हैं, तथापि इस कथन का तात्पर्य यह है कि जो अनादि काल से याचक और अयाचक दो प्रकार के ब्राह्मण कहलाते थे, उनका इस समय भी किसी भी देश या प्रान्त में अभाव नहीं है। अतः इनमें से जिन के वंश उज्ज्वल, या आचार व्यवहार अच्छे होवें, उनके साथ खान पान, विवाह आदि करने में कोई हर्ज नहीं है।

अस्तु, यह बात सिद्ध हो गई कि ब्राह्मणों की सभी नूतन संज्ञायें यवन काल में प्रचलित हो गईं। तदनुसार भूमिहार, तगा (दानत्यागी) और महियाल संज्ञाएं भी उसी काल में पड़ीं। और यह भी सिद्ध हो गया कि प्रथम भूमिहार और तगा (दान त्यागी) संज्ञा कान्यकुब्जादि ब्राह्मणों के ही एक २ दल की हुई और भूमिहारादि शब्दों के अर्थ भी विदित हो गये। इसलिये जो लोग ऐसी कुकल्पना करते हैं कि 'जब मदारपुर के ब्राह्मण लोग भूमि को हार गये, तो उनका नाम भूमिहार पड़ा' वह अज्ञान पूर्ण है। क्योंकि व्याकरणादि भी इस अर्थ की पूर्वोक्त रीति से स्थान नहीं दे सकते। और यदि हारने पर ही नाम पड़ा, तो जब मदारपुर के अधिपति थे, उस समय लड़ाई से पूर्व लड़ाई काल में वे लोग क्यों कर भूमिहार कहे गये? और पीछे भी भूमिहार कौन कहा गया? क्योंकि आपकी सुबुद्धि में तो यह असम्भव बात समाई है कि सभी मर गये। और गर्भू तो लड़ाई में था ही नहीं, क्योंकि उसकी माता अपने पिताके घर या अन्यत्र थी और वह गर्भ में था। क्या आप को कहीं ऐसा भी मिला है कि लड़ाई में सभी मारडाले गये? क्या आज कल के समय में भी कोई भी कादर न था। इस लिये ये सब कुकल्पना मात्र हैं। वास्तव अर्थ तो पूर्व में हीं दिखला चुके हैं। यदि 'तुष्यतु दुर्जन' न्याय से आप के इस कल्पित अर्थ को स्वीकार भी कर लेवें, तो भी भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में कोई हर्ज नहीं है। क्योंकि पूर्वोक्त रीति से जो युद्ध में इधर उधर भाग गये, वही ब्राह्मण भूमिहार कहलाये। यदि 'भूम्या भूमेर्वा हारा भूमिहारः'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् जो भूमि के हार रूप होवें वे ब्राह्मण भूमिहार कहलाते हैं। जैसे भूमिसुर या भूसुर का अर्थ भूमि सम्बन्धी (अर्थात् इस लोक का) सुर यानी देवता है, अतः ब्राह्मण भूसुर कहलाते हैं। जैसे पति स्त्री का भूषण रूप होने के कारण उसका हार कहलाता है, वैसे ही पृथ्वी रूप स्त्री के पति होने से यह अयाचक ब्राह्मण भी भूमिहार कहलाने लगे, ऐसी कल्पना आप करते, तो आप की बुद्धिमानी की प्रशंसा की जाती।

अस्तु, ये भूमिहार ब्राह्मण कन्नौज से पूर्वोक्त मदारपूर वाले युद्ध में हट कर काशी के आस पास के प्रांतों में भी फैल गये, क्योंकि वे निकट हैं, न कि अधिक पूर्व के देश। और अन्य अयाचक ब्राह्मणों के इनमें मिलजाने से जैसा कि कह चुके हैं, इनकी संख्या बढ़ने लगी। उसी समय जो अयाचक ब्राह्मण बड़े २ जमींदार, या शक्ति सम्पन्न और अस्त्र शस्त्र धारी थे, परन्तु अभी तक इस भूमिहार संज्ञा वा विशेषण से भूषित न थे, और जो बढ़ते २ तिर्हुत प्रांत के मुजफ्फरपुर दर्भंगा प्रभृति जिलों में चले गये, उन्हें मिथिला देश के निवासी ब्राह्मण प्रभृति अपने को पृथक् रखने के लिये पश्चिम देश से आये हुये ब्राह्मण जान पश्चिमीय ब्राह्मण कहने लगे। जो शब्द आजतक मिथिला प्रान्त में बिगड़ कर 'पश्चिमा ब्राह्मण' इन्हीं अयाचक ब्राह्मणों के लिये कहा जाता है। और इसके साथ ही उस देश के भी जो बहुत से अयाचक ब्राह्मण थे और जिन का व्यवहार याचक मैथिलों को पसन्द न था और न उनका अयाचक ब्राह्मणों को वे भी इन पश्चिमा ब्राह्मणों से विवाह आदि करके इनमें मिलने लगे। यह पश्चिमा ब्राह्मणों का मैथिलों के साथ विवाह और परस्पर खाने पीने की प्रथा आज तक प्रचलित है और बहुत से मैथिल ब्राह्मण मूर्द्धन्य पश्चिमा ब्राह्मणों में इसी कारण मिलते चले जा रहे हैं, जिनका निरूपण आगे करेंगे। इसलिये पश्चिमा ब्राह्मण का अब अर्थ हो गया कि जो ब्राह्मण पश्चिम के कान्यकुब्जादि देशों से तिर्हुत में आये अथवा जो तिर्हुत वाले भी विवाहादि द्वारा उनमें मिलते गये। साथही, इन पश्चिमा ब्राह्मणों ने भूमिहार ब्राह्मणों को हीन अपने सम्बन्ध योग्य समझा, इस लिये काशी के समीप वर्त्ती प्रांतों में रहने वाले इन भूमिहार ब्राह्मणों के साथ विवाहादि करना प्रारंभ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर दिया। इस प्रकार से उनके इन भूमिहार ब्राह्मणों में मिल जाने से भूमिहार ब्राह्मणों का सम्बन्ध मिथिला प्रदेश में भी यद्यपि हो गया, तथापि इनके लिये वहां वही पश्चिमा ब्राह्मण शब्द अब तक प्रचलित है। कहीं २ केवल पश्चिमा शब्द भी आता है।

इस 'पश्चिमा ब्राह्मण' शब्द के विशेष प्रचार होने का कारण यह है कि जब मिथिला देशमें कायस्थों और ब्राह्मणों की पञ्जी (मैथिल वंशावली) लिखी जाने लगी, जिसके अनुसार ही आज की मैथिल सभा केवल मैथिल ब्राह्मणों की ही नहीं है, किन्तु मैथिल कायस्थों की भी है और वहां ब्राह्मण और कर्ण कायस्थ दोनों हीं अपने को मैथिल ही कहते हैं और पाग (पगड़ी) भी दोनों की प्रायः एकसी होती है। तो जैसे मैथिल कायस्थों से अन्य कायस्थों को पृथक् करने के लिये कायस्थ के साथ पश्चिमा शब्द लगने से पश्चिमा कायस्थ कहलाने लगे, वैसेही इन अयाचक ब्राह्मणों को मैथिल ब्राह्मणों से पृथक् करने के लिये ब्राह्मण शब्द के साथ पश्चिमा शब्द लगाकर ये ब्राह्मण पश्चिमा ब्राह्मण कहलाने लगे। अब भूमिहार ब्राह्मण महा सभाके उद्योग से कहीं २ भूमिहार शब्द सुनने में आता है। हां, मगध और तिर्हुत प्रान्त में भी बाभन शब्द का प्रचार है। उनमें से मगध में विशेष रूप से और तिर्हुत में भी कहीं २ केवल यह शब्द बोला जाता है। परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि आजकल प्रायः प्रत्येक प्रान्त में ब्राह्मण मात्र के ही लिये बाभन शब्द का प्रयोग होता है। इसका प्रचार तो यहां तक होगया है कि जो लोग संस्कृत पढ़े लिखे धुरन्धर विद्वान् समझे जाते हैं, वे भी किसी २ विशेष समय को छोड़ अपने या सभी ब्राह्मणों के लिये बाभन शब्द का ही प्रयोग साधारण बोलचाल में किया करते हैं। जैसा कि 'करिया बाभन गोर चमार, इनके संग न उतरे पार' इत्यादि किम्वदन्तियां भी सूचित करती हैं। इसी प्रकार से मिथिला के मैथिल लोग तो अपनी भाषा के व्यवहार में सभी ब्राह्मणों को बाभन कहा करते हैं। जैसा कि 'सोतियो बाभन थीक और कंटाहो बाभनें थीक, बाभनो सब तरहक होइ छथ' इत्यादि। जिसका तात्पर्य यह है कि 'श्रोत्रिय भी ब्राह्मण हीं हैं और महापात्र (प्रेत ब्राह्मण) भी। ब्राह्मण भी सभी तरह के होते हैं'। थोड़ा पश्चिम में जाने पर भी बाभन या बम्भन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शब्द का प्रयोग मिलता है, जैसा कि 'क्यों जी आप तो बम्भन की तरह खटराग करते हैं' इत्यादि। इसी प्रकार अन्य देश में 'करिया बाभन गोर शुद्दर ताहि देखि डरै रुद्दर'।

तात्पर्य यह है कि सभी प्रान्त में बाभन शब्द को ही ब्राह्मणों का बोधक पाते हैं, और यह उचित भी है। क्योंकि संस्कृत ब्राह्मण शब्द का अपभ्रंश बाभन शब्द है, जैसे वाराणसी का बनारस, चतुर्वेदी का चौबे, त्रिवेदी का तिवारी, और मार्ग का मग इत्यादि। और आजकल प्राय अपभ्रंश शब्दों का ही व्यवहार होता है। यह बाभन शब्द ब्राह्मण शब्द से क्योंकर बिगड़ते २ बना, इसका विस्तृत विचार पटना प्रान्तान्तर्गत अमहरा ग्राम निवासी श्री कालीचरण सिंह जी ने 'बाभन' नामक ग्रन्थ में किया है। जिस के देखने से इस विषय तथा अन्य उपयोगी विषयों में ज्ञान प्राप्त हो सकता है। वह अवश्य द्रष्टव्य है।

सारांश यह है कि मैथिली भाषा में श्रोत्रिय शब्द की जगह सोतिय अथवा सोत शब्द का प्रयोग करते हैं, जैसा कि अभी दिखा चुके हैं। श्रोत्रिय शब्द के दोनों रकार उड़ा दिये गये हैं। और श्रावण तथा चैत्रादि शब्दों की जगह भी सावन और चैत शब्द ही बोले जाते हैं। एवं महिष शब्द के मकर की जगह 'भैं' शब्द बोलकर हकार मकार अक्षरों की जगह 'स' अक्षर बोला जाता है। एवं मिथिला में 'महानस' शब्द की जगह भानस शब्द का प्रयोग होता है, जिसका अर्थ सरोई घर है। इसीलिये रसोई बनाने वाले को वहां के लोग 'भनसिया' कहा करते हैं। इन दृष्टान्तों से स्पष्ट होगया कि किस प्रकार ब्राह्मण शब्द बिगड़ते २ बाभन होगया। विशेष कर मैथिली भाषा में इसके विशेष दृष्टान्त मिलते हैं। इसीलिये उस भाषा में ब्राह्मण शब्द की जगह बाभन शब्द ही है और होना भी चाहिये जैसी कि उस भाषा की रीति विदित होगई होगी। इसी तिर्हुत प्रान्त में अन्य ब्राह्मणों के लिये और इन अयाचक दलपति ब्राह्मणों के लिये भी बाभन शब्द का ही प्रयोग होता है। क्योंकि 'जैसा देश वैसा वेष' इस नियमानुसार उस देश में उसी देश की भाषा के शब्द का प्रयोग करना या होना उचित ही है।

मगध देश मिथिला का समीपवर्त्ती है। इसी से पूर्व काल भी मगध और उसका सम्बन्ध बहुत रहा है, जैसा कि बौद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदि के इतिहासों से विदित होता है। साथही, जैसा कि काशी प्रान्त के आचार विचार से मगध का आचार विचार एकदम विपरीत ही हैं, वैसा मिथिला देश से नहीं; किन्तु दोनों देशों के आचार विचार प्रायः मिलते हैं। ये भी दोनों के प्राचीन सम्बन्ध को सिद्ध करते हैं। और जिस विहार अथवा बंगाल का भाग मगध है उसी का तिर्हुत भी है। परन्तु काशी उससे पृथक् है; क्योंकि प्रायः जिन २ प्रान्तों के आचार इत्यादि एक प्रकार के होते हैं वेही एक देश में सम्मिलित किये जाते हैं। इसीलिये यह आज तक देखने में आता है कि मिथिला प्रान्त के अयाचक अथवा याचक ब्राह्मणों के जितने विवाह सम्बन्ध प्रभृति मगध देश में हैं, उतने तिर्हुत से बाहर अन्यत्र काशी प्रभृति प्रान्तों में नहीं हैं। क्योंकि जिन लोगों की भाषा इत्यादि के समझने में विशेष क्लेश नहीं होता, उनके ही सम्बन्ध परस्पर होने में आसानी होती है। मिथिला की भाषा भी मगध देश से मिलती जुलती है। इन्हीं सब कारणों से मगधदेश में भी उसी मिथिला देशवाले, अथवा उस भाषावाले बाभन शब्द का व्यवहार सभी याचक और अयाचक ब्राह्मणों के लिये आता है। नकि काशी प्रान्त के भूमिहार और प्रयाग के जमींदार शब्द का प्रयोग अयाचकों के लिये आज तक आया है। क्योंकि जिसका सम्बन्ध प्रवल होता है वही अपनी ओर उसे सब तरह से घसीटता है। इसी लिये छपरा जिले के पूर्वी भाग में भी बाभन शब्द ही सभी ब्राह्मणों के लिये आता है। क्योंकि वह मिथिला से बहुत निकट और काशी प्रान्त से बहुत दूर होगया है। अत एव वहां के बहुत से आचार विचार भी तिर्हुत से मिलते हैं।

सब से बड़ा प्रमाण छपरा, तिर्हुत और मगध के प्राचीन सम्बन्ध का यह है कि बहुत से मैथिल और पश्चिमा आदि जो ब्राह्मण वहां पाये जाते हैं, वे बहुतेरे या तो छपरा से गये हैं, अथवा मगध देश से। जैसे कि एकसरिया, जैथरिया, दिघवे अथवा दिघवैत, सहदौलिया, दन्सवार और कोदरिया प्रभृति छपरा से तिर्हुत आदि में गये हैं और आरे, सिहुलिया अथवा सिहोगिया या सोहगौरिया, नैनजोरा इत्यादि मगध से तिर्हुत या छपरा में गये हैं। इसी लिये इन सभी का भाषा इत्यादि में मेल है। इस लिये मिथिला भाषा का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही बाभन शब्द मगध या छपरा में भी बोला जाता है, इसमें सन्देह नहीं हो सकता। इसीलिये जो लोग पाण्डित्य के गर्व में यह कुकल्पना करते हैं-जैसा कि मि० ई० ए०गेट साहब ने सन १९०१ ई०की भारत-वर्षीय मनुष्यगणना के विवरण की छठवीं जिल्द के ३७९ पृष्ठ के पारा ६१० के फुटनोट (टिप्पणी) में म०म० हरिप्रसाद शास्त्री की सम्मति लिखी है, जो उन्होंने एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल में दिखलाई थी कि जो ब्राह्मण बौद्ध काल में या तो बौद्ध हो गये थे या उसका प्रभाव उनके ऊपर पड़ गया था, उन के ही लिये बाभन शब्द प्रयुक्त होता है। क्योंकि यह शब्द भी बौद्ध धर्म की पाली भाषा का है इत्यादि। उनकी कल्पना की प्रशंसा जहांतक की जावे सब थोड़ी ही है। क्योंकि इस कुकल्पना से तो प्रायः सभी ब्राह्मण, जैसा कि दिखला चुके हैं, पूर्व काल के बौद्ध सिद्ध हो जावेंगे। फिर उनके मतमें ब्राह्मण शब्द किसके लिये होगा? क्या पञ्जाब प्रान्त तथा प्रयाग के पश्चिम बौद्ध धर्म का प्रभाव न था? अथवा दाक्षिणात्य प्रान्तों में बौद्ध धर्म का प्रबल प्रतापादित्य उदित न हुआ था? यह तो आजकल के पुरातत्त्वविभाग और प्राचीन इतिहासों से स्पष्ट ही है। फिर उन प्रान्तों में आप के मत से किसी भी ब्राह्मण के लिये बाभन शब्द का प्रयोग आज क्यों नहीं मिलता? इस कल्पना से तो आप यह भी कह सकते हैं कि आजकल प्रायः जितने अपभ्रंश (पालीभाषा के) शब्द हिन्दी या देशीभाषाओं में जिन जड़, चेतन सभी वस्तुओं के लिये बोले जाते हैं, वे सब वस्तुएं भी बौद्ध हो गई थीं। जिस तरह मिथिला भाषा का बाभन शब्द बौद्ध ब्राह्मणों के लिये है, उसी प्रकार के 'भानस' आदि शब्द भी बौद्ध रसोई घर के लिये होने चाहियें। क्योंकि जब मनुष्य बौद्ध हो होंगे, तो उनके रसोई घर भी उसी धर्म के अनुयायी हो जाते होंगे अथवा इन शब्दों तथा अन्य अपभ्रंश बनारस, सावन, भादों, चौबे दूबे प्रभृति के लिये कोई और उपाय निकालिये। इसलिये इन सब कुकल्पनाओं का अवकाश यहां नहीं है।

इसी से मि० जान बीम्स ने जो लिखने साहस दिखलाया है कि 'Bhumihars are also called Babhans, by which the people say is, meant a Sham Brahman.' अर्थात् 'भूमिहार लोग बाभन भी कहलाते हैं, जिस का अर्थ लोग यह बतलाते हैं कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोगला ब्राह्मण'। उसका भी खण्डन होगया। क्योंकि इस प्रकार से तो सभी ब्राह्मण दोगले सिद्ध हो जावेंगे, क्योंकि सभी बाभन कहलाते हैं, जैसा दिखला चुके हैं। इसका विशेष विचार आगे होगा। हां, हम इतना अवश्य स्वीकार करेंगे कि बाभन शब्द ब्राह्मण शब्द का अपभ्रंश होने से चौबे, दूबे, भूमिहारादि शब्दों की अपेक्षा प्राचीन है। इसीलिये पाली लेखों में भी कहीं २ पाया जाता है, और इसीलिये उस का प्रचार भी पुराना है न कि इन शब्दों का समकालीन है। चाहे यह बाभन शब्द कैसा हु और कभी का भी होवे, परन्तु पूर्वोक्त युक्तियों से यही मानना पड़ेगा कि उसका विशेषरूप से प्रचार मिथिला देश से हा और उसी भाषा के अनुरोध से हुआ है। इस तरह से जिन अयाचक ब्राह्मणों की स्थिति मगध प्रान्त में थी उन्होंने सदृश और योग्य जमींदार और भूमिहार ब्राह्मणों, अथवा पश्चिमा ब्राह्मणों के साथ सम्बन्ध करना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार मगध प्रान्त में भी अयाचक ब्राह्मणों की स्थिति नामांतर से होगई, जैसी कि मिथिला में। इसी प्रकार से प्रयाग और बांदा प्रभृति प्रान्तों में पूर्वोक्त रीति से यही लोग अभी तक जमींदार ब्राह्मण कहलाते हैं। इसलिये निर्विवाद सिद्ध हो गया कि ये अयाचक ब्राह्मण इन देशों में कहीं भूमिहार ब्राह्मण, कहीं पश्चिमा ब्राह्मण, कहीं केवल बाभन या ब्राह्मण और कहीं जमींदार ब्राह्मण इत्यादि नामों से पुकारे जाते हुये रहते हैं और बिजनौर, अम्बाला आदि जिलों में तगा या दानत्यागी और झेलम, गुरदासपुर आदि जिलों में महियाल कहलाते हैं। परन्तु वस्तुतः ये सभी एक ही हैं। अर्थात् एक आचार वाले अयाचक ब्राह्मण।

इसीलिये मिस्टर क्रुक ने भी अपनी अंग्रेजी पुस्तक 'संयुक्त प्रान्तीय जाति विवरण' (The Tribes and Castes of U.P. and Oudh) के द्वितीय भाग के ६४ वें पृष्ठ में लिखा है कि:- 'Bhuinhar (Sanskrit Bhúmi '-land', kara (har) 'maker'). An important tribe and landowners and agriculturists in eastern districts. They are also known as Babhan, Zamindar Brahman, Grihastha Brahman, or pachchima or 'western' Brahmans.'

जिसका अर्थ यह है कि 'भुइंहार शब्द संस्कृत के भूमिहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शब्द का अपभ्रंश है, जिस के भूमि शब्द का पृथिवी और हार का अधिकार करनेवाला अर्थ है। यह एक प्रसिद्ध जमींदार और सेवा करनेवाली जाति है, जो संयुक्त प्रान्त के पूर्वीय जिलों में पाई जाती है। भूमिहार लोग बाभन, जमींदार ब्राह्मण, गृहस्थ ब्राह्मण और पश्चिम ब्राह्मण भी कहे जाते हैं'।

यह सिद्धकर चुके हैं कि ये अयाचक नामधारी ब्राह्मण प्रथम थोड़े से मदारपुर के कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, परन्तु धीरे २ इनमें सभी धनी और शक्ति शाली अयाचक जमींदार मिलते गये, जिससे इनकी संख्या आज बीस पचीस लाख के लग भग होगई है। प्रसिद्धदृष्टान्त ये हैं:

महाराज द्विजराज श्रीकाशिराज और सभी गौतम भूमिहार ब्राह्मण सर्यूपारी हैं। इसी तरह गाजीपुर के अन्तर्गत करण्डा परगने के पुरैना ग्रामवासी भूमिहार ब्राह्मण भी सर्यूपारी, गौतम गोत्री, किरण मिश्र के वंशज हैं। जिन के पूर्वज पूरण मिश्र और पुरन्दर मिश्र गोरखपुर जिले के भटनी ग्राम के पास पिपरा स्थान से लगभग १७४० ई० में आए और अपने हीं नाम से पुरैना ग्राम बसाया, जो पुरणायन से बिगड़ कर पुरैना हो गया। वहां के राजपूतों के जबरदस्त होने से महाराजा बलवन्त सिंह की तरफ से इन्हें २४०० बीघे की जमींदारी मिली और उन्हों ने हीं इन्हें 'राय' की पदवी भी दी। अब तक वहां के राजपूत जब पांच कोस करण्डा परगने के ब्राह्मणों को खिलाते हैं, तो इन लोगों को भी निमंत्रण देते हैं। यद्यपि ये लोग अयाचक होने से अब उनके द्वार पर जाकर फिर लौट आते हैं, नहीं भोजन करते हैं। भूमिहार ब्राह्मण महासभा के सेक्रेटरी श्री रघुनन्दन प्रसाद सिंह जी कोदरिया मैथिल हैं, जिनका एक भाई आजतक मैथिल ही है। सुरसर के महाराज भी मैथिल ब्राह्मण हीं हैं, जिनकी 'झा' की पदवी आज भी है। नरहन इत्यादि के राजा, बाबू, जो दोनवार कहलाते हैं, कान्यकुब्ज हैं। वे वत्स गोत्रीय देवकली के पाण्डेय हैं, जिनके वंशवाले जनकपुर के पास हिसार ग्राम और छपरा के बभनगावां आजतक पाण्डेय की ही पदवी से भूषित हैं। एकसरिया और सरौलिया, जो क्रमशः छपरा के चैनपुर, बगौरा आदि ग्रामों और दरभंगा के पतौर प्रभृति में पाये जाते हैं और जिनकी पदवी आजतक दीक्षित और मिश्र है, पराशर गोत्री कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। इसी प्रकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नैनजोरा लोग, जो आजतक पहलेजा घाट तथा नैनीजोर में तिवारी ही कहलाते हैं, नैनीजोर के तिवारी सर्यूपारी हैं। इसी प्रकार छपरा के बहुत से धनगड़हा, अटौली प्रभृति ग्रामों में डुमरा के सर्यूपारी ओझा पाये जाते हैं और आजतक अपने को डुमरैत तथा ओझा ही कहते हैं। दरभंगा के पूसा रोड स्टेशन के पास 'खैरी' ग्राम के लोग अभी तक पाण्डेय कहलाते हैं और अपने को पराशर गोत्री और हस्तगामे कहते हैं, जो हस्तगाम के सर्यूपारी पाण्डेय हैं।

इसीप्रकार सिमरी, आरा, के पाण्डेय लोग मनेरके पाण्डे मनेरिया कहाते हैं, ये सर्यूपारी हैं। टेकारी के महाराज प्रभृति, जिन में से कहीं २ लोग कारणवश तिवारी और दूबे आदि भी बोले जाते हैं, दुमटिकार या दुमटेकारके पाण्डेय अथवा तिवारी हैं। जिनके समाज वाले प्रयाग प्रान्त में इसी नाम वाले अबतक पाये जाते हैं, जैसा कि आगे विदित होगा। ये लोग भी दुमटेकार ही कहलाते हैं। कहीं २ लोग भूल से शब्दों का उलट फेर करके दुमकटार या डोमकटार बोलते हैं। परन्तु दुमटिकार कहना हीं उचित है। क्योंकि प्रयाग आदि में यही नाम है और वहां टिकरा नामका एक स्थान भी है। उसलिये डोमकटार नाम को सुनकर विना विचारे अज्ञान मूलक जो कुकल्पनायें की जाती हैं, वे रद्दी हैं। सकरवार लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण फतहतुर जिले के फतुहाबाद स्थान के सांकृत गोत्री मिश्र हैं, जिनके वंशवाले बंगाल के मुर्शिदाबाद प्रभृति जिलों के कांदी इत्यादि स्थानों में मिश्र ही कहलाते हैं, जैसे मणीन्द्रनारायण मिश्र इत्यादि और आरा के दुधारचक में भी। इसी प्रकार किनवार लोग क्यूना के दीक्षित काश्यप गोत्रीय कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। मुजफ्फरपुर के मथुरापुर प्रभृति ग्रामों के पं० राजनारायण शुक्ल वगैरः मामखोर के शुक्ल गर्ग गोत्रीय सर्यूपारी ब्राह्मण हैं। आजमगढ़ के सिकरौरा बहादुर पुर आदि ग्रामों, एवं गाजीपुर के धुवार्जुन आदि ग्रामोंके केवल भारद्वाज और भारद्वाज गोत्रीय चौधरी लोग मचैयां पाण्डेय सर्यूपारी हैं। एवं टीकापुर, वीवीपुर प्रभृति ग्रामों के श्रीमथुरा प्रसाद सिंह वगैरः भृगुवंशी लोग भार्गव (वत्स) गोत्री कनौजिया पाण्डे हैं, जिनके ही वंश वाले बस्ती के कोटिया आदि ग्रामों में अबतक पाण्डे कहलाते हैं। गाजीपुर के देवा नामक ग्राम में काश्यप गोत्रीय जिझौतिया ब्राह्मण हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो बुन्देल खण्ड के बांदा, हमीरपुर इत्यादि जिलों में बहुत पाये जाते हैं और सभी अयाचक और जमींदार होते हैं। जिन में से बहुतेरे राय, सिंह इत्यादि कहलाते हैं। जैसा कि चित्रकूट में श्रीदर्यावसिंह पर जागीरदार हैं, जो जिझौतिया ब्राह्मण हैं और बहुत प्रतिष्ठित हैं ये लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के ही भेद हैं और हमीरपुर इत्यादि प्रान्तों में रहने से जिझौतिया कहलाये। क्योंकि उस देशका प्राचीन नाम जिझौती था। जैसा कि मिस्टर क्रुकने अपने पूर्वोक्त ग्रन्थ के प्रथम भाग के ५६ वें पृष्ठ में जिझौतियों के विषय में लिखते हुये लिखा है कि

'A branch of the Kanaujia Brahmans, who take their name from the country of Jajakshukti, which is mentioned in the Madanpur inscription. Of this General Cunningham writes:-"The first point deserving of notice in these two short but precious records is the name of the country, Jajakshukti, which is clearly the Jajahauti of Aburihan.'

जिस का मर्मानुवाद यह है कि 'जिझौतिया (कहीं२ जुजहुति भी कहलाते हैं) ब्राह्मण कान्यकुब्ज ब्राह्मणों की एक शाखा हैं। जिनका यह नाम जजाक्शुक्ति, देश के नाम से पड़ा है, जिसका वर्णन मदनपुर (ग्वालियर के पास एक ग्राम है) के प्राचीन लेख में आया है इसके विषय में जनरल कनिंगहम साहब ने लिखा है कि मदनपुर के इन दोनों संक्षिप्त परन्तु महत्त्व पूर्ण लेखों में पहली बात जो ध्यान देने योग्य है, वह 'जजाक्शुक्ति' देशका नाम है, जो अबूरिहान ने लिखे हुये 'जिझौती' देशका स्पष्ट रूप से दूसरा नाम है'।

बलिया जिले के वैरिया ग्राम के प्रसिद्ध कर्मठ 'पांडे' को कौन नहीं जानता? वे भी भूमिहार ब्राह्मण हीं हैं। श्रीराम गोपाल सिंह चौधुरी के पिता पांडे जी करके प्रसिद्ध थे। इसीलिये उनके चार पुत्रों में चौधुरी सोना पांडे वैसेही कहे जाते थे। बनारस के अन्तर्गत कोल परगना बासी कोलहा भूमिहार ब्राह्मण भी सर्यूपारीण ब्राह्मण कश्यप गोत्री भरसी के मिश्र, हरिनाथ मिश्र के वंशज हैं। महात्मा हरिनाथ मिश्र के दो पुत्रों में से देवांग मिश्र के वंशज ये लोग और देवशरण मिश्र के वंश में इन लोगों के पुरोहित हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि वे लोग भी भरसी के कश्यप गोत्री मिश्र ही हैं।

कहां तक गिनाया जावे ? समय २ पर सभी पाठक, चौबे, दूबे, तिवारी, मिश्र, ओझा, झा इत्यादि ब्राह्मण इस अयाचक नामधारी ब्राह्मण समाज में मिलते गये। जो आजतक उन्हीं नामों और आस्पदों (पदवियों) से दरभंगा, मुजफ्फर पुर, छपरा, शाहाबाद, पटना, गया, गोरखपुर और बस्ती एवं प्रयाग प्रभृति प्रान्तों में पाये जाते हैं। जैसा कि आनापुर प्रभृति ग्रामों के चौधुरी लोग पहितीपुर के पाण्डेय सर्यूपारी हैं और भरतपुरा वगैरः के अथवं लोग दक्षिणी ब्राह्मण हैं।

इसीलिये मिथिला के प्राचीन धुरन्धर विद्वान् मीमांसक महा महोपाध्याय श्री चित्रधर मिश्र जी का यही कथन है कि भूमिहार ब्राह्मण दल में एक ब्राह्मण नहीं हैं, किन्तु प्रायः सभी देशों के धनवान अयाचक ब्राह्मण इस दल में समय २ पर मिलते गये हैं।

४—आचार व्यवहार।

अब हम ब्राह्मणों के आचार व्यवहारों पर दृष्टि पात करते हुये इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों के आचार व्यवहारों का भी वर्णन करते हैं। प्रथम हीं दिखला चुके हैं कि क्यों कहीं २ इनमें तम्बाकू इत्यादि पीने का अभ्यास हो गया और क्योंकर आजकल भी सभी ब्राह्मणों में बहुत से ऐसे व्यवहार घुसते चले आते हैं और चले आवेंगे, जिन्हें प्राचीन लोग अनुचित समझते थे और समझते हैं। यद्यपि पूर्व समय में ब्राह्मणादि तम्बाकू का खाना, पीना अथवा सूँघना निषिद्ध अथवा बुरा समझते थे। क्योंकि वह स्वदेशी वस्तु न हो कर अज्ञात, विदेशी और मादक वस्तु है। तथापि आज कल, अथवा इससे कुछ पूर्व भी लोगों की घृणा उससे एक दम जाती रही। सिवाय अज्ञान और दम्भमूलक मिथ्या अभिनिवेश और दिखावे के कुछ न रह गया। क्योंकि प्रायः मुसलमान लोग ही इसे इस देश में लाये। अत एव संस्कृत कोष में इसके लिये कोई पर्याय शब्द नहीं मिलता और न तो धर्म शास्त्रों में हीं इसका वर्णन है। उन्हीं मुसलमानों के संसर्ग से या देखा देखी कोई ब्राह्मण उसे पीने लगा और कोई खाने और कोई सूंघने में हीं प्रवृत्त हो गया। कोई २ तो दोनों या तीनों करने लगे जो आजतक सभी ब्राह्मणों में पाये जाते हैं। यही दशा क्षत्रियादि जातियों की भी है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि पीने का ही विचार करिये तो समस्त गौड़, सनाढ्य, द्वि-
झौतिया, सारस्वत, गुजराती, दाक्षिणात्य, बंगाली और उत्कल
प्रभृति इसे पीते हैं। कोई हुक्का पीता है और कोई बीड़ी या सिगरेट।
आरा जिले में तथा मिथिला में भी प्रायः बहुत से सर्यूपारी
कहलाने वाले पीते हैं। हां, केवल बहुत से कान्यकुब्जों, सर्यूपारियों
और मैथिलों में दिखलाने मात्र के लिये यह बात रह गई है, क्योंकि
पीने वाले बहुत कम हैं। तथापि अब तो धीरे धीरे अंग्रेजी सभ्यता के
प्रचार से ऐसा हो रहा है कि सिगरेट देवता कम से कम अंग्रेजी के
विद्यार्थियों के मुख से बात कर रहे या करना चाहते हैं और यह
आशा प्रतीत होती है कि थोड़े ही दिनों में इंजन की तरह मुख से
फुक २ धुआं निकालने में एक ब्राह्मण बच्चा भी न बचेगा। क्योंकि
यवनों की घनिष्ठता कुछ देशों में न थी। कान्यकुब्ज, सर्यूपार और
मिथिला में उनका इतना प्रभाव न था जितना पश्चिम, बंगाल,
पञ्जाब और दक्षिण में था। इसलिये इस देश में उसकी कुछ कमी
थी। परन्तु अंगरेजी सभ्यता तो घर २ घुस रही है और अंग्रेजों
के भी प्रधान व्यवहार की ये वस्तुएं हैं। इसलिये सभी इसका
प्रयोग क्यों न करने लग जावेंगे? प्रथम तो इसके रोकने के लिये
सभायें भी न होती थीं और न जगह २ व्याख्यानों की झड़ ही लगा
करती थी। परन्तु आज कल तो इसके रोकने का बहुत ही यत्न
हो रहा है, तो भी इसके प्रचार की (सो भी विदेश के बने सिगरेट
की) उन्नति छोड़ कर अवनति देखने में नहीं आती। इस लिये
पूर्व काल में इसके प्रयोग करने वालों का अपराध ही क्या था।
क्योंकि जब कोई विलक्षण काल चक्र आजाता है, तो प्रकृति उसे
बल पूर्वक कराही डालती है, कारण कि प्रकृति में उसी के भाव भर
जाया करते हैं। इसीसे जबकि यवन काल में उसका भाव प्रकृति
में कम था, उस समय तम्बाकू के पीने वाले बहुत कम थे। यहां
तक कि हम ने प्रायः सभी अयाचक दलवाले ब्राह्मणों के वृद्धों से
पूछा है, तो मालूम हुआ है कि इन लोगों में भी इसका विशेष प्रचार
प्रायः ४० या ५० वर्षों से ही हुआ है। परन्तु उसी समय से लेकर
उस भाव की उन्नति ही होती गई है। इसी लिये आज प्रकृति ने
लोगों पर ऐसा दबाव डाला कि थोड़े दिनों में हजारों उपाय करने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर भी कोई भी इस से बचना नहीं चाहता।

हां, इस समय तक सभी समाजों में तम्बाकू न पीने वालों की भी कुछ संख्या है। किसी में कम किसी में अधिक। परन्तु इस से क्या? जो मैथिल या कान्यकुब्ज अभी तक इस के न पीने की डींग मारा करते थे, वे लोग ही इस के विशेष रूप से व्यवहार करने वाले हैं। प्रायः सभी के पास बड़े २ बटुवे (कपड़े के थैले) हुआ करते हैं। जिनमें तम्बाकू (खाने या सूँघने की) और सुपारी भरी रहती है। मैथिलों और कान्यकुब्जों या सर्यूपारियों पर ही क्या? सभी देश के ब्राह्मणों पर खाने और सूंघने वाला भूत सवार हो रहा है। क्या पीना हीं खराब और खाना, या सूंघना अच्छा है? यह बात क्या किसी धर्म शास्त्र या पुराण में लिखी है? जैसा ही पीना, वैसा ही खाना या सूंघना। बल्कि पीने की अपेक्षा खाना और सूंघना और भी खराब है। क्योंकि पीने से तो धूएं के रूप में उसके दुष्ट परमाणु मस्तिष्क या उदर में थोड़े २ जाते हैं, परन्तु खाने और सूंघने वाले के तो साक्षात् ही। कारण कि, नासिका और मुखों में लोग जबरदस्ती से ठूंस दिया करते हैं। इसलिये पीनेवालों की अपेक्षा खाने और सूंघने वालों को तो और भी बड़ा रोग लग गया है। इस से जो खाने वा सूंघने वाले होकर पीने वालों की निन्दा करते हैं, उन की तो वही दशा है कि 'अपना तो ढेंढ़र न देखे और दूसरों की फुल्ली निहारे'। हां, जो लोग, चाहे अयाचक दलके ब्राह्मण हों, अथवा याचक ब्राह्मणों में से होवें, किसी प्रकार से उसका व्यवहार नहीं करते, वे भले ही सब लोगों को ही, जो पीने, सूंघने या खाने वाले हैं, नीचा दिखला सकते हैं। इसलिये इस विषय में जो लोग चालाक और दाम्भिक हैं उन लोगों में छल और धोखे से दूसरों को नीच बनाने के सिवाय और कोई तत्त्व नहीं है, क्योंकि कोई भी इस से बचा नहीं है।

यदि खाने और सूंघनेवाला पीनेवाले की निन्दा करता, या उसे नीचा दिखलाता है, तो जैसा कि कह चुके कि पीनेवाला खाने और सूंघनेवाले की और भी निन्दा कर सकता और उसे नीचा दिखला सकता है। क्योंकि जैसा कि अभी कह चुके हैं कि, तम्बाकू के वैदेशिक होने के कारण संस्कृत साहित्य में इसका वाचक कोई शब्द नहीं है। इसीलिये धर्म शास्त्रों में भी उसकी विधि या निषेध नहीं है, जिस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से पीना खराब और मुंह, एवं नाक में भूसे की तरह ठूंसना अच्छा लिखा हो। कहीं २ मनुस्मृति आदि में गौड़ी सुरा के पीने का जो निषेध है, वह तो गुड़ आदि से बनी हुई जल की तरह पीने योग्य ही है, क्योंकि वही जल की तरह पी जा सकती है और तमाल तो काले२ पत्तों वाला बड़ा सा वृक्ष होता है, न कि तम्बाकू का नाम तमाल है। जैसा कि रामायण में लिखा है,

नाथ देखु यह विटप विशाला। पाकर जम्बु रसाल तमाला॥

इस से पुराणों के नाम पर कल्पित श्लोक बनाकर 'तमाल पत्र दर्पण' आदि पोथियों में केवल तम्बाकू के पीने की जो निन्दा की गई है वह पक्षपात और परस्पर द्वेष मात्र है।

हां, सामान्य रीति से अज्ञात वैदेशिक पदार्थ होने के कारण सभी प्रकार के अन्य पदार्थों की तरह उसके भी खाने, पीने और सूंघने सभी का निषेध समझा जावेगा। इसलिये यदि किसी ने धर्मशास्त्रों के नाम पर केवल पीने की निन्दा के एक दो मनगढ़न्त श्लोक बना लिये हों, तो उसकी वञ्चकता मात्र है। क्योंकि खाने और सूंघने के विषय में भी ऐसे बहुत से कल्पित श्लोक बन सकते हैं।

परन्तु यदि सभी प्रकार के खाने, पीने, सूंघने की निन्दा के श्लोक मिलें तो वे सत्य की दृष्टि से माने जा सकते हैं। क्योंकि वस्तुतः मादक द्रव्य होने से अन्य मादक द्रव्यों की तरह उसका किसी प्रकार का भी सेवन अच्छा नहीं हो सकता, प्रत्युत हानिकारक ही हो सकता है। जो वैद्यकादि ग्रन्थों में कहीं २ उसका निषेध आता है, वह भी सामान्य रीति से खाने, पीने सभी का है। इसलिये विचार दृष्टि से तम्बाकू का खाना, पीना और सूंघना सभी एक प्रकार के और निंदित हैं। अतः सभी को छोड़ना चाहिये, नकि अन्ध परम्परा का अनुसरण करके खाने एवं सूंघने को तो हाथिया लेना और केवल पीने में दोष बतलाना उचित है। इसीलिये पं० भीमसेन शर्मा ने सन १९१५ ई० के अपने 'ब्राह्मण सर्वस्व' पत्र के एक अंक में युक्तियों और वैद्यकादि ग्रन्थों का प्रमाण देकर इसके खाने, और सूंघने आदि सभी की निन्दा की है और सभी को समान ही ठहराया है।

दूसरा व्यवहार जिसे लेकर इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों की निन्दा की जाती है और एक तरफा डिगरी दी जाती है वह इन में से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जगह तो नहीं, परन्तु काशी और पश्चिमी प्रदेशों के जिलों और बड़े २ बाबुआनों में नमस्कार, प्रणाम और पालागन की जगह 'सलाम' की प्रथा है। यद्यपि दर्भंगा, मुजफ्फरपुर आदि तिर्हुत के और छपरा, गाजीपुर, बलिया वगैरः जिलों में नमस्कार, प्रणाम और पालागन की ही प्रथा प्रचलित है। तथापि जो पूर्वोक्त स्थानों में कहीं २ 'सलाम' की रीति पड़ गई है, उसका कारण तो प्रथम हीं दिखला चुके हैं कि यवनों का घनिष्ठ संसर्ग होने से उनके से ही आचार व्यवहार होगये, और नमस्कार की जगह सलाम करने में हीं लोग गौरव समझने लगे। परन्तु जो लोग वहां तक नहीं पहुंच सकते थे, या कुछ विवेकी होते थे, उन ब्राह्मणों में प्रणाम, नमस्कार की ही प्रथा पड़ी रह गई। इसीलिये मिथिला प्रान्त में मैं ने हीं कई जगह बाबुआनों में देखा है कि जब वहां की उनकी याचक ब्राह्मण प्रजा पत्रों में नमस्कार शब्द का प्रयोग करती है, तो वे लोग, यह समझ कर कि प्रजा लोग हमारी बराबरी का दावा करते हैं और प्रतिष्ठा नहीं करते, रंज होते हैं और नमस्कार शब्द को काट कर सलाम लिखने को कहते हैं। इस बात में जिसे सन्देह होवे वह स्वयं जाकर अथवा मेरे साथ चलकर अच्छी तरह देख सकता है। क्या यह बात पूर्वोक्त सिद्धान्त को पुष्ट नहीं कर रही है?

काशीस्थ भूत पूर्व पण्डित प्रवर काकाराम शास्त्री के विषय में एक ऐसा ही आख्यान है। वे भी तो महियाल ब्राह्मण हीं थे। इसलिये उनके भगिनी पति (बहनोई) कोई प्रतिष्ठित महियाल, जो फौजी हवलदार थे, उनसे मिलने के लिये जब काशी में आये, तो शास्त्री जी ने अपने विद्यार्थियों को इशारा किया कि उनको भी प्रणाम, या नमस्कार करें। परन्तु ऐसा करने पर बहनोई जीने विद्यार्थियों से कहा कि 'भाई! प्रणाम या नमस्कार तो उन्हें हीं (शास्त्रीजी को) करो, मुझे तो सलाम किया करो'। क्या यह आख्यान पूर्वोक्त धारणा का पोषक नहीं है? आज कल तो इसके सैकड़ों क्या हजारों उदाहरण हैं। क्या आज कल के अंग्रेजी पढ़ने वाले वकील, बैरिस्टर, या अफसर लोग प्रणाम, नमस्कार की जगह परस्पर 'गुडमार्निंग' (Goodmorning) या सलाम नहीं करते? यहां तक कि स्कूल के विद्यार्थी भी उसी का अभ्यास करते हैं। चाहे परस्पर तो कभी प्रणामादि शब्दों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का प्रयोग भी हो जावे। परन्तु जब वे लोग बड़े २ अंग्रेज और मुस-
लमान अफसरों से मिलते हैं, तो क्या वहां भी नमस्कार, या प्रणाम
शब्द का ही प्रयोग होता है? क्या स्कूलों और कालिजों में सभी छात्र
'गुडमार्निंग' (Goodmorning) नहीं करते? फिर उसी बारम्बार
के अभ्यास से परस्पर भी वही करने लग जाते हैं, और लग जावेंगे।
ठीक इसी प्रकार यवन राजाओं के यहां सलाम शब्द का प्रयोग
होते २ अभ्यास पड़ जाने से धीरे २ परस्पर और प्रजाओं के साथ
भी उसी सलाम शब्द का प्रयोग जहां तहां हो गया। इसमें
केवल राजा बाबुओं और काशी, जौनपुर, मिर्जापुर, आदि में हीं इस
'सलाम' शब्द का प्रचार विशेष है, क्योंकि वहां यवनों का विशेष
सम्बन्ध रहा है। इसीलिये पञ्जाब आदि देशों में ब्राह्मणों के प्राय
बहुत से आचार यवनों के से होगये हैं। क्या अन्य ब्राह्मण जमींदार
की प्रजा यदि मुसलमान होवे तो वह मालिक को सलाम न करेगी
क्या इससे उसकी निन्दा या हीनता हो सकती है? फिर इस
अयाचक दलवाले ब्राह्मणों की प्रजाओं का कहीं २ सलाम करना देख
क्यों लोगों को नशा हो जाती है, इसका कारण हम नहीं समझते।

परन्तु थोड़ी सी जगह को छोड़कर अधिकांश स्थानों में तो प्रणाम
के साथ अथवा परस्पर भी प्रणाम, नमस्कार या पालागन हीं होते हैं
इसीलिये इतिहास लेखक अंग्रेजों ने भी इस बात को स्पष्ट शब्दों में
कहा है। जैसा कि मिस्टर फिशर बी. ए. (F. H. Fisher B.A.)
ने आजमगढ़ के गजेटियर के ६५ वें पृष्ठ में लिखा है कि:—

'They are saluted with the pranam or pailagi, and
return the salutation with a blessing or 'ashirbad'.

अर्थात् 'भूमिहार ब्राह्मणों को लोग प्रणाम या पालागन शब्द से
प्रणाम किया करते हैं, जिसके बदले में वे लोग आशीर्वाद दिया करते हैं।

इसलिये सलाम शब्द से ये अयाचक दल के ब्राह्मण हीं
नहीं समझे जा सकते। हां, यह शब्द जब प्रतिष्ठित समझा जाता
था, तो था, अब तो इसकी प्रतिष्ठा नहीं है, इसलिये इसे
प्रतिष्ठा समझना भूल है। किन्तु अब तो यही उचित है कि
इस 'सलाम' शब्द को सर्वदा के लिये ही तिलाञ्जलि दे
जावे और परस्पर नमस्कार एवं प्रणाम शब्दों के ही व्यवहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होवें। क्योंकि ब्राह्मणों के लिये परस्पर इन संस्कृत शब्दों का ही प्रयोग उचित है और उसी से शोभा भी है। हां, प्रजा लोग पालगी कर सकते हैं। परन्तु सलाम शब्द तो कहीं भी न रहना चाहिये। इसमें बड़ा भारी दोष तो यह है जिसे लोग समझते ही नहीं। क्योंकि यदि कोई नीच जाति या प्रजा होकर 'सलाम' करे, तो झटपट उत्तर में भी सलाम हीं निकल आता है, जिस से बराबरी हो जाती है। यदि वहां आशीर्वाद शब्द का प्रयोग होता अथवा जीओ, खुश रहो इत्यादि, तब तो कोई हर्ज नहीं होता। परन्तु प्रायः ऐसा होता नहीं। यदि ऐसा होवे तो नीच लोग यदि सलाम भी करें, तो एक प्रकार से हर्ज नहीं है, परन्तु पालागन तो बहुत अच्छा है।

तीसरी प्रथा दृष्टि देने योग्य यह है कि कुछ जगह अयाचक दलवाले बड़े २ लोग भी पुरोहित दलवाले छोटे २ बच्चों को भी प्रणाम करते हैं। यद्यपि यह प्रथा सब जगह नहीं है, तथापि जहां कहीं है उसके होने का उचित कारण आगे प्रसंग वश दिखलावेंगे। जिससे यह स्पष्ट हो जावेगा कि ऐसा करना केवल भूल से है, न कि दूसरी दृष्टि से। इसलिये हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि केवल अपने गुरु या पुरोहित को छोड़कर, सोभी केवल पूजते समय, बाकी उसी ब्राह्मण को प्रणाम या पालागन करना चाहिये, चाहे वह अयाचक हो या याचक, जो विद्यादि सद्गुण सम्पन्न, अथवा अवस्था या दर्जे में अपने से श्रेष्ठ होवे, जैसे चचा, बड़ा भाई इत्यादि। अन्यों के साथ तो समानता का ही व्यवहार रखना चाहिये, चाहे प्रथम अपने हीं 'नमस्कार' करना चाहिये, या वे ही करें; जैसाकि पटना चौक के निवासी पं० रामजीवन भट्ट और उनके पुत्र कृष्णभट्ट अयाचक ब्राह्मणों के साथ करते थे और करते हैं। परन्तु छोटे २ बच्चे, चाहे याचक दल के हों अथवा अयाचक दल के यदि, केवल प्रणाम करें, तो आशीर्वाद के ही योग्य हैं, नहीं तो अपने घर वे और अपने घर आप रहें। यही निष्कृष्ट सिद्धान्त है। जिसका प्रचार मिथिला आदि के अयाचक ब्राह्मणों में है, जिन में से प्रसिद्ध २ दृष्टान्तों को प्रमाण के साथ आगे दिखलावेंगे। इस लिये सर्वत्र इसी के प्रचार की नितान्त आवश्यकता है। इस में संकोच या मुरव्वत का काम नहीं है, क्योंकि धार्मिक कामों में ऐसा नहीं किया जाता॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५—आस्पद, उपाधियां, या पदवियां।

यद्यपि इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों तथा अन्य ब्राह्मणों के पदवियों के विषय में प्रथम हीं बहुत कुछ कह चुके हैं और यह भी दिखला चुके हैं कि राय, सिंह, पांडे, और तिवारी आदि उपाधियां क्योंकर ब्राह्मणों को दी जाने लगीं और कब से। साथही, यह भी कहा गया है कि प्रथम राय, सिंह आदि उपाधियां दीगईं। जिनको देखा देखी ही पांडे, तिवारी आदि पदवियों का आविर्भाव हुआ और फिर उन में भी रद्द बदल होती रही। अर्थात् जो पांडे, तिवारी थे, वे सिंह कहलाने लगे इत्यादि। अब इस जगह इसी बात को दृष्टान्तों और प्रमाणों द्वारा, दिखलाकर, जिन लोगों की भ्रम मूलक ऐसी धारणा है कि राय, सिंह इत्यादि ब्राह्मणों की उपाधियां नहीं हैं, उनके इस भ्रम का संशोधन किया जावेगा। बहुत से कहलाने के लिये पण्डित इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों की कहीं २ राय, सिंह प्रभृति उपाधियों को देखकर चकरा जाते हैं और उनका माथा ठनकने लगता है जिस से बहुत कुछ अनाप सनाप बक जाते हैं। परन्तु यदि उन्हें कभी मिथिलामें जाने या वहां के ब्राह्मणों के नाम सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो जाता, तो उन को सूझ जाती कि ब्राह्मणों की उपाधियों का ठिकाना नहीं है। मैथिल मूर्द्धन्य महाराजा दरभंगा का नाम आनरेब्ल सर रामेश्वरसिंह जी, तथा इन के प्रथम के राजे, महाराजे रामसिंह, महाराज छत्रसिंह तथा महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह इत्यादि कहलाते थे। इनके चचा बाबू तुलापति सिंह थे।

संक्षेप से इतना हीं समझ लेना चाहिये कि राघवपुर आदि ग्राम में जितने धनी श्रोत्रिय हैं, वे सभी बाबू और सिंह उपाधि वाले हैं। ब्राह्मण के नाम के साथ जिस बाबू शब्द को देखकर लोगों की बुद्धि चक्कर खाने लगती है, वह मिथिला प्रदेश में रसोई दार मैथिल तक के लिये बोला जाता है और उसके नाम के साथ यदि बाबू न न जोड़ा जावे तो बुरा मानता है। बनैली के मैथिल राजा कीर्त्यानन्द सिंह जी प्रसिद्ध ही हैं। यहां तक कि काशी प्रान्त में जिस ठाकुर शब्द को ब्राह्मण के नाम के साथ देखकर झट फैसल किया जाता है कि ये ब्राह्मण नहीं, किंतु क्षत्रिय हैं, वही ठाकुर शब्द मिथिला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मणों की प्रधान उपाधि है। महाराज दरभंगा के प्रथम पूर्वज महेश ठाकुर थे, जिन्हों ने राज्य का उपार्जन किया था। महामहोपाध्याय श्री कृष्णसिंह ठाकुर के नाम के साथ सिंह और ठाकुर दोनों शब्दों का प्रयोग होता है और वे बड़े भारी विद्वान् भी हैं। यदि उन शब्दों का अनुचित समझते तो अपने नाम से हटा देते। काव्यप्रदीप नामक संस्कृत साहित्य ग्रंथ के कर्त्ता पं० गोविन्द ठाकुर प्रसिद्ध ही हैं और मुजफ्फरपुर जिले के अथरी ग्राम वासी मिथिला के गणनीय विद्वान् पं० मुक्तिनाथ ठाकुर को कौन नहीं जानता?

, इस जगह इस बात का विचार कर लेना चाहिये कि जो मैथिल मिथिला छोड़ कर बहुत दूर पूर्व या पश्चिम में जा बसा है, परन्तु मिथिला के ब्राह्मणों के साथ उसका विवाह संबंध, अथवा आना जाना लगा हुआ है। क्या वह अपने मिथिला वासी मैथिल ब्राह्मणों के इन सिंह और ठाकुर आदि रूप उपाधियों का परित्याग करदेगा? अथवा उनके प्रयोग करने से ब्राह्मण न समझा जावेगा? क्योंकि उस देश में वे उपाधियां ब्राह्मण से भिन्न क्षत्रियादि के ही नाम के साथ बोली जाती हैं। क्या आप ने देखा है कि जिस मैथिल की पदवी मिथिला में ठाकुर है, वह अन्य देशों में जाकर अपने नाम के अन्त में ठाकुर न कहकर कुछ और कहता है? सारांश यह है कि कोई कहीं भी रहे, परन्तु अपने प्राचीन सम्बन्धियों के विचारों, आचारों और व्यवहारों को नहीं छोड़ता, चाहे वह किसी भी देश का कोई भी ब्राह्मणादि होवे। बस, यही दशा इन जमींदार, भूमिहार आदि ब्राह्मणों की भी समझ लीजिये। क्योंकि मिथिला में ये लोग भी बहुतेरे मैथिलों की तरह ठाकुर कहलाते हैं, जैसे श्री अनूपलाल ठाकुर और श्री अयोध्याप्रसाद ठाकुर मुखतार इत्यादि। प्रायः दिघवैत और दूसरे भी ठाकुर ही कहलाते हैं। इसीलिये वहां से हटकर यदि शाहाबादादि प्रान्तों में चले आये हैं तो वहां भी ठाकुर ही कहलाते हैं। और काशी के आस पास के बड़े २ जमींदार, बाबुआन तथा महाराज द्विजराज श्री काशिराज प्रभृति सभी का सम्बन्ध मिथिला में बहुत दिनों से बराबर पाया जाता है और वहां यह ठाकुर शब्द, जैसा कि कह चुके हैं कि, बड़ी प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाता है, इसलिये उसी सम्बन्ध से अन्यत्र भी जहां तहां उसका प्रचार होता गया। इसलिये उससे कोई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हानि नहीं है और न दूसरी कल्पना की जा सकती है।

यदि क्षत्रियादि भी अन्य देशों में ठाकुर कहलाते हैं तो क्या लावें, उससे इन ब्राह्मणों की हानि क्या है? वे लोग भी जमींदार हैं, इसलिये जमींदार के ही अर्थ में ठाकुर कहलाते हैं। परन्तु भूमिहारादि ब्राह्मणों में ठाकुर शब्द ब्राह्मण और पूज्य बुद्धि से ही प्रयुक्त होता है, जैसा कि मिथिला में दिखला चुके हैं। चाहे ये लोग जमींदार होवें यह दूसरी बात है। यदि ऐसा न माना जावें तो दूसरे देशों में अहीर, कुरमी आदि भी ठाकुर कहलाते हैं, तो फिर क्षत्रियों के भी ठाकुर शब्द में गड़बड़ मच जावेगी और मैथिलों का तो कहना ही क्या है? नाऊ लोग भी तो सभी देशों में ठाकुर बोले जाते हैं तो, क्या इस से क्षत्रिय भी किसी देश में ठाकुर न बोले जावें? इस लिये यह ठाकुर शब्द किसी एक जाति के लिये कहीं भी निश्चित नहीं है, किन्तु जिस जाति में जहां जैसा प्रचार है, एवं उसके अनुसार ही अन्यत्र भी प्रचार है, तो जैसा एक जगह समझा जाता है वैसा दूसरी जगह भी समझा जाता है और जावेगा। चाहे वहां दूसरी जातियां भी उसी शब्द से क्यों न बोली जाती होवें। इस पूर्वोक्त सिद्धान्त के स्थिर हो जाने से पूर्वोक्त आजमगढ़ के गजेटियर के ६५ वें पृष्ठ में जो फिशर साहब ने लिखा है कि:—

"And indeed of ten speak of themselves as Bhumihar Thakurs. The word Thakur, however, is in Azamgarh rarely used as the name of a caste equivalent to Kshatri or Rajputs." ऐसा ही और भी कहीं २ लिखा है।

इसका अर्थ यह है कि 'वास्तव में भूमिहार लोग अपने को बहुधा भूमिहार ठाकुर कहा करते हैं। यह ठाकुर शब्द आजमगढ़ में कभी २ उस जाति के लिये बोला जाता है, जो क्षत्रिय या राजपूतों के बराबर होवे'

इस का यथोचित खण्डन होगया। और भी समझना चाहिये कि जब नाई या कुर्मी लोग भी अकसर सभी जगह ठाकुर ही बोले जाते हैं, तो वहां क्षत्रिय के ही लिये ठाकुर शब्द कैसे हो सकता है? और जब भूमिहार ब्राह्मण अपने को केवल ठाकुर न कहकर नाम के साथ जोड़ते हैं, जैसा कि साहब बहादुर भी केवल ठाकुर न कहकर 'भूमिहार ठाकुर' लिखते हैं। और जैसा कि पूर्व में महेश ठाकुर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गोविन्द ठाकुर आदि कहचुके हैं। या जैसा कि नाऊठाकुर इत्यादि। तो फिर नहीं मालूम कि किस प्रकार से उन्हों ने केवल ठाकुर के बराबर ही किसी नाम के आगे जुटे हुये ठाकुर शब्द का अर्थ लगाया ? इसलिये यह सब कथन इस बात को सिद्ध कर रहा है कि उनलोगों को इसका तत्त्व विदित नहीं था। हां, यदि इस ठाकुर शब्द पर इतना आक्रमण है, तो हम इन जमींदार, भूमिहार नामधारी ब्राह्मणों से यह अनुरोध करेंगे कि कम से कम काशी के प्रान्त में वे इस शब्द का प्रयोग न करें। क्योंकि संसार में 'तुष्यतु दुर्जनः' अर्थात् 'यदि दुर्जन लोग तुष्ट होजावें तो हम इसे स्वीकार भी करलेंगे' यह भी तो न्याय है।

अस्तु, इसी प्रकार चौधुरी, खां, राय और राउत तथा ईश्वर प्रभृति भी उपाधियां मैथिलों में हीं पाई जाती हैं। जिन में से बहुतों को तो थोड़ा आगे चलकर दिखलावेंगे। तथापि दुलार पुर के तुरन्तलाल चौधुरी प्रसिद्ध ही हैं। एवं मिथिला मिहिर का ता० ५-२-१६ ई० का अंक देखने से, जिस में उस वर्ष में होने वाली वेगूसराय की सप्तम मैथिल महासभा का विवरण है, यह स्पष्ट हो जाता है। उसमें लिखा है कि 'तीसरे दिने वैवाहिक कुरीति पर बाबू बबुआ खां बहुत उत्तम व्याख्यान देलन्हि'। तथा उसीमें बीरसायर निवासी पं० जीवनाथ राय व्याकरण तीर्थ, गुणपतिसिंह, चनौर के बाबू यदुनन्दनसिंह झा, बनैली-राम नगर के कुमार सूर्यानन्द सिंह इत्यादि नाम आये हैं, जो सभी मैथिलों के ही हैं। किसी ने सभा में चन्दा दिया और किसीने कुछ किया। इसीलिये पूर्वोक्त डाक्टर विल्सन ने अपने पूर्वोक्त ग्रंथ के द्वितीय भाग के १६३ और १६४ पृष्ठों में स्पष्ट ही लिख दिया है कि भूमिहार ब्राह्मण भी मैथिल ब्राह्मण ही हैं, क्योंकि इनकी और उनकी पदवियां एकसी हैं। जैसा कि, 'There are certainly fewer distinctions recognized among the Mathilas than among any other of the great divisions of Brahmans in India. Those mentioned to me in Bombay, Calcutta and Benares are the following:—

(1) the Ojhas, Ujhas or Jhas, (2) The Thakuras, (3) The Misras, (4) The Puras, (5) The Shrotriyas, (6) The Bhumihars; these are land holders aud culti-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

vators. Mr. Colebrooke says no more than three surnames are in use in that district, Thakura, Misra, Jha, each appropriate in any family. Besides these there are the Chawdhari, Raya, Parihasta, Khan and Kunara.

इसका भाव यह है कि भारतवर्ष में जितने ब्राह्मणों के अन्यभेद हैं उन में जितने छोटे २ दल हैं उन की अपेक्षा मैथिल ब्राह्मणों में छोटे छोटे दल कम पाये जाते हैं। मैथिलों के जिन छोटे २ दलों का वर्णन मुझ से बम्बई, कलकत्ता या बनारस में किया गया है, वे ये हैं:— (१) ओझा, ऊझा अथवा झा, (२) ठाकुर (३) मिश्र (४) पूर (५) श्रोत्रिय (६) भूमिहार, जो कि जमींदार और खेती करनेवाले हैं। मिस्टर कोलब्रुक ने लिखा है कि मिथिला प्रान्त में तीन पदवियां ब्राह्मणों में विशेष रूप से प्रचलित हैं, (१) ठाकुर (२) मिश्र, और (३) झा, जिनमें से प्रत्येक प्रतिवंश में बोली जा सकती हैं। इन तीनों के अतिरिक्त चौधुरी, राय, परिहस्त, खां और कुँवर ये पदवियां भी प्रचलित हैं। दर्भंगा, वनगांव के मैथिल ब्राह्मण खां कहाते हैं।

पूर्व में मिथिला का अन्त और पश्चिम में पञ्जाब इन्हीं के मध्य में हीं ये अयाचक दलवाले ब्राह्मण पाये जाते हैं, अतः वहां भी राय, सिंह, चौधुरी और राउत आदि सभी पदवियां हैं। राउत शब्द राजपुत्र का अपभ्रंश है; क्योंकि प्राकृत भाषा में आर्यपुत्र को अज्जउत्त कहा करते हैं। अतः जिनके पूर्व पुरुष प्रथम राजा थे, वे ब्राह्मण लोग राजपुत्र कहलाते कहलाते, आज राज शब्द का 'रा' हो कर और पुत्र का 'उत,' वे ही सब लोग राउत कहलाने लगे। ये सभी उपाधियां सम्पूर्ण प्रदेश घूमने से जो चाहे वह मालूम कर सकता है। इन में से दृष्टान्त के लिये यदि आप प्रयाग से अक्टूबर नवम्बर १९१० ई० का मुद्रित 'श्रीकान्यकुब्ज' पत्र देखें तो उस के २२ वें पृष्ठ में पं० रघुनन्दनसिंह दीक्षित का नाम, एवं ३८, ३९ वें पृष्ठों में पं० अयोध्यासिंह तिवारी, पं० बिहारीसिंह तिवारी, पं० जीवनसिंह तिवारी और पं० पुलन्दरसिंह का नाम पावेंगे और फतेह पुर जिला, तहसील खजुहा, गांव बरारी में चौधरी कोकलसिंह प्रभृति कान्यकुब्जों को पावेंगे। कान्यकुब्जों के सभी पत्रों को देखेंतो राउत प्रभृति भी आपको मिल जावेंगे। घूमने की भी आवश्यकता न होगी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेष कहां तक लिखा जावे। कान्यकुब्ज कुल कौमुदी के १४४ वें पृष्ठ में लिखा है कि 'जो ब्राह्मण कान्यकुब्जों में २० विश्वेवाले अर्थात् सब से श्रेष्ठ हैं, वे महत्तर कहलाते हैं'। यही महत्तर शब्द बिगड़कर महतो होगया। उसके १२७ वें पृष्ठ में लिखा है कि 'रोहन (नाम है) रौतापुर के तिवारी कहलाये। इसी से (रौतापुर के रहने से) राउत भी कहे जाते हैं। शिवानन्द देवकली के दूबे थे, जिन्हें ठाकुर ब्राह्मण भी कहते हैं'। पृष्ठ ६४ में लिखा है कि 'कुछ काल पीछे बाज २ आस्पदों के बजाय सांकेतिक पद बादशाहों और राजाओं ने भी ब्राह्मणों के कर दिये। जैसे, भट्टाचार्य, चौधुरी, राउत, ठाकुर और चौकसी'। इसी प्रकार सूर्यपारियों में भी बहुत से मिलेंगे। शाहाबाद जिले में गांव के गांव सर्यूपारी सिंह पदवी वाले हैं। यहां तक की बकसर से पूर्व एक ग्राम 'सिंहन पुरा' कहलाता है, जहां के सर्यूपारी सिंह कहलाते हैं। गौड़ों, सारस्वतों और सनाढ्य आदि ब्राह्मणों में तो राय, सिंह की भरमार है। बड़े २ जमींदार सभी सिंह कहलाते हैं और चौधुरी भी। गाजीपुर के श्री शिवनाथसिंह सारस्वत ही (महियाल) ब्राह्मण थे, जो प्रथम से ही यहां पर आकर बस गये। सरस्वती के लेखकों में से पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय को लोग जानते ही हैं। वे सनाढ्य ब्राह्मण हैं। इसी प्रकार जहां ढूंढ़ेंगे वहीं सभी मिल सकते हैं। कान्यकुब्ज दर्पण के २६-३२ पृष्ठों में राय, सिंह और साह पदवी वालों के नाम भरे हैं।

हां, इतनी बात है कि मिथिलादि देशों तथा कन्नौज में राय, सिंह के आगे कहीं २ ठाकुर, दीक्षित, तिवारी आदि भी जोड़ देते हैं और कहीं २ नहीं भी। जैसा कि पूर्व दृष्टान्तों से विदित होगया होगा। परन्तु उचित है कि जिसका जो प्राचीन आस्पद (उपाधि) तिवारी आदि होवे, उसे अवश्य राय, अथवा सिंह आदि शब्दों के आगे जोड़ देवे, नहीं तो धर्म शास्त्र सिद्ध शर्मा शब्द को ही उनके आगे लगा देवे, अथवा उनको निकाल कर शर्मा शब्द को ही केवल रखे, अथवा पांडे आदि भी जोड़ देवे। इसमें मर्जी की बात है।

इसलिये आजकल किसी अयाचक दलवाले ब्राह्मण को अपने नाम के आगे प्राचीन शर्मा या तिवारी, पांडे आदि पद लगाये देख जो कोई बुद्धि के शत्रु यह दलील कर बैठते हैं कि, यदि आप की यह पदवी प्रथम से थी तो आप लोग उसका प्रथम प्रयोग क्यों न करते थे? उनको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन कान्यकुब्जों और सर्यूपारियों को देख और पूछकर अपनी अभिज्ञता का परिचय कर लेना चाहिये। साथही, विचारने की बात है कि 'शर्मा' उपाधि तो सभी ब्राह्मणों की धर्मशास्त्रों से सिद्ध है, जैसाकि मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में लिखा है कि:—

शर्मवद्ब्राह्मणस्य स्याद्राज्ञो रक्षासमन्वितम्।
वैश्यस्य पुष्टिसंयुक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम् ॥३२॥म०२॥
शर्म देवश्च विप्रस्य वर्म त्राता च भूभुजः।
भूतिर्दत्तश्च वैश्यस्य दासः शूद्रस्य कारयेत्॥ यम०॥
शर्मवद्ब्राह्मणस्योक्तं वर्मेति क्षत्र संयुतम्।
गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः ॥विष्णुपु०॥

सब का निचोड़ यह है कि 'ब्राह्मणों के नाम के अन्त में शर्मा और देव शब्द होने चाहियें, एवं क्षत्रिय के नामान्त में वर्मा और त्राता, वैश्य के गुप्त, दत्त आदि और शूद्र के नामान्त में दास शब्द लगाना चाहिये'। अब हम आपही से पूछते हैं कि सभी ब्राह्मणों के नाम के आगे इन नवोद्भूत तिवारी, पांडे, सिंह, ठाकुर और भट्टाचार्य प्रभृति उपाधियों के प्रबल प्रवाह ने जब उन का नाम निशान तक आज मिटा दिया है, तो फिर क्या आज उस के नये सिरे से प्रयोग करने वाले आप के सिद्धान्तानुसार अपराधी समझे जावें? अथवा 'शर्मा' उनकी उपाधि ही प्रथम की न समझी जावे? इसलिये ऐसी कुकल्पनायें विद्वानों को शोभा नहीं देतीं और मूर्खों को कोई रोक भी नहीं सकता।

इस सभी कथन का निष्कर्ष यही है कि राय, सिंह और चौधुरी आदि उपाधियां रखने से भूमिहार आदि ब्राह्मणों में त्रुटि नहीं आगई, जिस से किसी प्रकार इनका पूर्व गौरव घट गया है। क्योंकि ये ब्राह्मण मात्र में प्रचलित उपाधियां हैं। हां, इतना हम अवश्य कहेंगे कि इन सभी आधुनिक उपाधियों को सभी ब्राह्मण छोड़ कर धर्मशास्त्रादि सिद्ध शर्मा, ऋषि, देव, आचार्य और उपाध्याय रूप उपाधियों का ही अब से प्रयोग करें। क्योंकि अब आधुनिक किसी भी राय, सिंह अथवा पांडे, तिवारी प्रभृति पदवियों में तत्त्व नहीं रह गया और न उनसे कोई प्रतिष्ठा ही है। बल्कि निरक्षर, निरुद्योग और कर्म धर्म शून्यों में ये अंध परम्परा की पदवियाँ अब अत्यन्त अयोग्य प्रतीत होती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६–विवाह सम्बन्ध।

हम प्रथमहीं सिद्ध कर चुके हैं कि त्यागी, महियाल, पश्चिमा, भूमिहारादि ब्राह्मण दल सभी देश के कर्म वीर, धनी और प्रतिष्ठित अयाचक ब्राह्मणों का एक दल है, जो उसी समय बना जिस समय कान्यकुब्ज, मैथिल, गौड़, सारस्वत और सर्यूपारी आदि ब्राह्मण दल बन रहे थे। अब इस प्रकरण के अन्त में उसी की पुष्टि के लिये इन अयाचक ब्राह्मणों का प्रतिष्ठित मैथिलों, कान्यकुब्जों, सर्यूपारियों और गौड़ोंसे विवाह सम्बन्ध दिखलाते हुये इनके श्रेष्ठ ब्राह्मण होने में प्रसिद्ध२ पण्डित प्रवरों की सम्मतियां दिखला कर इस प्रकरण को समाप्त करेंगे। जिनके दिखलाने से बहुतों की अनभिज्ञता मूलक कुकल्पनायें समूल विनष्ट हो जावेंगी और उनको अपनी पंडिताई का पता लग-जावेगा। उस सम्बन्ध को नाम बनाम दिखलाने से प्रथमहीं हम उसके विषय में दो एक बातें कह दिया चाहते हैं। एक तो यह कि जब काशी में भूमिहार ब्राह्मण महासभा की बैठक हुई थी तभी महाराज द्विजराज काशिराज ने अपनी वक्तृता में इस बात का वर्णन किया था कि इन अयाचक ब्राह्मणों का मैथिलों, कान्यकुब्जों, सर्यूपारियों और गौड़ों के साथ विवाह सम्बन्ध होता था और है। यद्यपि उन्हों ने इसके रोकने के लिये अपनी सम्मति प्रकाशित की थी, परन्तु हम उस अंश से सहमत नहीं हैं। क्योंकि रोकने में उनका तात्पर्य यह था कि हम लोग अयाचक ब्राह्मण हैं, इसलिये हमारा सम्बन्ध उन्हीं में होना चाहिये, न कि याचक ब्राह्मणों में भी। परन्तु जैसा कि हम प्रथम हीं कह चुके हैं और आगे भी विदित होगा कि अयाचक दल में भी बहुत से अयाचक हैं और इन अयाचकों का साक्षात्स-म्बन्ध उन्हीं से होता है। क्योंकि दरिद्रों के साथ लोग कब करने वाले हैं। और उन अयाचकों का भी अपने दल के अयाचकों के ही साथ होता है, इस प्रकार से तीन, चार या पांच सम्बन्ध के बाद सम्भवतः याचक भी जुट जाते हैं। तो इस से क्या? वे लोग कुछ दूसरे तो हैं नहीं, केवल आचार भेद होने से उनके मतसे सा-क्षात्सम्बन्ध न होना चाहिये। क्योंकि परम्परा सम्बन्ध तो संसार में किसी के साथ भी बचा नहीं है। सभी ब्रह्मा या ऋषियों की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सन्तानें हैं। यदि कोई आदमी किसी चाण्डाल का स्पर्श नहीं करता तो साक्षात् ही नहीं करता, परन्तु परम्परास्पर्श तो रहता ही है क्योंकि दोनों उसी पृथ्वी पर रहते हैं। बल्कि हम तो साक्षात्सम्बन्ध को ही पसन्द करते हैं और बहुत जगह ऐसा होता भी है।

एक बात और भी है कि जैसे भूमिहार ब्राह्मण अयाचक हैं, वैसे ही याचक दल में भी तो बहुत से अयाचक हैं। तो क्या वे लोग सम्बन्ध करनाहीं छोड़कर विना ब्याहे रहजावें? हां, प्रायः जहां जो होता है साक्षात्सम्बन्ध छोड़ देते हैं। वैसेही आप लोगों (भूमिहारों ब्राह्मणों) में भी है। इसलिये कोई भी हर्ज नहीं। यदि आप कहें कि हम लोगों ने तो संकल्प पूर्वक दान का परित्याग किया है, नहीं याचक दल वाले अयाचकों ने, इसलिये उनका दृष्टान्त नहीं दिया जा सकता। सो तो ठीक नहीं है। क्योंकि जैसा कि हम अच्छी तरह सिद्ध कर चुके हैं कि क्रमशः याचकों से अयाचक होते गये और कभी २ अयाचक से याचक भी इत्यादि। इसलिये संकल्प पूर्वक दान त्यागने में कोई प्रमाण नहीं है। यह तो ऐच्छिक धर्म है।

दूसरे यह कि मैथिल परम हंस महोपदेशक नामक एक महात्माने भी 'ब्राह्मण सम्बन्ध' नाम की एक छोटी सी पुस्तक लिखी है। यद्यपि उसमें विशेष रूपसे मैथिलों और भूमिहार ब्राह्मणों के सम्बन्ध दिखलाये गये हैं। तथापि उसके चौथे पृष्ठ में लिखा है कि 'पंजी के पूर्व मैथिल, कान्यकुब्ज, सरवरिया और पश्चिम ब्राह्मणों में सम्बन्ध था' इत्यादि।

इसी जगह यह भी समझ लेना चाहिये कि मैथिल ब्राह्मणों में दो प्रकार के विवाह प्रचलित हैं, एक तो उनकी सौराष्ट्र की केवल विवाह सम्बन्धिनी सभा में होता है, जहां पर कन्या विक्रय प्रथा धर्म माना गया है। जिसके लिये 'मिथिला मिहिर' प्रभृति पत्र और मैथिल महासभा चिल्लाती ही रह गई, मगर कुछ न हुआ। इस विवाह से बड़ा भारी अनर्थ यह होता है कि रुपये देकर अन्य जातियां भी वहां से लड़कियां ब्याह लाती हैं, क्योंकि वहां के विवाह का दारमदार पञ्जीकारों पर होता है, जो बड़े लालची होने के कारण जिसी से विशेष घूस पाते हैं उसी का नाम पञ्जी में लिख देते हैं। फिर क्या? अब तो वेद वाक्यही होगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और उसके मैथिल होने में कोई सन्देह नहीं रहा। क्योंकि मैथिलों का निर्भर उसी काल्पनिक पञ्जी पर ही होता है। इस विषय में बहुत बार विचार और लिखा पढ़ी 'मिथिला-मोद' प्रभृति उनके पत्रों में भी हो चुकी है। और भागलपुर की मैथिल महा सभा में इस विषय का एक प्रस्ताव भी हो चुका है। यद्यपि इस प्रकार के विवाह पर पुराने लकीर के फकीर मैथिलों को बड़ा अभिमान है, तथापि सच पूछिये तो यह विवाह नहीं, किन्तु अनर्थ है। परन्तु यह विवाह प्रायः अप्रसिद्ध और गरीबों का ही है। दूसरे प्रकार का विवाह, जिसे पुराने ढंग के मैथिल अच्छा नहीं समझते, युक्त प्रान्तादि को रीति पर तिलक दहेज देकर और लड़के, लड़कियों के घर बार देखकर हुआ करता है। जिस में पूर्व व्याह की तरह गड़बड़ मचने की सम्भावना भी नहीं रहती। क्योंकि सौराष्ट्र सभा वाला विवाह दोही चार दिन में हो जाता है, परन्तु इस में तो परीक्षा के लिये पूर्ण समय मिलता है। इस विवाह को मैथिल लोग 'तिलकोआ विवाह' कहते हैं। यह केवल प्रतिष्ठित और धनी, एवं जमींदार मैथिलों में हुआ करता है। और यही दूसरे प्रकार का विवाह उन लोगोंका पश्चिमा ब्राह्मणों के साथ होता है। क्योंकि दोनों दल जमींदार और प्रतिष्ठित हो हैं। इसलिये यह कहने का भी अवकाश नहीं रहा कि, मिथिला के विवाह का तो कुछ ठिकाना हीं नहीं, वहां तो धोखे से अन्यों के साथ भी हो जाता है। क्योंकि धोखे की बात प्रथम प्रकार के ही विवाह में रहती है, न कि दूसरे प्रकार के विवाह में भी। यदि पश्चिमा ब्राह्मणों और मैथिलों का परस्पर विवाह सच्ची रीति से होता न रहता, तो भागलपुर की मैथिल महा सभा में उस के रोकने का प्रस्ताव क्यों किया जाता, जिसका विवरण आगे मिलेगा?

इस के सिवाय ता० ११ जनवरी १९१६ ई० के भारतमित्र में भी इसी विषय की सम्पादकीय टिप्पणी ऐसी निकली है कि 'मैथिलों और भूमिहारों के वैवाहिक सम्बन्ध होते हैं, इस से भूमिहार काशीनरेश के ब्राह्मण होने में सन्देह करना व्यर्थ है'। सम्पादक महोदय को कान्यकुब्जों और सर्यूपारियों के साथ भूमिहार, जमींदारादि ब्राह्मणों के सम्बन्ध विदित न थे। इसलिये उन्होंने उनका वर्णन नहीं किया, यह दूसरी बात है। इस सम्पादकीय टिप्पणी को देखते ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किसी दरभंगा निवासी मैथिल जीवछ मिश्र का माथा ठनक उठा और चटपट उन्हों ने सम्पादक जी को बड़े रोष के साथ लिख भेजा कि आपने विवाह सम्बन्ध के विषय में जो लिखा है वह सब गलत है। जो विवाह मैथिलों के नाम पर होते हैं, वे बनावटी मैथिलों के ही नाम पर, न कि सच्चे मैथिल कभी भी भूमिहार ब्राह्मणों के साथ विवाह करते हैं। अतः आपको यह बात विचार कर लिखनी थी इत्यादि। यह ता० ११ जनवरी के बाद के भारत मित्र के किसी अंक में संक्षेप से प्रकाशित है।

इसपर पुनः ता० २५-१-१६ ई० के अंक में पूर्व लेख का सम्पादकीय उत्तर यह निकला कि 'किसी पिछले लेख में हमने लिखाथा कि, जब भूमिहारों का मैथिलों से वैवाहिक सम्बन्ध होता है, तब भूमिहारों के ब्राह्मण होने में सन्देह नहीं किया जा सकता। इस पर दरभंगे के श्रीयुक्त जीवछ मिश्र हम पर बहुत बिगड़े हैं, परन्तु इसका कोई कारण हमारी समझ में नहीं आता। जब एक समाज का मनुष्य किसी दूसरे समाज के विषय में कुछ लिखता है, तब उस का हाल वह दूसरे से ही सुनकर लिखता है, क्योंकि भीतर की बात विशेष घनिष्ठता हुये बिना वह नहीं जान सकता। परमहंस महोपदेशक नाम के एक सज्जन ने कई वर्ष हुये हमारे पास एक पुस्तक छपनेको भेजी थी, जिस में उन्हों ने यह बात लिखी थी। हमारे यहां तो वह पुस्तक नहीं छपी, पर वह छपगई या नहीं यह भी हमें मालूम नहीं है क्योंकि वह यहां से लौटा दी गई थी। उसके बाद हमने एक मैथिल वैष्णव से यही बात पूछी थी और उन्हों ने भी परमहंसजी का समर्थन किया था। इस कारण हमने परमहंस जी की बात प्रामाणिक समझी और उसे लिख दिया... ...। जीवछ जी को अच्छी तरह खोज कर लेना चाहिये और यदि हमारी बात ठीक न ठहरे तो सूचना पाने पर हम सहर्ष उसका खण्डन प्रकाशित कर देंगे।

इस के बाद उक्त मिश्रजी की लेखनी जो रुकी सो आज तक रुकी ही है। फिर ता० २८-१-१६ ई० के अंक में यह प्रकाशित हुआ कि 'मोकामे से श्रीयुक्त आदित्यनारायण सिंह लिखते हैं:—आपने गत मंगलवार के 'भारतमित्र' में दरभंगे के श्रीयुत जीवछ मिश्र जी के क्रोधका जिक्र करते हुए लिखा है कि 'जब भूमिहारों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैथिलों से वैवाहिक सम्बन्ध होता है तब भूमिहारों के ब्राह्मण होने में सन्देह नहीं किया जा सकता है'। आपका कथन निस्सन्देह युक्ति संगत और सत्य है। भूमिहारों तथा मैथिलों के अनेक वैवाहिक सम्बन्ध हुये और होते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक मैथिल और भूमिहार धन के बढ़ घट जाने पर मैथिल से भूमिहार और भूमिहार से मैथिल कहलाने लगते हैं। यदि मेरे कथन पर किसी को विश्वास न हो और इसकी सत्यता जानना चाहे तो मैं उसके साथ घूम कर इसकी सत्यता दिखा दूंगा। इसके सिवाय आपने भी श्रीयुत जीवछ मिश्रजी को अपने कथन की सत्यता प्रमाणित करने के लिये खंडन करने की आज्ञा देदी है। देखें मिश्रजी खण्डन में क्या लिखते हैं।'

इसपर भी मिश्र जी की ओर से किसी की लेखनी न उठी, और अन्त में काशीवासी पं० श्यामनारायण शर्मा सं० 'भू० ब्रा०' का एक लेख ता० ८-२-१६ई० के अंक में प्रकाशित होकर यह लिखा पढ़ी बन्द हो गई। वह लेख यों है:—

'गत पौष शुक्ल सप्तमी को प्रकाशित 'दैनिक भारत मित्र' की सम्पादकीय टिप्पणी 'मैथिलों और भूमिहारों के वैवाहिक सम्बन्ध होते हैं, इससे भूमिहारों के ब्राह्मण होने में सन्देह करना व्यर्थ है,' देख कर दरभंगा निवासी श्रीयुत जीवछ मिश्रजी आपे से बाहर होगये हैं और गत किसी अंक में सम्पादक महोदय को उलाहना देते हुए आप लिखते हैं कि पूर्वोक्त विवाह सम्बन्ध की बात मिथ्या है। भूमिहारों के साथ जिन मैथिलों के ब्याह होते हैं वे कल्पित मैथिल हैं इत्यादि। परन्तु मैं कहता हूं कि, यदि वास्तव में सच्चे मैथिलों के साथ भूमिहार ब्राह्मणों के ब्याह नहीं होते, तो गत सन् १९११ ई० में भागलपुर की मैथिल महा सभा के अधिवेशन में इन के रोकने का प्रस्ताव क्यों किया जाता? और उसके लिये एक सिलेक्ट कमिटी क्यों बनाई जाती? इसका विवरण उसी वर्ष के २९ अप्रैल के 'मिथिला मिहिर' नामक उन्हीं लोगों के पत्र में इस प्रकार है:—

तदनन्तर एकटा महाशय (नाम हमरा विस्मृत भै गेल अछि, मि० मि० सं०) ई प्रस्ताव कैलन्हि जे बहुतो मैथिल ब्राह्मण भूमिहार ब्राह्मणसँ सम्बन्ध करैत छथि। एहि विषय में सभा क दिश सं प्रबंध होबाक चाही, जाहि सं ई सम्बन्ध बन्द हो। सर्व सम्मति सं ई निश्चय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भेल जे एहि विषयक ऊपर विचार करवाक हेतु एकटा सिलेक्ट कमिटी नियत कैलजाय'। बनावटी मैथिलों के नाम पर जो विवाह सम्बन्ध होते थे या होते हैं, वे तो कन्या विक्रय द्वारा कन्या-विक्रय स्थान 'सौराष्ट्र' नाम्नी मैथिलों की प्रसिद्ध वैवाहिक सभा में हुआ करते हैं। परन्तु भूमिहार ब्राह्मणों के साथ के सम्बन्ध तो तिलक दहेज की रीति पर होते हैं, जैसी प्रथा संयुक्त प्रान्तादि देशों में प्रचलित है और जिसे मैथिल लोग 'तिलकौआ' व्याह कहा करते हैं।

क्या दरभंगा प्रान्तस्थ दुलारपुर निवासी मैथिल तुरन्तलाल चौधरी का विवाह उसी प्रान्तस्थ शेरपुर ग्राम के जलेवार मूलवाले भूमिहार ब्राह्मण खगन चौधरी के घर नहीं हुआ है, या वे सच्चे मैथिल नहीं हैं अथवा उन्हीं के घर देवधा वाले भू० ब्रा० रामबकस राय सनैवार की लड़की का व्याह नहीं हुआहै? क्या उसी प्रान्त में दहौरा निवासी मैथिल (योग्य श्रेणी के) वनमाली सरस्वती (सरस्वती बाबू) प्रभृति घर में ठाहर ग्राम के सगोत्र वल्लीपुर निवासी दामोदर चौधरी की बहिन का विवाह नहीं हुआ है? जिस ठाहर ग्राम में नया नगर सनैवार भू० ब्रा० चौधरी झरूला सिंह तथा ऊदनसिंह की बहिनों से सम्बन्ध है। तथा कुरसों ग्रामस्थ मैथिल चित्र नारायण चौधरी का व्याह भिरहा ग्रामस्थ बेलखण्डी राय की पुत्री से और नन्दू के घर में कुरसों के सगोत्र दसौत वाले प्यारेलाल चौधरी के का व्याह क्या नहीं हुआ है? जिन भिरहा वाले नन्दूराय मैथिल लड़के का सकरपुरा ग्रामवासी सनैवार भू० ब्राह्मण नथुनी राय घरमें सम्बन्ध है। इत्यादि १२ गांव भिरहा आदि वाले अनरियें मैथिल का सम्बन्ध भू० ब्राह्मणों से नया नगरादि ग्रामों में है और भिरहा वाले बड़े २ योग्य * और पंजीबद्ध मैथिलों में मिले-हुए हैं। यदि आवश्यकता हो तो सहस्रों ऐसे सम्बन्ध नाम बनाम दिखलाये जा सकते हैं। यदि मैथिल मिश्र जी को सन्देह हो तो उन ग्रामों में जा कर अपना सन्तोष करलेवें। मैथिल और भूमिहार ब्राह्मण सम्

* 'ब्राह्मण सम्बन्ध' नाम की पुस्तक से स्पष्ट है कि मैथिल मूर्द्धन्य श्रोत्रिय दरभंगा महाराज का भी सम्बन्ध परम्परया भूमिहार ब्राह्मणों से मिलता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाली पुस्तक 'ब्राह्मण सम्बन्ध' नाम्नी दरभंगास्थ रामेश्वर प्रेसमें छप चुकी है। जिन्हें इच्छा होवे 'बा०महावीर सिंह, ग्राम गंगापुर, पो० ताजपुर-दरभंगा के पते से मंगालेवें। मुफ्त मिलती है'।

इस के सिवाय बनावटी मैथिलों के विवाह तो केवल लड़कियों के हुआ करते हैं, क्योंकि वहां लड़के वालों को बनावटी बनने का अवसर मिलता है, परन्तु लड़की वाले के तो घर जाना पड़ता है। और दो चार दिन रहना भी पड़ता है। इसलिये बनावट होवे तो पता ही लग जावे। परन्तु मैथिलों और भूमिहार (पश्चिमा) ब्राह्मणों के संबंध तो लड़की और लड़के दोनों के ही होते हैं, जैसा कि आगे विदित होगा। अन्त में हम दरभंगा के नया नगरवासी श्री पारसमणि सिंह नामक अति वृद्ध, अत्यन्त अनुभवी और विचारशील पश्चिमा ब्राह्मण रत्न सज्जन को हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिन की ही सहायता से विशेष रूप से नाम बनाम सम्बन्ध संगृहीत हुआ है। जैसा नाम है वे वैसे ही हैं। और परमहंस जी तो धन्यवाद के पात्र हैं हीं। क्योंकि सम्बन्ध संग्रह का सूत्र पात उन्हीं का किया हुआ है, जिसमें प्रमाण स्वरूप पूर्वोक्त 'ब्राह्मण सम्बन्ध' नामक पुस्तक ही है।

अब विवाह सम्बन्ध दिखलाया जाता है। उसमें भी प्रथम मैथिल ब्राह्मणों के ही साथ अयाचक ब्राह्मणों का सम्बन्ध दिखला कर पीछे कान्यकुब्जों, सर्यूपारियों और गौड़ोंके साथ दिखलाया जावेगा। क्योंकि अभी मैथिलों के सम्बन्ध में बहुत सी बातें कह चुके हैं। इस स्थान पर इतना समझ लेना चाहिये कि जिन मैथिलों का अयाचक, पश्चिमा या भूमिहार ब्राह्मणों के साथ विवाह सम्बन्ध होता है वे सामान्यतः दो प्रकार के प्रसिद्ध हैं, एक तो दोगमियां और दूसरे दोगमियों से अन्य। दोगमियां नाम उस प्रान्त में उन मैथिलों का है, जिनका सम्बन्ध पश्चिमा (भूमिहार) ब्राह्मणों से भी है और मैथिल ब्राह्मणों से भी। वे दोनों ब्राह्मण दल में विवाह के लिये जाते हैं, अतः दोगमियां कहलाते हैं। उन से अन्य वे हैं जिनके सम्बन्ध केवल मैथिलों से ही हैं। यद्यपि जिनका सम्बन्ध केवल मैथिलों से ही है वे भी परम्परया पश्चिमा ब्राह्मणों से दोगमियों के द्वारा विवाह सम्बन्ध में मिल जाते हैं, जैसा कि आगे स्पष्ट होजायगा, और कहीं २ ऐसे भी मैथिल हैं जो दो गमियां न भी कहलाने पर साक्षात् पश्चिमा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मणों से सम्बन्ध करते हैं। तथापि दोगमियों का सम्बन्ध पश्चिमा ब्राह्मणों के साथ साक्षात् और प्रसिद्ध है जिसे सभी जानते हैं, परन्तु अन्यों का या तो अधिकतर साक्षात् सम्बन्ध है ही नहीं, या है भी तो कम होने से उतना प्रसिद्ध नहीं है। इसीलिये वे दो-गमियां नहीं कहलाते।

मैथिलों और पश्चिमा (भूमिहार) ब्राह्मणों के सम्बन्ध इस प्रकार हैं—(१) परगना लोआम, जिला दरभंगा, ग्राम दुलारपुर, मूल अड़-वारनानपुर, गोत्र वत्स, तुरन्त लाल चौधरी मैथिल का विवाह सरैसा, जिला दरभंगा, ग्राम मऊ शेपुर, गोत्र शांडिल्य अथवा वत्स, मूल जलैवार, खगन चौधरी, और पोखन चौधरी पश्चिमा ब्राह्मण की बहिन से है। जिससे उत्पन्न पुत्र बच्चा चौधरी उर्फ कारी चौधरी का विवाह ग्राम भवानी पुर जमसम, परगना हाटी, जिला दरभंगा में किसी योग्य श्रेणी वाले मैथिल के घर में है। इसके अतिरिक्त नीचे के सभी विवाह दरभंगा जिले के ही हैं। (२) पूर्वोक्त तुरन्त लाल चौधरी के ही घर नया नगरस्टेशन के पास ग्राम देवधा, मूल सनैवार, गोत्र भरद्वाज, रामबकस राय की लड़की का विवाह है, जो पश्चिमा ब्राह्मण हैं। (३) दुलारपुर के मगनी राम चौधरी मैथिल का विवाह भिरहा ग्राम में, परगना जखलपुर, मूल अनरिये, गोत्र शांडिल्य, पारसमणि राय दोगमियां मैथिल की कन्या से है, जिन भिरहावाले अनरियों का सम्बन्ध देवधा, नया नगर इत्यादि ग्राम वाले सनैवार मूल के पश्चिमा ब्राह्मणों में भरा है। (४) दुलार पुर के ही मनोहर चौधरी का विवाह ग्राम माखन पुर वसहा, मूल ब्रह्मपुरिये ब्रह्मपुर गोत्र शांडिल्य, चुरामन चौधरी की बहिन से है। ये ब्रह्मपुरिये, मैथिल भी सनैवार पश्चिमा ब्राह्मणों से मिले हुये हैं। (५) पूर्वोक्त भिरहा ग्राम के नन्दूराय मैथिल के पुत्र का विवाह ग्राम सकरपुरा, मूल सनैवार पश्चिमा ब्राह्मण नथुनीराय की भतीजी से है। (६) उसी भिरहा वाले नन्दूराय के घर परगना भरौरा ग्राम भरौरा, छोटे झा और जगतमणि झा का सम्बन्ध है। (७) भिरहा वाले बेलखंडी राय मैथिल, मूल अनरिये का भी संबंध सकरपुरा के पश्चिमा ब्राह्मणों से है। (८) जिस बेलखंडी राय की कन्या का विवाह झंझारपुर स्टेशन के पास कुरसों ग्राम, मूल जलैवार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवध नारायण चौधरी के पिता चित्रनारायण चौधरी मैथिल से है। (९) पूर्वोक्त भिरहा वाले नन्दूराय के ही घर में कुरसो ग्राम वाले के सगोत्र (गोतिया) दसौत ग्राम वाले प्यारे लाल चौधरी के पुत्र बच्चा चौधरी का विवाह है। (१०) भिरहा ग्राम के शीतल राय मैथिल के भतीजे लालजी राय के पुत्र बच्चन राय का विवाह ग्राम मालपुर के सनैवार पश्चिमा ब्राह्मण नथुनी राय की बहिन से है। (११) जिस भिरहा वाले शीतल राय के घर में दरभंगा शहर से पश्चिम पनचोभ गांव के कीर्त्तिनारायण चौधरी के पुत्र द्वारिका नाथ चौधरी मैथिल का विवाह है। (१२) पूर्वोक्त शीतल राय के पुत्र राम किशुन राय का विवाह वस्ती बढ़ौना ग्राम, परगना सरैसा में बबुई लाल चौधरी मैथिल मूल मरैं मगरौनी की पुत्री से हुआ। (१३) उसी बढ़ौना के इशरू चौधरी नया नगर वाले सनैवार पश्चिमा ब्राह्मण विन्ध्येश्वरी प्रसाद सिंह के नाना हैं। (१४) उसी बढ़ौना के बद्री चौधरी का विवाह मौजे भथाही परगना विसारा में फतेह नारायण सिंह कोदरिया पश्चिमा ब्राह्मण के सगोत्र (गोतिया) के घर में हुआ है और उसके निस्सन्तात होने से बद्री चौधरी उसके हिस्से के मालिक हैं। (१५) उसी बद्री चौधुरी के पुत्र बबुवे लाल चौधरी का विवाह मैथिल के ही घर ग्राम पकड़ा, जिला भागलपुर, परगना छई में श्री गूदर सिंह के यहां है। (१६) बढ़ौना के ही देवी लाल चौधरी के पुत्र रक्षाराम चौधरी का विवाह जिला पटना ग्राम (स्टेशन भी) पुनारक में श्री यदुनन्दन सिंह भूमिहार ब्राह्मण सावर्ण्य गोत्र वाले के घर हुआ है। (१७) बढ़ना के ही कुञ्जो लाल चौधरी का विवाह जिला मुंगेर ग्राम (स्टेशन) खगरिया के श्री जानकी प्रसाद सिंह पश्चिमा ब्राह्मण सावर्ण्य गोत्री की बहिन से है। (१८) बढ़ौना के ही पदार्थ सिंह चौधरी का विवाह जिला मुंगेर, गांव तथा स्टेशन बरही श्री सन्तोष सिंह पश्चिमा ब्राह्मण की भतीजी से है। बस्ती बढ़ौना वाले मैथिलों का स्टेशन मुही उद्दीन नगर है। बढ़ौना वालों का संबन्ध शांडिल्य गोत्री अनरियों में भी है जो सनैवार मूल के पश्चिमा ब्राह्मणों से मिले हुये हैं। जैसेः—(१९) बद्री चौधरी के सम्बन्धी सूबाराय मैथिल अनरिये, या ब्रह्मपुरिये ग्राम देकुली, परगना जखलपुर। (२०) प्रयागदत्त चौधरी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की बहिन के लड़के श्री लक्ष्मीनारायण राय मैथिल, अनरिये, गांव पतैली। (२१) तिल्लू चौधरी के सम्बन्धी हरिहर राय अनरिये, ग्राम जगन्नाथपुर। (२२) तिल्लू चौधरी के सम्बन्धी रामगोविन्द झा ग्राम फुलेरा, मूल जलैवार, गोत्र वत्स अथवा काश्यप। (२३) बस्ती-गांव, स्टेशन मुही उद्दीन नगर, जगदीश राय मैथिल मूल जलैवार का विवाह भथाही ग्राम में अवधसिंह कोदरिया की लड़की से। (२४) बढ़ौना के गंगू चौधरी की पुत्री का विवाह रामसुन्दर झा से, ग्राम बेला, मुजौना के पास, परगना सरैसा। (२५) पूर्वोक्त पनचौभ गांव से उत्तर सिमरी गांव में रहने वाले मैथिल मेवालाल चौधरी के भतीजे का विवाह भिरहा में दिगम्बर राय के यहां है। यह मेवालाल दरभंगा के महाराज लक्ष्मीश्वरसिंह के मुंह लग्गू मौर मधुबनी के प्रसिद्ध मैथिल बाबू दुर्गादत्त के तहसीलदार थे। (२६) दरभंगा से दो कोस पश्चिम ग्राम कलिगांव के मैथिल ज्ञानीलाल चौधरी का विवाह भिरहा वाले भाईलाल की लड़की से। (२७) उसी कालिगांव के कुँवर चौधरी भिरहा वाले धर्मलाल राय के भगिना (बहिन के लड़के) हैं अथवा थे। (२८) पूर्वोक्त जगन्नाथपुर के हरिहर राय अनरिये मैथिल का ब्याह सनैवार मूल के ब्राह्मण नयानगर निवासी भुजंगा सिंहकी लड़की से और देवधा में सनैवार ही ब्राह्मण लक्ष्मण राय की लड़की से। (२९) वैरमपुर के अनरिये मैथिल बच्चू राय की शादी नया नगर वाले भुजंगासिंह के घर है। इस तरह १२ गांव वाले अनरिये मैथिलों का सम्बन्ध १२ गांव वाले सनैवार पश्चिमा ब्राह्मणों से एक में एक मिला हुआ है। जिन भिरहा प्रभृति गांव वाले अनरियों का सम्बन्ध कुरसों दसौत इत्यादि ग्रामों में तथा योग्य श्रेणी के मैथिलों में भी है।

इसी प्रकार केवटा, आसिनचक प्रभृति गांवों के ब्रह्मपुरिये मैथिल शांडिल्य गोत्री भी सनैवार इत्यादि मूलके ब्राह्मणों में मिले हुये हैं जैसे, (३०) केवटा के गजराज चौधरी की तीन लड़कियों के विवाह नया नगर में सनैवार ब्राह्मण नरसिंह दत्त सिंह, रघुवर शरण सिंह और जालिम सिंह से हुये। ३१) केवटा के वर्त्तमान सेठ रामाश्रय चौधरी के बाबा रघुवर दयालसिंह की बहिन से नया नगर के जीवलालसिंह का विवाह था

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(३२) आसिनचक के राम दयाल चौधरी की बहिन का विवाह नया नगर वाले महोदय सिंह से। (३३) रामपुर कचहरी के सनैवार ब्राह्मण दिगम्बर रायं के पिता लेखा रायकी लड़का से देकुली के अनरिये (या ब्रह्मपुरिये) हरख राय के पुत्र सूबाराय का ब्याह हुआ। (३४) केवटा के सेठ की लड़की से भिरहा वाले दिगम्बर राय का विवाह हुआ। (३५) वर्त्तमान सेठ श्री रामाश्रयसिंह चौधरी के चचेरे भाई का विवाह पूर्वोक्त बढ़ौना वाले प्रयाग दत्त चौधरी की लड़की से है। (३६) और बढ़ौना के ही उदयसिंह चौधरी के घर में नया नगर वाले अमृत प्रसाद और बलदेव प्रसाद सिंह के विवाह हैं। (३७) विभूत पुर नरहन के द्रोणवार ब्राह्मण श्री द्वारिका प्रसाद सिंह के भाई हरिकृष्ण सिंह का विवाह ग्राम बदलपुरा, बेगू सराय स्टेशन के पास, जिला मुंगेर में श्री वेदनारायण सिंह के भाई चमन सिंह की पोती से हुआ है, और वेदनारायण सिंह की पुत्री का विवाह केवटा के सेठ छत्रधारी चौधरी के पुत्र वर्त्तमान सेठ श्री रामाश्रय सिंह चौधरी से हुआ है। इन छत्रधारी चौधरी के पिता रघुवर दयाल चौधरी दरभंगा के पास के विठौली ग्राम के रामाधीन राय मैथिल के मामा थे। जिस रामाधीन राय की पुत्री का विवाह बछौल परगना, दरभंगा, ग्राम भरतपट्टी, टोले वरदे पुर में बच्चा ठाकुर मैथिल के पुत्र से हुआ। (३८) सेठ छत्रधारी चौधरी की पुत्री का विवाह दरभंगा से ४ कोस पूर्व वैगनी नेवादा ग्राम में सुवंशलाल झा के घर में हुआ। (३९) दरभंगा–खिरहर–के श्री भातू प्रसाद चौधरी दिग्वैत पश्चिमा ब्राह्मण के मामा दुलारपुरके भाईजी चौधरी और खुशी चौ० हैं। क्योंकि भातू प्रसाद के नाना देवधा के मधूसिंह भाई-जी चौ० के मामा हैं। भातू चौ० के पिता राम शिष्ठ चौ० और खुशी चौ० के पिता हंसराज़ चौ० थे। (४०) कुशेश्वरस्थान के पास केवटगांव के श्री काली प्रसाद सिंह द्रोणवार भूमिहार ब्राह्मण और दरभंगा से पूर्व पोखरांव ग्राम के मैथिल कौशिकी दत्त चौधरी, इन दोनों के विवाह विभूत पुर के पास बेगूसराय सब डिविजन के मेघौल गांव में वंशीराय मैथिल की पुत्रियां से हुये, जिस वंशीराय का लड़का जगद्दीप वर्त्तमान है। (४१) विशुनपुर, बेगूसराय के पास जिला मुंगेर, के श्री राम चौधरी मैथिल, मूल मर्रे मगरौनी की पुत्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का विवाह नया नगर वाले श्री पारसमणि सिंह के पोते से हुआ है है। (४२) गांव केशावे, मूल दधिअरे, काश्यप गोत्री मैथिल वाला राय की लड़की का विवाह श्री पारसमणि सिंह के भाई से हुआ। (४३) गांव नाव कोठी, मूल सुरौरे कांटी, गोत्र गौतम, मैथिल चौधरी अयोध्या प्रसाद का विवाह नया नगर के श्री शिवनन्दन सिंह की फुफेरी बहिन से है, जो महम्मद पुर गांव की रहनेवाली है और जिसका मूल सिहोरिया और गोत्र शांडिल्य है। (४४) गांव जोगियारा, मूल सिहोरिया अथवा सिहुलिया (सोहगौरिया) श्री खूब लाल सिंह के पुत्र ईश्वर दयाल सिंह का विवाह जिला मुंगेर, गांव बीरपुर, छोटी गंडक के तट में, मैथिल मूल सुरगणै, गोत्र पराशर, श्री अनूप सिंह के भाई डोमन सिंह की पोती से, और दोनों की फूआ से श्री शिवनन्दन सिंह नया नगर वाले के दादा चौधरी राम दयाल सिंह का विवाह था। जिस शिवनन्दन सिंह के यहां गंगापुर के श्री रामबहादुर सिंह द्रोणवार ब्राह्मण का विवाह है।

(४५) देवधा वाले सनैवार ब्राह्मण रामेश्वर प्रसाद सिंह का विवाह केवटा में रामदीन चौधरी मैथिल ब्रह्मपुरिये के घर में है। (४६) पूर्वोक्त भिरहा वाले धर्मलाल राय की पुत्री का विवाह, ग्राम ठाहर परगना जखलपुर, मूल पनचोभे भानपुर, गोत्र सावर्ण्य, मैथिल भगवान दत्त चौधरी से। (४७) उसी ठाहर ग्राम में मैथिल जीवन चौधरी के यहां नया नगर के चौधुरी झरूला सिंह की बहिन का विवाह और खेदन चौधरी के घर चौधरी ऊदन सिंह की बहिन का विवाह है। (४८) ठाहर के सगोत्र (गोतिया) बल्लीपुर में, सकरी स्टेशन के पास दहौरा ग्राम के वनमाली सरस्वती प्रभृति (सरस्वती बाबू) योग्यश्रेणी के मैथिल के घरके किसी लड़के का विवाह हुआ है, अर्थात् वर्त्तमान महीन्द्र नारायण सरस्वती का बल्लीपुर में मातृक (ननिहाल) है जिस सरस्वती बाबू का सम्बन्ध श्रोत्रिय महाराजा दरभंगा से भी है।

(४६) जिस कुरसों का सम्बन्ध प्रथम पश्चिमा ब्राह्मणों से दिखला चुके हैं, उसी कुरसों के अवधनारायण चौधरी की पुत्री से वनमाली सरस्वती दहारा वाले का विवाह था, जिसके पुत्र लक्ष्मी नारायण सरस्वती हैं। (५०) बल्लीपुर के ही वंशी चौधरी का विवाह परगना सरैसा, ग्राम वमैया, मूल अनरिये, भोली चौधरी की कन्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से हुआ। (५१) ग्राम लगमा उजान, मूल जलैवार गरौल, गोत्र काश्यप, वंशीलाल चौधरी मैथिल का विवाह देवधा ग्राम में सनैवार मूल के ब्राह्मण बालमुकुन्द राय की कन्या से हुआ। (५२) नया नगर वालों के आदि पुरुष श्री पीताम्बर सिंह से भिरहावाले मैथिल रंगलाल राय के बाप की फूआ का विवाह था। (५३) पूर्वोक्त देशावे ग्राम के दधिअरे मूल वाले सभी मैथिलों की लड़कियों के विवाह नया नगर गांव में हैं। (५४) ग्राम पटोरी, परगना सरैसा के सहदौलिया पश्चिमा ब्राह्मण मणि मिश्र के पुत्र का विवाह पूर्वोक्त सस्ती ग्राम के गोपाल राय मैथिल की बहिन से है। (५५) बछ-वारा स्टेशन के पास नाड़ीपुर के मैथिल मोहन राय की पुत्री से पटोरी के गणपति मिश्र के पुत्र का विवाह है। (५६) परगना पीड़ारुच, गांव पीड़ारुच, गोत्र गौतम, मूल खौवाड़े नानपुर, मित्रलाल चौधरी के पिता का विवाह जिला मुंगेर, परगना नईपुर, गांव मरांची मूल जलैवार जाले, गोत्र वत्स, खेदू ईश्वर मैथिल की बहिन से हुआ। (५७) उसी खेदू ईश्वर की बहिन का विवाह भिरहा वाले वेलखंडी राय से। (५८) लोहारभवानीपुर के योग्य श्रेणी के मैथिल बच्चू चौधरी के पितामह का विवाह भूमिहार ब्राह्मणों के यहां मगध देश में था (५९) समौल ग्राम के फतुरीठाकुर के घर महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह का दूसरा विवाह हुआ और उसी घर में बनैली का संबन्ध है। बनैली का सम्बन्ध तो पश्चिमा ब्राह्मणों के यहां दिखाया जाचुका है।

इस प्रकार से दलसिंगसराय स्टेशन से १५, २० कोस उत्तर, दक्षिण और २०, २२ कोस पूर्व, पश्चिमा प्रायः सरैसा परगना और उसके आस पास हजारों मैथिल और पश्चिमा ब्राह्मणों के सम्बन्ध होते चले आये हैं, कहां तक गिनाया जा सकता है। (६०) जिस दुलारपुर का सम्बन्ध पश्चिमा ब्राह्मणों से सिद्ध कर चुके हैं, उसी दुलारपुर का सम्बन्ध भौड़खौवाड़े मूल में उस ग्राम में हुआ है, जिस में महा महोपाध्याय श्रीकृष्णसिंह ठाकुर महाराज दरभंगा के मगोत्र रहते हैं। (६१) वर्त्तमान दरभंगा नरेश महाराजा सर रामे-श्वरसिंह जी का विवाह मंगरौनी पारसमणिझा की पुत्री से हुआ है जो कंटिरवूझा की पितिऔत (चचेरी) बहिन है। कंटिरवूझाका विवाह दारज के बुच्चो चौ० की फूआ से है। बुच्चो चौ० की चचेरी बहिनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का ब्याह सोमबरसा, भागलपुर, के गोरेलाल कुंवर औ र गौरीपुर के लालजीठाकुर (चौ०) से है। कारज ग्राम का सम्बन्ध पूर्वोक्त मुंगेर के मरांची ग्राम में लक्खी बाबू के घर और पनचोभ ग्राम का सम्बन्ध मरांची है, और मरांची का तथा पनचोभ का भी सम्बन्ध पश्चिमा ब्राह्मणों से प्रथम हीं दिखला चुके हैं। (६२) मूल वेलौंचे सुदर्द. ग्राम समौल के दौहित्र कुल में स्वर्गीय श्रीमान् महाराज बहादुर दरभंगा नरेश श्रोत्रिय लक्ष्मीश्वरसिंह का विवाह था। जो छोटी महारानी साहिबा अभी वर्त्तमान हैं, और समौल का सम्बन्ध दुलारपुर और हाबी भौंआड़ में है। जिस दुलार पुर का सम्बन्ध प्रथम हीं पश्चिमा ब्राह्मणों से दिखला चुके हैं और हाबी भौआड़ का भी सम्बन्ध दिखलावेंगे। इस प्रकार जब मैथिल शिरोमणि श्रोत्रिय महाराज दरभंगा भी भूमिहार (पश्चिमा) ब्राह्मणों से विवाह में मिले हुये हैं, और योग्य श्रेणी के भी मैथिलों का सम्बन्ध दिखला चुके हैं, तो अन्य मैथिलों का क्या कहना है?

(६३) जिस कारज ग्राम का सम्बन्ध पश्चिमा ब्राह्मणों से सिद्ध हो चुका है उसी का संबंध परगना सरैसा, सलेमपुर गांव में है और सलेमपुर का सम्बन्ध मैथिल राजा बनैली से है। (६४) खिरहर, दरभंगा, के दिघवैत ब्राह्मण श्रीराम जुलम चौधरी और दुलारपुर के तुरन्त लाल चौधरी दोनों मौसेरे भाई हैं। इनकी मातायें परस्पर वैमात्र बहिनें हैं और दोनोंका ननिहाल समस्तीपुर के निकट झहुरी ग्राम में है। (६५) नैहरा के श्री गोपी चौधरी का सम्बन्ध पूर्वोक्त बरारी (भागलपुर) के मैथिल बाबू के यहां है और श्रीगोपीचौधरी का संबंध पूर्वोक्त मरांची ग्राम (मुंगेर) में नन्हा ईश्वर और नूनू ईश्वर मैथिल के घर भी है। जिस मरांची का सम्बन्ध प्रथम हीं पश्चिमा ब्राह्मणों से दिखला दिया गया है। इस प्रकार से बनैली के मैथिल महाराजा श्रीकीर्त्यानन्द सिंह और बरारी के मैथिल बाबुआन और उन के सम्बन्ध में जितने बाबुआन हैं सभी पश्चिमा ब्राह्मणों से मिले हुये हैं और राजा बनैली का सम्बन्ध महामहोपाध्याय श्रीकृष्ण ठाकुर से है, इसलिये उनका भी सम्बन्ध सिद्ध होगया। इस प्रकार से यदि परम्परा सम्बन्ध का मिलान किया जावे तो मिथिला के किसी भी मैथिल ब्राह्मण का सम्बन्ध इन अयाचक (पश्चिमा)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मणों से बच नहीं सकता। इसीलिये परमहंसजी ने लिखा है कि "धखजरी, कुरसों, बल्लीपुर, दसौत, दुलारपुर, नवादा और नेहरा प्रभृति के कुटुम्ब (सम्बन्धी), कुटुम्ब के कुटुम्ब और उन के कुटुम्ब में सभी सोति (श्रोत्रिय), योग्य और पञ्जीबद्ध (मैथिल) हैं।" क्योंकि मिथिला में विख्यात ये सभी ही हैं। अब नाम बनाम सम्बन्ध न दिखला कर केवल उन ग्रामों के कुछ नाम हीं लिखते हैं, जिनमें प्रायः पश्चिमा ब्राह्मण, दोगमियां मैथिल और अन्य मैथिल रहा करते हैं, और जिनका परस्पर विवाह सम्बन्ध है।

(१) नीचे लिखे हुये नाम प्रायः उन ग्रामों के हैं, जिनमें पश्चिमा ब्राह्मण रहते हैं और उनका सम्बन्ध दोगमियां मैथिलों अथवा अन्य मैथिलों से है। वे ये हैं:-जिला मुंगेर, परगना नईपुर में दहिया, रसलपुर, दामोदरपुर, आगान, आलापुर, चिलइाई, पाली, बनहरा, अम्बा, रामपुर, सजात, नरहरपुर, ताजपुर, चाड़िया, हरपुर, नयाटोल, फतहा, रसीदपुर, आगापुर, लाड़ेपुर, बछवारा, तेमुहा, सूर्यपुरा, प्रभृति। एवं परगना भुसाड़ी में मेधौल, हरखपुरा आदि ग्रामों में सुरगणे मूल पराशर गोत्र वाले ब्राह्मण रहते हैं। दरभंगा जिले के सरैसा परगने के भथाही, सुस्ता, चांदचौर प्रभृति १२ ग्रामों में कोदरिये मूल के ब्राह्मण रहते हैं। जलालपुर, रामपुर, सुरौली, मऊ, शेरपुर प्रभृति ग्रामों में जलैवार मूल वाले रहते हैं। देवधा, पटसा, नया नगर, रामपुर, दुधौना, कचहरी रामपुर, सकरपुर, खड़हैया, मधेपुर, सिहमा आदि ग्राम सरैसा परगने में सनैवार ब्राह्मणों के हैं। मुंगेर में बदलपुरा, गालती, बहादुर नगर प्रभृति ग्राम मरैं मगरौनी मूल के ब्राह्मणों के हैं। इनके अतिरिक्त विभूतपुर, महथी आदि ग्रामों को भी जानना चाहिये। इन पूर्वोक्त ग्रामों में या तो पश्चिमा ब्राह्मण रहते हैं, अथवा वे मैथिल भी रहते हैं जिनके बहुत दिनों से पश्चिमा ब्राह्मणों से अधिक सम्बन्ध होते २ वे भी पश्चिमा ब्राह्मण हो गये हैं।

(२) अब नीचे उन ग्रामों के नाम हैं, जिनमें प्रायः दोगमियां मैथिल रहा करते हैं:-भिरहा, बन्दा, जगन्नाथपुर, दसौत, जोड़पुरा, भौया, बेलसंडी, सिहमा, पतैली, ढरहा, रुपौली प्रभृति ग्रामों में जिला दरभंगा, सरैसा परगने में, अनरिये मूल के शांडिल्य गोत्री मैथिल रहते हैं। लछिमिनियां; पबरा और कांकड़ आदि ग्रामों में टकवारे मूल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाले वत्स गोत्री मैथिल रहते हैं। अख्तियारपुर, मथुरापुर, ऐस, झखड़ा, गुर्महा, तिसवारा, महेशपुर, बाजीतपुर, खजुटिया, बस्ती, बढ़ौना, तोयपुर, व्यासपुर, सूर्यपुर, गाऊपुर, कुम्हिरा, मोरवा, नौवा-चक, भोजपुर प्रभृति ग्रामों में जलैवार मूल के वत्स गोत्री मैथिल सरैसा परगने में रहते हैं। उदयपुर आदि ग्रामों में परिसरै मूलवाले शाण्डिल्य गोत्री रहते हैं। पोखराम और मोतीपुर प्रभृति ग्रामों में गर्ग गोत्री वसहैं मूलवाले बसते हैं। केवटा और आसिनचक प्रभृति ग्रामों में ब्रह्मपुरिये ब्रह्मपुर मूल के गौतम गोत्री रहते हैं। नारी ग्राम में करमहे उड़रा मूलवाले रहते हैं।

(३) इन दोगमियों और पूर्वोक्त पश्चिमा ब्राह्मणों का भी सम्बन्ध जिन २ ग्रामों में होता है उन मैथिल ग्रामों को अब दिखलाते हैं। जैसे, गरौल, दसौत, कुरसों, शेरपुर, कथवार, विष्णुपुर और मकरम पुर आदि में जलैवार गरौल मूल के मैथिल रहते हैं। हाबी भौआड़, वाथो, धड़ोड़ा, बिठौली, मोहली, सिमरामा, उफरदहा, पौड़ी, वेहड़ा, आदि ग्रामों में बेलौंचे बेहड़ा मूल वाले रहते हैं। बल्लीपुर, गाहड़, वनहार, बड़गामा, ठाहर, हसनपुर, बैजनाथपुर, गैघट्टा, टेंगरहा, मूदरघाट और प्रमाना प्रभृति ग्रामों में पनचोभे भानपुर मूल वाले रहते हैं। सहस्रांम, पटनियां, डुमरी, जमुवां, मोहद्दीपुर आदि गांवों में टकवारै नीमा मूल के रहते हैं। पड़री, बोरंज, दहियार, बलिगामै, डरहार और गोविन्दपुर प्रभृति ग्राम वासो मैथिल खौवाड़ सिमड़-वार मूल के हैं। गंगा पट्टी और सेनुवार आदि ग्रामों में ऊनैवार मूल के हैं। कुशोथर आदि में भुसवड़ै मूल वाले तथा लवानी आदि ग्रामों में कोइयारै जड़ैल मूल वाले रहते हैं। इसी प्रकार थलवार, मंझौलिया, कारज, मिश्रौलिया, पीड़ारुच, पनचोभ और देवराम प्रभृति भी उन्हीं मैथिलों के ग्राम हैं, जिनका साक्षात् अथवा परम्परया अयाचक दलवाले ब्राह्मणों से सम्बन्ध है।

मैथिल ब्राह्मणों के प्रसिद्ध चार विभाग हैं, जिनमें सब से श्रेष्ठ श्रोत्रिय, उनके बाद योग्य, पञ्जीबद्ध और चौथे जैवार हैं। इन चारों का सम्बन्ध पश्चिमा ब्राह्मणों से दिखलाया जा चुका है। सम्भव है कि कहीं २ मूल, गोत्र या ग्राम दिखलाने में अन्तर पड़ गया हो, परन्तु बात तो ठीक ही निकलेगी। जैसे काशी के प्रान्त में स्थान या डीह कहलाता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

है, यथा, पिंडी के तिवारियों का पिंडी स्थान है। वैसे ही, उसी स्थान को पश्चिम में निकास और मिथिला में मूल कहते हैं और जिन ग्रामों में उनके पूर्व पुरुष रहते थे तथा जिन को किसी प्रकार से उपार्जन किया था, उन दोनों को मिला कर प्रायः मूल की जगह वहां व्यवहार होता है। जैसे पनचोभे भानपुर इत्यादि। एक बात और भी मैथिलोंके सम्बन्ध में ध्यान देने योग्य यह है कि उनके बहुत से मूल और गोत्र वे ही हैं, जो पश्चिमा ब्राह्मणों के; जैसे दिघवै या दिघवैत मूल, गोत्र शांडिल्य दोनों का एक ही है। इसी प्रकार, कोथवे या कोथवैत मूल, गोत्र विष्णुवृद्ध। सुरगणे मूल, गोत्र पराशर; कोदरिये मूल, शांडिल्य गोत्र; बसहै या बसमैत मूल, गोत्र गर्ग। जनकपुर पिपरा के सूबा गोपालमिश्र बसमैत ही ब्राह्मण थे। जलैवार मूल, गोत्र वत्स या काश्यप। पनचोभे मूल, गोत्र सावर्ण्य। एवं दधिअरै, चकवार और सनेवार प्रभृति को भी जानना चाहिये। यह भी इस बात में दृढ़ प्रमाण है कि मैथिलों और पश्चिमा ब्राह्मणों का सम्बन्ध घनिष्ठ था औरहै।

सनेवार ब्राह्मणों के पूर्व पुरुष दो भाई थे, गोपालराय और केसरीराय। जिन में से केसरीराय की सन्तान पटसा प्रभृति ग्रामों में हैं और गोपालराय की नयानगर प्रभृति में। दो तीन वर्षों से ही पटसा वाले राघवराय आदि पश्चिमा ब्राह्मणों से पृथक हो मैथिलों में मिले हैं। यद्यपि अभीतक नया नगर वालों से उनका खान पान पूर्ववत् है। सरैसा परगने के लोमा ग्राम में प्रथम कोदरिये ब्राह्मणों के आदि पुरुष रहते थे। वहीं से कुछ लोग भथाही और सुस्ता प्रभृति ग्रामों में जा बसे, जो भूमिहार ब्राह्मण या पश्चिमा ब्राह्मण कहलाते हैं। क्योंकि भूमिहार ब्राह्मण महा सभा के सेक्रेटरी श्री रघुनन्दन सिंह जी सुस्ता ग्राम के ही कोदरिया ब्राह्मण हैं। उसी लोमा ग्राम से कुछ लोग धखजरी ग्राम में जा बसे और पञ्जीबद्ध होकर मैथिलों में मिलगये। जो मुकुन्द मिश्र प्रभृति अब अपने को कोदरिये लोआम, अथवा धजखरी लोआम कहते हैं। ये सब बातें क्या दोनों दल की एकता को सिद्ध नहीं करती हैं?

परमहंसजी की पुस्तक 'ब्राह्मण सम्बन्ध' देखने से विदित होता है कि बहुत से मैथिल पश्चिमा (भूमिहार) ब्राह्मणों से ही हुये हैं। दृष्टान्त के लिये पूर्वोक्त भारद्वाज गोत्री दुमटिकारों को लीजिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आगे चलकर कान्यकुब्ज और सर्यूपारियों के सम्बन्ध दिखलाने के समय दिखलावेंगे कि वास्तव में सर्यूपारी ब्राह्मण हीं दुमटिकार के तिवारी या पांडे आदि कहलाते हैं। इसलिये ठीक नाम दुमटिकार या दुमटिकरिये होना चाहिये। परन्तु भूल से लोग डोमकटार, डम्म या दम्मकटरिये इत्यादि कहने लग गये हैं। पिलखवाड़ ग्राम वासी पञ्जीकार जयनाथ शर्मा मैथिल ने जो मैथिलब्राह्मण वंशावली बनाई और सुगौना के बालकृष्ण शर्मा ने छपाई है, उस में भी भारद्वाज गोत्र के वर्णन में दम्मकटरिये मूल आया है। चाहे इस समय मैथिलों ने उसका नाम बदल डाला हो, या वे लोग फिर पश्चिमा ब्राह्मणों में हीं मिल गये हों, परन्तु एक समय पश्चिमा से हो मैथिल हुये थे। अब भी दरभंगा स्टेशन के पास मिर्जापुर में डोमकटरिये मैथिल रहते हैं। इस बातको भी परम हंस जी ने सिद्ध किया है कि पश्चिमा से मैथिल, फिर मैथिल से पश्चिमा और पुनः मैथिल हो जाने वाले भी ब्राह्मण बहुत से हैं। दृष्टान्त के लिये, सुरौरे मूल वाले पश्चिमासे मैथिल बने और फिर पश्चिमा बने। जैसे सबौड़ा से एघु, एघु से नावकोठी, मोहन पुर, चान्द पुरा, बन्दोवार और खम्हार। सबौड़ा से ही रामदीरी, गौड़ा, बिजलपुरा, सोंगडाहा और अम्बा आदि हैं। गौड़ा से नौला, और नौला से पुनः मैथिल हुये, जैसे उजियार पुर।

परमहंस जी ने भूमिहार (पश्चिमा) ब्राह्मणों के इस कथन के खण्डन में, कि मैथिलों से विवाह नहीं होना चाहिये, यह दिखलाया है कि द्रोणवार ब्राह्मणों के वंश की जड़ तो मैथिलों से हो है। फिर निषेध किसका होना चाहिये? क्योंकि कान्यकुब्ज, देवकली के पांडे साधोरामके पुत्र राजा अभिमान के पुत्र राय गंगाराम हीं द्रोणवार ब्राह्मणों के आदि पुरुष हैं। जिन से गंगापुर और नरहन आदि सभी हुये हैं। उन राय गंगाराम का एक विवाह चकवारों के मूल ग्राम चाक के निवासी राजा सिंह चकवार मैथिल की पुत्री भाग रानी से और दूसरा तिसवारा ग्राम वासी पंडित गोपी ठाकुर मैथिल ब्राह्मणहीं की पुत्री मुक्ता रानी से हुआ था। जिनमें से एक के छ और दूसरी के तीन पुत्र हुये। इन्हीं नवों से संपूर्ण द्रोणवार वंश है। इसलिये सच पूछा जावे तो मैथिल और भूमिहार ब्राह्मणों में बिल्कुलही भेद नहीं है। इसीलिये पूर्वोक्त डाक्टर विलसन और वंगदेशी ब्राह्मण लाहिरी महाशय ने अपने वंगभाषा के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

'पृथिवीर इतिहास' में भूमिहार ब्राह्मणों को मैथिल ब्राह्मण लिखा है और इसीलिये मैथिल भाषा के बाभन शब्द का व्यवहार भूमिहार ब्राह्मणों में होता है, जिस का नाम लाहिरी महाशय ने भी लिया है, जैसा कि आगे स्फुट होगा।

अब सर्यूपारियों और कान्यकुब्जों के साथ भी जमींदार या भूमिहार ब्राह्मणों का विवाह सम्बन्ध दिखलाते हुये प्रथम सर्यूपारियों के साथ ही दिखलावेंगे। क्योंकि सर्यूपारी कहलाने वालों की ही संख्या काशी के आप पास बहुत है। इतना हीं समझ लेना और उसीसे अन्दाज करलेना चाहिये कि जैसे मैथिलों के शिरोमणि महाराजा दरभंगा और महामहोपाध्याय श्रीकृष्ण सिंह ठाकुर का सम्बन्ध स्पष्ट दिखलाया गया है, यों तो मिलाने से सभी के साथ पहुंच सकता है। उसी प्रकार इस तरफ मिलान करने से इधर भी कोई नहीं बच सकते।

जिला प्रयाग, परगना अरैल, गांव पनासाआदि के भारद्वाज गोत्री भूमिहार ब्राह्मणों का उसी जिले में सम्बन्ध नीचे लिखा है। भूमिहार ब्राह्मण हीरापुरी पांडे कहलाते हैं, जिनका सम्बन्ध काशी के गौतम आदि भूमिहार ब्राह्मणों से है। वे लड़के वाले और सर्यूपारी ब्राह्मण प्रायः लड़कियों वाले हैं। परन्तु कहीं २ विपरीत भी है, जो कह देंगे।

लड़केवालेभू०ब्रा०केनाम	लड़की वाले सर्यूपारी पते सहित।
(१) रामकुमार सिंह	पं० महावीर पांडे, ग्राम, पंवर, गौतम गोत्र, परगना अरैल।
(२) माताबदल सिंह	पं० शीतलाबख्श पांडे, " "
(३) ठाकुरप्रसादसिंह	पं० बबोलराम पांडे, ग्राम पंवर, गोत्र गौतम, परगना अरैल।
(४) राम किशोर "	" सूर्यदीन " " "
(५) शिवबालक "	" रामप्रसन्न तिवारी, ग्राम विरौल, गोत्र वसिष्ठ, परगना अरैल।
(६) अलोपी "	" दुर्गाप्रसाद तिवारी, ग्राम चाका "
(७) शीतल "	" " " " " "

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लड़केवाले भू० ग्रा० के नाम	लड़कीवाले सर्यूपारी पते सहित।
(८) जगन्नाथ सिंह	पं० विन्दा प्रसाद तिवारी, चाका, अरैल।
(९) ठाकुर प्रसाद "	" " " " " "
(१०) बाबूसिंह, मेधई "	" मदन मोहन " " "
(११) माता बदल सिंह	" रामरतन " " "
(१२) " "	" शिवनंदन राम " सिंधुवार "
(१३) राधा मोहन "	" " " " "
(१४) रामकृपाल "	" दातादीन पांडे, ग्राम पँवर, गौतम "
(१५) " "	" संपतराम तिवारी, सिन्धुवार, वसिष्ठ
(१६) काशी प्र० सिंह	" महावीर प्रसाद " "
(१७) विन्ध्येश्वरीप्र० "	" " " " "
(१८) वैरीसाल "	" माताप्रसन्न पांडे वामपुरी, चौकी, पराशर, खैरागढ़। " "
(१९) भोदू "	" " " " "
(२०) दानसिंह, मचैयां पांडे; भारद्वाज गोत्री।	" " " " "

अब रामगढ़, देवरी, बसही, लकटहा, खाई के भारद्वाज गोत्री भूमिहार ब्राह्मणों के नाम हैं।

(२१) शिवजगत सिंह, रामगढ़	पं० दातादीन पांडे ग्राम पँवर, गौतम गोत्र, परगना अरैल।
(२२) शत्रुहन सिं० "	" विन्दाप्रसाद तिवारी, चाका, वसिष्ठ
(२३) इन्द्रजीत "	" मदन मोहन तिवारी " "
(२४) गयाप्रसाद सिं०, देवरी	" बोधीराम पांडे, पँवर, गौतम, अरैल
(२५) भरत " "	" शिवनंदनराम तिवारी, सिंधुवार, वसि०
(२६) चन्द्रभान सिंह, बसही	" बोधीराम पांडे, पँवर, विरौल, अरैल
(२७) गयाप्रसादसिंह, देवरी	" रामनारायण तिवारी, विरौल, वसि०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

लड़केवालेभू०ब्रा०	लड़कीवाले सर्यूपारी पते सहित।
(२८) गंगोत्री सिंह, लकठहा	पं० मदनमोहन तिवारी, चाका, अरैल
(२९) रामकृपाल "	" संपतराम " " "
(३०) छत्रधारी, खाई	" हरिचंद पांडे पँवर, गौतम "
(३१) ब्रजमंगल " "	" शिवनंदनरामतिवारी, सिंधुवार, वसिष्ठ, "

अब खैरागढ़ परगना के वसिष्ठ गोत्री भूमिहार ब्राह्मणों के नाम देते हैं, उन की उपाधि मिश्र है।

(३२) महावीर सिंह बिगहना,	पं० शीतलबख्श पांडे, पँवर, गौतम, अरैल
(३३) चौ० ठाकुरप्रसाद सिंह "	" बिन्दुराम तिवारी, सिंधुवार, वसिष्ठ,
(३४) रघुनाथ सिंह, रामनगर	" दुर्गाप्रसाद " चाका "

लड़केवाले सर्यूपारियों के पते सहित	नाम लड़कीवाले भू०ब्राह्मणों के पते सहित।
(३५) पं० गंगारामतिवारी उनवलिया के, ग्राम बसही कोटहा, परगना अरैल, गोत्र वसिष्ठ	श्री पितापालसिंह, ग्राम पुरैनी, परगना अरैल, भारद्वाज गोत्री पांडे।
(३६) रामसुन्दर ति०	" शिवपरसन सिं० " " "
(३७) समयलाल ति०	" जयगोपाल " " " "
(३८) रामफल पांडे, मलैयां, गांवमलाका, तहसील सुराम, इलाहाबाद, गोत्र सांकृत, अब महरूडीह में रहते हैं।	जसवंत सिंह, गौतम, गंजारी, गंगापुर, कुसवार परगना, बनारस।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री जसवन्तसिंह की लड़की का विवाह रामफल मलैयां पांडे से हुआ था। वह अभी तक जीती है। यद्यपि जसवन्त नावल्द हो गये और उनके दायाद गंगा पुर में हैं।

(३९) शिष्ट नारायण सिंह, ग्राम कठौली, परगना, अरैल गोत्र गौतम, मिश्र	रामसेवक तिवारी उनवलिया के, ग्रामवसही कोटहा, पर० अरैल, गोत्र वसिष्ठ
(४०) शिव प्रसाद सिंह कठौली, परगना खैरागढ़, इलाहाबाद, गोत्र भारद्वाज, पांडे।	पं० माताभीख तिवारी, मरौ, पर० केवाई, इलाहाबाद।
(४१) ननकूसिंह, कठौली	पं० शिवलाल तिवारी, हरिपुर " "
(४२) लौलीनसिंह, "	पं० अयोध्या दूबे, खेमापट्टी, परगना मही, इलाहाबाद।
(४३) शिव संपतसिंह,	" रामावतार दूबे, " "
(४४) शिवरतन " "	" शिवदीनपांडे, मिसिरी गड़ौरा, परगना केवाई, प्रयाग।
(४५) शिव दर्शनसिंह "	" रामदीन पां० " " " "
(४६) हनूमान " "	" गंगाराम दूबे, कोट, " "
(४७) शिवटहल " "	यदुनन्दन शुक्ल, कृपालपुर, "
(४८) झग्गासिंह " "	" स्वयम्बर मिश्र धर्म पूराके, गूदनपूर, खैरागढ़।
(४९) राजनारायणसिं. "	" रामभरोस उपाध्याय, सुरियांवां, भदोही, मिर्जापुर।
(५०) भोलीसिंह "	" कोलाहल उपा० कोड़र, भदो० मिर्जा०
(५१) कोलई "	" कालिका, रामदीन उपा० " अवरना "
(५२) हनूमान "	" परसन उपा० वरमोहनी " "
(५३) कालिका "	" रघू " दोहिया " "
(५४) गणेशसिंह "	" नागेश्वर दूबे, वरमोहनी " "
(५५) आत्मनारायणसिं.	" झींगुर दूबे, कवल "

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

(५६) शिवशंकरसिंह, कठौली, खैरागढ़, प्रयाग।	पं० रामदास दूबे, वरमोहनी, भदोही, मिर्जापुर।
(५७) सूर्यनारायणसिंह	ईश्वरीराम उपाध्याय, सुरियांवां, ,,
(५८) कामतासिंह	पं० सम्पतिराम ,, पतूलकी, ,,
(५९) भवानीचरणसिं.	,, रामकुमार ,, वसवरा, ,,
(६०) रामकृपालसिंह	बोधारामउपाध्याय, अवरना, ,,

पूर्वोक्त ब्राह्मणों में से जिनके गोत्र में सन्देह था उनका गोत्र निश्चित रूप से नहीं लिखा गया है, परन्तु इसी पूर्वोक्त पते से मालूम किया जा सकता है।

अब दो चार प्रसिद्ध २ कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के साथ भी सम्बन्ध दिखला कर फिर कान्य कुब्ज और सर्यूपारी दोनों के साथ मिले हुये सम्बन्ध एक साथ दिखलावेंगे:—

(६१) परगना सुराम, जिला प्रयाग, आना पुर के श्रीदेवकी नन्दन सिंह तथा आस पास वाले बहुत से ग्रामों में जो अयाचक(भूमिहार) ब्राह्मण रहते हैं वे सर्यूपारी ब्राह्मण, शाण्डिल्यगोत्री, पहिती पुर के पांडे, सूक्ष्ममति पांडे के वंशज हैं। यह बात उन लोगों की छपी हुई वंशावली से विदित हैं। परन्तु बहुत दिनों से भूमिहार ब्राह्मणों के साथ विवाह सम्बन्ध करते २ वे लोग इन्हीं में मिल गये हैं। दृष्टान्त के लिये श्रीदेवकी नन्दन सिंह की बहिन का विवाह काशी के श्रीअलरख सिंह से था, जिनके पुत्र कृष्णप्रसादसिंह हुये। और स्वयं श्रीदेवकी नन्दन का विवाह जिला आजमगढ़ के सूर्यपुर में कुढ़नियां भूमिहार ब्राह्मण श्रीराम गोविन्दसिंह की फूआ से था। (६२) उसी विवाह से जो लड़कियां श्रीदेवकी नन्दन की हुईं, उनमें एक का विवाह जिला फतहपुर, गांव वीरसिंह पुर, परगना कोड़ा जहानाबाद के कान्य कुब्ज ब्राह्मण काश्यप गोत्री सोरू के अवस्थी के घर हुआ था, जिनके साथ अभीतक आना जाना बना है। (६३) उनकी दूसरी लड़की का विवाह जिला फतहपुर, स्टेशन बिंदकी रोड, गांव सुलतानगंज में कान्यकुब्ज ब्राह्मण हरनारायणसिंह और सुदर्शनसिंह सोरू के अवस्थी काश्यप गोत्री के घर हुआ था, जिनके वंश में इस समय शंकरसिंह, गन्धर्वसिंह वगैरः मौजूद हैं और आते जाते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी हैं।(६४)जिला कानपुर,बिठूर, के चौधरी खुमानसिंह अवस्थी,गोत्र काश्यप के यहां आनापुर के श्री सिद्धनारायणसिंह की फूआ का ब्याह है। खुमानसिंह के घर में अब शिवसिंह हैं। (६५) इसी प्रकार श्री प्रसिद्धनारायण के पिता की फूआ का ब्याह जिला बस्ती, तहसील हरैया, ग्राम त्रिगनौता, राम नारायण ओझा खैरी के, वत्स गोत्री सर्यूपारी के घर था, जिनके पुत्र अवधविहारी ओझा का आना जाना अब तक पूर्ववत है। (६६) श्री सिद्ध नारायाण की पिता की फूआ काही सम्बन्ध जिला बस्ती, परगना अमोढ़ा, गांव नाथपुर विसनैयां, कश्यप गोत्री त्रिफला पांडे लक्ष्मीनारायण से था। (६७) जिला गोरखपुर,गांव महावनखोर में बैसी के दीन मिश्रसे उनकी तीसरी फूआका सम्बन्ध है। ये दोनों सर्यूपारी हैं।(६८)जिला प्रयाग,परगना सुराम, कल्याणपुर के विक्रमाजीतसिंह आदि भी आनापुर के सगोत्र पहिती पुर के पांडे हैं। परन्तु ये लोग अब जमींदार ब्राह्मण कहलाते हैं। विक्रमाजीत की लड़की का सम्बन्ध सर्यूपारी से जिला सुलतानपुर, गांव व परगना बेरौंसा में मंगलराम, शिवचरण राम नगवा के शुक्ल गर्ग गोत्री के घर है। (६९) उसी ग्राम के कामताप्रसाद सिंह की लड़की का विवाह बेरौंसा के शीतलराम शुक्ल और बाबूशुक्ल के यहां है। (७०) वहीं के महावीर प्रसादसिंह की पुत्री बेरौंसा के बालगोविन्दरामशुक्ल के घर ब्याही है। (७१) वहां के ही के सुखनंदन प्रसादसिंह की पुत्री का विवाह बेरौंसा में शालग्राम शुक्ल के घर है। इस के अतिरिक्त महरूडीह, सराय गांव, मलाका गांव, परेशपुर, चौवारे, आनापुर, इस्माईलपुर, सरायहरीराम, चतुरी पुर, सराय गोपाल और चौरा रोड आदि ग्रामों के जमींदार ब्राह्मणों का सम्बन्ध बेरौंसा आदि १० या १२ ग्रामों के नगवा शुक्लों में भरा हुआ है, (७२) जैसे कि बेरौंसा के भगवती शुक्ल, महरूडीह वाले बैजनाथ प्रसादसिंह की चचा की कन्या के पुत्र हैं इत्यादि। अब कान्य कुब्ज और सर्यूपारियों के साथ मिले हुये सम्बन्ध दिख लाये जाते हैं:—

(७३)जिला मिर्जापुर, कठिनहीं ग्राम के कामताप्रसाद पांडे और दुर्गाप्रसाद पांडे पिण्डी के तिवारी शांडिल्य गोत्री सर्यूपारी ब्राह्मण हैं। उनका सम्बन्ध, प्रयाग–झूंसी के पन्नालाल, बेनीप्रसाद तिवारी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

के घर है, जो खोरिया के तिवारी सर्यूपारी हैं और जिनकी कोठी आगरा-बेलनगंज में है। उन्हीं पन्नालाल बेनीप्रसाद के पुत्रसे जिला प्रयाग, परगना चायल, चरवा के श्री रामशरणसिंह पांडे की लड़की ब्याही है। यह कौशिक गोत्री टेकार के पांडे हैं, परन्तु अब भूमिहार ब्राह्मणों से मिले हुए हैं। क्योंकि उन्हीं रामशरणसिंह की लड़की का विवाह पूर्वोक्त पनासा के श्री ब्रजविहारीसिंह उर्फ मटर सिंह से भी है। और मटरसिंह की फूआ का विवाह जिला बनारस, ग्राम खोचवा के श्री महावीर प्रसाद सिंह से है, जो गोतम भूमिहार ब्राह्मण पिपरा के मिश्र हैं। (७४) उसी पूर्वोक्त कठिनहीं के पांडे के घर जिला प्रयाग, परगना करारी, बेरौंचा गांव के निवासी कुसुमी के तिवारी, शांडिल्य गोत्री, त्रिपाठी बूआसिंह के दो पुत्रों के विवाह हुये हैं और बूआसिंह का, या जिला बांदा के ही मंडौर आदि २४ ग्रामों में रहनेवाले त्रिपाठी नृपतिसिंह, माधवसिंह, रघुवीरसिंह, अवधसिंह, शिवपालसिंह, और रामशरणसिंह, प्रभृति सर्यूपारी कुसुमी तिवारियों के-जो अब जमींदार ब्राह्मणों के सदृश हो रहे हैं-पुत्रों का विवाह सम्बन्ध सावर्ण्य गोत्री टिकरा के पांडे लोगों में होता है, जो छप्पन गांव वाले बोले जाते हैं और जिला प्रयाग, परगना कड़ा में रहते हैं। जैसे परसरा गांव के विश्वनाथ, ठाकुरदीन, चन्द्रदयाल पांडे आदि, बिसरा के सूर्यपाल, बलदेव पांडे प्रभृति। असवा के रामरत्न, भागीरथ पांडे आदि। बालक मऊ के सुखनन्दन राम, जगमोहन राम पांडे प्रभृति। ककोड़ा के शिव सहाय राम, रघुवीर राम पांडे आदि। विदनपुर के रामप्रसन्न राम पांडे प्रभृति। टिकरा डीह के रामजियावन पांडे, मथुरा प्रसाद पांडे प्रभृति हैं। और इन छप्पन वाले टिकरा के पांड लोगों का सम्बन्ध सुराम परगना के पूर्वोक्त आनापुर इत्यादि ग्रामों और, पनासा प्रभृति ग्रामों के पूर्वोक्त भूमिहार ब्राह्मणों में खुल्लमखुल्ला होता है और पूर्वोक्त चरवा ग्राम में भी होता है, जिसका सम्बन्ध पनासा आदि में दिखला चुके हैं। चरवा ग्राम में रामशरण सिंह, रामनिधि सिंह और रामप्रतापसिंह इत्यादि १५० घर सर्यूपारी या जमींदार ब्राह्मण रहते हैं। चरवा के पास टाटा गांव में भी ब्रह्मदत्त सिंह तिवारी इत्यादि के घर भी छप्पन वालों का विवाह सम्बन्ध होता है। टाटा गांव के पास चौरा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डीह में मथुरा प्रसाद सिंह तिवारी, साना जलालपुर में श्री कल्लू सिंह तिवारी, सिंहपुर में भग्गूसिंह, फरीदपुर में छेदी सिंह, एवं कमालपुर, सुधवल, नीमी और साना प्रभृति १२ गांवों में सयूंपारी रहते हैं, जो अब प्रायः जमींदार ब्राह्मण होरहे हैं और भारद्वाज गोत्री दुमटिकार के तिवारी कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त चरवामें टेकार के कौशिक गोत्री पांडे और परसरा इत्यादि गावों में सावर्ण्य गोत्री टिकरा के पांडे लोगों को कह चुके हैं और टिकराडीह भी बतला चुके हैं।

बस, इन्हीं टिकरा, टिकार और दुमटिकार के पांडे और तिवारियों में से मगध में टिकारी के महाराज तथा अन्य भूमिहार ब्राह्मण भारद्वाज गोत्र या अन्य गोत्रों के हैं, जो अब तक बहुत जगह पांडे, तिवारी और दूबे इत्यादि उपाधियों से मगध और तिर्हुत प्रभृति प्रान्तों में प्रसिद्ध हैं और कहीं २ राय, सिंह और चौधरी भी बोले जाते हैं। दुमटिकार के तिवारी और पाण्डे प्रभृति ये छप्पनवाले ब्राह्मण अपने पूर्वजों का मगध के टिकारी स्थान से आना बतलाते हैं। सम्भव है कि उन लोगों ने वहां से आने से ही उसी टिकारी के स्मरणार्थ टिकरा नामक ग्राम बसाया हो।

इसी नाम को लोग भूलसे दुमकटार, डोमटेकार, डोमकटार इत्यादि भिन्न २ रूपों में भिन्न २ स्थानों में व्यवहार करते और तदनुसारही बहुतसी मिथ्या कल्पनायें भी किया करते हैं। परन्तु शुद्ध नाम दुमटिकार या दुमटेकार है। इसीलिये सर्वत्र इसी का व्यवहार होना चाहिये। ये लोग वास्तव में सयूंपारी ब्राह्मण हैं।

(७५) पूर्वोक्त छप्पन वालों के लड़कों का विवाह सम्बन्ध फतहपुर जिले में सिराथू स्टेशन के पास सोनही के तिवारियों में होता है। जो भदवा, बम्हनौली और इचौली आदि १२ गावों में रहते हैं और कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं।

(७६) चरवा गांव के ब्राह्मण रामशरण सिंह—जिनका सम्बंध पनासा आदि में दिखला चुके हैं—के दायाद माता दयाल सिंह की लड़की का विवाह जिला प्रतापगढ़, परगना नवाबगंज, ग्राम बम्हनपुरा के लक्ष्मीनारायण मिश्र मैनच के, वत्स अथवा कात्यायन गोत्री से हुआ है, जिसका पुत्र नारायणदास मिश्र है। (७७) माता दयाल सिंह की पुत्री, प्रयाग—कटरा सवाई जयसिंह में जय (ज्वाला)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

शंकर दूबे, कमलाकान्त दूबे, बेलवा सौरी के, गोत्र वत्स, के घर भी ब्याही गई है।

...जिन कुसुमी के तिवारी बूआसिंह प्रभृति का सम्बन्ध भूमिहार ब्राह्मणों में दिखला चुके हैं उन्हीं की लड़कियों के विवाह रीवां और प्रयाग में सर्यूपारियों के यहां नीचे लिखे जाते हैं। (७८) जि० रीवां, ग्राम रंग पतेरो, बलदेवप्रसाद तिवारी के घर मंडौर के नृपतिसिंह की, (७९) जिला रीवां, ग्राम मटियारी पं० अयोध्या प्रसाद मिश्र, पड़रहा के, वसिष्ठ गोत्री के घर माधवसिंह की, (८०) जिला प्रयाग–गांव बादशाही मंडई, बैजनाथ मिश्र पिपरा के, गौतम गोत्री के यहां रघुवीर सिंह की, (८१) जिला प्रयाग–गांव बहादुर गंज, महादेव शुक्ल, मामखोर के, गर्गगोत्री, के घर अवध सिंह की, (८२) प्रयाग, परगना सुराम, किलहनापुर, रुद्रप्रसादमिश्र, धर्मपुर लगुनीवाले, के यहां शिवपाल सिंह की, और (८३) प्रयाग–परगना सुराम, गांव बांधपुर, सुखनंदन राम पण्डित के घर रामशरण सिंह तिवारी की लड़कियों के विवाह हैं। कुसुमी तिवारी लोग बेरौंचा और मंडौर के अतिरिक्त तारी, मऊ, अहिरी, सुरोधा और अखौड़ा आदि गांवों में रहते हैं। (८४) प्रयाग से २ या ३ कोस पर जसड़ा स्टेशन के पास यमुना तट में बेरौल ग्राम के सर्यूपारी रामनारायण तिवारी आदि तिवारियों में भी पनासा और सुराम परगना के भूमिहार ब्राह्मणों के सम्बन्ध हैं।

पूर्वोक्त अरैल परगना के पनासा आदि और सुराम परगना के कल्याणपुर आदि ग्रामों के भूमिहार ब्राह्मणों से बदर्का के मिश्र, कात्यायन गोत्र के कान्यकुब्ज ब्राह्मणों का सम्बन्ध है, जो जिला इलाहाबाद, परगना मिर्जापुर चौहारी के भागीपुर आदि ग्रामोंमें रहते हैं। जैसेः—

(८५) भागीपुर के पंडित विन्ध्येश्वरी बख्शसिंह मिश्र का सम्बन्ध अरैल के बरांव गांव वाले राजासाहब श्री राघवेन्द्रनारायण सिंह के घर ही है। (८८) और विन्ध्येश्वरीबख्श के भतीजे रामानन्दसिंह मिश्र की भतीजी का विवाह प्रयाग के सिरसा रामनगर में भूमिहार ब्राह्मण श्री आदित्यनारायण सिंह के घर है, जो गाना के मिश्र, वत्स गोत्री हैं। (८७) इसी प्रकार से जिस चरवाआदि के रामशरण सिंह वगैरः का सम्बन्ध भूमिहार ब्राह्मणों से दिखला चुके हैं उसी चरवा के रामनाथसिंह और काशी प्रसन्नसिंह के घर में भी पूर्वोक्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विन्ध्येश्वरी बख्श के लड़के का विवाह है। (८८) विन्ध्येश्वरीबख्श के छोटे भाई का विवाह चौरा के अम्बिकाप्रसाद सिंह तिवारी, दुमटिकार के, भारद्वाज गोत्री, के घर है। जिन चौरा वालों का भूमिहार ब्राह्मणों से सम्बन्ध सिद्ध हो चुका है। अब उसी विन्ध्येश्वरी बख्श का सम्बन्ध अन्य कान्यकुब्जों और सर्यूपारियों से दिखलाते हैं:—

(८९) विन्ध्येश्वरी बख्श की लड़की का विवाह जिला फैजाबाद, गांव अंजना, रामलाल मिश्र, मार्जनीके वसिष्ठ गोत्री, सर्यूपारी, के घर है। (९०) विन्ध्येश्वरी बख्श की बहिन का विवाह जिला प्रतापगढ़, गांव भकड़ा, काशीनाथ मिश्र, सुगौती के, गौतम गोत्री, सर्यूपारी के यहां है। (९१) उनकी ही दूसरी बहिन का विवाह जिला जौनपुर, गांव पहितिया पुर, हुबेराज दूबे, राज किशोर दूबे, सरारके, भारद्वाज गोत्री, सर्यूपारी के घर है। (९२) उनकी तीसरी बहिन का विवाह जिला प्रतापगढ़, गांव छेमर सरैया, प्रयाग मिश्र, मऊके, कश्यप गोत्री, सर्यूपारी के यहां है।

भागी पुर के अतिरिक्त बदर्का के मिश्र नीचे लिखे गांवों में रहते हैं। गांव हुसेनपूर-जिला प्रतापगढ़, (१) दुर्गा प्रसादसिंह। धीनापुर-जिला प्रयाग, (२) मातादयालसिंह। जिला प्रतापगढ़, गांव वरदहा (३) शीतलदीनसिंह। गांव धनुहा, (४) देवकी नन्दन सिंह। गांव केसरुवा (५) सूर्यसिंह। गढ़चम्पा, भानपुर, सिंगही और महम्मद पुर में भी बदर्का के मिश्र रहा करते हैं। कसेरुवा गाँव में (६) राम सुखसिंह, वरदहा में (७) जानकीसिंह और ईस्माइल पुर में (८) शिव शंकर सिंह रहते हैं। इन लोगों के सम्बन्ध इस प्रकार हैं:—

(९३) जिला प्रतापगढ़, गांव छेमर सरैया, शीतल दीन मिश्र, मऊके, कश्यप गोत्री के घर में श्रीयुत् राम सुख सिंह की लड़की ब्याही है। (९४) जिला प्रतापगढ़ गांव डोमीपुर, जानकी मिश्र, मऊके, कश्यप गोत्री, के यहां जानकी सिंहकी की लड़की ब्याही है। (९५) प्रतापगढ़, सरुवा के शिवमंगल मिश्र मऊ वाले के यहां शिवशंकर सिंह की पुत्री ब्याही है। (९६) प्रतापगढ़ शेखपुर, देवकीनंदन उपाध्याय, खोरिया के, भारद्वाज गोत्री सर्यूपारी के यहां भागीपुर के विन्ध्येश्वरी बख्शसिंह मिश्र की पुत्री का विवाह है। (९७) मिर्जापुर के ओघी आदि गावों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गौतम गुरईसिंह, राम मनोरथसिंह वगैरः की पुत्रियों के विवाह रीवां के तिलिया पांती गांव के पाठकों के घर हैं और वहां के एक पाठक गोदी में गोद लिये गये हैं। (६८) जिला प्रयाग, परगना चायल, गांव मर्दापुर के वृजलाल पांडे, नागचौरी के, की बहिन मातादयाल सिंह, सराय राघो, परगना नवाबगंज, प्रयाग वाले से ब्याही है। वृजलाल पण्डित अभी तक आठ दस गांव के पुरोहित हैं। (६६) पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी, मंत्री किसान सभा का भतीजा विरौंचा के कुसुमी तिवारियों के यहां ब्याहा है। उस लड़की का ननिहाल कक्रोड़ा है। (१००) पण्डित बलराज सहाय उपाध्याय, वकील प्रतापगढ़ के भतीजे का विवाह भैरो प्रसाद सिंह कल्याणपुर, सुराम, प्रयाग वाले की पुत्री से है और बलराज सहाय के पुत्र का विवाह गया प्रसाद पांडे, मिर्जापुर, के घर है।

इसके बाद अब त्यागियों (तगे) और गौड़ों के भी कुछ विवाह सम्बन्ध दिखलाते हैं। इसमें हरेक नाम के आगे विवाहित का निर्देश है और उसके आगे गांव और जिले लिखे हैं। विवाह इस प्रकार हैं:-

वरपक्षीय त्यागी ब्राह्मण	कन्यापक्षीय गौड़ ब्राह्मण
(१) गंगाराम, स्वयं, गोविन्द पुरी, अंबाला	तुलसीराम, बहिन, मुलाना, अंबाला
(२) मधुसूदन दास, स्वयं, गोविन्दपुरी, अंबाला	कालीराम, पुत्री, छजरौली, अंबाला
(३) आया राम, स्वयं, गोविन्द पुरी, अंबाला	गीताराम, पुत्री, दसानी, अंबाला
(४) दीनानाथ स्वयं, गोविन्द पुरी, अंबाला	बद्रीदास, पुत्री, अंबाला, अंबाला
(५) आशाराम, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	मोलहड़मल, पुत्री, छजरौली, अंबाला
(६) कृष्णदत्त, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	कन्हैयालाल, पुत्री, सरमोरनाहन, अंबाला
(७) मूलराज, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	गीताराम, पुत्री, साल्हापुर, अंबाला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(८) शादीराम, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	परशुराम, बहिन, मुजाफत, अंबाला
(९) प्रतापसिंह, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	शंकरलाल, बहिन, दसानी, अंबाला
(१०) धर्मसिंह, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	तेलूराम, बहिन, हरियावास, अंबाला
(११) नानकचंद, पुत्र, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	बद्रीप्रसाद, बहिन, दसानी अंबाला
(१२) शम्भूंदयाल, पुत्र, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	माड़ेराम, बहिन, दसानी, अंबाला
(१३) कालीराम, स्वयं, गोवर्धनपुर, सहारनपुर	देवीचन्द, पुत्री, जगाधरी, अंबाला
(१४) हरजसशर्मा, स्वयं, गोवर्धनपुर, सहारनपुर	श्रीनिवास, पुत्री, मामली, अंबाला
(१५) जीराजसिंह. स्वयं, गोवर्धनपुर, सहारनपुर	रामजीदास, बहिन, खूड़ा, अंबाला
(१६) अमीचन्द, स्वयं, गोवर्धन पुर, सहारनपुर	अनन्तराम, बहिन, ममेदी, अंबाला
(१७) अमीचन्द, स्वयं, गोवर्धनपुर, सहारनपुर	मनसाराम, बहिन, गढ़ीलौकरी, अंबाला
(१८) बादामसिंह, पुत्र, विजैपुरा, सहारनपुर	दौलतराम, बहिन, हरियावास, अंबाला
(१९) सीसराम, पुत्र, विजैपुरा, सहारनपुर	दौलतसिंह, बहिन, तेहिमा, अंबाला
(२०) मुख्तारसिंह, स्वयं, गोवर्धनपुर, सहारनपुर	रामप्रताप, पुत्री, मांड़खेड़ी, अंबाला
(२१) गिरधारीलाल, स्वयं, गोवर्धनपुर, सहारनपुर	नत्थूराम, पुत्री, हरियावास, अंबाला
(२२) पृथ्वीसिंह, स्वयं, बड़ा गांव, सहारनपुर	तेलूराम, पुत्री, काटकी बधावली अंबाला,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(२३) सीसूसिंह, स्वयं, रुल्हाकी, सहारनपुर	नन्दराम, पुत्री, रायपुरडमोली, अंबाला
(२४) मनसाराम, स्वयं, रुल्हाकी, सहारनपुर	रामजीदास, पुत्री, भूड़ ब्राह्मण, अंबाला
(२५) गोविन्दराम, पुत्र, मेहरवानी, सहारनपुर	हरिशंकर, पुत्री, मारवा, अंबाला
(२६) रामचन्द्र, स्वयं, मेहरवानी, सहारनपुर	रामजीसहाय, पुत्री, विलासपुर, अंबाला
(२७) आशाराम, स्वयं, सुल्तानपुर, सहारनपुर	हीरालाल, पुत्री, मांड़खेड़ी, अंबाला
(२८) ईश्वरदत्त, स्वयं, गोविन्दपुरी, अंबाला	प्रभुदयाल, पुत्री, करनाल, करनाल
(२९) बुधराम, पुत्र, गोविन्दपुरी, अंबाला	सूर्य्यभान, बहिन, यारा, करनाल
(३०) मोलड़सिंह, स्वयं, नुकड़, सहारनपुर	देवीचन्द, पुत्री, जट्टलाना, करनाल
(३१) रिसालसिंह, ... अधियाना, सहारनपुर	रामजीदास, ... साच, करनाल
(३२) बख्तावरसिंह, ... अधियाना, सहारनपुर	खुशीराम, ... कोहंड, करनाल
(३३) मुखराम, ... अधियाना, सहारनपुर	गोपीनाथ, ... जालखेड़ी, करनाल
(३४) गंगासिंह, स्वयं, शिकारपुर, दिल्ली	जसराम, भतीजी, दुजाणा, रोहतक
(३५) सीसासिंह, स्वयं, शिकारपुर, दिल्ली	सत्तू, बहिन, मकसूदपुर, रोहतक
(३६) रामप्रसाद, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	गंगाराम, बहिन, सागीहेड़ा, रोहतक
(३७) भगवानसहाय, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	रामरीख, पुत्री, मकसूदपुर, रोहतक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant2

(३८) खुशहाली, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	पीरूशर्मा, पुत्री, मकसूदपुर, रोहतक
(३९) बालाराम, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	हरीराम, पुत्री, मकसूदपुर, रोहतक
(४०) किसुनराम, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	शिवकरन, पुत्री, मकसूदपुर, रोहतक
(४१) उदयराम, स्वयं, शिकारपुर, दिल्ली	बख्शीराम, फूआ, दिवाना, रोहतक
(४२) कूड़ेसिंह स्वयं, शिकारपुर, दिल्ली	नानकचन्द, बहिन, दिवाना, रोहतक
(४३) खुशिया, स्वयं, शिकारपुर, दिल्ली	हरदेव. बहिन, पेरावल, रोहतक
(४४) साखीराम, स्वयं केशव पुर, दिल्ली	बद्रीप्रसाद, पुत्री, नागल, रोहतक
(४५) तृखाराम, स्वयं, केशवपुर, दिल्ली	कूड़ेसिंह, नम्बरदार, नागल, रोहतक
(४६) मोहरा, स्वयं, धर्मपुर, गुरुगांव	नन्दपण्डित, बहिन, मकसूदपुर, रोहतक
(४७) परसा, स्वयं, मोमेढरी, गुरुगांव	शोबला, बहिन, कन्नौर, रोहतक
(४८) लक्ष्मण, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	लेखा, पुत्री, भागई, झींद
(४९) देवीसहाय, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव,	सौजीराम, पुत्री, सितोबपुर, झींद
(५०) प्रभु, स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	धर्मा, नम्बरदार, पुत्री, भावास, झींद
(५१) लच्छू स्वयं, झटिकरा, गुरुगांव	छबीले, पुत्री, घिराना, झींद
(५२) जीराम, स्वयं, धर्मपुर, गुरुगांव	शादीराम, बहिन, सितोबपुर, झींद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

(५३) शादीराम, स्वयं, धर्मपुर, गुरुगांव	तोताराम, बहिन समसपुर, झींद
(५४) हातम, स्वयं, भगेल, बुलन्द शहर	बल्लराम, पुत्री, डंडिकारामपुर, झींद
(५५) चन्दसेन, स्वयं, दलेलपुर, बुलन्दशहर	नत्थू, पुत्री, कुरुथल, गुरुगांव
(५६) रामचन्द्र, पिता सुलखनी, अंबाला	विशनलाल, बहिन, शाहपुर मछोड़ा, पटियाला
(५७) फतेहसिंह, स्वयं, धर्मपुर गुरुगांव	पतिराम, पुत्री, बावल, हिसार
(५८) हरज्ञान, स्वयं, मोमेढरी, गुरुगांव	जयराम, पुत्री, थानेजी, दिल्ली
(५९) हरजस, स्वयं, मोमेढरी, गुरुगांव	शुण्डराम, पुत्री, रोढ़कामुवाना, दिल्ली
(६०) नत्थाराम, ... हैबतपुर अंबाला	मुन्शीलाल, ... कुतुबपुर, मुजफ्फरनगर
(६१) मथुरादास, ... ओंड़ाना करनाल	उमरावसिंह, ... तेवड़ा, सहारनपुर
(६२) द्वारकादास, ... जटलाना, करनाल	गणेशीलाल, ... सुल्तानपुर, सहारनपुर
(६३) रामजीदास, ... तेहमा, अंबाला	दीनदयाल, ... सुल्तानपुर, सहारनपुर
(६४) शालिग्राम, ... छोली, अंबाला	दीनदयाल, ... सुल्तानपुर, सहारनपुर
(६५) पं. उमादत्त, पुत्र, सांभली करनाल,	पं० कुन्दनजी, भतीजी, जलवाना, करनाल

वरपक्षीय गौड़ ब्राह्मण	कन्यापक्षीय त्यागी ब्राह्मण
(६६) केशव, स्वयं, कन्नौर, रोहतक	जयलाल, बहिन, शिकारपुर, दिल्ली
(६७) यमुनादास, स्वयं, सलौधा, रोहतक	तूखाराम, बहिन, हस्तसाल, दिल्ली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(६८) जीराम, स्वयं, भैंसाबल, रोहतक	मोमचन्द, बहिन, झटिकरा, गुरुगांव
(६९) दुब्बाबुधा, स्वयं, मकसूद-पुर, गुरुगांव	मोहराम, पुत्री, धर्मपुर, गुरुगांव
(७०) डा० गीताराम, स्वयं, करनाल, करनाल	नानकचन्द, पुत्री, गोविन्दपुरी, अंबाला
(७१) शिवचरण, पिता, डीघ, करनाल	साहबसिंह, पुत्री, गोविन्दपुरी, अंबाला
(७२) सुन्दरलाल, स्वयं, लाड़वा, करनाल	गंगाराम, पुत्री, गोविन्दपुरी, अंबाला
(७३) जगन्नाथ, स्वयं, बीजल-पुर, अंबाला	गंगाराम पुत्री, गोविन्दपुरी, अंबाला
(७४) विहारीलाल, पुत्र, बीजल-पुर, अंबाला	आशाराम, पुत्री, गोविन्दपुरी अंबाला
(७५) विश्वंभरदास जज, पोता, सरमोरनाहन, अंबाला	लायकराम, पुत्री, गोविन्दपुरी, अंबाला
(७६) छज्जूराम, पुत्र, ईसोपुर, अंबाला	रामस्वरूप, पुत्री, गोवर्धनपुर, सहारनपुर
(७७) मोहनलाल, पुत्र, गदौली अंबाला	जगरामसिंह, पुत्री, गोवर्धनपुर, सहारनपुर
(७८) राजाराम, स्वयं, सुल-खनी, अंबाला	दीनदयालु पुत्री, गोवर्धन पुर, सहारनपुर

(७९) झटिकरा, गुरुगांव का निवासी मोल्हड़ रोहतक के मांडू ग्राम के गौड़ों का नाती है और अब मांडूमें हीं नाना की जायदाद पर रहता है। (८०) शिवलाल त्यागी, रेवला, दिल्लीवाले की बहिन ग्राम दतौर, रोहतक में पण्डित हिरौंड़ा जी गौड़ से ब्याही गई, जिसके पुत्र खीमा का विवाह रोहतक जिले के कसार गांव में है। (८१) मेरठ, असौढ़ा के रईस और तालुकेदार चौ० रघुवीर नारायणसिंह जी के चिरंजीवी सुपुत्र चौ० रघुवंश नारायण सिंह का विवाह गोवर्धनपुर, जिला सहारनपुर के रईस चौ० रूपचंदशर्मा की पत्री से है। इसी गोवर्धनपर के सगोत्र और भाई बिरादर इन गांवों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में रहते हैं:—सढौलीहरिया, (पं० रामजीदास), उमरी (पं० परमानन्द), अम्बष्टा पीरजादा (पं० मंगलसेन), रनदेवा (पं० सुगनचन्द) वगैरः। ये लोग गौड़ कहाते हैं और गौड़ों के साथ रोटी बेटी का सम्बन्ध रखते हैं। चौ० रूपचन्द जी शर्म्मा वगैरः के साथ भी इनका खानपान ज्यों का त्यों बना है। पूर्वोक्त गोविन्दपुरी, अंबाला वालों के सगोत्र और भाई बिरादर जो गौड़ कहाते हैं इन गांवों में रहते हैं:—गदौली (स्वामी भाऊराम, सीताराम), कोराली (स्वामी मोहनलाल), डिगौली (चौ० हरिवंश, इच्छाराम), नलेड़ा, रायपुर (पं० तुलसी राम) वगैरः। पूर्वके दो गांव अंबाला में हैं और शेष तीन सहारनपुर में। इनका भी खानपान गोविन्दपुरी वालों के साथ है। गोविन्दपुरी के सगोत्र पं० राजेन्द्र मिश्र वकील अमृतसर में रहते हैं। भगेल, गेका, कुलेसरा, सुलतानपुर, गिगरोंड़ा, ये पांचों गांव कौशिक गोत्री त्यागियों के जिला बुलन्दशहर में हैं। इनका निकास (डीह या मूल स्थान) पसोर है। मगर पसोर वाले इनके सगोत्री होने पर भी गौड़ कहे जाते हैं।

इस विवाह सम्बन्ध के देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि जैसे मैथिल ब्राह्मणों में कुछ ऐसे हैं जो पश्चिमा और मैथिल दोनों से विवाह सम्बन्ध करते हैं, वैसे ही गौड़ों में भी कुछ ऐसे हैं जो त्यागियों और गौडों दोनों के साथ विवाह करते हैं। नागल, जिला रोहतक के पं० बद्रीप्रसाद १२ गांवों के पुरोहित हैं और उनके यहां त्यागियों का सम्बन्ध दिखलाया गया है। इसके सिवाय यह भी देखा जाता है कि एक भाई त्यागी है तो दूसरा गौड़ होगया और बहुत से गौड़ धीरे धीरे जमींदारी के कारण त्यागी होगये और होते जा रहे हैं और कितने ही त्यागी वंश गौड़ होगये हैं। उदाहरण के लिये पं० हेमचन्द जी तहसीलदार सरधना जो पहाड़पुर, सहारनपुर, के निवासी थे गौड़ ब्राह्मण कहे जाते हैं। मगर जिस ग्राम धानूखेड़ी, करनाल से उनके पूर्वज आये थे वहां उन्हीं के भाई लोग अब भी त्यागी ही कहलाते हैं। इसी धानूखेड़ी से ही सहारनपुर के पहाड़पुर और नुकड़ में गये हुए पं. हरप्रसादजी तथा पं. हरिप्रसादजी के पूर्वज गौड़ ब्राह्मण होगये और अभीतक उन लोगों के वंशज गौड़ही हैं। गांव फेराहेड़ी, सहारनपुर के त्यागियों के कुछ बिरादर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रुड़की तहसील के ज्वालापुर में जाबसे और अब दानग्राही होकर गंगापुरोहित गौड़ कहाते हैं। हरकी पैड़ियों का दान वही लेते हैं। उनमें इस समय सरदार परमानन्दजी हैं। खेड़ी जिन्नारदार, सहारनपुर से कुछ त्यागी वंश वाले जालखेड़ी, करनाल में चले गये और उन्हीं के वंश में पंडित गोपीचन्द जी प्रभृति दान ग्राही होगये। राना जसमोर. जिला सहारनपुर के पुरोहित के वंशज चौ० फतह सिंह वगैरः तेवड़ा जिन्नारदार, सहारनपुर में जाकर जमींदारी करने से त्यागी होगये। परन्तु अभीतक दोनों दलमें सम्बन्ध करते हैं। पूर्वोक्त खेड़ी ग्रामसे ही कुछ लोग करोंदी में जाकर ग्राही गौड़ कहाते हैं और बड़गांव, तहसील नुकड़ में भी जाकर दान ग्राही ही हैं। मगर इन्हीं के भाई जाल खेड़ी, करनाल में त्यागी हैं और ग्राही एवं त्यागी दोनों के यहां विवाह करते हैं।

जैसे इस समय पश्चिमा ब्राह्मणों में पुरोहिती करने वाले बहुत हैं और पहले से भी हजारीबाग जिले के चतरा और इटखोरी थाने के बाभनों (भूमिहार ब्राह्मणों) का पेशा पुरोहिती है और वही पेशा कागजों में लिखा जाता है। वे माहुरी वैश्यों, राजपूतों और कायस्थों के पुरोहित हैं। देव–गया–के सूर्यमंदिर के पुजारी खेदा पांडे वगैरः भी सोनभदरिया बाभन मयूरभट्ट के वंशज हैं। ठीक उसी तरह त्यागियों में भी कहीं कहीं पहलेसे ही पुरोहिती करने वाले पाये जाते हैं। दृष्टान्त के लिये, जमधरपुर, तुगलपुर, खानपुर, गजरौला, जिला बिजनौर के तगे (त्यागी) रवे राजपूतों के पुरोहित हैं। जरौला के पुरोहित नाथूराम और सलेखू राम वगैरः हैं। लंढौरा रियासत, जिला सहारनपुर के पुरोहित तांसी ग्राम, तहसील रुड़की के त्यागी ब्राह्मण हैं। पांचों पुरियों के सर्दार और हरकी पैड़ी के दान ग्राही पंडित दिसौंदीराम जी त्यागी वंश सेही हैं जिनके पुत्र सरदार परमानन्दजी वर्तमान हैं। इसी प्रकार और भी बहुत से दृष्टान्त ढूंढ़ने से मिल सकते हैं। जिसको मिथिला में मूल और काशी, सर्यूपार एवं कन्नौज में स्थान और डीह बोलते हैं, उसेही पश्चिमी जिलों में निकास कहते हैं। करनाल जिले के जितने ग्राम विवाह सम्बन्ध में दिखलाये गये हैं वे प्रायः पानीपत, थानेसर और करनाल तहसील के हैं; सहारनपुर वाले सहारनपुर, नुकड़ के और अम्बाला वाले अम्बाला और जगाधरी तहसील

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के हैं। नाहन तहसील भी है। गोविन्दपुरी की तहसील जगाधरी और गोवर्धनपुर की नुकड़ है। ये दो गांव बहुत प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित हैं, एवं इन्हीं गांवों का सम्बन्ध दोनों दलों में बहुत ज्यादा है। सढौलीहरिया, उमरी और डिगौली देवबन्द तहसील में हैं। नलेड़ा हड़की में है। गदौली, कोराली नारायण गढ़ में हैं।

इस प्रकार से यह स्पष्ट हो गया कि ये अयाचक ब्राह्मण पूर्व में मिथिला से लेकर पश्चिम में अम्बाला, करनाल, और पंजाब के झेलम तक फैले हुए हैं। इनमें से पूर्व छोर वाले मिथिला वासी और पश्चिम छोर वाले, या काशी पुरी से पश्चिम के रहने वाले दोनों हीं याचक (पुरोहित) दलवाले ब्राह्मणों से विवाह द्वारा एक में एक मिले हुये हैं। यहां तक कि दोनों दिशाओं में प्रतिष्ठित और प्रधान जो जो हैं उन सभी का सम्बन्ध अयाचक ब्राह्मणों से मिलता है। इस लिये यदि मध्य के अर्थात् काशी और गण्डक के बीच वालों से अन्य ब्राह्मणों के विवाह सम्बन्ध अज्ञान या किसी अन्य कारण वश, क्योंकि वहां के याचक दलवाले प्रायः दीन हैं, नहीं भी मिलते हैं, तो भी कोई हर्ज नहीं है और इससे ये मध्य के अयाचक ब्राह्मण अन्य ब्राह्मणों से पृथक् नहीं समझे जा सकते हैं। प्रत्युत ब्राह्मण समाज के ही सुन्दर और हृष्ट पुष्ट अङ्ग हो सकते हैं। क्योंकि जब इनके दल का आदि और अन्त दोनों हीं ब्राह्मण मात्र से घनिष्ठ मिलाव रखता है और अन्य ब्राह्मणों से भिन्न नहीं मालूम हो रहा है, तो मध्य में यदि किसी कारण से न मिलने से भेद भी प्रतीत होता होवे तो विवेकी जन उस भेद को सत्य न समझ मिथ्या ही समझते हैं। जैसे यदि किसी रस्सी को अण्डाकार (०) में फैला देवें, तो यद्यपि उसके दो छोर मिले हुये हैं और बीचका भाग एक दूसरे से दूर पड़गया है, परन्तु सभी की सभी रस्सी ही समझी जाती है, नकि बीचका हिस्सा रस्सी से भिन्न कुछ और ही समझा जाता है। क्योंकि 'जो चीजें किसी एक ही चीज के बराबर होती हैं वे आपस में भी बराबर ही होती हैं,' यह नियम इस जगह भी अच्छी तरह लगाया जा सकता है। इसीलिये वेदान्त का सिद्धान्त है कि ब्रह्म में अज्ञान होने से प्रथम और अज्ञान नाश के पश्चात् यदि जीव और ब्रह्म का वस्तुतः भेद नहीं है, तो मध्य में अर्थात् अज्ञान काल में, जो भेद प्रतीत होता है

eGangotri/Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह मिथ्याही है, क्योंकि जो राजा निद्रा से पूर्व औरनिद्रा टूटने पर भी अपने को राजा ही समझता है, वह यदि निद्रा दोष से स्वप्न देखता हुआ अपने को राजा न देख भिक्षुक के रूप में देखता है, तो उस से वह वस्तुतः भिखमंगा न होकर उस समय भी राजा ही रहता है और विचार शील उसे राजाही समझते हैं, चाहे वह स्वयं अपने को प्रचण्ड निद्रा, अथवा अज्ञान दोष से राजा न समझे यह दूसरी बात है। इसी लिये भगवान् श्री गौडपादाचार्यजी ने माण्डूक्योपनिषद्की कारिकाओं में लिखा है कि:—

आदावन्ते च यन्नास्ति वर्त्तमानेऽपि तत्तथा।
वितथैः सदृशाः सन्तोऽवितथा इव लक्षिताः॥६प्र०३॥

और उसी के ऊपर भगवान् श्री शंकराचार्य का भाष्य ऐसा है कि,

यदादावन्ते च नास्ति वस्तु मृगतृष्णिकादि,तन्मध्येऽपि नास्तीति निश्चितं लोके। तथेमे जाग्रद्दृश्या भेदा आद्यन्तयोरभावाद्वितथैरेव मृगतृष्णिकादिभिः सदृशत्वाद्वितथा एव, तथाप्यवितथा इव लक्षिता मूढैरनात्मविद्भिः।

इन दोनों वचनों का तात्पर्य यह है कि जो वस्तु आदि और अन्त में न रहे, परन्तु मध्य में प्रतीत होवे, तो उसे मध्य में भी मिथ्या ही समझना चाहिये। यही संसार की रीति है। केवल मूर्ख लोग ही उसे सत्य समझते हैं। क्य.कि मरुस्थल में मृगतृष्णा का जल मृग के विचार से प्रथम भी न था और आगे भी न रहेगा, केवल बीच में हीं मालूम होता है। इसीलिये वह मिथ्या है। यही दशा इस प्रकार के पदार्थों की है। क्योंकि वे भी उसी तरह के हैं। फिर उन्हें सत्य मानना मूर्खता के अतिरिक्त कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

जब यह स्पष्ट रूप से दिखला चुके हैं कि मैथिल, कान्यकुब्ज, गौड़, और सर्यूपारी सभी ब्राह्मणों में इन अयाचक दल के ब्राह्मणों के लड़के और लड़कियों दोनों के ही विवाह होते हैं, प्रत्युत मिथिला में लडकियों के ही अधिक और सर्यूपारी प्रभृति में लड़कों के ही और लड़कियों के कम, अथवा दोनों जगह बराबर ही और यही दशा गौड़ों की भी है तो बंगाल, बिहार और उड़ीसा की १९११ ई० की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनुष्य गणना की रिपोर्ट में मनुष्यगणना के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने जो उस के पांचवें भाग के प्रथम खण्ड के जाति विवरण नामक ११ वें प्रकरण के ४४४ वें पृष्ठ के नोट में लिखा है कि:—

'It is reported that in Purnea there have been a few cases of Babhans marrying Maithil Brahman-girls, but none of Maithil Brahmans taking wives from among the Babhans'.

अर्थात्, 'यह कहा जाता है कि पुरनियां जिले में चन्द बाभनों (पश्चिमा ब्राह्मणों) ने मैथिल ब्राह्मणों की लड़कियों से विवाह किया है, परन्तु किसी भी मैथिल ब्राह्मण ने बाभनों (पश्चिमा ब्राह्मणों) की लड़कियों से विवाह नहीं किया है'। इससे समझ लेना चाहिये कि रिपोर्ट लिखने वाले को ब्राह्मण समाज या भारत के समाज मात्रका कितना ज्ञान था, या सभी वैदेशिक लेखकों को रहा करता है। इसलिये ऐसी दशा में वे लोग जिस किसी भारत समाज के विषय में जो कुछ न लिख डालें उसी में आश्चर्य है। और केवल उन्हीं के आधार पर समाज के तत्त्व का निर्णय करना कितनी भूल है। हां, यदि किसी समाज के ही मनुष्य ने, जो उसके विषय में पूर्ण परिचित होवे, लिखा हो, तो उसके अनुसार वैदेशिकों के भी लेख मानने में कोई हर्ज नहीं है। भला यह कितनी बड़ी भूल है कि जब आज तक दोनों तरफ बराबर सैकड़ों लड़के लड़कियों के विवाह हो रहे हैं, तो केवल चन्द ही बतलाना, सो भी होते हुये, नकि वर्त्तमान? उसी मनुष्य गणना की रिपोर्ट में पूर्वोक्त स्थान में जो यह लिखा गया है कि:—

The name Bhumihar Brahman has been recognized by Government, and they are now returned as Babhan (Bhumihar-Brahman). It was, however, impossible to have given them a name and status not recognized by their co-religionists, and also because in the returns they would have been merged in the main body of Brahmans, and all record of them as a community would have been lost.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् 'गवर्न्मेन्ट ने भूमिहार ब्राह्मण नाम को स्वीकार किया है। इसलिये अब ये लोग 'बाभन (भूमिहार ब्राह्मण)' इस प्रकार से रिपोर्ट वगैरः में लिखे जाते हैं। इन लोगों को ऐसा नाम (ब्राह्मण) और ऐसा स्थान देना असंभव था, जिसे कि इन के सधर्मा (समान धर्म वाले ब्राह्मण क्षत्रियादि) स्वीकार नहीं करते। और ऐसा करने से, अर्थात् केवल 'ब्राह्मण' लिख देने से, ब्राह्मणों में हीं ये लोग भी मिल जाते और इन के एक पृथक् समाज होने की सब बातही लुप्त हो जाती'। इसमें पहला कारण जो यह दिखलाया गया है कि इन लोगों (भूमिहार ब्राह्मणों) को ब्राह्मण क्षत्रियादि ब्राह्मण नाम देना स्वीकार नहीं करते, वह कहां तक सत्य है इस के लिये विशेष कहने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि जब सभी ब्राह्मणों के साथ इन लोगों के विवाह सम्बन्ध और खान पान मिले हुये हैं, तो हम नहीं समझते कि इससे अधिक ब्राह्मण स्वीकार करना किसको साहब बहादुर ने समझा है। क्या अन्य ब्राह्मणों में भी एक दूसरे को ब्राह्मण स्वीकार करने के लिये सिवाय खान पान और विवाह सम्बन्ध के और भी कोई रजिस्टरी वगैरः की जाती है? क्या कोई ब्राह्मण अपने से भिन्न क्षत्रियादि के साथ विवाह वगैरः करते देखा गया है?

बल्कि उधरतो मैथिल केवल मैथिल को ही ऐसा स्वीकार करता है, ऐसे ही अन्य ब्राह्मण भी, परन्तु इधर तो सभी ब्राह्मण स्वीकार कर रहे हैं। इसलिये इससे बढ़कर और क्या होना चाहिये? क्यों कि एक काम केवल बातों से ही किया जाता (Theoratical) है परन्तु दूसरा कार्य रूप में परिणत (Practical) करके दिखलाया जाता हैं। उनमें से द्वितीय पक्षको ही श्रेष्ठ मानते हैं और इन अ चक दलवाले ब्राह्मणों के विषय में दूसरा ही पक्ष है, इसे सिद्ध कर चुके हैं।

७—व्यवस्थाएं, सम्मतियां और पत्र आदि।

यदि प्रथम पक्ष अर्थात् बातों से कहने का भी आग्रह होवे तो अ अन्त में उसे भी दिखला कर इस प्रकरण की पूर्त्ति करते हैं। इससे प्रथम हीं इतना और भी समझलेना चाहिये कि जब इस प्रकार से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अयाचक (भूमिहार) ब्राह्मणों के सम्बन्ध और खान पान अन्य ब्राह्मणों के साथ सिद्ध हो गये, तो जो पूर्वोक्त फिशर साहब ने गाजी पुर के गजेटियर के ४२ वें पृष्ठ में लिखा है कि "The may not drink or smoke with Brahmans, and only under some restrictions with Rajputs."

अर्थात् 'वे (भूमिहार ब्राह्मण) (इतर) ब्राह्मणों के साथ स्वयं खान पान नहीं कर सकते और राजपूतों के साथ तो खानपान करने में केवल बहुतसी बाधायें हैं, इसीलिये नहीं कर सकते'। इस में जो ब्राह्मणों के विषय में कहा गया है उसका भी खंडन होगया है। परन्तु राजपूतों के विषय में ठीक ही कहा है। क्योंकि ब्राह्मणों का अन्यों के साथ खानपान हो ही कैसे सकता है?

अस्तु, अब प्रकृत में आइये। सब से प्रथम मिथिला के मान्य मीमांसकधुरीण महामहोपाध्याय श्री चित्रधर मिश्र जी की सम्मति इस विषय में देखिये। उन्होंने दरभंगा प्रान्तस्थ पतोर ग्रामवासी पंडित सूर्यप्रसाद मिश्र और राजेन्द्र प्रसाद मिश्रजी की एक व्यवस्था में, जिसको आगे दिखलावेंगे, ऐसा लिखा है कि:—

श्रीदुर्गा।

पश्चिमदेशाभिजनस्य मिथिलानिवासस्य बाबू श्रीसूर्यप्रसादमिश्रस्य ब्राह्मणस्य प्रश्नानामुत्तरोन्नेयानामुत्तरम्:- ब्राह्मणस्वामिकस्याशीतिरक्तिकापरिमितस्यतदधिकस्य वा स्वर्णस्य स्तेयं महामातकप्रायश्चित्तस्य प्रयोजकम्। ततो न्यूनपरिमाणस्य स्तेयं तु न तत्प्रायश्चित्तस्य प्रयोजकम्, किन्तु प्रायश्चित्तान्तरस्य। अशीतिरक्तिकापरिमितत्वंतदधिकत्वं वा एकखण्डस्य समुदायस्य वा तावता कश्चिद्विशेषः। नह्येकपिंडस्यैव यत्राशीतिरक्तिकापरिमितत्वादि, तत्रैव तत्स्तेयं महापातकमिति कस्य चिच्छास्त्रस्यार्थः। पश्चिमदेशाभिजनानां ब्राह्मणानां ब्राह्मणत्वे चिरकालप्रवृत्तस्य शिष्टानां ब्राह्मणत्वेन

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिग्रहस्य दार्ढ्यमेव दृढ़तरं प्रमाणम्। नह्यन्येषामपि ब्राह्मणानामनादिकालप्रवृत्तां शिष्टानां तत्त्वेन परिग्रहदार्ढ्यं मुक्त्वा ब्राह्मणत्वेऽन्यत्प्रमाणं संभवति, यथा वेदस्य वेदत्वेऽनादिकालप्रवृत्तो वेदत्वेन शिष्टानां परिग्रह एव प्रमाणं न वेदवाक्यं स्मृत्यादि वा, तद्वदितिसंक्षेपः।

यत्रपूर्वैरुषितं सोऽभिजनः। } { श्रीचित्रधरमिश्रः॥
यत्रस्वयमुष्यते स निवासः। }

इसका भाव यह है कि श्री सर्यूप्रसाद मिश्रके किसी दायाद के ऊपर सोने की चोरी करने के अपराध में धर्मशास्त्रानुसार उन लोगों ने महापातक का प्रायश्चित्त लगाया था। उसपर किसी मैथिल ने कुछ छल करके एक ऐसी व्यवस्था लिखी जिसमें उसे निर्दोष ही ठहराया। इस पर श्री सर्यूप्रसाद ने लूटन झा नामक किसी विद्वान् से एक व्यवस्था लिखवाई और उसपर बड़े २ पण्डितों के हस्ताक्षर करवाये, जिसे आगे दिखलावेंगे। जब उस व्यवस्था पर श्रीचित्रधर मिश्र जी को सम्मति देने का प्रकरण आया, तो स्वतंत्ररूप से उन्होंने पूर्वोक्त वचन लिखे जिनका अर्थ यह है कि पूर्वकाल में पश्चिम देश (इसी लिये अयाचक ब्राह्मणों को मिथिला में पश्चिमा ब्राह्मण कहते हैं) और इस समय मिथिला देश वासी बाबू सर्यूप्रसाद मिश्र नामक ब्राह्मण के उन प्रश्नों के उत्तर हम लिखते हैं जिन्हें लोग उत्तर हीसे समझसकतेहैं-

ब्राह्मण का अस्सी रत्ती या उससे अधिक सुवर्ण चुरा लेने पर महापातक का प्रायश्चित्त करना चाहिये। परन्तु यदि उससे कम हो तो वह प्रायश्चित्त न होकर उसके लिये दूसरा ही प्रायश्चित्त होता है। वह अस्सी रत्ती का एक ही टुकड़ा होवे, या अनेक इसमें कोई विशेष नहीं है, क्योंकि अस्सी रत्ती के एक ही टुकड़े की चोरी करने से ही महापातक का प्रायश्चित्त करना चाहिये ऐसा कोई भी शास्त्र नहीं कहता। पश्चिम देश के पूर्व निवासी ब्राह्मणों (पश्चिमा या भूमिहार ब्राह्मणों) के ब्राह्मण होने में अत्यंत प्रबल प्रमाण यही है कि शिष्ट (श्रेष्ठ, विवेकी अथवा आस्तिक) लोग बहुत प्राचीन काल से उन्हें दृढ़ता पूर्वक ब्राह्मण कहते चले आते हैं। क्योंकि अन्य ब्राह्मणों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मण होने में अनादि काल से शिष्ट लोगों के 'ये ब्राह्मण हैं' इस कथन या व्यवहार को छोड़कर दूसरा कोई प्रमाण नहीं हो सकता। जैसे वेदों को वेद मानने में अनादि काल से शिष्ट (श्रेष्ठ) पुरुषों का उनको वेद कहना छोड़कर और कोई वेदवाक्य अथवा स्मृत्यादि के वचन प्रमाण नहीं हो सकते। उसी तरह ब्राह्मणों के विषय में भी संक्षेप से यही समझ लेना चाहिये।

जिस जगह अपने पूर्वपुरुष रहते थे उसे अभिजन कहते हैं, और जहां स्वयं रहे उसे निवास। } हस्ताक्षर श्रीचित्रधरमिश्र।

क्या अब इससे भी बढ़कर स्वीकार (recognition) चाहिये? इतना हीं नहीं है। अब उस पूर्वोक्त व्यवस्था को देखिये, उस में कितने विद्वानों के हस्ताक्षर हैं। उसमें से भी उसके बहुत बृहत् होने के कारण केवल उपयोगी अंशों को लिखते हैं। वह इस प्रकार है:—

ॐ स्वस्ति भूयात्। श्रीतारिणी जयति।

धर्मनिर्णयपत्रम्।

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमोनमः॥
नहि सत्यात्परोधर्मो नानृतात्पातकं परम्।
तस्मात्सर्वात्मना मर्त्यः सत्यमेकं समाश्रयेत्॥
अदण्ड्यान्दण्डयन्राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन्।
अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति॥

दरभंगाप्रांतस्थितरघुनाथपुरनगरवास्तव्यो बाबू इतिपदांकितोमिश्रोपाह्वःश्रीयुतः सूर्य्यप्रसादशर्मा वादी १

तादृशास्तद्वायादायदुवंशनारायणशर्मलक्ष्मीनारायणशर्मभोलाप्रसादशर्मरामशंकरशर्माणः प्रतिवादिनः ४

तत्रवादिदत्तमेकंविज्ञप्तिपत्रंमयाप्राप्तं। तत्र यल्लिखितमासीत्तत्पुरस्ताद्विलिखामि। तथाहि वर्षाष्टादशपूर्वसमये मदीयगृहभित्तिच्छेदनं कृत्वा बहूनि सुवर्णा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Funding by IKS-MoE-Grant-2

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लंकरणादीनि वस्तूनि चौरैरपहृतानि, तत्र बहुमूल्यं सुवर्णालंकरणत्रयंरामवल्लभमिश्रस्यासीत्, यच्चमृतायाः कस्याश्चिदंगनाया रामवल्लभशर्मणा मदीयगृहे समधारि। अनन्तरं राजदण्डदायकैर्जनैर्धृतास्ताडिताः कियंतश्चौरास्तत्कर्मस्वीकारंचक्रुस्तत्रैकोरामवल्लीशर्मा येन तत्कर्म न स्वीकृतं, परन्तु तदीयगृहाद्रामवल्लभमिश्रस्य पूर्वोक्तसुवर्णालंकरणानिबहूनिबहिर्गतानियेषांमूल्यंराजतमुद्राशतकत्रयाधिकं राजकर्मचारिलेखाद्विज्ञायते।

अथेदानीं प्रतिवादिना राजतमुद्राचतुःपंचकपरिमितान्येवसुवर्णानि स्वीकृतानि। किंच नटीसंगमतदीयसिद्धान्नभक्षण विश्वासमाधाय ग्रामीणैर्जातिबाह्योऽपिकृतः। तत्र स्वामिचौरयोर्ब्राह्मणत्वं स्वकपोलकल्पितमश्रद्धेयमितिमृषाविलिख्याभिशप्तप्रायश्चित्तं मुसलिशर्मणा दत्तं रामवल्लीशर्मणे। स च तावन्मात्रप्रायश्चित्तानुष्ठानेन पूतो भवितुमर्हतिनवेति व्यवस्थापत्रमस्मभ्यन्दीयतामिति। अनन्तरं मया तदीयवृत्तांतजातं राजकीयनिर्णयपत्रतस्सभापत्रतोऽन्यतश्चावलोक्यपुरस्तादुद्घाट्यते।

अथ महापातकभयमादायसुवर्णस्वामिचौरयोर्ब्राह्मणत्वस्य स्वकपोलकल्पितत्वंयदुक्तं मुसलिशर्मणा तद्दुग्धकन्याचरणं दुष्टकन्याचरणंवेतिविज्ञातस्भवति। तत्र चूडाकरणादिब्राह्मणविहितानां कर्मणां परम्पराचारस्य दर्शनात्, तत्रशर्मान्तनामपाठव्यवहाराच्च, प्राप्तमुक्तिसाम्राज्यमिथिलामहाराज छत्रसिंहाद्यनेक महाराजलिखितपत्रेषु, महाराजकुमारयोर्बाबूइति पदांकितयोर्वासुदेवसिंहगुणेश्वरसिंहयोर्वृत्तान्तपत्रेषु, तद्वंश्यानां बहूनां पत्रेषु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्शर्मनमस्कारपदलेखस्य दर्शनाच्च, गतचत्वारिंशदधिकशताब्दसमयलिखित राजकीयमुद्रांकितयवनपत्रे मिश्रोपाह्वस्य दर्शनाच्च, लाटकमिश्नरइत्यादिशब्दप्रसिद्धानां बहूनां राजप्रतिनिधीनां हाईकोर्टइतिप्रसिद्धन्यायस्थानाधीशानां जय्यपदांकितानां महानुभावानां लेखेभ्यश्च, नाना पण्डितदत्तव्यवस्थापत्रेषुब्राह्मणपदलेखस्यदर्शनाच्चशंकोत्थानसामग्र्या एवाभावात्।

तथाचात्र मिथ्याभिशापप्रायश्चित्तेन न मूलपापशोधनमितिविदुषाम्परामर्षः—

(१) सममान्ययमर्थोलूटनशर्मणा।

(२) सम्मतोऽयमर्थः श्रीबच्चाशर्मणः।

(३) समीचीनमिदंव्यवस्थापत्रमिति श्रीमुरलीशर्मणः परामर्षः।

(४) सम्मतिरत्रश्रीमणीश्वरशर्मणः।

(५) सम्मतिरत्रार्थे श्रीनव (लव) सिंहशर्मणः।

(६) व्यवस्थामिमामनुमन्यतेव्याकरणतीर्थः श्रीहरिशंशर्मा।

(७) व्यवस्थितमर्थंसंज्ञापयति श्रीलालजीशर्मा।

(८) पतोरग्रामवास्तव्याःसूर्यप्रसादशर्मप्रभृतयो ब्राह्मणाएवोपनयनादिसंस्काराविशेषात्। यदितेषांमध्येकस्यचिदशीतिरक्तिकाऽन्यूनंसुवर्णं स्वामिनोऽसमक्षंकश्चिदाजहार तदा तस्यमहापातकित्वमेव, स्वीकृतनटीगमादिपापञ्चाधिकमेवप्रतीयते, नहि कृतयत्किञ्चित्प्रायश्चित्तोऽपिसंसंग्राह्योभवितुमर्हतीतिश्रीरज्जेशर्मा।

(९) श्रीमतां पण्डितवरझोपाह्वलालजीशर्ममिश्रो-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाहश्रीरज्जेशर्मभोपाहजुडावनशर्मणां लेखेन निश्चित-ब्राह्मणस्वर्णापहारोरामवल्लीशर्मामहापातकीति निर्णय-तितात्याशास्त्री ।

(१०) मुनिप्रणीतवचनान्यालोच्यशुभकर्मणाम् ।
व्यवस्थास्वीकृतासेयंश्रीजुडावनशर्मणाम् ॥

इस पूर्वोक्त व्यवस्था के 'दरभंगा प्रान्तस्थित' इत्यादि भाग का मर्मानुवाद यह है —

'दरभंगा जिले के रघुनाथपुर ग्रामवासी बाबू श्री सर्यूप्रसाद मिश्रशर्मा इस व्यवस्थापत्र में वादी (मुद्दई) हैं ।

उसी ग्राम के उनके दायाद यदुवंश नारायण शर्मा, लक्ष्मी नारायण शर्मा, भोला प्रसाद शर्मा और रामशंकर शर्मा ये चार प्रतिवादी (मुद्दआलह) हैं ।

वादी ने मुझे एक विज्ञापन दिया था । उसमें जो लिखा था वह यह है कि आजसे १८ वर्ष पूर्व मेरे घर में सेन्ध लगाकर बहुत से सोने वगैरः के गहने चोर चुरा ले गये थे । उन गहनोंमें से तीन गहने अधिक दाम के राम वल्लभ मिश्र के घर की किसी मरी हुई स्त्री के थे जिन्हें उन्होंने मेरे घर रक्खा था । इसके बाद पुलीस ने बहुत से चोरों को पकड़ कर मार पीट प्रारम्भ की, जिससे उन्होंने उस चोरी को स्वीकार किया । उनमें से एक रामवल्ली शर्मा भी थे, जिन्होंने गो हि चोरी स्वीकार न की, परन्तु उनके मकान में पूर्वोक्त रामवल्लभमिश्र के बहुत से सुवर्ण के आभूषण मिले, जिनका दाम अंफसर लोगों ने अपने फैसले में तीन सौ रुपये से अधिक लिखा है ।

अब उसके बाद रामवल्ली शर्मा ने यह स्वीकार किया कि ४ या ५ रुपये भर सोना हमारे घर था, और किसी नट की स्त्री के साथ भोग और उसके बनाये भोजन खाने का विश्वास करके गांव वालों ने उन्हें जाति से बाहर भी निकाल दिया । इसपर मुसली शर्माने केवल झूठा ही यह लिखा कि सुवर्ण के स्वामी और चोर दोनों को लोग अपने मन से ही ब्राह्मण मानते हैं । इसलिये मैं उसे नहीं मानता । ऐसा लिखकर उन्होंने रामवल्ली शर्मा को केवल मिथ्या भाषण या कलंक खाने का अपराधी बताकर उसी का प्रायश्चित्त उनको बतलाया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसलिये मैं पूछता हूं कि रामवल्ली शर्मा केवल उतने हीं प्रायश्चित्त से शुद्ध हो सकते हैं या नहीं, इसकी व्यवस्था मुझे दीजिये।'

इस पर मैं उन लोगों के वृत्तान्त को अदालती फैसले, सभाओं की व्यवस्थाओं और अन्य प्रमाणों से निश्चित कर सब के सन्मुख यह घोषणा करता हूं कि:—

मुसली शर्मा ने महापातक के भय से सुवर्ण के स्वामी और चोर दोनों को जो कल्पित ब्राह्मण ठहराया है, वह यातो केवल मूर्खता, या धूर्तता मात्र है, यही मालूम होता है। क्योंकि जब वादी प्रतिवादी अर्थात् भूमिहार ब्राह्मणों में ब्राह्मणों के चूड़ाकरण इत्यादि सभी कर्म परम्परा से किये जाते हैं, इन कर्मों में उन लोगों के नामों के अन्त में शर्मा शब्द का प्रयोग होता है, मुक्ति को प्राप्त मिथिला के महाराज नरसिंह आदि अनेक मैथिल महाराजाओं, महाराजकुमार बाबू वासुदेवसिंह तथा बाबू गुणेश्वर सिंह जी और उनके वंश के और बहुत से लोगों के पत्रों में इन सभी लोगों को शर्मा शब्द और साथही नमस्कार भी लिखा गया है, १४० वर्ष पूर्वके मुसलमान बादशाह के मोहर सहित आज्ञापत्र में इनको मिश्र लिखा हैं, बहुत से लाट और कमिश्नर वगैरः के लेखों और हाईकोर्ट के जजों के फैसलों में इन्हें ब्राह्मण लिखा है और बहुत से पण्डितों ने अपनी दी हुई व्यवस्थाओं में इन्हें स्पष्ट ब्राह्मण लिखा है, तो ये लोग ब्राह्मण हैं या नहीं इस शंका का तो कोई कारण हीं नहीं है।

इसीलिये मिथ्या भाषण और मिथ्या शपथ के प्रायश्चित्त से मूल पातक (महापातक) का शोधन नहीं हो सकता यही विद्वानों की सम्मति है। हस्ताक्षर और विद्वानों की सम्मतियां:—

(१) मैं इस बातको मानता हूं। (२) मेरी इसमें सम्मति है।
हस्ताक्षर श्री बच्चा शर्मा। हस्ताक्षर लूटन शर्मा।

(३) यह व्यवस्थापत्र ठीक है ऐसा मैं मानता हूं,
हस्ताक्षर श्रीमुरली शर्मा।

(४) इसमें मेरी सम्मति है, (६) इस व्यवस्था को मैं स्वीकार करताहूं,
ह० श्री मणीश्वरशर्मा। ह० श्रीहरिवंश शर्मा व्याकरण तीर्थ।

(५) इस विषय में मैं भी सहमत हूं, (७) यह बात बहुत ही उचित है।
ह० श्रीलव (नव) सिंह शर्मा। ह० श्रीलालजी शर्मा।

eGangotri Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(८) पतोर गांव के रहनेवाले श्रीसर्यूप्रसाद शर्मा आदि ब्राह्मण हीं हैं, क्योंकि इनके उपनयनादि संस्कार अन्य ब्राह्मणों के से ही होते हैं। इसलिये यदि उनमें से किसी ने ८० रत्ती या उससे अधिक सुवर्ण स्वामी के न रहने पर चुराया हो, तो उसे महापातकी ही समझना चाहिये और यदि नटी के साथ भोग आदि स्वीकार किया तो वह पाप अधिक ही है। इसलिये थोड़े बहुत किसी प्रायश्चित्त के करने से वह शुद्ध नहीं हो सकता। ह० श्रीरज्जे शर्मा।

(९) श्रीमान् पंडित प्रवर लालजी झा, रज्जेमिश्र और जुड़ावन झा के लेखों से निश्चित है कि रामवल्ली शर्मा ब्राह्मण हैं और उन्होंने ब्राह्मण का सोना चुराया है। इसलिये मेरा निर्णय यही है कि वे महापातकी हैं। ह० श्रीताल्याशास्त्री (काशी)।

(१०) धर्म शास्त्रों को विचार कर मैं इस व्यवस्था को स्वीकार करता हूं। ह० श्रीजुड़ावन शर्मा

इसके अनंतर इस व्यवस्था के लेखक पंडितवर लूटनझा जी का पत्र दिखलाकर फिर उन पत्रों को दिखलावेंगे जिनका वर्णन व्यवस्था में किया गया है। वह ऐसा है:—

श्रीतारिणी जयति।

विविधप्रशंसावलीविराजमानमानोन्नतेषु महोग्रप्रतापकीर्त्यलंकृतेषु कृततपोनिकरज्वलितेषु निखिलसज्जनानुरंजकस्वभावललितेषु बाबू इति पदोपशोभितेषु श्री श्रीमत्सु सर्यूप्रसादशर्ममिश्रपीताम्बरशर्ममिश्रवेणीप्रसादशर्ममिश्रेषु महतां महत्सु सविनयनमस्कारशतं समर्प्य निवेदयति कश्चित्। अपने सबहि कां परम सदाचारी ब्राह्मण जाति तत्त्वविज्ञान परम अलभ्य वस्तु लिखि पठाओल अछि, अतीव मननीय पदार्थ जानल जायत, कदाचित् पत्र लिखवा क हो तं पताः—

ग्वालियर, रेवती फाटक, हरिप्रसाद भैया के मकान पर लूटन झा लिखल जायत। ह० लूटनशर्मा।

इसका अनुवाद यह है:—विविध विशेषण युक्त, अतिप्रतिष्ठित प्रबल प्रताप एवं कीर्त्ति से सुशोभित, तपस्या बल से दिव्य शरीर और निखिल सज्जनों के चित्तों को प्रसन्न करने वाले श्रीमान बाबू सर्यूप्रसाद शर्मा मिश्र जी को सविनय शतशः नमस्कार समर्पण करने के अन्तर निवेदन है, कि आप लोगों को परम सदा चारी ब्राह्मण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञान कर परम अलभ्य वस्तु तत्त्वविज्ञान नामक एक लेख भेजता हूं, इसको अत्यंत मनन करने योग्य पदार्थ जानियेगा। कदाचित् पत्र लिखना हो तो, पताः— ग्वालियर–रेवतीफाटक–हरिप्रसादभैया के मकानपर लूटन झा, ऐसा लिखियेगा। हस्ताक्षर लूटनशर्मा।

अभी हालकी एक व्यवस्था इसप्रकार हैः—

नमः सोमाय।

समस्त सृष्टि संरक्षक यज्ञनारायण की अपार दयासे अथच श्री बाबु चौधरी के उद्योग से सं० १९७९ चैत्र सुदी ७ से १० तक डुमरिया घाट पर "महालक्ष्मीयज्ञ" शाला के सन्मुख तथा श्री १०८ दण्डी स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती, कवि सम्राट् पं० श्री देवी प्रसाद जी काशी, व्याकरण केसरी पं० खुद्दी झा कोइलख, पं० धर्म्मदत्त वेदशास्त्री काशी, पं० देवराज चतुर्वेदी डुमरी, शाहाबाद, श्री राय साहिब रासधारीसिंह छितरौर इत्यादि सज्जनों की उपस्थिति में कतिपय धार्म्मिक विषयों पर विचार होकर नीचे लिखा सिद्धान्त निश्चित हुआ।

१ कान्यकुब्ज, मैथिल, भूमिहार, गौड़, उत्कल अथवा समस्त ब्राह्मण जाति मात्र में परस्पर कैसा व्यवहार होना चाहिये?

(उत्तर) समस्त ब्राह्मण जाति मात्र में परस्पर समानता (नमस्कार) का व्यवहार होना चाहिये। किन्तु जहां अवस्था, विद्या, संबन्धादि की उच्चता हो वहां प्रणामादि का व्यवहार हो।

२ भूमिहार ब्राह्मण किस श्रेणी मे हैं?

(उत्तर) देश भेदानुसार पंच गौड़ों के ही अन्तर्गत हैं।

३ भूमिहार ब्राह्मणों को ६ कर्म्म का अधिकार है या नहीं?

(उत्तर) हां अवश्य ६ कर्म्मों का अधिकार है।

४ हस्तोदकदान और कुशोदकदान में शास्त्रविहित उत्तम दान कौन है?

(उत्तर) हस्तोदकदान शास्त्रविहित होने से उत्तम है, कुशोपरि दान ब्राह्मण के अभाव में काल्पनिक है।

५ एकादशाह के दिन आंगन में सामान्य दान के नाम से जो दूसरा शय्यादान होता है वह होना चाहिये या नहीं?

(उत्तर) दूसरे शय्यादान की विशेष व्यवस्था शास्त्र में नहीं है;

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करना न करना समाज का अधिकार है।

खुद्दी झा	रासधारी सिंह (छितरौर)
देवी प्रशाद शुक्ल	परमेश्वरी प्रसादसिंह (रहीमपुर)
धर्म्मदत्त त्रिपाठी	देवनाथ कर्म्मकाण्डी

दरभंगाके मैथिल महाराजाओं और महाराजकुमारोंके पत्र ये हैं:—

(माही) (१) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १ (मोहर)

महाराज श्री श्री रुद्रसिंह बहादुर देव देवानां सदा समरविजयिनां श्री कन्हैया शर्मा वो श्री देवीशर्मा ठीकेदारान तालुका पुसही प्रगन्ना पडरी देहात मिलकिअति सरकार के नमस्कार। आगां तालुका मजकूरक सन् १२५६ बारह सै छपन सालके जागह मध्ये नौ हजार रुपैआ ९०००) कलदार बारात कैल अछि कबज लै देव, एहांक तालुका मजकूरक वोआसिलवाकी मध्ये मोजर होएत। ९०००)।

इसका अर्थ यह है। पूर्वोक्त इस पत्र में जिन श्रीदेवीशर्मा, श्रीकन्हैया शर्मा का नाम है वे लोग पूर्वोक्त पतोरग्राम के श्री सयूप्रसाद मिश्र प्रभृति के पूर्वज थे। जिन के नाम से लहेरिया सराय(दरभंगा) में अब तक कन्हैया मिश्र का तालाब प्रसिद्ध है। और ये लोग दरभंगा राज के ठीकेदार थे। इसलिये महाराजा का यह पत्र रुपये के लिये आया है। जिसका अनुवाद यह है कि 'सदा समरविजयी देव देव महाराज श्री श्री रुद्रसिंह बहादुर का नमस्कार सरकारी मिलकियत तालुका पुसही परगना पड़री देहात के ठीकेदार श्री कन्हैयाशर्मा और श्री देवीशर्मा को पहुंचे। आगे पूर्वोक्त तालुके की जगह १२५६ फसली के लिये ९०००) में आप को ठीके में तै कीगई है। इसलिये रसीद लेकर रुपये भेजियेगा। आपकी वासिल बाकी में उसका मोजरा दिया जावेगा। इस पत्र में ऊपर राजा की मोहर और मछली का चिन्ह बना हुआ है। ऐसा ही अन्य पत्रों में भी है। माही=मछली।

(२) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १

(माही) (मोहर)

महाराजकुमार बाबू श्री वासुदेव सिंह देवानां श्री कन्हैआ लाल शर्मा के नमस्कार। आगां मौजे वेलौजा गैरह प्रगन्ना जरैल देहात मिलकिअति सरकार बाबति मालगुजारी महाल वैजु पैडीक मौजे मजकूरक सन १२५३ बारह सै त्रिपन सालक जागह मध्य बारात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कैल अछि कबज लै देव श्रीकन्हाई चौधरीक बत्तीस हजार एकानवै रुपैया मध्य दुई हजार एक सौ तीस रुपैया चौदह आना कयरे छी। २१३०॥।≈)।

अर्थ यह है:-महाराज कुमार बाबू श्री वासुदेवसिंह देव का कन्हैयालाल शर्मा को नमस्कार। आगे मौजे वेलौजा परगना जरैल महाल वैजूपट्टी की सरकारी मिलकियत की मालगुजारी का ठीका सन १२५३ के लिये आपको दिया गया है, रसीद लेकर रुपये कन्हाई चौधुरी को दीजियेगा। उनके जिम्मे ३२०६१) में से २१३०॥।≈) किये गये हैं।

(३) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १

(मोहर) (माही)

महाराज श्रीश्रीछत्रसिंह बहादुर देव देवानां सदा समर विजयिनां श्रीगिरधारी शर्मा ठीकेदार वो श्रीजुपालशर्मा माल जामीन मौजे हरिआ हरिपुर गैरह प्रगना पुडरी देहात मिलकिअति सरकारकं नमस्कार। आगां मौजे मजकूरक १२३३ तैत्तिस सालक जागह मध्ये बारात कैल अछि कबज लै देव चाररुपैआ आठ आना। एहांक मौजे मजकूरक वोआसिल वाकी मध्य मोजर हो एत। ४॥)।

यह अर्थ है:-' श्रीगिरधारी शर्मा और श्रीजुपाल शर्मा ठीकेदार मौजे हरिया हरिपुर परगना पुड़री देहात मिलकिअत सरकारी को देव देव सदासमर विजयी श्रीश्रीछत्रसिंह महाराज का नमस्कार। आगे पूर्वोक्त मौजे की जगह का ठीका सन १२३३ के लिये आपको दिया गया है। रसीद लेकर ४॥) दीजियेगा। आपकी उस मौजे की वासिल बाकी में मोजरा होगा।

(४) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव श्रीगणेश ?

(माही) (मोहर)

महाराज श्रीश्रीमहेश्वर सिंह बहादुर देव देवानां सदा समर विजयिनां श्रीदेवीशर्मा ठीकेदार मौजे नरगा गैरह प्रगन्ना नरगा गैरह देहात मिलकिअति सरकार के नमस्कार। आगे मौजे मजकूर गैरहक सन १२६१ सालक जागह मध्ये बारात कैल अछि कबज लै देव रुपैया कलदार। एहांक मौजे मजकूर गैरहक वोआसिलवाकी मध्ये मोजर होयत। १६६७।≈)।

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस का अर्थ यह है:-श्रीदेवी शर्मा ठीकेदार मौजे नरगा परगना नरगा देहात सरकारी मिलकियत को देव देव सदा समर विजयी महाराज श्री श्रीमहेश्वर सिंह बहादुर का नमस्कार। आगे पूर्वोक्त मौजा सन १२६१ के लिये आपको ठीके में दिया गया है। इसलिये रसीद लेकर १६६७।=) दीजियेगा। वह उस मौजे की वासिल बाकी में आप को मोजरा दिया जावेगा।

(५) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १ (माही)

महाराज श्री श्रीलक्ष्मीश्वरसिंह देव बहादुर देव देवानां सदा समरविजयिनां श्रीभगवतप्रसादशर्मा कँ नमस्कार। आगां ता० ३० जून मोताबिक आषाढ़ वदी ६ रोजशुक कुमैटी करतथु अछितँ यहां बरोबरि मोकाम दड़िभंगा हाजिर आएब। इति आषाढ वदी १५ सन् १२६० साल।

अनुवाद यह है:—श्री भागवत प्रसाद शर्मा को देव देव सदा समरविजयी महाराज श्री श्री लक्ष्मीश्वर सिंह देव बहादुर का नमस्कार। आगे ता० ३० जून आषाढ़ वदी ६ शुक्रवार को दरभंगा में कमिटी होगी। इसलिये आप अवश्य दरभंगा मुकाम पर आवेंगे। इति। आषाढ वदी १५ सन् १२६० फसली।

(६) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १ (माही)

महाराज कुमार बाबू श्रीगुणेश्वर सिंह देवानां श्रीदेवीशर्मा के नमस्कार। आगां एहांक ऐवाक हजूर जरूर अछि, तं लिखल दिखैत बहुत जल्द हजूर हाजिर होएब, ऐवा अर्सा हरगिज हरगिज जनि करिअ। इति सावन वदि सन १२६० साल।

इसका अर्थ यह है कि 'श्रीदेवी शर्मा को महाराज कुमार बाबू श्री गुणेश्वर सिंह देव का नमस्कार। आगे दरबार में आप के आने की आवश्यकता है। इसलिये पत्र देखते ही बहुत जल्द आइयेगा। आने में हर्गिज २ देर न होवे। इति सावन वदी सन १२६० फसली।

इन पूर्वोक्त पत्रों के अतिरिक्त और बहुत से पत्र महाराज बहादुरों और उन के वंश वालों के पतोर तथा अन्य ग्राम वाले पश्चिमा ब्राह्मणों के नाम से हैं, जिन में स्पष्टरूप से शर्मा शब्द का प्रयोग है और उनलोगों ने पश्चिमा ब्राह्मणों को नमस्कार ही लिखे हैं। परन्तु उन के लिखने से विस्तार हो जायगा। इसलिये आवश्यकता पड़ने पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे भी दिखलाये जा सकते हैं। अब दरभंगा महाराजाओं के दो पत्र और दिखलाकर दूसरी बातें लिखेंगे। उनमें से एक रामगढ़ (नरहन) के श्री कामेश्वर नारायण सिंह द्रोणवार ब्राह्मण के नाम से इस प्रकार है, जो वर्त्तमान महाराजा बहादुर का है:—

(७) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १

स्वस्ति। सर्वोपमा योग्य मर्यादा सागर बाबू श्री कामेश्वरनारायण सिंह महाशयेषु विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत महाराजाधिराज मिथिलेश श्री ३ रमेश्वर सिंह बहादुर देव देवानां सदा समर विजयिनां नमस्कारः। शमिह, तत्रत्यं तदनुदिवसमीहामहे। अथांदन्तः, एहांक पिताक अचानक परलोक गमन सुनि बहुत खेद भेल, एहां बालक छी शोक बहुत करैत होएब ते जिज्ञासार्थ ओ आश्वासन देवाक हेतु म० म० पण्डित श्री चित्रधर मिश्रके पठावोल अछि धैर्य कए आश्वासन राखब दैवाधीन विषय में साध्यकी। विशेष कुशल लिखब इति। माघ शुक्ल पंचम्यां शुक्रे सन १३११ साल।

अनुवाद यह है:—स्वस्ति, सर्वोपमा योग्य मर्याद-सागर बाबू श्री कामेश्वर नारायण सिंह महाशय को विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत महाराजाधिराज मिथिलेश श्री ३ रमेश्वरसिंह देव बहादुर देव देव का नमस्कार। यहां कुशल है, आपकी कुशल चाहते हैं। समाचार यह है कि आपके पिता का अचानक परलोकवास सुन कर बहुतही खेद हुआ। आप बालक हैं। इसलिये बहुत शोक करते होंगे। इसलिये जिज्ञासा और सन्तोष देने के लिये महामहोपाध्याय पंडित श्री चित्रधर मिश्रजी को पठाते हैं। धैर्य करके सन्तोष रखियेगा, क्योंकि दैवाधीन बात में वशही क्या है? विशेष हाल लिखियेगा। इति। माघ शुक्ल ५ शुक्र सन १३११।

निम्नलिखित पत्र काशिराजकुमार श्रीमान् प्रसिद्ध नारायण सिंहजी के नाम से आया था, जिसमें मैथिल ब्राह्मण शिरोमणि मिथिलेश महाराज श्रीरुद्रसिंह जी ने प्रणाम लिखा है। वह इसप्रकार है:—

(८) श्रीदुर्गा, श्रीमाधव, श्रीगणेश १

मदीश्वर।

स्वस्ति। देवद्विजवर दत्त सदा शोभाराशि सदाशुभधाम गुणिगण गीत यशोभरशारद शशधर द्वीपित नाममहाराजाधिराज कुमार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाबू श्रीप्रसिद्धनारायणसिंह महाशयेषु विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत महाराजाधिराज मिथिलाधीश श्री श्री श्रीमद्रुद्रसिंह बहादुर देव देवानां सदा समर विजयिनां प्रणतिराशयो विलसन्तु। शमिह, तत्रत्यं तदीशादीहामहे। अथोदन्तः, निमंत्रण पत्र श्री श्री श्रीकाशीराज बहादुरक द्विरागमनक पहुंचल से देखि अत्यंत चित्त को आनन्द प्राप्त भेल। श्रीमथुरा नाथ ठाकुर के पठावोल अछि न्योंताक रसूम बमोजिब तपसील दाखिल करताह। श्रीभगवानक कृपासं वोतयक सभक कुशल वो ई कार्य सम्पन्न होएवाक वार्ता शीघ्र लिखल जायत ये चित्त आनन्द होय इति। लेखोऽयं माधव सित पंचम्यां चन्द्रात्मजे समजनीति। ऊँ॥

इसका अर्थ यह है कि देवता और श्रेष्ठ ब्राह्मणों द्वारा दी गई शोभा की राशि, सदा तेजस्वी, गुणी लोग जिनको कीर्त्तिका कीर्त्तन करते हैं, और जिनका नाम द्विजराज पद से शोभित है ऐसे महाराजाधिराज श्री काशिराज के कुमारश्री बाबू प्रसिद्ध नारायण सिंह महाशय जी को विविध विरुदावली विराजमान और मानोन्नत महाराजाधिराज मिथिलाधीश देव देव सदा समर विजयी महाराज श्री मत् रुद्र सिंह बहादुर का प्रणाम। यहां कुशल हैं, आपकी कुशल ईश्वर से चाहते हैं। वृत्तान्त यह है कि श्री काशिराज बहादुर के द्विरागमन का पत्र पहुंचा। उसे देखकर प्रसन्नता हुई। श्रीमथुरानाथ ठाकुर को भेजते हैं, वे नेवता की रस्म यथोचित रीति से पूरीकरेंगे। श्री भगवान की कृपा से वहां के सब लोगों की कुशल और इस कार्य के पूरा होने का हाल लिखियेगा, जिससे चित्त को आनन्द होवे। वैशाख शुक्ल ५ बुधवार।

इन पत्रों से स्पष्ट है कि जब मैथिल ब्राह्मणों के शिरोमणि लोग इन अयाचक दलीय ब्राह्मणों को नमस्कार या प्रणाम आज तक बराबर करते आये और करते हैं, और स्पष्ट शब्दों में 'शर्मा' या 'ब्राह्मण' शब्दों से व्यवहार करते हैं, तो फिर अब ब्राह्मण मानना किसे कहते हैं? इसके अतिरिक्त पूर्वोक्त व्यवस्था में काशी के प्रसिद्ध गणनीय विद्वान् तात्याशास्त्री से लेकर मिथिला के महामहोपाध्याय श्रीचित्रधर मिश्र जी और अन्य ब्राह्मणों की सम्मतियां दिखला ही चुके हैं।

महामहोपाध्याय तर्कवागीश विधि श्रोत्रिय श्री श्री कृष्ण सिंह ठाकुर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी अपनी 'ब्राह्मण वंश विवेक' नामक मैथिल ब्राह्मण वंशावली में यही दिखलाते और स्पष्ट रूप से इन अयाचक दलीय ब्राह्मणों को ब्राह्मण पद से संबोधन करते हुये मैथिलों और भूमिहार ब्राह्मणों को एकही बतलाते हैं। जैसा कि उस पुस्तक के अन्त में यह विज्ञापन या नोटिस सर्वसाधारण को देते हुये लिखते हैं कि,

मैथिलब्राह्मणानां भूमिहारब्राह्मणानांचोपकारबुद्ध्या सर्वसीमाग्रामवास्तव्येन तंत्रविन्महेश्वरात्मजेन तर्कवारिधिना श्रोत्रियेण खण्डवलावंशजेनठक्कुरोपाह्वश्रीकृष्णशर्मणा नानानिबन्धपुराणादीन्यवलोक्य यथामति ब्राह्मणवंशविवेकनामकोऽयंनिबन्धःखलुविरचय्य मुद्रापयित्वा प्रकाशितः।

इस का अनुवाद यह है कि 'मैथिल ब्राह्मणों और भूमिहार ब्राह्मणों के उपकार के लिये सर्वसीमाग्रामवासी तंत्रज्ञ महेश्वर पंडित के पुत्र तर्कवारिधि, श्रोत्रिय और खंडवला मूल वाले श्रीकृष्ण ठाकुर शर्मा ने पुराणादि नाना ग्रन्थों को देख अपनी बुद्धि के अनुसार इस ब्राह्मणवंशविवेक नामक ग्रन्थ को रच कर प्रकाशित किया'।

इस वाक्य में कई बातें समझने योग्य हैं। एक तो यह कि उन्होंने अपनी जातिवाले ब्राह्मणों को समझाने के लिये जैसे ब्राह्मण शब्द से पूर्व 'मैथिल' विशेषण जोड़ा है, वैसेही इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों को बतलाने के लिये ब्राह्मण शब्द से पूर्व 'भूमिहार' विशेषण लगाया है। इसलिये जैसे मैथिलों को वे ब्राह्मण समझते हैं, ठीक वैसेही भूमिहारों को भी, यह उनकी इस लेखशैली से स्पष्ट है। दूसरी बात यह है कि जब 'ब्राह्मणवंशविवेक' नामक ग्रन्थ मैथिल ब्राह्मणों की वंशावली ठहरी, क्योंकि इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में हीं उनकी यह प्रतिज्ञा हो चुकी है कि:—

पञ्जीप्रबन्धसारांशादुद्धृत्य विदुषां मुदे।
मैथिलद्विजवंशानां गोत्रादीन् वक्ति यत्नतः॥

अर्थात् 'पञ्जी नामक मैथिलों की प्राचीन लिखित बड़ी वंशावलियों से सारांश निकालकर मैथिल ब्राह्मणों के गोत्रादि का वर्णन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया जाता है'। तो फिर यदि उससे उपकार की संभावना है तो केवल मैथिल ब्राह्मणों को ही, नहीं तो फिर सभी ब्राह्मणों का उससे उपकार हो सकता है, न कि केवल मैथिलों और भूमिहार ब्राह्मणों का हो। तो फिर अन्त में यह लिखना कि 'मैथिल ब्राह्मणों और भूमिहार ब्राह्मणों के उपकार के लिये यह ग्रन्थ बनाया गया है' क्या यह सिद्ध नहीं करता कि श्रीकृष्णसिंह ठाकुर के मत में मैथिल ब्राह्मण और भूमिहार ब्राह्मण एकही हैं? इसीलिये दोनों की उपाधियां और गोत्र एवं मूलादि कम से कम मिथिला में प्रायः एक ही मिलते हैं। नहीं तो क्या पञ्जी में मैथिलों को छोड़कर किसी अन्य ब्राह्मण समाज के भी गोत्रादि लिखे गये हैं, जिनके सारांश से भूमिहार ब्राह्मणों का भी उपकार हो सकता है? तीसरी बात यह है कि जब उस ग्रंथ का नाम 'ब्राह्मणवंशविवेक' है और इसीलिये उसमें केवल ब्राह्मणों के ही वंशों का वर्णन है, तो फिर उससे भूमिहार ब्राह्मणों का उपकार उसी दशा में हो सकता है यदि वे ब्राह्मण माने जावें। नहीं तो जो ब्राह्मणों के नाम या समाज से बाहर है, उसका ब्राह्मणवंश, या गोत्र अथवा मूल के निरूपण से क्या लाभ हो सकता है?

इसके अतिरिक्त मैथिल महा सभा के भागलपुर वाले अधिवेशन के विवाहसम्बन्धी प्रस्ताव का वर्णन प्रथमहीं करचुके हैं। उस प्रस्ताव में भी, जैसे श्रीकृष्णसिंह ठाकुर ने 'भूमिहार ब्राह्मण और मैथिल ब्राह्मण' लिखा है, वैसेही 'बहुत मैथिल ब्राह्मण भूमिहारब्राह्मणों से विवाह करते हैं,' ऐसा लिखा गया है। इसलिये श्रीकृष्ण ठाकुर की तरह मैथिल महासभा भी ब्राह्मणों के बराबर दो विशेषण मैथिल और भूमिहार देकर दोनों को समान हीं ब्राह्मण स्वीकार करती है। मैथिलसमाज का 'मिथिलामिहिर' पत्र तो बराबर ही इन अयाचकों को ब्राह्मण लिखा ही करता है। इसलिये मैथिल तो स्पष्ट रूप से पश्चिमालोगों को ब्राह्मण मानते हैं। नीचे लिखी हुई व्यवस्था से भी यह बात स्पष्ट है। वह व्यवस्था इस प्रकार की है:-

श्रीगणेशाय नमः।

सांढ़ानगरे सम्पादितायां सभायां भूमिहारशब्देन प्रसिद्धानां कान्यकुब्जब्राह्मणानां सर्यूपारीप्रभृतिब्राह्म-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्रान्तरैः सह परस्परं नमस्कारो युज्यते न वेति प्रश्ने उत्तरम्। युज्यते नमस्कार इति। तथाहि सम्प्रदायानुसारि कान्यकुब्जब्राह्मणव्यवहारस्याधिककालव्यापकस्य दर्शनात्, श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासवचनसिद्धस्य चूडाकरणोपनयनादिसंस्कारस्य तथासंन्ध्यावन्दनादिनामांकित द्विजातिविहितकर्मणां समाचारस्यदर्शनात्, गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम् । ब्रह्मवर्च्चसकामस्यकाय विप्रस्य पञ्चमे, इति वचनेनैव चोपनयने व्यवस्था दृश्यते, अन्यथाराज्ञामेकादशे सैके विशामुपनयनक्रियेत्यादिना व्यवस्था स्यात्, नचतथाभवति। तथा मिताक्षरायां वर्णाश्रमेतराणांनो ब्रूहि धर्मानशेषतइतिवचनव्याख्यायां ब्राह्मणो ब्रह्मचारी पालाशदण्डंविभृयादित्यादिना प्रदर्शितोव्यवहारएवभूमिहारब्राह्मणानामुपनयनादौ प्रचरितः संगच्छते ।

ध्यद्यपिषट्कर्मा ब्राह्मणो भवेदित्यादिना सर्वेषां ब्राह्मणानांषट्कर्माणि भवन्ति, एतेषांभूमिहारब्राह्मणानांच त्रीण्येव कर्माणि अध्ययनं यजनं दानं चेति दृश्यते, तानि च क्षत्रियाणां वैश्यानांचाप्युपलभ्यन्ते । तथा चैते भूमिहारब्राह्मणाब्राह्मणान्तराणां नमस्कारयोग्यानेति युक्तं वचः। तथापि ब्राह्मणानां सर्वेषामपि त्रीण्येव कर्माणि यजनमध्ययनं दानंचेतिप्रशस्तानि, अवशिष्टान्यन्यानित्रीणिजीविकार्थान्येव भवन्ति, एवं चाध्यापकस्यायाज्ययाजकस्य शूद्रादितः प्रतिग्राहकस्य च मनुस्मृतिप्रभृतिभिरुक्तं प्रायश्चित्तं संगच्छते ।

अपि चाभिषेकादिगुणयुक्तस्य राज्ञः प्रजापालनं पर-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मो धर्म इति लिखितवता मिताक्षराकारेण क्षात्रेण कर्मणा जोवेद्विशां वाप्यापदिद्विजइत्यादितः स्वीकृतं कथंचिद्ब्राह्मणस्यापि राजधर्मपालयतः प्रतिग्रहादीनि त्रीणि कर्माणि निवर्तन्त इति, नतु क्षत्रिय वैश्यवत्पुत्रादिभ्य आचार्येभ्यो गायत्रीदानादीनि निवर्त्तन्त इति। तथा वरपक्षीयाणां भूमिहारब्राह्मणानां कन्यापक्षीयैर्ब्राह्मणान्तरैः सह नमस्कारो भवति। अत एवान्योन्यं विप्रानमन्तीत्यादीन्याप्तवाक्यानिसंगच्छन्ते। अत एवोपनयनकर्मण्येतेषामपि अभिवादयेविष्णुशर्माऽहंभो इत्यभिवादनं तथाऽऽयुष्मान् भव सोम्येति प्रत्यभिवादनं च संगच्छते। कन्यापक्षीयेभ्यो वरपक्षीयाणांनियतंधनादानं कान्यकुब्जेष्वेवहि प्रसिद्धम्।

करिकरभूमिगतेऽब्दे शिवतिथिशौचवलपक्षे।
इदमन्हिकवौविशुद्धधर्मावितरतिपंडितमुक्तिनाथशर्मा॥

शाके १८२८ आषाढशुक्लपक्षीयाष्टमीतिथियुक्ते शुक्रदिने व्यवस्थापत्रं समाप्तिमगात्।

(१) सम्मतिरत्रार्थे श्रीदेवकीनन्दनशर्मणः।
(२) " " श्रीहरिवंशशर्मणः।
(३) " " श्रीरामप्रकाशशर्मणः।
(४) " " पं० श्यामानन्दपाण्डेयस्य।
(५) " " ज्योतिर्विद् विद्यानन्दपाण्डेयस्य।
(६) श्री शिवानन्दशर्मा सम्मन्यते।
(७) सम्मतिः श्री अवधशरणशर्मणः।
(८) सम्मतिः श्री बच्चूशर्मणः।
(९) विप्राणां विप्रान्तरैः सह नमस्कारो युक्तइति श्रीमद्रामलोचनशर्मापि।

इसका मर्मानुवाद इस प्रकार है कि 'मुजफ्फरपुर जिले के साढ़ा गांव में एक सभा करके यह प्रश्न हुआ कि भूमिहार नाम से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रसिद्ध जो कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं उन का सर्यूपारी प्रभृति अन्य ब्राह्मणों के साथ परस्पर नमस्कार होना चाहिये अथवा नहीं ? इसका उत्तर यह हुआ कि 'होना चाहिये'। क्योंकि बहुत दिनों के परम्परानुसार इन लोगों के सभी व्यवहार कान्यकुब्जों के से हैं, जैसे कि श्रुति, स्मृति, पुराण और इतिहास सिद्ध जो ब्राह्मण के चूड़ाकरण प्रभृति संस्कार और संध्यादि हैं वे सभी इन लोगों में पाये जाते हैं। 'गर्भ धारण से अष्टम वर्ष में ब्राह्मण का उपनयन संस्कार होना चाहिये, परन्तु यदि ब्रह्मतेज की इच्छा हो तो पांच वर्ष में हीं', इस सुस्मृति के अनुसार ही इनके संस्कार होते हैं। नहीं तो क्षत्रिय का ११ और वैश्य का १२ वर्ष बाद उपनयन करना चाहिये' इस वचन के अनुसार होते। और 'वर्ण, आश्रम और इन से भिन्नों के धर्म हम लोगों को सुनाइये' इस याज्ञवल्क्यस्मृति के वचन के व्याख्यान के समय मिताक्षराकार ने जो लिखा है कि ब्राह्मण ब्रह्मचारी पलाश का दण्ड धारण करे इत्यादि, उसी के अनुसार भूमिहार ब्राह्मणों के उपनयन संस्कार होते हैं।

यद्यपि 'ब्राह्मण षट्कर्मा होते हैं' इत्यादि वचनानुसार सभी ब्राह्मणों के अध्ययन, अध्यापन, यजन, याजन, दान और प्रतिग्रह ये छः कर्म होते हैं, परन्तु इन भूमिहार ब्राह्मणों में तो यजन, अध्ययन और दान ये तीन हीं कर्म पाये जाते हैं, जो क्षत्रियों और वैश्यों में भी पाये जाते हैं। इसलिये भूमिहार ब्राह्मण लोग अन्य ब्राह्मणों के नमस्कार योग्य नहीं हैं, यह शंका होसकती है। तथापि सभी ब्राह्मणों के धर्म के लिये उत्तम कर्म यजन, अध्ययन और दान ये तीन हीं हैं, शेष तीन तो केवल जीविका के लिये हैं। इसी लिये मनुस्मृति प्रभृति धर्मशास्त्रों में अध्यापनादि करने में दोष भी लिखा है।

एक बात और भी है कि मिताक्षराकार ने 'अभिषेक होने पर राजा का परम धर्म है कि प्रजापालन करे' यह लिखते हुये यह स्वीकार किया है कि 'ब्राह्मण आपत्ति काल में क्षत्रिय और वैश्य के कर्मों से भी जीविका कर सकता है। इसलिये किसी प्रकार से ब्राह्मण भी यदि राजधर्म का पालन करे तो प्रतिग्रहादि तीन कर्म नहीं कर सकता'। और जैसे क्षत्रिय प्रभृति उपनयन काल में आचार्य बन कर ब्रह्मचारी को गायत्री का उपदेश नहीं कर सकते,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह बात इन भूमिहार ब्राह्मणों में नहीं है, किन्तु ये लोग आचार्य बन कर उपनयन काल में गायत्री का उपदेश करते ही हैं । और भूमिहार ब्राह्मणों में कन्या और वरपक्ष वाले परस्पर नमस्कार करते हैं, क्योंकि लिखा भी है कि 'ब्राह्मण लोग परस्पर नमस्कार ही करते हैं' । उपनयन काल में इन लोगों के यहां ब्रह्मचारी यही कह कर नमस्कार करता है कि 'मैं अमुकशर्मा नमस्कार करता हूं,' और लोग उसके उत्तर में यही कहते हैं कि 'हे सोम्य आयुष्मान हो' । जैसा कि ब्राह्मणों को ही करना चाहिये । एक बात यह भी है कि इन लोगों के यहां विवाह में 'तिलक' लेने की प्रबल प्रथा है जो कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में हीं प्रबल रूप से पाई जाती है । इसलिये ये लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण हीं हैं । इसलिये अन्य ब्राह्मणों के साथ इनका परस्पर नमस्कार बहुत ही उचित है । इस व्यवस्था को मैंने १८२८ शकाब्द आषाढ़ शुक्लपक्ष ८ शुक्रवार को लिखा । हस्ताक्षरपंडित मुक्तिनाथशर्मा । (१) ।

(२) मेरी भी सम्मति इस विषय में है, ह० श्रीदेवकीनन्दनशर्मा ।
(३) " " " " " श्री हरिवंशशर्मा ।
(४) " " " " " श्रीरामप्रकाशशर्मा ।
(५) " " " " " पं० श्यामानन्द पांडेय ।
(६) " " " " " ज्योतिर्विद् विद्यानन्द पांडेय ।
(७) मैं इसे मानता हूं, हस्ताक्षर श्री शिवानन्दशर्मा ।
(८) " " " " " श्री अवधशरणशर्मा ।
(९) " " " " " श्रीबच्चूशर्मा ।
(१०) ब्राह्मणों का परस्पर नमस्कार बहुत ही ठीक है । हस्ताक्षर श्रीमद्रामलोचन शर्मा ।

इस व्यवस्था से सिद्ध है कि कान्यकुब्ज और सर्यूपारी ब्राह्मण भी इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों को स्पष्ट शब्दों में ब्राह्मण स्वीकार करते हैं, बल्कि कान्यकुब्ज ब्राह्मण सिद्ध करते हैं । यह ठीक भी है, क्योंकि इन ब्राह्मणों का 'भूमिहार' विशेषण या नाम कान्यकुब्जों से ही प्रथम चला है, जैसा कि प्रथम हीं दिखला चुके हैं । मैथिलों या सारस्वतों के भी इस कथन को कि ये लोग मैथिल या सारस्वत हैं हम मानते हैं और प्रथम सिद्ध भी कर चुके हैं । क्योंकि ब्राह्मणों में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह एकदल भी उसी समय पृथक् हुआ जब अन्य कान्यकुब्जादि दल पृथक् हुये और जब सभी देश के ब्राह्मणों का व्यवहार प्रायः मिला हुआ था। इसलिये जो जिस दल में मिलगया वह उसी का होगया। इस प्रकार इस दल में सभी जगह के धनी, मानी और प्रतिष्ठित अयाचक ब्राह्मण मिलते गये।

इस व्यवस्था में दो एक स्मरण योग्य बातें हैं जिन को प्रसंगवश कहकर पुनः उसी प्रकृत विचार को उठावेंगे। एक तो यह है कि इस में स्पष्ट रूप से लिखा हुआ है कि इतर ब्राह्मण इन अयाचक दल के ब्राह्मणों को नमस्कार करें और ये लोग भी उन्हें नमस्कार ही करें। और महाराज दरभंगा प्रभृति ने अपने पत्रों में भी इन लोगों को नमस्कार ही लिखा है। फिर जो मैथिल या अन्य ब्राह्मण बिल्कुल योग्यता से हीन हैं और गुरु या पुरोहित भी नहीं हैं, वे लोग जो प्रथम से ही इन लोगों के लिये विना पूछे ही 'आशीर्वाद' की टोकरी लिये आते हैं और 'आशीर्वाद बाबू' यह कहते फिरते हैं, उन्हें इससे शिक्षा ग्रहण करना और अपनी भूल और दुर्बुद्धि अब से भी सुधार लेना चाहिये। तथा अयाचक दलवाले ब्राह्मणों को यही शिक्षा ग्रहण करना चाहिये कि वे दूसरे दलवाले योग्य ब्राह्मण को भी यदि करें तो 'नमस्कार' न कि प्रणामआदि।

दूसरी बात यह है कि इस में यह दिखलाया गया है कि कम से कम तिर्हुत में ये लोग परस्पर अपने सम्बन्धियों के साथ 'नमस्कार' का व्यवहार रखते हैं। इस से अन्य प्रान्त वालों को भी शिक्षा ग्रहण करके परस्पर भी नमस्कार का ही प्रचार करना चाहिये और बबुआई ठाट को कम से कम इस विषय में अब छोड़ देना चाहिये।

तीसरी बात ध्यान योग्य यह है कि जब इस में स्पष्ट लिखा है कि कम से कम तिर्हुत प्रान्त में लड़कों के उपनयन काल में घर वाले ही पिता, चचा अथवा दायाद प्रभृति आचार्य होते और उन्हें गायत्री का उपदेश करते हैं, न कि गुरु या पुरोहित, जिसे हमने आंखों भी देखा है, और यह उचित भी है। क्योंकि जैसा कि प्रथम हीं दिखला चुके हैं कि या तो वही ब्राह्मण आचार्य हो सकता है जो वेदादि शास्त्रों को विधिवत् पढ़ावे, या पितादि ही हो सकते हैं। जैसा कि मनुजी ने द्वितीय अध्याय में लिखा है कि:—

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि ।
संभावयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते ॥ १४२ ॥

इस का अर्थ भी प्रथम हीं कर चुके हैं। इसलिये गर्गस्मृति में लिखा है कि:—

पिता पितामहो भ्राता ज्ञातयो गोत्रजाग्रजाः ।
उपायनेऽधिकारी स्यात्पूर्वाभावे परः परः ।

अर्थात् 'बालक के यज्ञोपवीत संस्कार काल में पिता, पितामह, भाई, दायाद, गोत्रवाले अथवा ब्राह्मण मात्र, यही लोग आचार्य होकर गायत्री का उपदेश कर सकते हैं। उन में भी क्रमशः पूर्व पूर्व के श्रेष्ठ हैं। और उन के न रहने पर ही बाद वाले हो सकते हैं'। तो फिर पितादि के रहते ही पुरोहित प्रभृति क्यों आचार्य बनने का दावा करते और बनते हैं इसका कारण समझ में नहीं आता। इसलिये इस से उन प्रान्तवालों को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये जहां पुरोहितादि ऐसा अत्याचार करते हैं। जिससे यज्ञोपवीत काल में पिता, पितामह औरभाई वगैरः ही आचार्य होवें और गायत्री का उपदेश करें, न कि कनफुंकवा गुरु या पुरोहित लोग।

अस्तु, इसीप्रकार जौनपुर जिले के रामपुर ग्रामनिवासी पं० शिवराजमिश्र सर्यूपारी रचित और उनके वंशज पं० ताराप्रसाद मिश्र द्वारा सम्वत् १९५७ में प्रकाशित 'गौतमचन्द्रिका' नामक ग्रन्थ से स्पष्ट है कि उन्हों ने कम से कम इन भूमिहार ब्राह्मणों में मिले हुये गौतम वंश मात्र को सर्यूपारी, पिपरा का मिश्र, गौतम गोत्री माना है। क्यों कि इन गौतम लोगों के आदि पुरुष कृष्णमिश्र या किठ्ठू मिश्र के विषय में ऐसा लिखा है कि:—

"पुनः आसुतोस परितोस कृपाचारज के वंशनु ।
सर्यूपार निवास कियो सुखसो बलवन्तनु ॥
पिपरामिश्रकहाइ तहां परिवार बढ़्यो अति ।
केतिकौ पुरुस निवास कियो जेहि कहत धीरमति ।
परितोसवंस अवतंसमणि किठ्ठू मिश्र कहि गायो ॥
शिवराज भणैं सरुवार तजि सो काशी सेवन आयो ॥२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कह त्रैसत सन हीजरी सत्तरि मध्य सुजान।
काल भूप वंदार के, काशी करयो टिकान ॥३॥
हुती पयासी की सुता, ताको प्रेम विचारि।
व्याह्यो तासों प्रगट भो, देवकृष्ण निरधारि ॥४॥

हुती नाम की कन्या पयासी मिश्र (सर्यूपारी) को रही, वह (उसने) किसी के तिरस्कार से प्रन (ण) किया कि हम अपना विवाह किट्टू मिश्र से करेंगी। इस कारण किट्टू मिश्र ने उससे विवाह किया"। इत्यादि। इसके बाद उसी किट्टू मिश्र के वंश में काशी या अन्यत्र के गौतम मात्र को बतलाया है। इससे तो स्पष्ट ही उनका स्वीकार सिद्ध होगया।

काशी में सर्यूपारी ब्राह्मण सभा की तरफ से स्थापित पाठशाला के अध्यक्ष, भदैनी निवासी पं० विजयानन्द त्रिपाठी ने जो पंक्ति पावन परिचय नामक सर्यूपारियों का इतिहास लिखा है, उसके अन्त में जब काशी के प्रसिद्ध सर्यूपारियों के नाम गिनाये हैं, तो सबसे प्रथम महाराजाधिराज द्विजराज श्रीमत्प्रभुनारायणसिंह काशीनरेश को लिखा है। उसके बाद स्वामी मनीषानन्द (हरिनाथ शास्त्री), श्रीसुधाकर द्विवेदी, पं० विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी, पं० चन्द्रभूषण चतुर्वेदी, श्री शिवकुमारशास्त्री, पं० नकछेदराम जी, पं० रामभवन जी, पं० कुबेर पति जी प्रभृति को उसी श्रेणी में गिनाया है।

उसी पुस्तक के २८ वें पृष्ठ में भी आपने लिखा है कि "मुझे यह दिखलाना है कि काशी में सर्यूपारियों का दृढ़ निवास कब से हुआ। काशी का राजा जिसका नाम नहीं जानते, कदाचित् जयचन्द के समय में हुआ हो, गोहरण के क्रोध से एक मुसलमान को प्रतिदिन मारता था। स्वप्न में एक तपस्वी ने उसके इस कार्य की निन्दा की और उसके राज्यनाश की भविष्यद्वाणी कही। उसने यज्ञ किया और चारों दिशाओं से ब्राह्मणों को बुलाया। उनमें से एक श्रीकृष्ण मिश्र सर्यूपारी थे। उनको धोखे से पान में लपेट कर एक ग्राम का दान पत्र दिया। वेही श्रीकृष्णमिश्र जी महाराज बरिवण्डसिंह के पूर्वज थे"। इन बरिवण्डसिंह जी का ही नाम बलवन्तसिंह भी था, जो वर्तमान काशिराज के पूर्वज थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कान्यकुब्ज वंशावलियों का हाल कह ही चुके हैं, जिनमें स्पष्ट ही लिख दिया है कि—

अथकाश्यपमाख्यास्ये गोत्रं तु मुनिसम्मतम्।
पूर्ववंशावलिं दृष्ट्वा ज्ञातं षष्टिशतत्रयम् ॥ १ ॥
मदारादिपुराख्यस्य भुंइहाराद्विजास्तु ये।
तेभ्यश्चयवनेन्द्रैश्च महद्युद्धमभूत्पुरा ॥२॥ इत्यादि।

अर्थात् 'कान्यकुब्ज ब्राह्मणों की पूर्व रचित ३६० वंशावलियों को देखकर उनके अनुसार ही काश्यप गोत्र का विवरण लिखते हैं। मदारपुर के अधिपति भुइंहार (भूमिहार) ब्राह्मणों और मुसलमानों से युद्ध हुआ', इत्यादि। एक दो नहीं, किन्तु ३६० वंशावलियां यदि इस बात को स्वीकार करती हैं कि वर्त्तमान कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के काश्यप गोत्र में जो दूबे, तिवारी, अवस्थी, दीक्षित, अग्निहोत्री और मिश्र प्रभृति उपाधियों (आस्पदों या पदवियों)वाले ब्राह्मण हैं, वे सभी भूमिहार ब्राह्मणों की सन्तान हैं, तो फिर यही सिद्ध होगया कि सम्पूर्ण कान्यकुब्जवंश ही इस बात को स्पष्ट रूप से मानता है कि ये जमींदार या भूमिहार ब्राह्मण लोग ब्राह्मण हीं क्या बल्कि बहुत से कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के पूर्वज हैं। यह बात जिस कान्यकुब्ज वंशावली को आप देखेंगे उसी में काश्यप गोत्र के निरूपणमें पावेंगे।

भारतमित्र के सम्पादक पं० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी प्रभृति की सम्मति दिखला ही चुके हैं, जिन्होंने स्पष्ट ही लिख दिया है कि 'भूमिहारों के ब्राह्मण होने में सन्देह नहीं किया जा सकता। और इस बात को उन्होंने खूब ही सिद्ध किया है, जो दिखला ही चुके हैं। इससे निर्विवाद सिद्ध होगया कि जैसे सम्पूर्ण मैथिल समाज इन अयाचक दलके सभी ब्राह्मणों को खुले रूप से ब्राह्मण मानता है, वैसेही कान्यकुब्ज और सर्यूपारी समाज भी। सोभी एक प्रकार से नहीं किन्तु हर एक प्रकार से। और इतने हीं ब्राह्मणों के साथ ही इनका घनिष्ठ सम्बन्ध भी है, क्योंकि इस देश में ये ब्राह्मण हीं पाये जाते हैं। इसके सिवाय बंगाली ब्राह्मणों की सम्मति के बारे में भी हम यह कहते हैं कि वारेन्द्र या राढ़ीय श्रेणी के ब्राह्मण दुर्गादास लहेरी महाशय ने जो पुस्तक पृथिवीर इतिहास' नामक वंगभाषा में लिखी और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री धीरेन्द्रनाथ लहेरी ने हवड़ा (कलकत्ता) से प्रकाशित की है, उसके द्वितीय खंड के अध्याय २२ के ३४७ वें पृष्ठ में जो कुछ लिखा है वह इस प्रकार है:—

मैथिल ब्राह्मण— भूमिहार ब्राह्मण गण मैथिल ब्राह्मण गणेरई एकटी शाखा बलिया प्रसिद्ध, इहांदेर उत्पत्ति सम्बन्धे किम्बदन्ती एई-परशुराम कर्त्तृक पृथिवी निःक्षत्रिया हईले ये सकल ब्राह्मण सेई क्षत्रियगणेर भूसम्पत्ति ग्रहण करेन, ब्राह्मणोचित क्रियाकर्म परित्याग करिया राज्यशासनादि कार्ये व्रती हन, ताहाँराई भूमिहारब्राह्मण बलिया परिचित हइया छिलेन। आदम सुमारी रा तालिकाय ईहाँरा " बाभन " संज्ञाय अभिहित।

इसका अनुवाद यों है:—

भूमिहार ब्राह्मण गण मैथिल ब्राह्मणों की एक शाखा मात्र हैं। उनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में किम्बदन्ती है कि जब परशुराम ने क्षत्रियों को नष्ट किया था, उस समय जिन ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का राज्य लिया और राज्य कार्य में लगने से ब्राह्मणोचित कर्म (प्रतिग्रहादि) को त्याग दिया, उनकी ही सन्तान भूमिहार ब्राह्मण हैं। मर्दुमशुमारी में इनको बाभन लिखा है।

इसके अतिरिक्त उन लोगों ने वंग देश में रहने वाले भूमिहार ब्राह्मणों का नाम ' भूम्यधिकारी ब्राह्मण ' हीं रख दिया है, जैसा कि प्रथम हीं कह चुके हैं और मुर्शिदाबाद-लालगोला के राजा साहब, जो गाजीपुर के ' पाली ' नामक ग्राम के रहनेवाले कौशिक गोत्री भूमिहार ब्राह्मण हैं, तथा कांदी प्रभृति स्थानों में जो भूमिहार ब्राह्मण रहते हैं, वे वहां पर केवल ' ब्राह्मण ' कहे जाते हैं। वे सभी प्रायः संयुक्त प्रान्त से गये हैं, और वहां पर केवल मिश्र, पांडेय इत्यादि

---

१ हमने आनन्दामृतवर्षिणी पुस्तक पढ़ी थी। उसमें लिखा था कि जैसे अन्धों ने हाथी पाया हो और उसे हाथों से टटोला हो, तो जो जिस भाग को टटोलेगा, वह कहेगा कि हाथी ठीक वैसा ही है। ठीक वैसी ही बात हमारे भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में चरितार्थ होती है।

२ ब्राह्मणोचित क्रिया कर्म त्यागने का अर्थ मालूम होता है दान न लेने और पुरोहिती न करने से है। परन्तु जानना चाहिये कि ये जीविका के कर्म हैं, उन्हें हम ब्राह्मणोचित कर्म नहीं कह सकते। दूसरे ब्राह्मणों की दशा, जो अच्छी दशा में हैं, उनकी भी ही है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नामों से बोले जाते हैं, जैसे, विकरा ग्राम में पं० गोपीनाथ तिवारी, काजिया खाली में पं० कार्त्तिकचन्द तिवारी, मुर्शिदाबाद-शेखअलीपुर में पं० रमाकान्तशुक्ल, पं० हरिनारायण मिश्र, आलमशाही ग्राम में पं० कार्त्तिक पांडे इत्यादि। मिदनापुर-गढ़बीटा में श्रीविनाशचन्द्र राय वगैरः।

यदि गौड़ों और सारस्वतों की भी सम्मति लेनी हो तो, 'सारस्वत ब्राह्मण इतिहास' नामक ग्रन्थ को देखिये, जिसकी बहुत सी बातें प्रथम हीं कह चुके हैं। वह सारस्वत ब्राह्मण पं० दुर्गादत्त ज्योषी जी का लिखा हुआ है और उसकी सारस्वत सभा तथा अन्य गण्य मान्य विद्वानों ने प्रशंसा की है, जिनकी सम्मतियां उस पुस्तक के अन्त में लिखी हुई हैं, जिनमें सारस्वत लोगों की संख्या विशेष है। उस ग्रन्थ में पश्चिमा या भूमिहार ब्राह्मणों के सभी राजों, बाबुओं, जमींदारों और दोनवार, किनवार, सकरवार, जैथरिया और एकसरिया प्रभृति सभी छोटे विभागों को सारस्वत ब्राह्मण लिखा है। यह बात उस पुस्तक में आदि से अन्त तक पाई जाती है।

इसके अतिरिक्त बुलन्द शहर निवासी पं० गंगा सहाय जी ने, जो सम्भवतः गौड़ ब्राह्मण हैं, अपनी पुस्तक 'ब्राह्मण कुलदीपक' के २२४ वें पृष्ठ में ऐसा लिखा है कि:—

और यह कौन नहीं जानता कि हिज हाईनेस महाराजा सर प्रभुनारायण सिंह बहादुर, जी० सी० आई० ई० काशी नरेश भी ब्राह्मण हैं इत्यादि।

इस के सिवाय गौड़ ब्राह्मण वंशावतंस व्याख्यान वाचस्पति पं० दीनदयालु शर्मा जी ने सोनपुर के अखिल भारतवर्षीय सनातन धर्म के सभाभवन में गत १९१५ ई० के कार्त्तिक के मेले के समय २० या २५ हजार मनुष्यों के सन्मुख जो सिंहनाद किया था, उसे भी सुन लीजिये। उन्होंने जो आलंकारिक वाक्य उस समय कहे थे, उनका उल्लेख ता० २७-११-१९१५ ई० के 'पाटलिपुत्र में इस प्रकार है:— "सभापति (महाराज दरभंगा) की बगल में बांई ओर महाराज रीवां और दहिनी और महाराज हथुवा विराजे। इन लोगों के यथा स्थान विराजने पर व्याख्यान वाचस्पति पण्डित दीन दयालु शर्मा ने खड़े होकर आनन्द प्रकाश करते हुये कहा:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महाराज रीवां के शुभागमन से आज यहां की अपूर्व शोभा होगई है। जिस प्रकार हरिहर क्षेत्र में नारायणी, जान्हवी और महीका संगम है, इसी प्रकार यहा रीवां, दरभंगा और हथुवा नरेशों का सम्मेलन हुआ है। कहना चाहिये कि यहां महाराज रीवां कृष्णभक्त होने के कारण विष्णुरूप से, हमारे सभापति महोदय (रामेश्वर) शिवरूप से और महाराज हथुवा ब्राह्मण होने के कारण ब्रह्मास्वरूप से एकत्र हुये हैं। आज इन त्रिदेवों का सम्मेलन यथार्थ में धर्मसम्मेलन हुआ है "।

उन्होंने स्पष्टरूप से महाराज हथुवा को ब्राह्मण शब्द से सम्बोधित किया था। इसलिये इससे बढ़कर स्वीकार किसे कहते हैं जहां मेले के सन्मुख पुकार कर कहा जा रहा है ? इस प्रकार सिद्ध है कि सभी प्रकार के ब्राह्मण इन अयाचक ब्राह्मणों को स्पष्टरूप से ब्राह्मण स्वीकार करते थे और करते हैं।

यदि क्षत्रियों के स्वीकार की आवश्यकता होवे तो क्षत्रिय मूर्द्धन्य विष्णुपरायण रीवांनरेश महाराज श्री रघुराजसिंह जी. सी. एस. आई. ने अपने हाथों लिखित 'रामस्वयम्बर' के ६८६ वें पृष्ठ में जो वेंकटेश्वरप्रेस में संवत् १९५५ में छपा है, ऐसा लिखा है:—

गवने एक समय हम काशी। विश्वेश्वर के दर्शन आशी॥
तहँ को भूपति परम सुजाना। गौतम वंश सुविप्र प्रधाना॥
रामनगर गंगा तट माहीं। निवसत गौतम भूप तहांहीं॥
काशिराज महराज कहावैं। पुनि द्विजराज प्रतिष्ठा पावैं॥
जासु नाम ईश्वरी प्रसादा। अन्तमाहिं नारायण वादा॥
मिल्यों जाइ तिनसों हुलसि, मोहि लिय अंक लगाय॥
निज बालक इव जानि कै, दीन्हीं प्रीति बढ़ाय॥
सुनि मम वचन मुदित काशीशा। फेरत पाणि प्राणकरिशीशा
दीन्हों मैं प्रणाम बहु बारा। आशिष दीन्ह्यो भूप उदारा॥

इसके अतिरिक्त इन्हीं पूर्वोक्त महाराज बहादुर के सुयोग्य पुत्ररत्न वर्त्तमान रीवांनरेश श्रीमान् वेंकटरमण सिंहजी ने भी महाराजा हथुवा के साथ पूर्वोक्त सनातनधर्मसभामण्डप में जनसमूह के सन्मुख ऐसा ही व्यवहार किया, जिसके साक्षी हजारों हैं। यह उनका कर्त्तव्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उचित भी है, क्योंकि 'आत्मा वै जायते पुत्रः', अर्थात्, 'पिता की ही आत्मा पुत्र रूप से उत्पन्न होती है', इस वेदानुशासन के अनुसार महाराज श्रीरघुराज सिंहजी की आत्मा हीं ठहरे। उनके इस कर्त्तव्य का भी उल्लेख पूर्वोक्त 'पाटलिपुत्र' के अंक में इस प्रकार किया गया है:-

इसी समय महाराज रीवां ने सभामण्डप के दरवाजे पर दर्शन दिया। जनता ने बड़े प्रेम से महाराज रीवां का स्वागत और अभिनन्दन किया। महाराज रीवां के सभामण्डप में प्रवेश करते ही महाराज दरभंगा और हथुवाने सभामण्डप के बीच अग्रसर हो महाराज की अभ्यर्थना की। ब्राह्मणभक्त महाराज रीवां ने इन दोनों नरेशों के पैर छू प्रणाम किया। यह दृश्य इस गिरे जमाने में भी ब्राह्मणगौरव का माहात्म्य बढ़ानेवाला था।

इसके अलावा भूतपूर्व खड्ग विलास प्रेस बांकीपुर के अधिष्ठाता बाबू रामदीन सिंह ने 'विहार दर्पण' के १३६ वें पृष्ठ में ऐसा लिखा है कि—

बहुत दिनों से यह झगड़ा चला आता था कि बाभन (भुंइहार) कौन वर्ण हैं। महाराज रामकृष्णसिंह (टेकारी के भूतपूर्व महाराजा) ने निश्चय करवाया' कि बाभन शब्द ब्राह्मण शब्द का अपभ्रंश है।

उसी ग्रन्थ के १२२, १२३ वें पृष्ठों में भी लिखा कि:—

महाराज रामकृष्णसिंह देव बहादुर को जन्मभूमि सारन में एक गांव रूसो है। इनके पिता का नाम बाबू कैलाशपति सिंह था। और ये जाति के एक सरिया बाभन थे। इनके जीवन चरित्र के पहले यह जान लेना बहुत जरूरी है कि ये एकसरिया बाभन क्यों कहलाते हैं। लोग कहते हैं कि पंडितवर जगन्नाथ दीक्षित नामक एक ब्राह्मण कन्नौज से आकर एकसार गांव में बसे (यह गांव छपरप के इलाके में है)। इसी लिये इस देशवाले एकसरिया ब्राह्मण और दीक्षित कहलाने लगे। उसी का अपभ्रंश अब एकसरिया बाभन होगया है। यथार्थ में ये लोग कन्नौजिया ब्राह्मण हैं।

उसी ग्रन्थ के १२५, १२६ वें पृष्ठों में इस प्रकार लिखा मिलेगा:—

और बाबू कैलाशपति सिंह का ब्याह भी इनके पिता ने कसबे शिवहर (तिहुत में है) के राजा यदुनन्दन सिंह के भाई बाबू राधामोहन सिंह (यह जाति के जैथरिया बाभन थे) की लड़की से बड़ी धूमधाम से किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इनके अतिरिक्त ब्राह्मणादि वर्णों को ही कुछ स्फुट सम्मतियां दिखला देते हैं:-पं० विष्णुकान्त झा बी० ए० सम्पादक 'मिथिला मिहिर' ने सम्वत् १९६७ आषाढ़ के २ मंडल ६ प्रकाश में लिखा है कि 'अभी थोड़े दिन हुये कि टेकारी के ब्राह्मण महाराज ने एक मेम से विवाह किया है'। महाराज गोपालशरणसिंह जी की बात है।

स्वर्गीय डाक्टर राजा राजेन्द्रलाल मित्र ने अपने बंगला मासिक पत्र 'विविधार्थ संग्रह' के पर्व ४ खण्ड ४० पृष्ठ ७३ (शकाब्द १७७९ श्रावण मास) में लिखा है कि 'कान्यकुब्ज ब्राह्मण दीगेर पांच ठो दल आछे, यथा सरवरिया, सनौढा (सनाढ्य), जिझौतिया, भूमिहार एवं प्रकृत कन्नौजिया।

बाबू गोपाल जी वर्म्मन ने अपनी पुस्तक 'जीव इतिहास प्रसंग' के तृतीय खण्ड के ५२ वें पृष्ठ में लिखा है कि 'भूमिहार बाभन लोग निस्सन्देह ब्राह्मण हैं।'

स्वर्गीय महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी काशी, सदा भूमिहार ब्राह्मणों को ब्राह्मण कहा करते थे। आप ने गत ३० अगस्त सन १९१० ई० को बनारस के टाउनहाल में जो व्याख्यान दिया था, उसमें आपने महाराज काशीराज को 'हमारे पूजनीय काशीनरेश' कह कर सम्बोधन किया था, जैसा कि 'नवजीवन' समाचार पत्र भाग २, अंक २० के देखने से विदित हो सकता है।

काशी के प्रायः सभी विद्वान चिरकाल से महाराज काशीराज को 'द्विजराज' और 'शर्मा' कहकर सम्बोधन करते और लिखते हैं, जैसा कि स्वर्गीय महामहोपाध्याय पं० बापूदेवशास्त्री सी.आई.ई. का पंचांग और काशी धर्म सभा का पंचांग देखने से स्पष्ट हो जावेगा। इस पंचांग को पं० बलदेवत्त जी ज्योतिषी के पुत्र पं० गणेश दत्त जी ज्योतिषी रचते हैं, जिस पर काशी के सुप्रसिद्ध २ प्रायः ४०-५० विद्वानों के हस्ताक्षर रहते हैं।

नदिया पण्डित सभा के सभापति ''कमेण्टरीज औन हिन्दूला' (Commentaries on Hindu law) और 'व्यवस्थाकल्पद्रुम' आदि ग्रन्थों के रचयिता पण्डित योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य एम. ए. डी. एल. ने अपनी पुस्तक 'हिन्दू कास्ट्स ऐण्ड सेक्ट्स' (Hindu Castes and Sects) के प्रथमाध्याय में विहार और बनारस प्रान्त के भूमिहार ब्राह्मणों के सम्बन्ध में यों लिखा है:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

The clue to the exact status of the Bhumihar Brahmans is afforded by their very name. The word litterally means a land-holder In the language of the Indian feudal systems, Bhoom is the name given to a kind of tenure similar to the Inams and Jaggirs of Mohamedan times. By a Bhoom according to the Rajputana gazetteer an heriditary, non-resumable and inalienble property in soil was inseparably bound up with a revenue-free title. Bhoom was given as compensation for bloodshed in order to quell a feud, for distinguished services in ths field, for protection of a boarder or for the watch and ward of a village.

The meaning of the designation Bhumihar being as stated above, the Bhumihar Brahmans are evidently those Brahmans who held grants of land for secular services. Whoever held a secular fief was Bhumihar. Where a Brahman held such a tenure he was called a Bhumihar Brahman. Where the holder was a Kshatriya he was called Bhumihar Kshatriya. Bhumihar Brahmans are sometimes called simply Bhumihars, just as the masons, whose class name in Bengalee is Raj mistri (Royal architect) are generally called Raj.

The Bhumihars observe all their religious ceremonies in the same manner as the good Brahmans, but as they practice secular occupations they like the Laukik Brahmans of Sothern India, are not entitled to accept religious gift or to minister to any one as priests. The usual surnames of the Bhumihar Brahmans are the same as those of the other Brahmans of Northern India. Being fighting caste a few of them have Rajput surnames.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसका मर्मानुवाद यह है कि 'भूमिहार ब्राह्मणों की असल स्थिति उनके नाम से ही झलक जाती है, क्योंकि इसका अर्थ जमीन रखने या स्वीकार करनेवाला, अथवा जमींदार है। भारतवर्षीय 'जागीर प्रदान की रीति' की भाषा में 'भूमि' एक प्रकार के अधिकार का नाम है, जैसा कि मुसलमानी समय का इनाम या जागीर। राजपूताना 'गजेटियर' के अनुसार 'भूमि' उस पृथिवी सम्बन्धी अधिकार का नाम होता था जो एक वंशपरम्परा के लिये छीनी और बेंची न जासके और सर्वथा कर (मालगुजारी) रहित होवे। किसी के यहां मारकाट होनेपर बतौर खेसारा या तावान के, कहीं विद्रोह के दमन के लिये, लड़ाई के मैदान में कोई महान कार्य्य करने के उपलक्ष्य में, सीमा प्रान्त की रक्षा के लिये, अथवा किसी गांव की पहरा, चौकी या रक्षा के लिये 'भूमि' दी जाती थी'।

'जैसा कि ऊपर 'भूमिहार' शब्द का अर्थ कर चुके हैं, उसके अनुसार भूमिहार ब्राह्मण वे ब्राह्मण हैं जिन्होंने पूर्वोक्त सांसारिक कामों के करने के बदले पूर्वोक्त भूमि सम्बन्धी अधिकार प्राप्त किये थे। जिस किसी को उक्त लौकिक कार्यों के करने के बदले उक्त अधिकार मिलता था, वह 'भूमिहार' कहलाता था। इस लिये जब वह भूमि सम्बन्धी अधिकार किसी ब्राह्मण को मिलता था, तो वह भूमिहार ब्राह्मण कहलाता था। और जब किसी क्षत्रिय को अधिकार मिलता था तो वह भूमिहार क्षत्रिय कहलाता था। भूमिहार ब्राह्मण कभी २ केवल भूमिहार कहे जाते हैं जैसे कि बंगाल में जिनका नाम राज मिस्त्री, है वे केवल 'राज' बोले जाते हैं। भूमिहार ब्राह्मण अपने कुलधर्म, आचार व्यवहार उसी प्रकार सम्पादन करते हैं जैसे कि उत्तम ब्राह्मण लोग करते हैं। ये लोग चूंकि सांसारिक व्यवसाय करते हैं, अतएव ये लोग दाक्षिणात्य लौकिक ब्राह्मणों की तरह दान-ग्रहण और पुरोहिती नहीं करते'।

'भूमिहार ब्राह्मणों की उपाधियां साधारणतः वेही हैं जो, उत्तरीय भारत के अन्य ब्राह्मणों की हैं। केवल युद्धप्रिय होने के कारण इनमें किसी२ की उपाधियां क्षत्रिय लोगों की उपाधियों के सदृश भी हैं'।

बहुत ही युक्तियुक्त विचार किया गया है। इसका आभास (तात्पर्य) हम 'भूमिहार' शब्द का अर्थ करते हुये प्रथम हीं दे चुके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं और इन्हीं महाशय की सम्प्रति दिखलाने के लिये प्रथम हीं कह भी चुके हैं। भट्टाचार्य महोदय के इस युक्तियुक्त लेख के विचार ने उस संशय का भी उच्छेद कर दिया, जो केवल अज्ञानमूलक कहीं २ 'भूमिहार' नाम वाले क्षत्रियों को देख या सुनकर इन अयाचक दलीय ब्राह्मणों के विषय में हुआ करता है। इस शंका का विशेषरूप से खण्डन द्वितीय प्रकरण में भी किया जावेगा।

ता० ११ दिसम्बर सन १९१० ई० के 'वीर-भारत' पत्र में ऐसा लिखा गया है; 'काशीनरेश—काशीनरेश इस समय कलकत्ते में हैं। आपको लार्डमिन्टो सामन्त राजा का अधिकार दे गये हैं। महाराज की जाति है ब्राह्मण। आप बनारस के हिन्दुओं के शिरोमणि कहे जाते हैं। इसीसे कहना पड़ता है कि सरकार ने महाराज को सन्मानित कर सनातनधर्मावलम्बी मात्र को सन्मानित किया है। महाराज को कलकत्तेकी कई सभाओं ने बड़ी धूमधाम से अभिनंदन पत्र दिया है। यथा:

स्वति, विविधविरुदावलीविराजमान मानोन्नत महाराज श्री काशीराज प्रभुनारायणसिंह शर्मा, जी. सी. आई, ई. महोदय महोदारचरितेषु इत्यादि।

काशी नरेशको 'बृटिश इण्डियन एसोशियेशन' ने उस दिन जो यह एड्रेस दिया था, उसके उन श्लोकों को हम नीचे छापते हैं, जो उनके सन्मानार्थ पढ़े गये थे:—

कारुण्याद्भवतेश्वरप्रतिकृतेर्यद्भारताधीशितुः,
स्वाम्यं लब्धमखण्डिताक्षमधुना श्रीकाशिकामण्डले
स्वे राज्ये द्विजराज! तेन मुदितैर्वङ्गीयविद्वद्द्विजैः,
दत्तं प्रीतिमयं गृहाण कृपया सद्भावपुष्पाञ्जलिम्१
सार्द्धं कुमारसचिवादिभिराप्तवर्गैर्दीर्घायुराधिरहितोयशसाप्रदीप्तः। वाराणसीक्षितिपते विजयस्व
शश्वत्प्रोल्लासयन्नखिलभारतमुज्ज्वलीः॥२॥ राजकीय
संस्कृतविद्यालयाध्यक्षस्य संस्कृतपरीक्षासमिति-
सम्पादकस्य वंगीयाध्यापकवर्गप्रतिनिधिभूतस्य
श्रीकालीप्रसन्नदेवशर्मणः॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मर्यादा भाग १ संख्या २ पृष्ठ २३ में लिखा गया है कि 'यों तो ब्राह्मणों में कई विभाग हैं, तौ भी दो प्रसिद्ध विभाग हैं, एक दान लेने और पुरोहिती करनेवाले और दूसरे इन कर्मों से पृथक् रहने वाले। इनमें से कोई किसी को ऊंचा नीचा नहीं कह सकता'।

'बालहितैषी' नामक मासिकपत्र के सम्पादक श्री विनोद बिहारी सेन राय एम. ए. ने फरवरी १९११ ई० के अंक के २४ वें पृष्ठमें यों लिखा है:-'अट्ठारहवीं शताब्दी की आदि में राजा मनसा राम मिश्र ने मुगल बादशाहों की अवनति होने पर बनारस के निकट कई गांवों और नगरों को अपने अधिकार में लाकर अपने राज्य को प्रबल किया था। उनके दादा गौतम ब्राह्मण, जिनकी पदवी मिश्र थी, पुरोहित का काम छोड़कर जमींदार हो गये थे'। स्मरण रखना चाहिये कि यही राजा मनसाराम काशिराज के पूर्वज थे। जिनके विषय में उक्त सम्मति दी गई है।

बाबू साधुचरण प्रसाद कृत 'भारतभ्रमण' के दूसरे अध्याय के पृष्ठ १० में ऐसा लिखा है:-हथुआ-सिवान से ८ मील उत्तर हथुआ ग्राम में एक राजा हैं। राजवंश भूमिहार ब्राह्मण है।

तीसरा खण्ड पृष्ठ ५६-'टिकारी के राजा भूमिहार ब्राह्मण हैं।'

सन १९१० के बुधवार की संन्ध्या के 'इम्पायर' पत्र मास दिसम्बर की संख्या १६ में लिखा है कि, "The Hitbadi observes that Pandit K. P. Bhattacharya, the Principal of the Sanskrit College, will retire on the 30th current, and will be succeeded by Mr. S. C. Udayabhushan. The same paper, while expressing joy at the elevation of Benares to a semi-independent state, points out that, while the other Indian chiefs are either Rajputs or Kshatriyas etc the Maharaja of Benares is the only Brahman Prince"

इसका अर्थ यह है कि, 'हितवादी' पत्र ने लिखा है कि पं० कालीप्रसन्न भट्टाचार्य, जो संस्कृत कालेज के प्रिंसिपल हैं, अब ३० तारीख को पेन्शन पावेंगे और उनकी जगह मिस्टर एस. सी. उदय भूषण नियत होंगे। वही पत्र बनारस राज्य के अर्द्धस्वतंत्र राज्य होने पर खुशी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनाता हुआ लिखता है कि जब कि भारत के अन्य सभी स्वतंत्र राजे राजपूत, क्षत्रिय इत्यादि हैं, केवल महाराजा बनारस ही ब्राह्मण हैं'।

मीमांसकप्रवर महामहोपाध्याय श्रीचित्रधर मिश्र जी ने मुंगेर में होनेवाली गत भूमिहार ब्राह्मण महासभा के विषय में वहां ये श्लोक कहे थे:—

एषा मुद्गिरौ नृपैर्बहुविधैरागत्य संशोभिता,
सद्धर्मादिविशोधिनी निजसभा देवेन्द्रसंराजिता।
मन्ये देवसभाद्य भूमिममलां कर्तुं स्वतोऽवातरत्,
किन्त्वस्या यदि भूमिहारघटिता नस्यात्समाख्या तदा॥१॥
विप्राः सर्वविधाः समेत्य सकलं स्वं स्वं चरित्रं सदा,
एतस्या नियमेन सम्मततरं संशोध्यकुर्युर्मुदा।
एवं चेदखिलस्य भारतदलस्यैषा महाव्यापिका,
कुर्यादिष्टफलानि हानिरियता नैवास्ति काचित्पुनः॥२॥

इसका अनुवाद यह है कि 'मुंगेर नगर में एकत्रित हुये बहुत से राजा बाबुओं से शोभित और सद्धर्मों का शोधन करनेवाली भूमिहार ब्राह्मण सभा ऐसी प्रतीत होती है कि गोया इन्द्र से शोभित देवसभा ही स्वर्ग से यहां पर आज इस भूमि को पवित्र करने के लिये स्वयं आ गई है। परन्तु यदि इस महासभा के नाम में भूमिहार शब्द न रहता, अर्थात् भूमिहार ब्राह्मण महासभा की जगह केवल 'ब्राह्मण महासभा' इसका नाम होता, तो सभी प्रकार के ब्राह्मण इस महासभा में प्रसन्नता पूर्वक उपस्थित हो इसके सुन्दर नियमों के अनुसार अपने २ चरित्रों का संशोधन करके उन्हें अच्छी तरह सम्पन्न करते। ऐसा करने से यह सभा महाव्यापक होकर भारतवर्ष के ब्राह्मण दल मात्र की अभिलषित वस्तुओं की साधिका हो जाती और मेरी समझ में ऐसा करने से आप लोगों की कोई हानि भी नहीं है।'

पाठक ही विचारें कि अब इस से बढ़कर और कौनसी सम्मति या स्वीकार भूमिहार ब्राह्मणों की ब्राह्मणता के विषय में हो सकता है, जिसका न होना पूर्वोक्त मनुष्यगणना के विवरण के लेखक अंग्रेज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महोदयजी ने बतलाया है। सुरसर के पास नैपाल राज्य में पिपरा के सुबापं.गोपाल मिश्र या उनके वंशज,जो गर्ग गोत्री वसमैत मूल के भूमिहार ब्राह्मण हैं, नैपाल राजदर्बार में ब्राह्मणवत् ही माने जाते थे और हैं।

सब लोगों को इतने हीं से विदित होगया होगा कि भारतवर्ष की सभी उच्च और प्रतिष्ठित जातियां इन भूमिहार ब्राह्मणों को स्पष्ट रूप से ब्राह्मण स्वीकार करती हैं, क्योंकि उनके नेता लोगों ने, सभाओं ने स्पष्टरूप से कह दिया है। इसलिये सन १९११ ई० की विहार की मनुष्यगणना के सुपरिण्टेण्डेण्ट की यह बात, कि भूमिहार ब्राह्मणों को इतर हिन्दू केवल ब्राह्मण नहीं मानते किन्तु भूमिहार ब्राह्मण, नितान्त भ्रममूलक होने के कारण मिथ्या है।

दूसरा कारण जो उन्होंने भूमिहार ब्राह्मणों के इतर ब्राह्मणों से पृथक् लिखने में दिखलाया है कि 'ये लोग सभी ब्राह्मणों में मिल जावेंगे जिससे इनका पता न चल सकेगा'। वह यद्यपि सत्य है, तथापि उतने मात्र के लिये ये लोग अन्य ब्राह्मणों से पृथक् लिखे नहीं जासकते, क्योंकि गौड़, कान्यकुब्ज, सर्यूपारी और सारस्वत प्रभृति जैसे एकही साथ लिखे जाते हैं वैसेही ये भी क्यों न लिखे जावें? यदि उन सबों की संख्या के लोप हो जाने का डर या विचार साहब बहादुर को नहीं है, तो फिर केवल भूमिहार ब्राह्मणों पर ही इतने अनुग्रह की कौनसी आवश्यकता ठहरी? और यदि संख्या का पता लगाना चाहेंगे तो जैसे मैथिल महासभा या अन्य ब्राह्मण दल वाली महासभायें डायरियां बना कर अपने समाज की संख्या का यथावत् पता लगाती हैं, वैसे ही इन भूमिहार ब्राह्मणों की महासभा भी अपने समाज की डायरी तैयार करा सकती है। इससे यह भी लाभ हो सकता है कि उसके तैयार करने में समाज भर का पता चल जावेगा और यह विदित हो जावेगा कि किस जगह किस बात की आवश्यकता, त्रुटि अथवा कौनसी बुराई है, जिसके लिये महासभा यत्न करके उसकी पूर्त्ति या निवारण कर सकती है। यदि न भी संख्या का पता लगे और सभी ब्राह्मण एक में मिल जावें, तो इसके लिये उन्हें चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है? जिसके मकान में आग लगेगी वह स्वयं उसे बुझा लेगा। जो अपने समाज की उन्नति करना चाहेगा वह उसके लिये यत्न कर लेगा। आपको तो यदि अनुग्रह करना है, तो गौड़, कान्यकुब्ज प्रभृति सभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मण दलों पर करिये, न कि किसी विशेष पर। और साहब बहादुर का यह कहना कि 'इनके एक पृथक् समाज होने का सभी विवरण लुप्त हो जायगा', भी ठीक नहीं है। क्योंकि प्रथम तो पृथक् दल होने में प्रमाण हीं नहीं हैं। क्योंकि सभी ब्राह्मणों के साथ विवाह सम्बन्ध तथा खानपानादि दिखला चुके हैं। यदि मान भी लेवें, तो केवल भूमिहार ब्राह्मण हीं क्यों पृथक् दलवाले हैं? क्या गौड़ों और कान्यकुब्जों के आचार, व्यवहार अथवा इतिहास वगैरः परस्पर मिलते हैं? बल्कि ये (भूमिहार ब्राह्मण) तो सभी से मिलते हैं। परन्तु न तो मैथिल कान्यकुब्जों या सर्यूपारियों से मिलते और न सर्यूपारी या कान्यकुब्ज ही परस्पर मिलते हैं। इसलिये यदि पृथक् दल कहा जावे, तो प्रथम उन्हीं लोगों का कहा जा सकता है, पश्चात् इन भूमिहार ब्राह्मणों का किसी प्रकार से कह सकते हैं। इसलिये इनके पृथक् लिखे जाने की कोई आवश्यकता नहीं है, जब तक कि कान्यकुब्ज वगैरः भी अलग २ न लिखे जावें।

यदि आपको इनके ऊपर विशेष अनुग्रह करना है, तो 'ब्राह्मण' शीर्षक (heading) वाला एक खाना बनाकर उसके (अ) और (ब) दो विभाग करके एक में 'भूमिहार ब्राह्मण' और दूसरे में 'अन्य ब्राह्मण' ऐसा लिख सकते हैं। जैसेः—

ब्राह्मण	
भू० ब्रा०	अन्य ब्रा०

ऐसा ही त्यागियों और महियालों आदि के विषय में भी करसकते हैं। ऐसा करने से इनकी संख्या का भी पता लग सकता है और बात भी ठीक हो सकती है। बल्कि युक्त प्रान्त (U. P.) की सर्कार तो कुछ विचार न करके भूमिहार ब्राह्मणों और अन्य ब्राह्मणों को केवल 'ब्राह्मण' लिखा करती है। जैसा कि डाइरेक्टर का सर्क्यूलर स्कूलों और कालिजों में जारी है, जिस के विषय में भूमिहार ब्राह्मण सभा, काशी के सेक्रेटरी के पास नीचे लिखा हुआ डाइरेक्टर का पत्र आया है। वह इस प्रकार हैः—

No. $\frac{\text{G 15320}}{\text{X-25}}$ of 1911-12

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

From,

The Hon'ble Nr. C. F. DeLa Fosse M. A.
Diretor of Public Instruction
United Provinces.

To

The Secretary,
Bhumihar Brahman Sabha, Benares.

Dated Allahabad, 8th Feb., 1912.

With reference to his letter, dated the 7th September 1911, has the honour to inform him that the Inspectors of schools have been requested to show Bhumihars as Brahmans in the Annual Statistical Returns.

S/d P. S. Barell M. A.,
Assistant Director of P. I.
For C. F. De La Fosse M. A.
Director of P. I., U. P.

इस पत्र का भाषानुवाद इस प्रकार है:—

नम्बर $\frac{\text{जी १५३२०}}{\text{एक्स–२५}}$ १९११–१९१२

आनरेबल मिस्टर सी. एफ. डेलाफोस एम. ए. डाइरेक्टर, शिक्षाविभाग,
संयुक्त प्रान्त, के पास से।

सेक्रेटरी, भूमिहार ब्राह्मण सभा बनारस, के पास।

इलाहाबाद, ता० ८ वीं फरवरी १९१२ ई०।

आपके ता० ७ सितम्बर सन १९११ ई० के पत्र के उत्तर में यह निवेदन है कि स्कूलों के इन्स्पेक्टरों को कह दिया गया है कि सर्कारी कागजों में भूमिहारों को ब्राह्मण लिखा करें।

द० पी. एस. बरल एम. ए.।
शिक्षा विभाग के असिस्टैन्ट डाइरेक्टर।
सी. एफ. डेलाफोस एम. ए.,
डाइरेक्टर, शिक्षाविभाग, युक्त प्रान्त के स्थानापन्न।

इस लिये विहार प्रान्त या अन्यत्र की सर्कार को भी यही उचित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि युक्त प्रान्त की सर्कार की तरह या तो अन्य ब्राह्मणों की तरह केवल ब्राह्मण हीं लिखा करे। अथवा यदि विशेष अनुग्रह या पृथक् लिखने का ही आग्रह होवे तो उस प्रकार से ही लिखे जैसा कि हम अभी बतला चुके हैं। इससे अन्यथा लिखना उचित नहीं है, जैसा कि सिद्ध कर चुके हैं।

८—आईन अकबरी और उपसंहार।

यद्यपि जो बातें इन पश्चिमा आदि ब्राह्मणों के विषय में लिखी गई हैं वे सार्वजनिक और स्पष्ट हैं, इसलिये इन सबों के रहते हुये इस समाज के विषय में किसी प्रकार की शंका करना या मिथ्या दोषारोपण करते हुये असभ्यतापूर्ण शब्दों का प्रयोग करना बुद्धिमान, सभ्य और प्रतिष्ठित के लिये उचित न था और न है ही।। तथापि मध्याह्न में उलूकपक्षी को अंधकारमय ही जगत् प्रतीत होता है, अथवा श्रावण मास में किसी प्रकार से नेत्रहीन हो जानेवाले को बारह महीने हरियाली ही सूझती है, प्रकृति के इस अटल नियम को कौन हटा सकता है? अथवा यों कह सकते हैं कि दुष्टों की प्रकृति भी विचित्र ही हुआ करती है। इसलिये उनके निकट अच्छी बात भी बुरी ही लगती और उसे उलटी ही समझते हैं, क्योंकि उनके लिये कोई औषधि नहीं है। जैसाकि किसी कवि ने सत्य ही कहा है:

सब की औषधि जगत में, खल की औषधि नाहिं।
चूर होंहिं सब औषधी, परिके खलके माहिं॥

इसीलिये ऐसे महात्माओं के लिये ये सब जले तवे पर पानी की तरह उलटा दोष ही सूझने के साधन हो जाती हैं। क्योंकि:—

गुणायन्ते दोषाः सुजनवदने दुर्जनमुखे,
गुणा दोषायन्ते न खलु तदिदं विस्मयपदम्।
यथा जीमूतोऽयं लवणजलधेर्वारि मधुरम्,
फणी पीत्वा क्षीरं वमति च गरं दुःसहतरम्॥

अर्थात् 'यदि सज्जन पुरुषों के पास या उनकी दृष्टि में दोष भी गुण की तरह, और इसके विपरीत दुर्जनों के लिये गुण भी दोष की तरह प्रतीत होते हैं, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? क्योंकि मेघ समुद्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के खारे जल को भी पीकर मीठा ही जल बरसाया करता है और सांप दूधको भी पीकर विषही उगिलता है'।

इसलिये ऐसी दशा में ऐसे महात्मा लोग इस समाज या अन्य के विषय में जो कुछ भी, 'मुखमस्तीति वक्तव्यं दशहस्ता हरीतकी,' अर्थात् 'यदि परत्मा ने मुख दिया है तो क्यों न कह देंगे कि दस हाथ की हड़र (हरीतकी) हुआ करती है?' इस न्यायानुसार अपने बे लगाम और पवित्र मुँह तथा लेखनी से कह या लिख कर अपनी सज्जनता का परिचय न दे देवें उसी में आश्चर्य है।

ऐसेही सज्जनों में 'क्षत्रिय और कृत्रिम क्षत्रिय' नामक अंग्रेजी ग्रन्थ के रचयिता बाबू कुंवर छेदासिंह जी बी. ए. बैरिस्टर-ऐट-ला (Barrister-at-law) और उसके हिन्दी अनुवादक, कुंवर रूपसिंह जी हैं। वह ग्रन्थ 'राजपूत प्रेस' आगरा में छपा है। हम नहीं कह सकते कि शिक्षितता, सुधारकता और सभ्यता की दम भरने वाले नवशिक्षादीक्षित दल के अन्तः पाती उक्त बैरिस्टर महोदय जी की ही पवित्र लेखनी से क्यों ऐसे 'वाग्वज्र' निकल गये, जो अकारण दूसरों के मर्मवेधी हैं?

अथवा उनका शरीर न रहगया, इसलिये पीछे से उनके ही नाम को बदनाम करने के लिये टट्टी की ओट से उनके किसी मिथ्याचारी, अकारण परद्रोही और स्वार्थान्ध पूज्य अथवा प्रिय भाई ने शिकार खेल कर अपने हृदय की कान निकाली है, क्योंकि यदि चोरी गई तो कम से कम तुम्बाफेरी तो नहीं हीं छूटा करती है।

अथवा अनुवादक महोदय की ही असीम कृपा हो सकती है। क्योंकि उक्त अंग्रेजी ग्रन्थ हमें न मिल सका, केवल भाषानुवाद ही हमारे सन्मुख है। परन्तु शिक्षितों की लेखनी से ऐसे शब्दों की सम्भावना करने में जरा चित्त हिचकता है।

अस्तु, जो कुछ भी हो, उस ग्रन्थ की बात को देखिये। उसके ६३ वें पृष्ठ में खत्रियों के बनावटी या कृत्रिम क्षत्रिय सिद्ध करने के प्रसंग से आपने भूतपूर्व खत्री अबुलफज्ल रचित 'आईन अकबरी' नामक ग्रन्थ का विचार किया है। क्योंकि उसमें कहीं २ खत्रियों को क्षत्रिय लिखा है। इसलिये आपने प्रथम सेही यह चिल्लाना शुरू कर दिया कि जाति के विषय में 'आईन अकबरी' प्रमाण नहीं मानी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जा सकती। जब आपको अपनी इस निर्मूल उक्ति में दूसरा कुछ अवलम्ब न मिला, तो सर विलियम जोन्स की सम्मति इस विषय में दे डाली। क्योंकि जहाज के कौवे को सिवाय उसके मस्तूल के दूसरी शरण हीं क्या मिल सकती है? आप ही के लेखानुसार भूतपूर्व खत्री या हिन्दू अबुलफज्ल की बात तो प्रमाण न मानी जावे, परन्तु एक वैदेशिक अंग्रेज की बात उसी विषय में मान ली जावे! यह बुद्धिमत्ता नहीं तो और क्या है?

अस्तु, यह कहकर अन्त में अपनी पूर्व उक्ति का उपसंहार करते हुये आपने लिख मारा कि 'इस लिये आईन अकबरी पुस्तक से हिन्दू जाति के विषय में विशेष हाल नहीं मालूम हो सकता है। अर्थात् इस पुस्तक से भूमिहार और तेली या कहार और डोम में अन्तर नहीं प्रतीत हो सकता है'। पाठक! यदि इसे ही 'अकाएड ताण्डव' अथवा 'हँसुए के ब्याह में खुरपे की गीत गाना' नहीं कहते तो और किसे कहते हैं? यदि खत्रियों के साथ आपका विवाद और उसी का प्रकरण था, तो उपसंहार में यदि तान तोड़ना था तो उन्हीं पर तोड़ते। भूमिहारों के ऊपर तान तोड़ने का वहां कौन प्रसंग था, जिससे अपनी आन्तरिक दुर्ज्जनता दिखलाये विना न रहा गया?

यदि हम भी 'शठे शाठ्यं कुर्यात्' इस न्यायानुसार उलट कर यह कहने लगजावें कि तमाम इतिहास, पुराण और धर्मशास्त्र प्रभृति से भी क्षत्रियों, वर्णसंकरों, जाटों, सीदियनों, अहीरों और कुर्म्मियों का भेद ब्रह्मा भी सिद्ध नहीं कर सकते। तो हमारी समझ में पूर्वोक्त दुष्ट विचारवाले और प्रकृतिदुष्टों की नानी मरजावे, सारी आई बाई ही हजम हो जावे, हाहाकार मचजावे और जीतों के कौन कहे मरे हुओं तक के कलेजे फट जावें। परन्तु हम ऐसी दुष्टता करना नहीं चाहते। हम नहीं चाहते कि ऐसा काम करें कि प्रत्येक समाज में अन्योन्य संघर्षण होकर उसी कलहानल से वे शुष्ककाष्ठवत् दग्ध होजावें। हम तो क्षत्रियों को भी परम प्रिय और अपना श्रेष्ठ अंग समझते हैं और 'उदार चरिताना तु वसुधैव कुटुम्बकम्' ही हमारा उद्देश्य है। इसलिये अकारण और व्यर्थ ये सब बातें लिखकर उनका दिल दुखाना नहीं चाहते। ये सब बातें आप जैसे बैरिस्टरों और सत्पुरुषों को ही मुबारक हों। इसलिये यद्यपि,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इह कुमतिरतत्त्वे तत्त्ववादी वराकः,
प्रलपति यदकाण्डे खंडनाभासमुच्चैः।
प्रति वचनमसुष्मै तस्य को वक्तु विद्वान्,
नहि रुतमनुरौति ग्रामसिंहस्य सिंहः॥

अर्थात् 'जो दुर्बुद्धि, मिथ्या को सत्य मानने या कहने वाला और नीचप्रकृति पुरुष यदि विना प्रसंग के ही सत्य बातों का भी बड़े जोर से झूठमूंठ ही खण्डन करता है, तो उसकी उन बातों का उत्तर देने की इच्छा कौन विद्वान कर सकता है? क्योंकि क्या कुत्ते के भूंकने पर कहीं सिंह भी उसके बदले में बोलता या भूंकता है'? इस न्यायानुसार कुँवर साहब की उस दुरुक्ति का उत्तर देना उचित नहीं है। तथापि ऐसा न करने से लोग उन्हें बैरिस्टर समझ कहीं भ्रम में पड़ कर उनकी ही उन निस्सार बातों को सत्य न मानने लग जावें, इस लिये उनकी बातों का तत्त्व दिखलाते हुए प्रसंगवश यह दिखला देते हैं कि सर्वमान्य प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थ 'आईन अकबरी' भी इन अयाचक दल के ब्राह्मणों को केवल ब्राह्मण कहकर अधिक कुछ नहीं कहती।

कुछ कहने से प्रथम इस बात का विचार कर लेना आवश्यक है कि आया, जैसा कुंवर जीने लिखा है कि जाति के विषय में वह प्रमाण नहीं मानी जा सकती वही ठीक है, अथवा इस अंश में भी उसे प्रमाण मान सकते हैं। हम तो जहां तक देखते हैं इस विषय में उसके न माने जाने में कोई युक्ति या प्रमाण नहीं। आपने और तो कुछ युक्ति या प्रमाण दिये नहीं, केवल सर विलियम जोन्स के वचन लिख दिये हैं। परन्तु उनसे हो ही क्या सकता है? क्योंकि यदि अबुलफज़ल को हिन्दूसमाज का विशेष ज्ञान न था, क्योंकि वह हिन्दुस्तान का ही रहने वाला प्रथम का हिन्दू या खत्री था, जैसा कि आपने स्वयं लिखा है, तो सर विलियम जोन्स तो वैदेशिक थे। उनके कथन को आपने इस विषय में व्यास वसिष्ठ का वचन कैसे मान लिया? उस पुस्तक भर में केवल अंग्रेजी और कहीं२ फारसी ग्रन्थों के ही प्रमाण भरे हैं और फिर ऐसा लिखा जाता है कि 'आईन अकबरी' नहीं मानी जा सकती। क्या उन अंग्रेजी और फारसी लेखकों की अपेक्षा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी आईन अकबरी का लेखक अप्रतिष्ठित था? धन्य है ऐसे कहने वाले को। चूंकि खत्रियों के साथ आपका विवाद है, उन्हीं के ऊपर आपका आक्रमण है, उसके लेखक को आप खत्री बतलाते हैं और आईन अकबरी के मानने से खत्री भी शायद क्षत्रिय सिद्ध हो जावें। इसलिये आपने अच्छा सोचा कि जड़ ही उड़ा देवें, जिससे 'रहे बांस न बाजे बांसुरी' की बात हो जावे। परन्तु स्मरण रखिये। शायद उस मियां जी का सा हाल न हो जावे जिन्होंने अपनी नाक पर बैठने वाली मक्खी से दिक हाकर उसके बैठने का अड्डा ही उड़ा दिया।

एक बात और भी विचारने योग्य है कि 'सर विलियम जोन्स' ने भी तो यही लिखा है कि फारसी ग्रन्थों से हिन्दू जातियों का विवरण या विशेष हाल नहीं जाना जा सकता। क्योंकि उन्हों ने ऐसा लिखा है कि, 'जो मनुष्य फारसी की किताबों से हिन्दू जातियों का विवरण जानता है, वह वास्तव में हिन्दुओं को नहीं जानसकता है'। 'आईन अकबरी से हिन्दू जाति के विषय में विशेष हाल नहीं मालूम हो सकता है'। परन्तु एकदम हीं वह प्रमाण न मानी जावे, यह तो न सिद्ध ही हुआ और न आप इसे मान ही सकते हैं। यदि उस पुस्तक में राज्य की सभी बातों का विवरण विस्तरशः है और हिन्दू जातियों का विवरण संक्षिप्त है, तो इससे जातियों का विशेष ज्ञान नहीं हो सकता, न कि इसके लिये वह ग्रन्थ हो न माना जावे। ग्रन्थ कर्त्ता या उसके बनवाने वाले ने जिसे अपनी समझ में जैसा उपयोगी समझा वैसा लिखा या लिखवा दिया। इससे वह खराब नहीं समझी जा सकती, जब तक उसकी कही बातें किसी प्रकार मिथ्या न सिद्ध हो जावें। यह बात उसी ग्रन्थ के लिये नहीं हैं, किन्तु ग्रन्थ मात्र के ही लिये है कि जोही कुछ उसमें लिखा होवे वह सच्चा होवे तो माना जा सकता है, अन्यथा नहीं। इसलिये यदि 'आईन अकबरी' के मानने से आपका अभीष्ट सिद्ध न होवे, तो इससे वह अप्रमाण नहीं हो सकती। क्योंकि यदि किसी का प्रयोजन किसी प्रमाण के मानने से नहीं सिद्ध हो सकता, तो इसके लिये वह प्रमाण क्यों न होगा! क्योंकि 'प्रयोजनमपेक्षन्ते न मानानीतिहि स्थितिः' अर्थात् 'प्रमाण किसी के प्रयोजन को नहीं देखते, किन्तु सच्ची बात बतला देते हैं'। इस लिये अवश्य ही 'आईन अकबरी' सर्वमान्य होने के कारण हिन्दू

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जातियों के विषय में भी जितना उसमें लिखा है उसके लिये प्रमाण है।

अब हम प्रथम 'आईन अकबरी' का लेख भूमिहारादि ब्राह्मणों के विषय में दिखलाते हैं, जिसे हमने उसके अंग्रेजी अनुवाद के दो ग्रन्थों में एक सा ही पाया है। उन अनुवादकों के नाम 'ग्लैडविन,(Gladwin) और जैरेट् (Jarret) हैं। प्रथम ग्रन्थ १७८३ इ० में और दूसरा १८९४ इ० में छपा है। बात यह है कि 'आईन अकबरी' में ब्राह्मणों के लिये 'जुन्नारदार' शब्द आया है। यद्यपि 'जुन्नार' शब्द यज्ञोपवीत मात्र का वाचक है, तथापि वह शब्द आईन अकबरी या अन्य फारसी के ग्रन्थों में केवल ब्राह्मणों के लिये ही आया है, नहीं तो यज्ञोपवीत (जनेऊ) वाले तो क्षत्रियादि भी हैं, फिर उनका नाम 'क्षत्रिय' ऐसा अलग क्यों लिखा जाता? इसीलिये कान्यकुब्ज, सर्यूपारी या भूमिहारादि ब्राह्मणों के लिये ही 'जुन्नारदार' शब्द उस ग्रन्थ में आया है। इसीलिये 'एशियाटिक रिसर्चेज' (Asiatic Researches) नामक अंग्रेजी ग्रंथ के जो १७९३ में छपा है, १६ वें पृष्ठ में मालाबार (Malabar Coast) के इतिहास में 'केरल उत्पत्ति' नामक मालाबारी ग्रन्थ के फारसी अनुवाद के आधार पर लिखा है कि:—

Those who are eutitled to wear Zunnar or Brahmanical thread, are superior to, or more noble than all the classes of the Malabar coast.

अर्थात् 'जिनको जुन्नार या ब्राह्मणों का जनेऊ पहनने का अधिकार है, अर्थात् जो ब्राह्मण हैं, वे मालाबार की सभी अन्य जातियों से श्रेष्ठ और रईस या प्रतिष्ठित समझे जाते हैं'। इसलिये जुन्नार शब्द के केवल ब्राह्मण के ही यज्ञोपवीत का नाम होनेके कारण आईन अकबरी में जुन्नारदार शब्द केवल ब्राह्मणों के लिये आया है। इसी लिये अंग्रेजों ने अनुवाद में ब्राह्मण शब्द ही रख दिया है। इस जगह हम केवल कर्नल ऐच. एस. जैरेट के ही अनुवाद के द्वितीय भाग को उद्धृत कर देते हैं। जिसमें भूमिहार ब्राह्मणों से लेकर सभी अन्य ब्राह्मणों को भी केवल ब्राह्मण हीं लिखा है। उसके १६१ वें पृष्ठ में इलाहाबाद के जिन २ परगनों में ब्राह्मणों की जमींदारी लिखी गई है, या विशेष रूप से जहां ब्राह्मण हीं प्रतिष्ठित या बाशिन्दे बतलाये गये हैं, वे इस प्रकार हैं:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Allahabad—इलाहाबाद।

Allahabad—इलाहाबाद।
Suraon—सुरांव।
Singarapore—सिंगरापुर।
Sikandarpore—सिकन्दरपुर।
Kewai—केवाई।
Hadiabas (Jhusi) झूंसी।

इन में से विशेष कर सुरांव, सिकन्दरपुर और केवाई परगनों में भूमिहार या जमींदार ब्राह्मण हैं और थे, जैसा कि विवाह प्रसंग में दिखलाही चुके हैं और शेष परगनों में सर्यूपारी या कान्यकुब्ज थे और हैं।

१६२ वें पृष्ठ में गाजीपुर और बनारस के परगनों का विवरण नीचे है:-

Ghazipur—गाजीपुर।

Chausa—चौसा।
Saidpur Namadi—सैदपुर।
Zahurabad—जहूराबाद।
Mohammadabad-मुहम्मदाबाद।
Madan Benares-मदन बनारस (जमानियां)।

यहां सभी केवल भूमिहार ब्राह्मण हैं, जिनमें से चौसा में सकरवार, सैदपुर में भारद्वाज, जहूराबाद में कौशिक, जमानियां में सकरवार और द्रोणवार और मुहम्मदाबाद में किनवार रहते हैं और थे।

Benares—बनारस।

Afrad—अफरद।
Haveli—हवेली।
Byalisi—बयालिसी)
Pindara—पिंडरा।
Kuswar—कुसवार।
Harhua—हरहुआ।

इनमें से पिंडरा में कोलहा भूमिहार ब्राह्मण थे और हैं, कुसवार में गौतम और हरहुआ में दीक्षित। बाकी में सर्यूपारी और भूमिहार ब्राह्मण दोनों थे। पृष्ठ १६३ में जौनपुर के परगनों का विवरण इसप्रकार है:-

Jaunpur—जौनपुर।

Chandipur—चांदीपुर।
Sanjhauli—संझौली।
Sikandarpur—सिकन्दरपुर।
Nizmabad—निजामाबाद।
Mohammadabad—मुहम्मदाबाद।
Negum—निगम।

इनमें से निजामाबाद में भृगुवंश भूमिहार ब्राह्मण थे और हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं मुहम्मदाबाद में बरुवार भूमिहार ब्राह्मण थे और हैं। शेष में सर्यूपारी और भूमिहार ब्राह्मण दोनों थे और हैं। इसी प्रकार अवध, लखनऊ, हरदोई आदि जिलों के परगनों और महालों में ब्राह्मण हीं लिखे गये हैं और वहां सभी कान्यकुब्ज या सर्यूपारी ब्राह्मण थे और हैं भी। इसी आईन अकबरी के आधार पर मिस्टर नेविल ने बनारस के गजेटियर के १६५ वें पृष्ठ में लिखा है कि:—

The Mahal of Haveli Benares comprised of the present Dehat Amanat, Jalhupur and Sheopur. It was held by Brahmans &c. Pindarah has remained unchanged and was held by Brahmans &c. Athgawan was then known as Harhua and was held by Brahmans &c. Kuswar was a large mahal and was held by Brahmans &c.

अर्थात् 'बनारस हवेली महाल में देहात अमानत, जालहूपुर, और शिवपुर भी मिले हुये थे और वहां ब्राह्मणों का अधिकार था इत्यादि। इसी प्रकार पिंडरा भी ब्राह्मणों के ही अधिकार में था जो आज भी बदला नहीं है इत्यादि। अठगांवां का नाम प्रथम हरहुआ था और वह भी ब्राह्मणों के ही अधिकार में था इत्यादि। कुसवार सब से बड़ा महाल था और ब्राह्मण लोग ही उसके जमींदार थे इत्यादि।

इसी प्रकार नेविल साहब ने अपने गाजीपुर के गजेटियर के १६४ वें पृष्ठ में गाजीपुर के ऐतिहासिक वर्णन के समय अकबर का प्रबन्ध दिखलाते हुये साफ ही लिख दिया है कि गाजीपुर के मुहम्मदाबाद और जमानियां वगैरः महालों में जो ब्राह्मण जमींदार लिखे गये हैं वे भूमिहार ब्राह्मण हीं थे और हैं, न कि दूसरे ब्राह्मण। वे इस प्रकार लिखते हैं:—

It was in Akbar's days that Ghazipur became recognized seat of government and the capital of a Sarkar in the province of Allahabad. The Sarkar contained 19 mahals or parganas comprising most of the present district and Ballia, as well as Chausa, now in Shahabad, and Belahabans in Azamgarh. The Ain-i-Akbari affords us a considerable amount of

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

information as to the state of the district at that time, showing the state of cultivation, the revenue and the principal landholders of each pargana. The mahals are Ghazipur Haveli, pachotar, Bahariabad, Zahurabad, Dehma, Mohammadabad, Madan Benares, Karanda, Sayidpur Namadi, Baraich, Shadiabad, Bhitari, Khanpur and Mahaich. Zahurabad had 13803 bighas of cultivation paying 657808 dams: it was held by Brahmans, who contributed 20 horsemen and 500 infantry. Mohammadabad Parharbari, as it was then styled, had 44775 bighas under cultivation and paid 2260707 dams. The land-holders were Brahmans, which is the name always given to Bhumihars, and the military force consisted of 100 horse and 2000 foot. The present Mohammadabad pargana also includes the scattered mahal of Qariat Pali, which contained but 1394 bighas of cultivated land and was possessed at 75497 dams. Zamania is shown under the old name of Madan Benares. It was held by Brahmans, or more probably Bhumihars, who paid 2760000 dams on 66584 bighas of cultivation and furnished 501 horse and 5000 foot. Saidpur Namadi had a cultivated area of 25721 bighas, an assessment of 1250280 dams, and the Brahman Zamindars contributed 20 cavalry and 1000 infantry. The remaining parganas were mostly held by Rajputs, while Bhitari by Ansari Shekhs.

इसका अर्थ यह है कि 'अकबर के समय में हीं गाजीपुर राज्य कार्य का एक स्थान और इलाहाबाद के सूबे की एक सर्कार की राजधानी बन गया। इस सर्कार में १६ महाल या परगने थे, जिनके अन्तर्गत वर्त्तमान जिले का बहुत सा भाग, बलिया जिला और चौसा भी था, जो अब शाहाबाद में है। इसके अतिरिक्त बेलहा बन भी था,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो अब आजमगढ़ में है। आईन अकबरी से इस जिले की उस समय की दशा का बहुत सा पता चलता है। क्योंकि उसमें उस समय की कृषि की दशा, मालगुजारी और प्रत्येक परगने के प्रधान जमींदारों का उल्लेख है। उसके महाल ये हैं:- गाजीपुर हवेली, पचोतर, बहरियाबाद, जहूराबाद, डेहमा, मुहम्मदाबाद, मदन बनारस (जमानियां), करंडा, सैदपुर नामदी, बराइच, शादियाबाद, भितरी, बानपुर और महाइच। परगना जहूराबाद में १३८०३ बीघे खेती की जमीन थी, जिसकी मालगुजारी ६५७८०८ दाम थी। और इसके जमींदार ब्राह्मण थे, जो २० सवार और ५०० पैदल फौज रखते या उसका खर्च देते थे। मुहम्मदाबाद का नाम उस समय मुहम्मदाबाद परहारबारी था, जिसमें खेती की भूमि ४४७७५ बीघे थी, जिसकी मालगुजारी २२६०७०७ दाम थी। इसके जमींदार ब्राह्मण थे। आईन अकबरी में यह ब्राह्मण नाम भूमिहारों के लिये आया करता है। अर्थात् वहां के जमींदार भूमिहार ब्राह्मण थे. जो १००सवार और २००० पैदल फौज रखते थे। वर्त्तमान मुहम्मदाबाद परगने में उस समय करियत पाली का तितर बितर महाल भी मिला हुआ था, जिसके १३६४ बीघे में खेती होती थी और मालगुजारी ७५४६७ दाम थी। जमानियां का प्राचीन नाम मदन बनारस ही लिखा गया है। इसके जमींदार ब्राह्मण थे, जिन्हें भूमिहार ब्राह्मण कह सकते हैं, जिनकी जमींदारी ६६५८४ बीघे थी और मालगुजारी २७६००० दाम थी। ये लोग ५० सवार और ५००० पैदल फौज रखते थे। सैदपुर में २५७२१ बीघे में कृषि होती थी, जिसके ब्राह्मण जमींदार १२५०२८० दाम मालगुजारी के देते और २० सवार एवं १००० पैदल सेना रखते थे। अवशिष्ट परगने विशेष कर राजपूतों के अधिकार में थे, केवल भीतरी पर अंसारी शेखों का दखल था।'

अब हमको इस विषय में कुछ नहीं कहना है। पाठक लोग स्वयं ही समझ गये होंगे कि, आईन अकबरी, उसके अनुवादकों और उसके आधार पर इतिहास लेखकों के भी मत से भूमिहार ब्राह्मण लोग ब्राह्मण सिद्ध होते हैं अथवा नहीं। भला जहां पर इस प्रकार लिखा जा रहा है कि आईन अकबरी में भूमिहार ब्राह्मणों के लिये ही केवल 'ब्राह्मण' नाम आया है और वैसाही आईन अकबरी के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाक्य लिखकर स्पष्ट ही दिखला भी चुके हैं, तो फिर वहां भूमिहार लोग ब्राह्मण हैं या नहीं इस संशय की जगह ही कहां है? इन सब ग्रन्थों को उक्त 'क्षत्रिय और कृत्रिम क्षत्रिय' नामक ग्रन्थ के रचयिता कुंवर महाशय जी भी उलट गये हैं, क्योंकि उस ग्रन्थभर में प्रायः इन्हीं की दोहाई दी गई है। ऐसी दशा में पूर्वोक्त लेख का उनकी पवित्र लेखनी से लिखा जाना कैसी सुजनता, सभ्यता, सुधारकता, निष्पक्षपातिता, निर्द्वेषता और उदारता है, इसे आप ही लोग विचार लेवें। हमारी समझ में तो ऐसी दशा में सम्भवतः वह इन भूमिहार ब्राह्मणों के उद्देश्य से न लिखा गया होगा, क्योंकि इनके विषय में वैसा लिखने की जगह ही नहीं है। किन्तु, जैसा कि पूर्व भी दिखला चुके हैं कि कहीं २ क्षत्रिय भी भूमिहार कहलाते हैं, जिस बात को 'राजपूत' के सम्पादक कुंवर हनुमन्त सिंह तथा क्षत्रिय समाज स्वीकार करता है। इसलिये खत्रियों पर रञ्ज होकर—क्योंकि उन्हीं के साथ विचार करने का वह प्रकरण है—आपने यह लिख दिया है कि आईन अकबरी से खत्री क्षत्रिय सिद्ध नहीं हो सकते। क्योंकि उससे तो 'भूमिहार अर्थात् भूमिहार क्षत्रिय अथवा क्षत्रिय और तेली या कहार और डोम में अन्तर प्रतीत नहीं हो सकता है।' अगर सच पूछा जावे तो यही तात्पर्य उस वाक्य का घटता है। इसीलिये ऐसी दशा में हम उक्त कुंवर जी को कुछ भी कहना नहीं चाहते और उनके कथन का दूसरा तात्पर्य समझ हमने जो कुछ लिखा है उसे वापस कर लेते हैं। अथवा रहने देने पर भी उनसे और उस कथन से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। इसलिये उनके सम्बन्धियों को इससे बुरा न मानना चाहिये। क्योंकि वे लोग ऐसी दशा में हमारे उक्त कथन के लक्ष्य हैं ही नहीं।

अस्तु, इस प्रकार से श्रुति, स्मृति, इतिहास, पुराण, व्यवस्थाओं, पत्रों, प्राचीन वंशावलियों, ब्राह्मणादि के लेखों, चीनी और ग्रीक यात्रियों के लेखों, पाली ग्रन्थों, गवर्न्मेन्ट की आज्ञा और आईन अकबरी प्रभृति ग्रन्थों, एवं मैथिल, कान्यकुब्ज, सर्यूपारीणऔर गौड़ ब्राह्मणों के साथ भूमिहार, त्यागी आदि ब्राह्मणों के विवाह सम्बन्ध और खान पानों से सिद्ध हो गया कि सृष्टि कालसे ही जो अयाचक और याचक ये प्रकार के ब्राह्मण हैं, उनमें से अयाचक ही श्रेष्ठ और सर्वमान्य हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और ये भूमिहार, पश्चिमा, त्यागी, जमींदार, महियाल आदि ब्राह्मण उसी अयाचक दल के हैं। इसलिये यदि चाहे तो इन्हें अयाचक ब्राह्मण, भूमिहार, पश्चिमा, त्यागी आदि ब्राह्मण अथवा ब्राह्मण इन तीनों नामों से कह सकते हैं। जैसे कान्यकुब्ज या सर्यूपारी प्रभृति ब्राह्मणों से पूछने पर वे लोग प्रथमतः 'आप कौन हैं ?' इस प्रश्न का उत्तर 'ब्राह्मण हैं' ऐसा देते हैं। उसके बाद 'कौन ब्राह्मण हैं?' इस प्रश्न पर 'सर्यूपारी' या कान्यकुब्ज' ऐसा बतलाते हैं। वैसेही अयाचक ब्राह्मणों से पूछने पर कि 'आप कौन हैं ?' उन्हें कहना चाहिये कि 'ब्राह्मण हैं'। पश्चात् 'कौन ब्राह्मण हैं ?' ऐसा पूछने पर 'अयाचक, अथवा भूमिहार, पश्चिमा, जमींदार, त्यागी, महियाल ब्राह्मण हैं' ऐसा उत्तर देना चाहिये। अथवा जो अयाचक ब्राह्मण दल जिस देश में हैं वह वहांके मैथिल, कनौजिया, सर्यूपारी, गौड़ और सारस्वतादि ब्राह्मणहीं अपने को सबसे पहले कह कर पीछे अपनी विशेषता के लिये त्यागी, भूमिहार आदि कह सकते हैं। और यह भी सिद्ध हो गया कि इन अयाचक ब्राह्मणों के भूमिहारादि विशेषण जागीर वगैरः पाने या भूमिपर बल से अथवा अन्य प्रकार से अधिकार कर लेने से ही मुसलमानों के समय में पड़े। जैसे कि दो या तीन वेदों के पढ़ने, पढ़ाने आदि कामों के करने और मिथिलादि देशों में रहने से दूबे, तिवारी, श्रोत्रिय, मैथिल और गौड़ प्रभृति नाम या विशेषण अन्य ब्राह्मणों के यवन काल में हीं पड़े। और राय, सिंह, पांडे और दूबे प्रभृति पदवियां भी उसी समय की हैं, जो कामों के करने से ही पड़ी हैं। साथ ही साथ यह भी दिखला चुके कि, पश्चिमा, जमींदार और भूमिहार ब्राह्मण, तगे, त्यागी या दानत्यागी ब्राह्मण और महियाल ब्राह्मण इस समय भी एक से ही आचार विचार और प्रतिष्ठा वाले हैं। इसलिये इन लोगों के परस्पर विवाह सम्बन्ध वगैरः होने में कोई हर्ज नहीं है। और यह भी सिद्ध हो चुका कि इन लोगों में आज तक कोई शास्त्र निषिद्ध ऐसी बुराई भी नहीं आ गई है, जिससे इनकी दशा या दर्जा ब्राह्मणसमाज में किसी प्रकार से भी हीन समझा जावे। बल्कि अन्य ब्राह्मण हीं शास्त्रोक्त धर्म से कुछ भ्रष्ट हो गये हैं। इसलिये इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों को ब्राह्मणसमाज में किसी प्रकार से भी हीन मानना, या ऐसा लिख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐसा, अथवा लिख देने का साहस मात्र भी करना केवल भ्रम या अज्ञान हीं है। इसलिये इस प्रकरण के अन्त में अन्तर्यामी जगदाधार से यही प्रार्थना है कि सभी भारतवासियों और विशेष कर इन अयाचक दलके सभी ब्राह्मणों को शास्त्रीय सुबुद्धि प्रदान करे, जिसमें सभी लोगों के पक्षपात या राग द्वेष निवृत्त हो जावें और सभी लोग शास्त्रीय धर्म का हृदय से अनुमोदन करें, भ्रातृभाव की वृद्धि हो और स्वार्थवश हो बेजा तौर से किसी को कोई दबाना न चाहे और ये अयाचक दलीय ब्राह्मण अपने स्वरूप को यथावत् पहचान कर अपने शास्त्रोक्त कर्त्तव्य में परायण होवें ॥ इति श्री ब्रह्मर्षिवंश विस्तरे याचकायाचकद्विविधब्राह्मणविचारो नामाद्यं प्रकरणम् ॥

॥ श्रीरस्तु ॥

ॐ

ब्रह्मर्षि वंश विस्तर ।

उत्तरार्द्ध—कण्टकोद्धार ।

१—दुरुक्तिदमन ।

अन्तश्छिद्राण्यनेकानि कण्टका बहवो बहिः ।
कथं कमलनालस्य माभूवन् भंगुरा गुणाः ॥

यद्यपि पूर्व प्रकरण में सभी प्रकार के प्रशस्त प्रमाणों द्वारा अयाचक ब्राह्मणों का श्रुतिस्मृत्यादि सिद्ध पवित्र और सर्वमान्य स्वरूप जब दिखला दिया और यह भी सिद्ध कर दिया गया कि अन्य ब्राह्मणों के साथ इनके सभी प्रकार के विवाह सम्बन्ध, खान पान और नमस्कार इत्यादि मिले हुये हैं, तो फिर किसी को भी किसी प्रकार का भी इनके स्वरूप के विषय में संशय या मिथ्या कल्पना करने का अवसर ही न रहगया। और यदि इतने पर भी कोई भ्रम या द्वेष वश कुछ मिथ्या कल्पना करे, तो उसका खण्डन भी पूर्व प्रमाणों द्वारा अपने आप ही हो गया। इसलिये मोहपूर्ण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कल्पनाओं के पृथक खण्डन करने की आवश्यकता ही न रह गई। तथापि, जैसे विदेश में रहने वाले बनिये के पास उसके घर से उस की स्त्री ने रञ्ज हो कर अपने पुराने नौकर से यह कहला भेजा कि जाकर कह देना कि आपकी स्त्री विधवा होगई, क्योंकि वह बहुत दिनों से घर न गया था, इसलिये स्त्री ने अपने को विधवा की तरह समझ उसे व्यंग्य मारे थे। परन्तु उस मूर्ख ने यह सुनते ही कुछ भी विवेक न कर वहां के अपने इष्ट मित्रों से शोक प्रकाश करना प्रारम्भ कर दिया। यद्यपि उसके बुद्धिमान मित्रों ने यह बहुतेरा समझाया कि जब आप स्वयं जीते ही हैं तो भला यह कब संभव है कि आप की स्त्री विधवा होगई? परन्तु उस प्रचंड मूर्ख ने यही उत्तर दिया कि हां, यह तो अच्छी तरह से समझता हूं कि मेरे जीते जी भला मेरी स्त्री विधवा कैसे हो सकती है? लेकिन मेरे दादा के समय का यह प्रतिष्ठित, सत्यवादी और बुड्ढा नौकर भी तो झूठ नहीं बोल सकता। उसी तरह बड़े २ उपाधिधारी लोगों की बातें सुनकर विचारहीन पुरुष सम्भवतः इतने पर भी उलटा ही समझने लग जावें। इसलिये उनके इस भ्रम को मिटा देने के लिये दूसरे प्रकरण की आवश्यकता है। जिसमें यह स्पष्ट शब्दों में दिखला दिया जावे कि उन नाम मात्र के उपाधिधारियों के वचन कैसे निस्सार हैं। बड़े २ उपाधिधारियों के वचन सुन केवल अविवेकी लोग ही उन्हें भूले न समझ अपने आप ही संशय करने या उलटा समझने लग जाते हैं, किन्तु बड़े २ लोगों को भी उनकी बातें भ्रम में डाल देती हैं। क्योंकि उनकी बातों को लोग यह तो कभी समझते ही नहीं कि ये भूल से भी हो सकती हैं। जैसा कि बिहारीजी ने कहा है:—

को कहि सकै बड़ेन की, लखी बड़ीयो भूल।
दीन्हें दई गुलाब के, इन डारिन वे फूल॥

एक बात और भी है। यह भी प्रकृति का एक अटल नियम है कि किसी वस्तु के स्वरूप को जितना हीं अच्छा बनाइये, अथवा वह स्वयं जितनी अच्छी होगी, उतने हीं उसके ऊपर दुष्ट लोगों के आक्रमण होंगे। इसी लिये पंचतंत्र में कहा है कि:—

फलं भुजंगैः शिखराणि भल्लैः शाखाः प्लवंगैः कुसुमानि भृंगैः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नास्त्येव तच्चन्दनपादपस्य यन्नाश्रितं दुष्टतरैश्च हिंस्रैः॥

इसका अर्थ यह है 'देखिये चन्दन का वृक्ष कैसा उपयोगी और सुन्दर होता है, परन्तु उसके कोई भी अवयव दुष्टों से बचे नहीं हैं। क्योंकि उसकी जड़ में सांप रहते हैं, चोटियों पर भालू, डालियों में बन्दर और फूलों में भौंरे रहा करते हैं, जो सभी हिंसक और दुष्टतर हैं।' इसलिये केवल स्वरूप के अच्छी तरह से निरूपण कर देने से ही काम न चलेगा, किन्तु दुष्ट जनों के अविवेकमूलक मिथ्या-आक्षेपरूप कण्टकों को भी हटाने का पृथक् यत्न अवश्य ही करना होगा। क्योंकि यद्यपि केतकी या गुलाब के पुष्प बहुत सुन्दर, उपयोगी, मनोरंजक और सभी के ग्रहण योग्य होते हैं। तथापि सघन कण्टकों में पड़ जाने के कारण सभी लोग उनका ग्रहण या आदर नहीं कर सकते, अथवा उनसे लाभ नहीं उठा सकते, किन्तु जो उन पुष्पों के अत्यंत प्रेमी और कांटों को कुछ भी नहीं समझनेवाले होते हैं, वे लोग ही उनसे यथावत् लाभ उठा सकते हैं। जैसा कि कहा है:—

गुलिस्ताने जहां में फूल भी हैं और कांटे भी।
मगर जो गुल के जोया हैं उन्हें क्या ख़ार का खटका॥

इसीलिये जिसमें साधारणतः सभी लोग उससे लाभ उठा सकें, इसके लिये उन मिथ्या आक्षेपरूप कण्टकों को हटाने के लिये दूसरे प्रकरण की आवश्यकता है। यह बात भी है कि जब तक मनुष्य के भीतर छिद्र या बुराइयां रहती अथवा बाहर कांटे रहा करते हैं, तब उसके गुणों की कोई भी गिनती नहीं होती। इसीलिये इस प्रकरण के प्रारम्भ वाले श्लोक को किसी प्रौढ़ कवि ने कहा है। जिसका भाव यह है कि 'कमल के डंडे (पानी में रहने वाले हिस्से) के गुण अर्थात् तन्तु या रेशे क्यों न भंगुर या दुर्बल हों? क्योंकि उसके भीतर छिद्र और बाहर कांटे रहा करते हैं'। इसलिये भीतर आपा-ततः प्रतीत होने वाले छिद्रों के हटा देने पर भी बाहरी कांटों के हटाने का यत्न करना ही होगा। इसीलिये इस द्वितीय प्रकरण का आरम्भ किया जाता है और तदनुसार ही इस का नाम भी कण्टकोद्धार रक्खा गया है।

अस्तु, अब हम पाठकों के सन्मुख 'वर्णविवेक चन्द्रिका' नामक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१०-१२ पन्ने पुस्तिका को उपस्थित करते हैं, जो १०-१५ वर्ष हुये वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई में छपी है और जिसके रचयिता काशीनाथ सूरि हैं। इस पुस्तक का तत्त्व हम भूमिका ही में दिखला चुके हैं और यह सिद्ध कर चुके हैं कि यह सम्पूर्ण पुस्तक स्वकपोलकल्पित और गपोड़ा मात्र ही है। क्योंकि जिन 'वाराहपुराण' (शूकर पुराण) और 'भुवलतंत्र' नामक ग्रन्थों के आधार पर ग्रन्थ की रचना रचयिता ने बताई है, या तो उन नामों के ग्रंथ हैं हीं नहीं, और यदि नाम में कुछ रद्दबदल करके कोई ग्रन्थ मिलते भी हैं, तो उनमें जाति का प्रसंग हैं ही नहीं। इसका सविस्तर विचार कर चुके हैं। ऐसी दशा में वह पुस्तक क्योंकर प्रमाण मानी जा सकती है? नहीं तो, फिर हम भी 'काशीनाथ' के बाप दादे या वंश अथवा समाज के विषय में 'मुर्गीपुराण' और 'गड़बड़' तंत्र के अधार पर थोड़े से श्लोक बनाये देते हैं। उनको वे अथवा दूसरे लोग क्यों न मानेंगे? इसके अतिरिक्त यदि उनकी कही हुई बातें दूसरे ग्रन्थों से, जिन्हें सभी लोग मानते हैं, विपरीत न होतीं, तो भला कम से कम सुनने के योग्य तो वे बातें होतीं। परंतु उन्हों ने मनु भगवान और याज्ञवल्क्य महर्षि के विपरीत ही लिखा है। क्योंकि उन दोनों महर्षियों का यह सिद्धान्त है कि जो सन्तान एकानन्तर अनुलोम से उत्पन्न होती है, अर्थात् ब्राह्मण पुरुष से क्षत्रिया स्त्री में, क्षत्रिय से वैश्या स्त्री में, वैश्य से शूद्रा स्त्री में, वह क्रम से क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ही हुआ करती है। क्योंकि मनुजी ने लिखा है:—

स्त्रीष्वनन्तरजातासु द्विजैरुत्पादितान् सुतान्।
सदृशानेव तानाहुर्मातृदोषविगर्हितान् ॥ ६ ॥
पुत्रा येऽनन्तरस्त्रीजाः क्रमेणोक्ता द्विजन्मनाम्।
ताननन्तरनाम्नस्तु मातृदोषात्प्रचक्षते ॥ १४ ॥ १० ॥

अर्थ यह है कि 'जो सन्तानें अनन्तर स्त्री से अर्थात् ब्राह्मण पिता से क्षत्रिया स्त्री में इत्यादि रीतिसे उत्पन्न होती हैं, वहां वीर्य को प्रबल न मानकर वे मातृपक्ष की अर्थात् जो जाति माता की होती है उसी जातिवाली समझी जाती हैं। जो सन्तानें पूर्वोक्त रीति से उत्पन्न होती हैं उनमें मातृपक्ष को ही प्रबल मानकर वे उसी जातिवाली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहलाती हैं जिस जाति की माता होती है'। जो याज्ञवल्क्यस्मृति के आचाराध्याय के ९१ वें श्लोक में लिखा है कि,

विप्रान्मूर्द्धावसिक्तो (भिषिक्तो) हि क्षत्रियायां विशःस्त्रियाम्।

अर्थात् 'ब्राह्मण पिता से क्षत्रिया स्त्री में मूर्द्धाभिषिक्त संज्ञावाला बालक उत्पन्न होता है'। उसका भी यही अर्थ है। क्योंकि मनुजी के अनुसार उसे क्षत्रिय होना चाहिये और 'मूर्द्धाभिषिक्त' क्षत्रिय को ही कहते हैं। इसीलिये अमरकोष में क्षत्रियों के पर्याय में भी मूर्द्धाभिषिक्त शब्द आया है, जैसा कि प्रथम भी दिखला चुके हैं कि 'मूर्द्धाभिषिक्तो राजन्यो बाहुजः क्षत्रियो विराट्' अर्थात् मूर्द्धाभिषिक्त, बाहुज, राजन्य, क्षत्रिय और विराट् ये सब क्षत्रियों की संज्ञायें हैं। इसलिये वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड में श्रीरामजी ने भरत को मूर्द्धाभिषिक्त कहा है 'नतु मूर्द्धाभिषिक्तानाम्' अर्थात् जब उन्होंने यह प्रण किया है कि यदि आप अयोध्या को न लौट चलेंगे तो हम अनशन व्रत करके शरीर यहीं छोड़ देंगे, तो रामजी ने यह उत्तर दिया है कि अनशन करके शरीर छोड़ देना ब्राह्मणों का कर्म है, न कि मूर्द्धाभिषिक्तों अर्थात् क्षत्रियों का। इसलिये ऐसा करना आपको उचित नहीं है। महाभारत में सैकड़ों जगह मूर्द्धाभिषिक्त शब्द क्षत्रियों के लिये आया है और उसके तथा अन्य स्कन्दपुराण प्रभृति ग्रन्थों के देखने से भी स्पष्ट है कि ब्राह्मण पिता और क्षत्रिया स्त्री से उत्पन्न बालक क्षत्रिय ही होता है। इस के लिये कम से कम एकसौ वाक्य और दृष्टान्त केवल महाभारत ही में मिलते हैं। इसलिये अनुलोम सन्तान अलग नहीं होती। इसका सविस्तर विचार 'भूमिहार ब्राह्मण पत्रिका' के सन १९१५ ई० के नवम्बर प्रभृति मासों के अंकों में मिलेगा।

यदि 'तुष्यतु दुर्जनन्याय' से आपके तोष के लिये स्वीकार भी कर लेवें कि अलग ही होती है, तो भी उसका नाम 'मूर्द्धाभिषिक्त' ही होता है, न कि 'भूमिहार या पश्चिमा'। यदि भूमिहार ब्राह्मणों की ही 'मूर्द्धाभिषिक्त' संज्ञा आप विना प्रमाण के ही मानना चाहते हैं, तो अपने हीं समाज की 'मूर्द्धाभिषिक्त' संज्ञा क्यों नहीं मान लेते? क्योंकि बहुत से सर्यूपारी या कान्यकुब्ज प्रभृति दल पड़े हैं, जिनका आचार व्यवहार इस समय भूमिहार ब्राह्मणों का सा ही हो रहा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि आप यह कहें कि मूर्द्धाभिषिक्त का धर्म तो रथ हांकना या सेनापति आदि का काम करना है, सो तो भूमिहार ब्राह्मणों में भी नहीं पाया जाता है, जैसाकि अन्य ब्राह्मणों में भी नहीं है। इसी लिये यदि अनुलोम सन्तानों को अलग भी मानेंगे, तो उनकी ही मूर्द्धाभिषिक्त संज्ञा जुदी ही पड़ेगी, न कि वे ही कान्यकुब्ज, मैथिल, पश्चिमा या भूमिहार ब्राह्मण कहे जा सकते। इसी प्रकार जब विलोम सन्तान को लेते हैं, अर्थात् क्षत्रिय पिता और ब्राह्मणी माता रहे, तो उसका नाम पूर्वोक्त महर्षियों के मत से 'सूत' सिद्ध होता है। जैसा कि लिखा है कि:—

क्षत्रियाद्विप्रकन्यायां सूतो भवति जातितः। म.१०॥११॥
ब्राह्मण्यां क्षत्रियात्सूतः। याज्ञ० आचारा० ॥ ९३ ॥

अर्थात् 'ब्राह्मणी के गर्भ में क्षत्रिय के वीर्य से जो लड़का होता है उसे सूत कहते हैं,। और वर्णविवेकचन्द्रिका में ऐसा लिखा गया बतलाया जाता है कि क्षत्रिय पिता और ब्राह्मणी माता से जो सन्तान (बालक) हुई उसका नाम भूमिहार हुआ। अब बतलाइये कि उन महर्षियों के विपरीत कहनेवाले वर्णविवेकचन्द्रिकाकार महाशय की बात सुनी भी कैसे जा सकती है? सुन भी उस दशा में सकते थे, यदिउनके इस कथन में कहीं से कुछ भी प्रमाण मिलता। परन्तु विना प्रमाण के ही यदि कहना ठहरा तो, वे अपने हीं वंश को ऐसा कह लेवें, सो ही अच्छा होगा। क्योंकि उसमें कोई दूसरा विरोधी खड़ा न होगा। वस्तुतः यदि सत्य बात पूछी जावे—यदि उस वर्णविवेकचन्द्रिका की निष्प्रामाणिक बातें मान भी ली जावें—तो भी उनसे पश्चिमा या भूमिहार ब्राह्मणों की क्षति नहीं है। क्योंकि जैसा कि श्री ज्वालाप्रसाद मिश्र विद्यावारिधि जी ने उसके वाक्य का भ्रममूलक अर्थ कर दिया है और जिसका विधिवत् खंडन अभी करेंगे, उसी के अनुसार हमने पूर्वोक्त बातें कही हैं। वस्तुतः तो वर्णविवेकचन्द्रिका में ऐसा लिखा है:—

क्षत्रियस्य च वीर्येण ब्राह्मणस्य च योषिति।
भूमिहार्य्यभवत्पुत्रो ब्रह्मक्षत्रस्य वेषभृत् ॥ ७० ॥

अर्थात् 'क्षत्रिय पिता के वीर्य और ब्राह्मणी माता के रज से जो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लड़का उत्पन्न हुआ उसका नाम 'भूमिहारी' हुआ और उसका वेष ब्राह्मण और क्षत्रिय का सा हुआ'। इससे स्पष्ट है कि 'भूमिहारी, नामक जाति विशेष की ही उत्पत्ति वहां लिखी गई है। इसी लिये 'भूमिहारी' शब्द के आगे 'अभवत्' शब्द के आने से ईकार के स्थान में सन्धि होकर 'य' हो गया और 'भूमिहार्य्यभवत्, ऐसा शब्द का स्वरूप हो गया। यदि भूमिहार ब्राह्मणों को कहना होता तो 'भूमिहारः' शब्द से आगे अभवत् आने पर 'भूमिहारोऽभवत्' ऐसा रूप शब्दों की सन्धि होने पर हो जाता। परन्तु वहां तो 'भूमिहार्य्यभवत्' ऐसा ही लिखा हुआ है। यहां तक कि स्वयं ज्वालाप्रसादजी ने भी अपनी 'जातिनिर्णय' नामक पुस्तक में इस श्लोक को उद्धृत करते हुये 'भूमिहार्य्यभवत्' ऐसा ही लिखा है, अर्थ करने में भले ही सज्जनता और पांडित्य दिखलाने में नहीं चूके हैं। भूमिहारी या भुंइहारी नामक कोई शूद्र जाति है, जिसके मनुष्यों की संख्या ३१६७८७, तथा उस जाति का नाम 'भुंइहारी' साधुचरणप्रसाद कृत 'भारत भ्रमण' के प्रथम खण्ड के ४४ वें पृष्ठ में लिखा गया है और दर्याफ्त करने से मालूम हुआ कि यह एक व्यापार करनेवाली जाति बम्बई की तरफ विशेष रूप से पाई जाती है और शूद्र है। इसीलिये वर्णविवेक चन्द्रिका में भूमिहारी जाति से पूर्व माहुरी वैश्य नामक और बाद में तेली नामक शूद्रजाति का ही निरूपण किया गया है। इससे स्पष्ट है कि वह प्रकरण वैश्य, शूद्र जाति का ही है। इसलिये भूमिहारी जाति वही शूद्र जाति है, जिसका पता बता चुके हैं। जैसे भूमिहार का अपभ्रंश भुंइहार होगया है, वैसेही 'भूमिहारी' शब्द ही बिगड़ कर 'भुंइहारी' हो गया है। इसलिये यही सिद्ध हो गया कि यदि 'वर्णविवेकचन्द्रिका' की बातें मान भी ली जावें, तो भी इन ब्राह्मणों की कोई निन्दा या क्षति नहीं है।

अब विद्यावारिधि जी की दुरुक्ति रूप वडवानलज्वाला का भी परिचय कर लीजिये। आप अपनी पुस्तक 'जातिनिर्णय' के ८६ वें पृष्ठ में इसी वर्णविवेकचन्द्रिका के श्लोक ज्यों का त्यों उद्धृत करते हैं, क्यों कि यह उनका ग्रन्थ प्रायः उसी वर्णविवेक चन्द्रिका की टीका की तरह है। फिर उस भूमिहारी शब्द का अर्थ भूमिहार करके कोष्ठ के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बीच में भैंहार लिखते हैं। यहां पर कई बातें विचारने योग्य हैं। एक तो विद्यावारिधि जी को यह विचारना चाहता था कि यदि हम यह श्लोक वर्णविवेकचन्द्रिका से उठाकर लिखते हैं। तो वह किसी ऋषि का प्रणीत तो है ही नहीं; इसलिये जिस आधार पर वह श्लोक बनाया गया है उस ऋषिवचन को लिख देवें। परन्तु यदि विद्यावारिधि होने भी पर उसके मूल का पतान चला, तो भले मानुसी इसी में थी कि उसे अपनी पुस्तक में लिखकर अपने आप को और उसे कलंकित भी न करते। परन्तु आपने तो यह चालाकी की कि यदि 'वर्णविवेक चन्द्रिका' इसका मूल प्रमाण लिख देते हैं, तो कोई मानेगाही नहीं और दूसरा प्रमाण तो इस विषय में कुछ मिलता ही नहीं। इसलिये यदि झूठ मूंठ ही किसी प्राचीन ग्रन्थ का नाम लेते हैं तो अन्ततो गत्वा पोल खुल ही जायगी। तो फिर झूठा बनना पड़ेगा। इसलिये यद्यपि उससे पूर्व और बाद के श्लोकों को लिख कर उनके आगे 'इति वर्णविवेक चन्द्रिका' अर्थात् 'ऐसा वर्ण विवेकचन्द्रिका में लिखा है,' ऐसा लिख दिया। लेकिन इस श्लोक को लिख कर 'इति वर्णविवेकचन्द्रिका' भी न कह कर एक बारगी चुप मारगये। जिसमें अविवेकी लोग, विद्या वारिधि महामहोपदेशक पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र जी ने यदि लिखा है, तो अवश्य प्रामाणिक होगा, ऐसा समझकर इन भूमिहार ब्राह्मणों को गालियां देने में न रुकें। वाह वाह! इसी को तो उपदेशकी कहते हैं। अवश्य आप जैसे महोपदेशकों, सुधारकों और विद्यावारिधियों की कृपा से इस दीन भारत के बह जाने में कोई विलम्ब नहीं है। क्यों जी विद्यावारिधि जी! यदि हम भी ऐसे ही श्लोक आप के समाज अथवा वंश के विषय में रचकर छपवा देवें और अपने को महामहोपदेशक लिखने लग जावें तो आप उन्हें मानेंगे या नहीं? हमारी समझ से तो आप कोई भी उज्र नहीं कर सकते।

जब आपने, जैसा कि हमने कह दिया है, जैसे अनुलोम सन्तानों को अलग लिखा है वैसे ही विलोम को भी और प्रथम को मूर्द्धाभिषिक्त और दूसरे को सूत लिखा है और इसमें पूर्वोक्त मनु और याज्ञवल्क्य के ही वचन प्रमाण दिये हैं, तो फिर उनके विपरीत और अपने ही पूर्वापर लेख के विपरीत ही कैसे ऐसा लिख दिया? जब क्षत्रिय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुरुष और ब्राह्मणी स्त्री से सूत की उत्पत्ति लिखते हैं, तो फिर उन्हीं दोनों से भूमिहारों की उत्पत्ति लिखते हुये क्या आपको शर्म न आई? क्या इसी बुद्धि से वेदों के भाष्य बने हैं? यदि इस विषय में कोई स्वकपोलकल्पित व्यवस्था करें भी, तो जब आपने स्वयं उसी पुस्तक के ३२ वें पृष्ठ में कान्यकुब्ज या अन्य काश्यपगोत्री ब्राह्मणों की उत्पत्ति भूमिहार (भुंइहार) ब्राह्मणों से लिखी है, तो फिर यहां आकर क्यों अर्थ का अनर्थ करने लग गये? क्या इतना भी विचार न रहा कि हम प्रथम क्या लिख चुके हैं और अब क्या लिखते हैं? क्या आप इन ब्राह्मणों को अपनी पुस्तक में लिखे हुये भूमिहार ब्राह्मणों से भिन्न समझते हैं? क्या ऐसा समझने में आपके पास कोई प्रमाण है? यदि आप की समझ ऐसी ही है, तो फिर अपने को भी उसमें या अन्यत्र लिखेगये कान्यकुब्जों, सर्यूपारियों या गौड़ों से भिन्न समझने में आपको कोई सन्देह ही न होगा। क्योंकि आप उन्हीं ब्राह्मणों में से हैं. क्या इसकी रजिस्टरी या हुलिया आपके पास है और भूमिहार ब्राह्मणों के पास नहीं है?

यदि उस श्लोक में 'भूमिहार्यभवत्' ऐसा लिखा हुआ है तो आपने भूमिहारी अभवत् ऐसा पदच्छेद न करके भूमिहारः अभवत् ऐसा पदच्छेद किस व्याकरण की रीति से किया है? क्या वेदों के भाष्यों की तरह से कोई नया व्याकरण भी आपने ही बना लिया है? क्या इसी लिये विद्यावारिधि की पदवी मिल गई है? अथवा विद्या को डुबोकर रसातल भेजने से ही इस महती पदवी से अलंकृत हुये हैं! या जैसे आपकी और सब बातें कल्पित हैं वैसे ही यह उपाधि भी! आपके वारिधि होने का एक प्रबल प्रमाण यह तो अवश्य है कि इन निर्दोष ब्राह्मणों के लिये कपोलकल्पित कटूक्तिरूप वडवानल का प्रयोग आपने खूब ही किया है और यह बात आपको शोभा भी देती है। क्योंकि ज्वालाप्रसाद ही जो ठहरे! उसमें भी पण्डित और मिश्रजी! और फिर जो आपने भूमिहार का भैंहार अर्थ किया, वह किस प्रमाण और तात्पर्य से यह समझ में नहीं आता। शायद आपके भीतर यह छल भरा हुआ था कि यदि कोई भूमिहार ब्राह्मण हमसे जवाब तलब करेगा और विना प्रमाण होने से मानहानि का दावा हमारे सिर ठोंक देगा, तो इस छल से बच जावेंगे कि हमने तो वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भैंहार जाति के विषय में लिखा है, न कि भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में। परन्तु शोक तो इस बात का है कि आप भैंहार नामवाली जाति बतला नहीं सकते। इसलिये हारकर मान लेना हीं पड़ेगा कि भूमिहार शब्द के अपभ्रंश भुंइहार का ही अपभ्रंश करके आपने वैसा लिखा है।

पाठकवृन्द! हम इस विषय में विद्यावारिधि जी की विशेष बौद्धाररूप सज्जनता का परिचय दिलाते हैं, और विद्यावारिधिपने का भी। इन ब्राह्मणों के ऊपर आपका विशेष अनुग्रह प्रतीत होता है। इसीलिये अपनी अति भयंकर लहरों से इस समाज को बहा देने के लिये जी जान से कटिबद्ध हैं। क्योंकि आप और आपके भाई दोनों ने मिलकर 'कर्नल टाड साहब के राजस्थान' नामक अंग्रेजी ग्रन्थ की हिन्दी टीका और टिप्पणी की है। उसमें भी भूमिहार ब्राह्मणों की खूब ही खबर ली है। सभी इतिहासज्ञों और मनुष्यगणना के विवरणोंके पढ़ने या जाननेवालों को विदित है कि भुइंया, भूमियां अथवा भोमियां नामकी एक जंगली जाति है, जो बिहार के सन्थाल परगने वगैरः प्रान्तों, मिर्जापुर के पहाड़ों अथवा राजपूताने के प्रान्तों आदि में विशेषरूप से पाई जाती है, जो कहीं२ पर राजपुताने वगैरःमें, जहां पर जाट लोग विशेषरूप से पाये जाते हैं, प्रायः उन्हीं में मिली हुई है और अन्यत्र अन्य जंगली जातियों के साथ उसका मेल है। अथवा कहीं २ स्वतंत्र ही है। इसके सिवाय जयपुर के शेखावाटी प्रदेश और अलवर राज्य में बहुत से गौड़ ब्राह्मण भी भूमियां कहे जाते हैं, क्योंकि बड़े बड़े जमींदार हैं। मगर उनका न तो यहां प्रसंग ही है और न विद्या वारिधि का अभिप्राय ही ऐसा है। उसी जातिका विशेषरूप से राजपूताने के इतिहास 'राजस्थान' में कर्नल टाड साहब ने वर्णन किया है और कहीं २ उसका नाम 'भोमियां' (Bhumia) और कहीं २ 'जाट भोमियां' (JatBhomia) लिखा है। परन्तु सबन्धु विद्यावारिधिजी ने कृपाकरके जाट शब्दको तो एक प्रकार से एक बारगी छोड़ही दिया है और भोमियां (Bhomia) शब्दका हिन्दी अनुवाद 'भूमिहार' करदिया है, जिससे लोगों को साफही धोखा हो सकता है। यदि वे लोग अंग्रेजी न पढ़े हों, तो उनकेले खानुसार इन भूमिहार ब्राह्मणों को जंगली जाति ही समझ लेवें। भला भूमियां या भोमियां शब्द की जगह भूमिहार शब्द लिखना कौन बुद्धिमानी है?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शायद आपको किसी कोष में भोमियां शब्द का ऐसा अर्थ मिला होगा। अच्छा तो होता यदि सभी इतिहासों और मनुष्यगणना के विवरणों का हिन्दी अनुवाद करके भूमियां शब्द का भी हिन्दी अनुवाद कर डालते, जिससे लोगों को सन्देह की जगह ही न रह जाती और अन्य जातियों के नामों का मनमाना हिन्दी अर्थ करके जिस जिस से चाहते बदला चुका लेते। अब हम उन दो चार स्थलों को दिखला देते हैं, जहां पर आपने ऐसी कारीगरी की है और वहां का अंग्रेजी ग्रन्थ भी लिखकर दिखला देना चाहते हैं कि आपके हिन्दी अनुवाद का मूल अंग्रेजी ग्रन्थ से कितना सम्बन्ध है, जिससे आपकी योग्यता और विद्यावारिधिता का पता लोगों को भी चलजावे।

कर्नलटाड ने अपने 'राजस्थान' के प्रथम भाग के २०० वें पृष्ठ में जयपुर के इतिहास में ऐसा लिखा है:—

When the tidings of this fatal event were conveyed to Salibahan, for 12 days the ground became his bed. He at length reached the Punjab where he fixed on a spot with abundance of water, and having collected his clansmen around him he laid the foundation of a city which is named after him Salibahanpur. The surrounding Bhumias attended and acknowledged his supremacy. 72 years of the era of Vikrama had elapsed when Salibahanpur was founded upon Sunday the 8th of the month of Bhadon.

इसका अनुवाद मिश्रजी ने स्वरचित हिन्दी 'राजस्थान' के प्रथमाध्याय, द्वितीय भाग, जैसलमेर के इतिहास प्रसंग के ४७० वें पृष्ठ में इस प्रकार किया है:—'जब यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद शालिवाहन तक पहुंचा तब वह महाशोकसमुद्र में मग्न होकर १२ दिन तक पृथ्वी पर सोये और अन्त में उन्होंने पञ्जाब में आकर नदनदी और तड़ागादि से पूर्ण एक देश में सबको इकट्ठा किया और नवीन राजधानी स्थापित करने के उपरान्त अपने नाम के अनुसार उस नगरी का नाम शालिवाहनपुर रक्खा। उनकी नवीन राजधानी के चारों ओर के आदि भूमिहारों ने आकर उनको अधीश्वर स्वीकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया। महाराज विक्रमादित्य के प्रचलित किये संवत् ७२ के भादों के महीने की अष्टमी, रविवार के दिन शालिवाहनपुर नामक राजधानी प्रतिष्ठित हुई थी'।

एक तो इस अनुवाद में मूल ग्रन्थ का भाव ठीक नहीं आया है। दूसरी बात यह है कि 'तब वह महाशोक सागर में मग्न होकर' इत्यादि वाक्य ऊपर से घुसेड़े गये हैं और तीसरी यह कि मूल ग्रन्थ के भूमियां (Bhumia) शब्द का 'भूमिहार' अर्थ जबर्दस्ती किया गया है और उसमें 'आदि' यह विशेषरूप से पेवन्द अपने पास से जोड़ा गया है, जिसमें कुछ छल भरा होगा। अस्तु, अभो और लीला देखिये।

आगे चलकर टाडसाहब २०३ वें पृष्ठ में इस प्रकार लिखते हैं:-

'When Mangal Rao fled from the King his children were secreted in the houses of his subjects. A Bhumia named Satidas, of the tribe of Tak, whose ancestors had been reduced from power and wealth by the ancestors of the Bhatti prince, determined to avange himself, and informed the king that some of the children were concealed in the house of a banker (Sahookar). The king sent the Tak with a party of troops and surrounded the house of Shridhar, who was carried pefore the king where he would put all his family to death, if he did not produce the young princes of Salibahan. The alarmed banker protested that he had no children of the Raja's, for that, the infants who enjoyed his protection were the offspring of a Bhomia, who had fled on the invasion, deeply in his debt. But the king ordered him to produce them, he demanded the name of their village, sent for the Bhumias belonging to it, and not only made the royal infants of Salibahan eat with them but marry their daughters. The banker had no alternative to save

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

their lives but to consent: they were brought forth in the peasant's garb, ate with the husbandmen (Jatt) and were married to their daughters. Then the offsprig of Kulur-Raj became Kulloorea Jatts. Those of MondRaj and Shiva Raj, Monda and Sheora Jatts, while the younger Phool and Kevala, who were Passed as a barber (Nai) and a potter (Khomar) fell into that class.'

विद्यावारिधिजी ने इसका अनुवाद यों किया है:-' जिस समय मंगल राव अपने पिता के राज्य से भाग गये उस समय उनके पुत्रों की रक्षा प्रजा ने गुप्तभाव से की थी। तक्षक जातीय सतीदास नाम का एक भूमियां था, जिसके पूर्व पुरुष गण पुरातन भट्टी राजाओं के द्वारा सामर्थ्य हीन हो अत्यंत दीन दशा में पड़े थे। उसने पिता का प्राचीन बदला लेने की इच्छा से विजय पाये हुये म्लेच्छराज से प्रगट किया कि मंगलराव के कितने हीं पुत्र और कुटुम्ब के मनुष्य इसी नगर में एक महाजन के घर रहते हैं। म्लेच्छराज ने उसके यह वचन सुनकर शीघ्रही अपनी सेना को उसके साथ भेजदिया। सतीदास उस सेना के साथ उक्त श्रीधर महाजन के घर गया और उसको पकड़कर राजा के सन्मुख ले आया। म्लेच्छराज ने श्रीधर से कहा कि यदि तुम शालिवाहन के प्रत्येक राजकुमार को मेरे सन्मुख नहीं लाओगे, तो याद रक्खो कि तुम्हारे कुटुम्ब में एक को भी जीता न छोड़ूंगा। इस पर महा भय भीत होकर महाजन श्रीधर ने विनय कर के म्लेच्छराजा के सन्मुख निवेदन किया कि मेरे यहां राजा का एक पुत्र भी नही है। जो कई बालक मेरे यहां रहते हैं वह एक भूमियां के पुत्र हैं। वह भूमियां मेरे ऋण से बंधा हुआ इस युद्ध के समय भाग गया है। म्लेच्छराज ने महाजन के इन वचनों पर किंचित भी ध्यान नहीं दिया और शीघ्रही बालकों को अपने सन्मुख लाने की आज्ञा दी। जब महाजन श्रीधर ने देखा कि राजकुमारों के प्राणों की रक्षा के और कोई उपाय नहीं है तब उनके प्राणों की रक्षा करने के लिये वह म्लेच्छराजा की आज्ञानुसार कार्य करने में सम्मत हुआ। शीघ्रही यदुवंशी राजकुमार किसान के बालक के वेष में म्लेच्छराजा के सन्मुख लाये गये और म्लेच्छराजा ने उनके साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूमिहारों की कन्या का विवाह कर दिया। इस प्रकार से शालिवाहन के वंश में उत्पन्न सम्पूर्ण राजकुमार जो श्रीधर के घर में थे उनमें कलोर के पुत्र भी कलोरिया जाट, मुंदराज और श्योराज के पुत्र मुंदाजत और शिवराजत नाम से विख्यात हुये। कुमार फूल और कुमार केवला का नाई और कुम्हार के पुत्र कहकर म्लेच्छराजा के सन्मुख परिचय दिया था, इस कारण उन दोनों जनों के वंश वाले उन दोनों श्रेणियों में गिने गये।'

यह अनुवाद मूल ग्रन्थ से प्रायः सम्बन्ध नहीं रखता। बहुत जगह ऊपर से मिला भी दिया गया है, और मूल ग्रन्थ के कितने हीं वाक्य छोड़ भी दिये गये हैं। साथही श्योरा जाट और मुंदा जाट जो मूल में लिखे गये हैं, उनको शिवराजत और मुंदाजत लिखा गया है, अंग्रेजी में जो 'जाट' (Jatt) शब्द लिखा गया गया है उसका 'जत' अर्थ किया है। इसमें छल तो ऐसा है कि इस इतने लेख में मूल ग्रंथ में ३या४ जगह Bhomia (भूमियां) शब्द आया है जिनमें से और जगह तो आपने उसका दूसरा अर्थ न कर केवल 'भूमियां' हीं लिख दिया है, परन्तु एक जगह मध्य में उसका अर्थ 'भूमिहार' कर दिया, जिससे लोग धोखे में पड़ जावें कि उन्होंने भूमियां का अर्थ 'भूमिहार' नहीं किया है। किन्तु सचमुच ही कोई और 'भूमिहार' जाति वहां थी, जिसकी लड़कियों का विवाह शालिवाहन के लड़कों से हुआ। भला इस सज्जनता का कहीं ठिकाना है? आगे चलकर अब फिर 'कर्नल टाड' ने अपने ग्रन्थ के तृतीय परिच्छेद, आमेर या जयपुर के हो इतिहास के ३४१ वें पृष्ठ में बदनसिंह का इतिहास लिखते हुए साफ २ लिखा कि, " And when through the intercession of Jey Singh and guarantee of the Bhumia Jatts he was liberated" अर्थात् 'जब जयसिंह के बीच में पड़ने और अन्य भूमियां जाटों को जिम्मेदारी पर बदनसिंह छोड़ दिया गया' इत्यादि। तो आप वहां भी 'भूमियां जाट' का अर्थ 'भूमिहार जाट' करने में न चूके, जिससे भूमिहार ब्राह्मणों को जाट ही बना डालने में कोई सन्देह न रह जावे। इस प्रकार से उस पुस्तक भर में बहुत सी जगहें ऐसी हैं, जहां पर इन मिश्रबन्धुओं की विचित्र लीला देखने में आती है। कहीं तो आप 'भूमियां' हीं लिख डालते हैं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु कहीं पर उसकी ही जगह 'भूमिहार'। शायद ऐसी चाल चलने में लोगों को पूर्वोक्त धोखा देने के अतिरिक्त आप ने अपने 'जाति-निर्णय' में लिखे गये 'भूमिहार' शब्द पर आक्रमण होने पर उस-से बचने के लिये यह भी उपाय सोचा हो कि हमने तो अन्य ही भूमिहारों के विषय में यह बात लिखी है, न कि भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में, ऐसा कह कर निकल जावेंगे। इससे स्पष्ट है कि विद्या-वारिधि जी भूमिहार ब्राह्मणों की खबर लेने के पीछे जी जान से पड़े हैं। परन्तु विद्यावारिधि महाशय! स्मरण रहे, ब्राह्मणों से लगने से किसी का कल्याण नहीं हुआ। यदि एक भी ब्राह्मण की दृष्टि बदल जावे, तो वारिधि का पता न लगेगा।

अब 'भूमिहारोत्पत्ति' नामक ग्रन्थ के तत्त्वों को देखिये। यह ग्रन्थ डुमरांव के भूतपूर्व पण्डित दुर्गादत्त परमहंस जी के वंशजों के परमप्रिय शाकद्वीपी अक्षयवट मिश्र ने पं० शिवबालक त्रिपाठी के नाम पर लिखा और अपने नाम पर उसका मिथ्या भाषानुवाद करके सीधे सादे चौधरी अवलम्ब राय जी डुमरांव निवासी भूमिहार ब्राह्मण के नाम पर प्रकाशित करवाया है। जिससे उसके विषय में कानून से भूमिहार ब्राह्मण समाज को बोलने की जगह न रह जावे और फिर उक्त परमहंस जी के वंशजों ने हीं चेलों में उसे मुफ्त बांट दिया। प्रथम तो जिस स्कन्दपुराण के ११ वें अध्याय में इस बात को वे बत-लाते हैं, यदि उसी अध्याय में हमें आज मुद्रित पूर्वोक्त पुराण में उसे दिखला देवें तो हमें भी उनकी बुद्धिमत्ता का पता लग जावे। हां, धर्मारण्य माहात्म्य के १० वें अध्याय में इस प्रकार का एक आख्यान आता है। परन्तु उस आख्यान और इस पुस्तक में लिखे हुये आख्यान में बहुत सा अन्तर है। एक तो उस अध्याय में ६० श्लोक मिलते हैं, परन्तु आपकी पुस्तक में ५५ हीं। दूसरी बात यह है कि जिस 'कुचर' शब्द का आप कई जगह प्रयोग इस पुस्तक में करते और उसका अर्थ जबर्दस्ती भूमिहार करते हैं, उसका पता उस ग्रन्थ में है ही नहीं, किन्तु उसकी जगह 'कुमार' शब्द आया है। और जो भी श्लोक आपने लिखे हैं, वे मुद्रित श्लोकों से आधे मिलते हैं. परन्तु आधे नहीं मिलते। इसके अतिरिक्त आप पुस्तक के अन्त में लिखते हैं कि 'इति श्रीस्कन्द पुराणे पातालखंडे धर्मारण्य माहात्म्यवर्णने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding-IKS-MoE-Grant-2

भूमिहारोत्पत्ति वर्णनं नामैकादशोऽध्यायः'। इसका अर्थ यह लिखा है कि 'इति श्रीस्कन्दपुराण के पाताल खण्ड में धर्मारण्य माहात्म्य वर्णन में भूमिहारोत्पत्ति वर्णन नामक ग्यारहवां अध्याय समाप्त हुआ'।

परन्तु हम समझते हैं किइस पुस्तक के लिखने के समय लेखक जी की बुद्धि रसातल में हीं चली गई थी। इसीलिये रसातल के समीप वर्त्ती पाताल खण्डमें लिखी गई यह बात उन्होंने बतलाई है। क्योंकि स्कन्द पुराणमें तो पाताल खण्ड है ही नहीं। जैसा कि लिखा है:—

माहेश्वरोवैष्णव ब्राह्मकाश्यास्त्ववन्तिका नागरमत्र षष्ठम्।
प्राभासिकोविप्रवरेणखण्डाःस्कान्देपुराणेकथिताः सुपुण्याः

अर्थात् 'स्कन्दपुराण में माहेश्वर, वैष्णव, ब्राह्म, काशी, अवन्तिका, नागर और प्रभास ये सात ही खण्ड हैं'। इसीलिये पूर्वोक्त कथा ब्राह्मखण्ड में हीं मिलती है। परन्तु वहां भी अन्त में ऐसा नहीं लिखा है, जैसा कि आप लिखते हैं कि 'भूमिहारोत्पत्ति वर्णन समाप्त हुआ,। किन्तु वहां तो यह लिखा गया है कि इस अध्याय में बनियों को उत्पत्ति और बाडवों (ब्राह्मणों) की सेवा के लिये उनके स्थापन का वर्णन है। जैसा कि लिखा है कि:—

इति श्रीस्कान्दे महापुराणे एकाशीतिसाहस्र्यांसंहितायां तृतीये ब्राह्मखण्डे पूर्वभागे धर्मारण्यमाहात्म्ये वणिक्परिग्रहवर्णनंनाम दशमोऽध्यायः'। अर्थात् 'इक्यासी हजार श्लोक वाले स्कन्द महापुराण के तृतीय ब्रह्मखण्डान्तर्गत पूर्व भाग के धर्मारण्य माहात्म्य प्रसंग में वणिक् लोगों की उत्पत्ति प्रभृति का वर्णन नामक दशम अध्याय समाप्त हुआ'। इसलिये भूमिहारोत्पत्ति लिखना केवल आंख में धूल झोंकना है। इसीलिये उस अध्याय भर में बीसों जगह वणिक् शब्द उन अनुचरों के लिये आया है और उनकी संज्ञा (नाम) गोभुज बतलाई गई है। परन्तु अपने ऐसा यत्न किया है कि बहुत से 'वणिक्' शब्दों को निकाल ही दिया है और यदि दो एक को रक्खा भी है, तो उसका अर्थ बनियां न करके 'भूमिहार' किया है और बहुत से 'वणिक्' शब्दों की जगह 'गोभुज' शब्द, या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'कुबर' शब्द लिखकर इन दोनों शब्दों का अर्थ भूमिहार ही किया है। जैसा कि वहां एक श्लोक यों है :—

अन्नपानादिकं सर्वं समित्कुशफलादिकम् ।
आपूरयन् द्विजातीनां वणिजस्ते गवात्मजाः॥

जिसका अर्थ यह है कि 'कामधेनु द्वारा उत्पन्न किये गये वे वणिक् (बनिये) उन ब्राह्मणों के अन्न, पान, समित, कुश और फल वगैरः लाया करते थे'। परन्तु आप अपनी पुस्तक में उसमें और सब ज्यों का त्यों लिखते हैं, केवल 'गवात्मजाः' इस पद की जगह 'गोभुजाः' लिखते हैं और उसका अर्थ करते हैं कि 'वे सब गोभुज (भूमिहार) दिव्य सुन्दर पवित्र धर्मारण्य में बसकर अन्न, जल, लकड़ी, कुश, पुष्प, फल, मूल आदि पदार्थों को समय २ पर लाकर उन सब ब्राह्मणों का कार्य पूर्ण करने लगे'। इस से पूर्व के श्लोक में भी लिखा है कि, 'वाणिजश्च महादक्षा द्विजशुश्रूषणोत्सुकाः।' अर्थात् 'वे वणिक् बहुत कुशल और ब्राह्मणों की सेवा में उत्कंठित थे'। परन्तु इस 'वणिक्' पद का अर्थ भी आपने 'भूमिहार' ही किया है। इसके बाद लिखा हुआ है कि,

वणिक्पत्नी प्रकुरुते कण्डनं पेषणादिकम् ।

अर्थात् 'उन बनियों की स्त्रियां उन ब्राह्मणों के अन्न कूटती और पीसती थीं'। परन्तु आप लिखते हैं कि 'उन गोभुजों (भूमिहारों) की स्त्री ब्राह्मणों के गृह में कूटना पीसना आदि सकल गृह कार्यों से सेवा करने लगीं'। इससे प्रथम ही एक स्थान में लिखा गया है कि:-

गृहीत्वा प्रददौ सर्वा वणिग्भ्यश्च तदा नृप।

अर्थात् 'हे राजन् गन्धर्वराज ने सभी कन्यायें उन वणिकों (बनियों) को दे दीं'। परन्तु आप 'वणिग्भ्यश्च' इस शब्द की जगह 'गोभुजेभ्यः' ऐसा पद लिखकर ऐसा अर्थ करते हैं कि 'हे राजन् उन सब कन्याओं को लाकर उन गोभुजों (भूमिहारों) के साथ शिवजी ने विवाह कर दिया'। तात्पर्य यह है कि उन ब्राह्मणों की सेवा के लिये ३६००० वणिक् उत्पन्न किये गये थे, जिनका नाम गोभुज था। इसीलिये 'गोभुजा ये वणिग्वराः' 'गोभुजेभ्यः प्रदीयताम्'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वगैरः वाक्यों में 'गोभुज बनियों को दे दो' इत्यादि लिखा गया है और उसी धर्मारण्य माहात्म्य के ३२ वें अध्याय में स्पष्ट शब्दों में वैश्य लिख दिया है। जैसा कि—

षट्त्रिंशच्च सहस्राणि वैश्या धर्मपरायणाः।
आर्यवृत्तास्तु विज्ञेया द्विजशुश्रूषणे रताः॥ ४० ॥

अर्थात् 'उस धर्मारण्यमें धर्म परायण, परम सदाचारी ३६००० वैश्य थे और वाडवों (ब्राह्मणों) की सेवा में दिन रात लगे रहते थे।' इसी लिये उस अध्याय भर में वणिक् और गोभुज शब्द लगातार उनके लिये आते गये हैं। परन्तु आपने सभी जगह अपनी अगाध पण्डिताई से उनका अर्थ 'भूमिहार' किया है। और कहीं कहीं कुचर शब्द भी ऊपर से डालकर उसका अर्थ भी ऐसा ही किया है। इससे आपकी सज्जनता और ब्राह्मणता का पूर्ण परिचय मिलता है।

अच्छा पण्डितजी! भला यह तो बतलाये कि वणिक्, गोभुज और कुचर इन तीनों शब्दों का जो आपने भूमिहार अर्थ किया है, उसमें कोई कोष, व्याकरण अथवा निरुक्त आदि प्रमाण हैं, या केवल गपोड़ा ही हांका गया है। यदि ऐसा ही मनमाना अर्थ करना था, तो उसका 'मिश्र' अर्थ करके अपने हीं वंश में क्यों न लगा लिया? दूर तक परेशान होने की आवश्यकता ही क्या थी? यदि शायद आपने ऐसा अर्थ लगाया हो कि गो + भुज अर्थात् पृथ्वी के पालने वाले, और कु + चर पृथ्वी (भूमि) को प्राप्त करने वाले। क्योंकि गो नाम पृथ्वी का है और 'भुज' धातु पालने अर्थ में है। इसी प्रकार 'कु' नाम भूमि का है और 'चर' धातु का अर्थ 'गति' है, जिससे प्राप्ति भी ली जाती है। तो फिर गो नाम गाय का है और भुज धातु का भोजन भी अर्थ है। अर्थात् गौ को ही खा जाने वाला कसाई ऐसा हीं अर्थ क्यों न कर लिया? इसीलिये तुलसीदासजी ने भी 'मरु मालव महिदेव गवाशा' इस जगह गवाश का अर्थ गौ को भक्षण करने वाला कसाई किया है। इससे भी अच्छा होता कि उसका अर्थ ऐसा कर लेते कि कु + चर अर्थात् पृथ्वी में घूमने वाला, यानी भिक्षा वगैरः के लिये जो दिन रात इधर उधर घूमा करे ऐसा ब्राह्मण हीं कुचर कहलाता है। इसीलिये सत्यनारायण की कथा में लिखा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि, 'ब्राह्मणोऽतिदरिद्रोऽहंभिक्षार्थंभ्रमणं मम'। अर्थात् 'मैं अति दरिद्र ब्राह्मण भिक्षा के लिये पृथ्वी में घूमा करता हूं'। तो ऐसा करने से आप ही 'कुचर' कहलाते और वह वृत्तान्त आपके ही वंश का हो जाता, जिससे आपको अपने वंश का इतिहास भी पृथक् न लिखना पड़ता। इसी प्रकार से गो भुज का भी अर्थ गाय की भुजा या पूंछ पकड़ने वाला (क्योंकि गोदान के समय आपके भाई पुरोहित लोग ऐसा किया, कराया करते हैं) ऐसा करके अपने ही वंश के विषय में उसे क्यों न लगा लिया?

अथवा वे गोभुज वणिक् पृथिवी को फाड़कर बाहर आये थे, इसीलिये गोभुज कहलाते थे। क्योंकि 'भुज' धातु का अर्थ 'तोड़ना' भी होता है और देवताओं ने हीं उन्हें भूमि से इस प्रकार निकाला था। और आपका याचक समाज भी भूसुर कहलाता है, जिसका वही अर्थ हो सकता है कि भूमि से देवताओं द्वारा उत्पन्न किये (पाये) गये। क्योंकि सृ धातु का गति अर्थ है और गति कहते हैं प्राप्ति को भी। इसलिये वे सभी बातें आप में हीं घट जावेंगी। आप दूसरे की उत्पत्ति के लिये क्यों व्यग्र हैं? इसीलिये मनमाना अर्थ करने से आप ही का ठिकाना न लगेगा। त्रिपाठी और मिश्र जी! जैसी विना सिर पैर की मिथ्या रचनायें आप लोग इस ब्राह्मण समाज के विपरीत किया करते हैं, वैसी ही सहस्रों रचनाओं का आपके समाज या वंश के विषय में करना कुछ कठिन नहीं है, जिन्हें देखते ही आपकी सुबुद्धि ठिकाने आ जावे। परन्तु हम ऐसी सज्जनता करना नहीं चाहते। ये सब बातें आप ऐसे ही पण्डितों और सज्जनों को मुबारक हों।

जैसी दृष्टि आपने गोभुज वणिकों के ऊपर दी है, वैसी हो यदि उन ब्राह्मणों पर दृष्टि दी होती, जिनकी सेवा के लिये वे वणिक् उत्पन्न किये गये, तो यह होता कि अयाचक ब्राह्मणों की सच्ची स्थिति का परिचय आपको अवश्य ही लग गया होता। क्योंकि हम प्रथम प्रकरण में हीं यह अच्छी तरह से दिखला चुके हैं कि वे सभी ब्राह्मण धर्मारण्य का राज्य करते और याजन, अध्यापन एवं प्रतिग्रह से रहित होकर इन भूमिहार ब्राह्मणों के ही सदृश त्रिकर्मा थे। और आपका पुरोहित समाज तो त्रिकर्मा होना स्वीकार नहीं करता और वास्तव में है भी नहीं। इसलिये वे धर्मारण्यस्थ ब्राह्मण भूमिहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मणों के पूर्व पुरुष न थे तो और कौन थे ? यह बात भी हम प्रबल प्रमाणों द्वारा पूर्व प्रकरण में हीं सिद्ध करचुके हैं, कि उन्हीं ब्राह्मणों के वंशजों का प्रथम भूमिहार नाम या विशेषण पड़ा। यह भी तो आप विचारें कि प्रथम घर दिया जलाकर पश्चात् मस्जिद में जलाया जाता है। इसलिये भूमिहार ब्राह्मणों की उत्पत्ति की चिन्ता में आप क्यों पड़े हैं ? प्रथम सर्यूपारियों, शाकद्वीपियों या कान्यकुब्जों की उत्पत्ति का तो पता लगाइये। क्योंकि वेदों, पुराणों या स्मृतियों में तो केवल ब्राह्मण की ही उत्पत्ति लिखी गई है। वहां तो सर्यूपारी, शाकद्वीपी या कान्यकुब्ज शब्द का नाम भी नहीं है और विशेषतः शाकद्वीपी का।

अस्तु, यह तो हुई पं० दुर्गादत्त परमहंस जी के वंशजों, अथवा प्रियपात्रों की काली करतूत। अब स्वयं परमहंसजीकी ही पण्डिताई और परमहंसता देखिये। आप के बनाये हुये स्वकीय 'दिग्विजय' नामक ग्रन्थ और उसकी मिथ्या उक्तियों का परिचय भूमिका ही में अच्छी तरह से दे चुके हैं। अब केवल यही दिखलाना है कि आप ने अपनी गुप्त लेखनी से भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में क्या लिखा है और वह कहां तक सत्य है। आपकी उस पोथी का नाम है 'श्रीमद्योगिवर्य विप्रराजेन्द्र दिग्विजय'। जो डुमरांव में सम्वत् १९४१ में छपी है। उसके १८ वें पन्ने में ऐसा लिखा हुआ है—

रक्षणार्थं च विप्राणां भूमिहारोऽपिचाभ्यगात् ॥२१॥

अर्थात् 'इसी प्रकार से ब्राह्मणों की रक्षा के लिये भूमिहारों की भी उत्पत्ति हुई'। इसी श्लोक की टीका करते हुये लिखते हैं:—

एवं परशुरामानुकम्पया भूमिहारोऽप्यभूदित्याह रक्षणार्थमिति। तदुक्तंस्कान्दे धर्मारण्य खण्डे,तद्यथा 'अनुतान्ब्राह्मणान्दृष्ट्वा निश्शिरस्कान्कृतान्भुवि। कृतवान्यादवन्यो हि ततः प्राह पलायितान् ॥ विप्रा वयं क्षमस्वागो भवतस्तान्मुनीश्वरः। भवध्वं ब्राह्मणा यूयं धर्मतो विप्ररक्षकाः ॥' इत्यादिना तत्रैव विस्तरः।

इसका भावार्थ यह है कि 'इसी प्रकार से भूमिहार लोग भी परशुराम जी की ही कृपा से उत्पन्न हुये, इसी बात को मूल ग्रंथ में 'रक्षणार्थंच' इत्यादि श्लोक द्वारा दिखलाया है कि जब परशुरामजी ने बहुत से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्षत्रियों का सिर काट उन्हें भूमि पर गिरा दिया, तो उस समय बहुत से क्षत्रियों ने अपने को ब्राह्मण बताकर भागना शुरू किया और कहा कि हम लोग ब्राह्मण हैं, हमारा अपराध क्षमा कीजिये। इस पर परशुरामजी ने उनसे कहा कि अच्छा, जाओ, आज से तुम लोग ब्राह्मण धर्मवाले हो जाओ और ब्राह्मणों की रक्षा किया करो, इत्यादि वार्त्ता उसी जगह विस्तार पूर्वक लिखी गई है।

इस कथन में बड़ी बड़ी विचित्रतायें भरी हुई हैं। प्रथम तो यह है कि आप भूमिहार ब्राह्मणों की उत्पत्ति या स्थिति इस प्रकार की लिखते हैं, परन्तु आपके ही प्यारे सम्बन्धी लोग इससे विपरीत ही लिखते हैं। इसलिये प्रथम आप लोग घर में हीं निपटेरा कर लेवें कि दोनों में कौन झूठा है और कौन सच्चा। क्योंकि एक को तो अवश्य ही मिथ्याभाषी मानना होगा, क्योंकि एकही बात दो विरुद्ध प्रकारों की हो ही नहीं सकती। आपके मुकाबिले में तो उनकी ही बात मानी जा सकती है, क्योंकि उन्हों ने कुछ गलत या सही वहां का ग्रंथ तो लिख दिया है, चाहे अर्थ करने में भले हो अनर्थ कर गये हैं। इसीलिये उनकी बात पहले ही खण्डित हो चुकी है। परंतु आपके पूर्वोक्त कथन में तो कुछ प्रमाण हीं नहीं है। आप पूर्वोक्त स्वकपोल कल्पित श्लोकों को 'धर्मारण्यखंड' के बतलाते हैं, परन्तु वहां परशुरामजी का प्रसंग-मात्र भी नहीं है। तो फिर उन श्लोकों का वहां पता कैसे लग सकता है? धर्मारण्य माहात्म्य नामका एक प्रकरण स्कन्दपुराण के ब्रह्म खंड में है, न कि धर्मारण्य खंड नाम का कोई खण्ड स्कन्दपुराण में है, जैसा कि प्रथम हीं दिखला चुके हैं। उस धर्मारण्य माहात्म्य में भी केवल ४० अध्याय हैं, जिनमें भगवान रामचन्द्रजी की धर्मारण्य में यात्रा और ब्राह्मणों का विशेष रूप से वर्णन है। वहां तो परशुरामजी का कोई भी प्रसंग आया ही नहीं। हां, उसी पुराण के केवल नागर खंड में एक जगह हाटकेश्वर माहात्म्य वर्णन प्रसंग से परशुराम जी की लीला का वर्णन आया है, जैसा कि प्रथम प्रकरण में दिखला चुके हैं। परन्तु आपके दुर्भाग्य से वहां भी आपके इन कल्पित श्लोकों का पता नहीं है। बल्कि जो कुछ आपने लिखा है, उससे बिल्कुल विपरीत ही वहां पाया जाता है। जैसा कि प्रथम हीं दिखला चुके हैं कि परशुरामजी ने अपनी दारुण प्रतिज्ञा की रक्षा के लिये युवा, वृद्ध,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रोगी, बालक और गर्भस्थ बालक तक को भी मारडाला है, जिससे कोई भी बचने न पावे। इसी लिये फिर ब्राह्मणों द्वारा क्षत्रियों की बची हुई स्त्रियों ने लड़के पैदा किये हैं। परन्तु उनका भी पुनः उसी प्रकार से नाश किया है। इसी तरह २१ वार तक परशुराम जी ने किया। यही वार्त्ता इसी प्रकार ब्रह्म वैवर्त्त पुराण के गणेशखण्ड में लिखी हुई है। फिर नहीं मालूम कि परमहंस महोदयजी को इसके विपरी लिखने का साहस क्यों कर हुआ?

चाहे पूर्वोक्त बातें वहां न भी लिखी रहें, परन्तु आपकी बातें तो सभी मानी जातीं, यदि आपके लिखे श्लोक वहां मिल सकते। आपको इतना विचार नहीं, कि जिस दारुण प्रतिज्ञा के लिये परशुराम जी को महादेव जी प्रभृति ने बहुत ही रोका, जैसा कि ब्रह्मवैवर्त्त के देखने से विदित होता है। परन्तु उन्होंने न माना और यही कहा कि अब तो प्रतिज्ञा करही चुके। उसी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने पर यदि कोई मिथ्या ही कह देवे कि हम क्षत्रिय नहीं हैं तो वे कैसे मान सकते थे? क्या वे आपकी तरह योगी न थे? या अल्पज्ञ ही थे, जिससे ब्राह्मण कहने वाले क्षत्रियों को न पहचाना? और यदि उन्होंने अपने को ब्राह्मण ही कहा, तो फिर, जैसा कि आप लिखते हैं, उन्हें भागने की क्या आवश्यकता थी? क्या उन्होंने ब्राह्मणों के भी मारने का प्रण किया था? क्या ऐसी दशा में भी परशुरामजी ईश्वर होकर उन्हें न पहचान सके, जब कि सामान्य मनुष्य भी पहचान सकता है? सम्भवतः वे आपके सदृश योगिराज न रहे हों। उन्होंने 'तुम लोग ब्राह्मणधर्म वाले हो जाओ' ऐसा कह दिया, और ईश्वर थे ही, और साथही, वह सत्ययुग या त्रेता का समय था। तो उस समय तो बहुत लोगों की जातियां तपोबल या किसी के वरदान से बदल भी सकती थीं, जिसके लिये शतशः दृष्टान्त पुराणों में भरे पड़े हुये हैं और व्यास वसिष्ठादि की उत्पत्ति के विषय में उन्हीं पुराणों में विचित्र आख्यान दिये गये हैं और उन्हीं के वंशज होने को दम आप लोग भरते हैं। तो फिर भूमिहार ब्राह्मणों में, आपका कथन स्वीकारकर लेने पर भी, अपने से कौन कमी देखते हैं, जिसके लिये उनके ऊपर इतना कटाक्ष है? यदि आप विचारें, तो ऐसा भी मान लेने पर आप लोगों की उत्पत्ति से उनकी उत्पत्ति अच्छी ही ठहरेगी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विचार से तो यही प्रतीत होता है कि जिन क्षत्रियों को परशुरामजी ने ब्राह्मण कहा, वे आपही लोग हैं। क्योंकि उन्होंने उनके लिये यह आज्ञा दी थी कि तुम लोग ब्राह्मणों की रक्षा करना, और वह धर्म आप में हीं पाया जाता है। क्योंकि आपका यह मिथ्या दिग्विजय केवल इसीलिये रचा गया है कि जिसमें पुरोहितों की ऐसी प्रशंसा की जावे, कि जब तक सृष्टि रहे तब तक संसार उनकी पूजा ही करता रहे, चाहे वे कैसेहू पतित हो जावें। भला इससे बढ़कर ब्राह्मणों की रक्षा और क्या हो सकती है? जैसे अपने भानमती के पिटारे से आपने ये कल्पित श्लोक निकाले हैं, वैसे ही श्लोक यदि हम भी आपके वंश के विषय में गढ़कर लिख देवें और उनका पता भी बतलावें कि पद्म या स्कन्दपुराण के गप्प खंड में ये श्लोक लिखे गये हैं, तो आपको भी उन्हें मानकर हवा खानी होगी। हम अच्छी तरह से जानते हैं कि आपके इस विष-वमन का एक मात्र कारण यही है कि भूमिहार ब्राह्मणों से ही आपके वंश को विशेष रक्षा होती है। मगर आप लोग रक्षा के पात्र नहीं हैं। इसलिये आप लोगों को भूमिहार ब्राह्मणों का मान लेना क्या हो गया, गोया सांप को दूध का पिलाना। इसी लिये उसके बदले में आप काटने के लिये सपरिवार कटिबद्ध हैं और बीसों प्रकार की मिथ्या रचनायें ऐन्द्रजालिक की तरह किया करते हैं। जिससे सर्वदा के लिये ये लोग आपके पशु बने रहें। परन्तु अब आपका यह छल नहीं चलने का। क्योंकि आपकी सज्जनता और परमहंसता का पता लोगों को चल गया।

अब हम पाठकों को किसी दूसरे मिथ्या दिग्विजय का हाल सुनाते हैं। उसकी भी पोपलीला देखना चाहिये। इस पवित्र पुस्तक का शुभ नाम है 'जगतराज दिग्विजय', जो सम्वत् १९६० में चरखारी खास प्रेस में छपी है। इसके रचयिता हरिकेश कवि महाशय हैं। हरिकेश जी ने पूर्वोक्त दुर्गादत्त परमहंस का ही अनुकरण किया है और उन्हीं की बातों को अपनी पोथी में भी उतार उसे पवित्र किया है। आप अपनी इस पोथी के १६९, १७० और १७१ पृष्ठों में सम्वत् १७७७ या सन् १७२०ई. में जगतराज की काशी यात्रा का वर्णन करते हुये लिखते हैं कि उनके काशी में पहुंचने पर काशिराज उनसे आकर मिले, और उसी प्रसंग में परशुरामजी वाली पूर्वोक्त बात को इस प्रकार लिखते हैं:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दो०—काशी नृप द्विजकुल करण, मिल्यो आय अगवान।
दै अशीश कर शीश धरि, भेंट्यो जगत दिमान ॥१०१॥

चौपाई।

कृत जगत राज सब पाहीं। ये द्विज कै क्षत्रिय को उ आहीं॥
अंगदकह्योमर्म सुनिलीजै। इन नृपकोद्विजआसनदीजै॥४०२॥
परशुराम क्षत्रिन प्रति कोपे। क्षत्र धर्म क्षत्रिन के लोपे॥
छद्मनविप्ररूपधरिलीन्ह्यों। जामदग्न्य प्रतिआशिषदीन्ह्यों।
तब ते ये भुवहार कहाये। जबते क्षत्रिय धर्म दुराये ॥४०३॥

दो०—क्षत्रिय ते भूसुर बने, तब ते ये महराज।
अब करुणा करि दीजिये, आपहुइनको राज ॥४०४॥

इस जगह कई बातें विचारने योग्य हैं। एक तो यह कि दुर्गादत्त की ही नकल की गई है, इसलिये उसी के खण्डन से इसका भी खण्डन हो गया। क्योंकि इसमें प्रमाण हीं नहीं है। दूसरी बात यह है कि जिस सन १७२० ई० का हाल हरिकेश ने लिखा है, उस समय काशी का राजा मुगल बादशाह महम्मदशाह या और कोई था। भूमिहार ब्राह्मणों को काशी का राज्य राजा मनसारामजी के समय में सन् १७३० में या उसके बाद १७३२, १७३३ या १७३४ में मिला है। यद्यपि ठीक तिथि में मत भेद है, तथापि १७३० के बाद ही मिला है इसको तो सभी इतिहास लिखने वाले मानते हैं और बलवन्त नामे में, जैसाकि दिखला चुके हैं, १७३३ या ३४ ई० लिखा गया है। इसलिये सिवाय हरिकेश कवि के स्वप्न या मनोराज्य के उस लेख को और क्या कहना चाहिये? तीसरी बात यह है कि जगत राज कौन से चक्रवर्त्ती राजा थे, जो काशी में आकर काशीराज को राजतिलक देने लगे? और उन्हें राजतिलक देने का कौनसा अधिकार था? उस समय काशी का राज्य तो मुगल बादशाहों के ही हाथ में था। सब से बड़ी बात तो यह है कि यदि उस समय कोई काशी का राजा हिन्दू था, तो उसका नाम उन्हों ने क्यों न लिख दिया? इस लिये ये सब केवल मिथ्या बातें लिख कर कवि ने अपनी अभिज्ञता और सज्जनता का परिचय मात्र दिया है! इसके अतिरिक्त जब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वयं ही अपने कल्पित काशीराज को 'द्विजकुलकरण' अर्थात् 'ब्राह्मण कुल में करण के सदृश दानी' और 'द्विज' या 'भूसुर' अर्थात् 'ब्राह्मण' लिखते हैं, क्योंकि उनके ग्रन्थ में वहां 'द्विज' पद ब्राह्मण का ही वाचक है। इसीलिये राजा ने पूछा भी है कि ये क्षत्रिय हैं या द्विज अर्थात् ब्राह्मण हैं? तो फिर इस विषय में विवाद ही क्या हो सकता है? क्योंकि ऐसा तो सभी ब्राह्मणों के विषय में पुराणों में मिल सकता है। हरिकेश कवि कोई ऋषि या सर्वज्ञ तो थे ही नहीं, कि विना प्रमाण के ही उनका कहा मान लिया जावे और परशुराम वाले इस आख्यान में कोई भी प्रमाण नहीं मिलता, जैसा कि सिद्ध कर चुके हैं। यदि ऐसे विना प्रमाण के ही गाल बजाना है तो हरिकेश के भी बापदादों के विषय में हम वैसे वैसे बहुत से कल्पित दिग्विजय लिख सकते हैं।

भूमिहार नाम पड़ने का कारण उन्होंने जो कुछ बतलाया है वह क्या ही बुद्धिमत्ता से पूर्ण है! क्यों महाशय जी! क्षत्रिय का वेष छिपा कर ब्राह्मण वेष धारण कर लेने और परशुराम जी को आशीर्वाद देने से भूमिहार नाम कैसे पड़ गया? हां ऐसा हो सकता था, कि भूमि युद्ध स्थल को कहते हैं, इसलिये यदि वे लोग लड़ते लड़ते वहां हारकर कट मरते तो भूमिहार नाम पड़ भी सकता था। क्योंकि इस प्रकार जो लड़कर युद्ध क्षेत्र में प्राण देता है उसे कहा करते हैं कि अमुक पुरुष 'खेत हार गया' अथवा 'खेत रहा'। परन्तु आप तो ऐसा कहते ही नहीं। यहां तक कि भागना भी बताते नहीं, किन्तु छलमात्र बतलाते हैं, जिस छलको आपके मत से ईश्वरावतार परशुरामजी जान न सके। इससे तो यह भी विदित होता है कि आप महान नास्तिक हैं। क्योंकि ईश्वरों की अनभिज्ञता की बातें लिखा करते हैं, जिनका प्राचीन ग्रन्थों में कहीं भी नाम तक नहीं है।

एक प्रश्न हम आप से और करते हैं, कि यदि भूमिहार नाम त्रेता या सत्युग का है, तो फिर इसे पुराणों और स्मृतियों में अवश्य आना चाहिये, जैसे चन्द्रवंश, सूर्यवंश अथवा कश्यप, वसिष्ठ और गौतम आदि गोत्रों का वर्णन सभी जगह आया करता है। परन्तु भूमिहार शब्द तो केवल आपकी ही पोथी में इस प्रकार मिलता है। इसलिये उसे ही आप वेद और स्मृति मान लेवें तो भले ही मान सकते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु हम अथवा विवेकी लोग तो केवल यही कहेंगे कि वह तो केवल इन्द्रजाल की टोकरी है, जिसमें से ऐसी अलौकिक लीलायें निकला करती हैं, जिनका दूसरी जगह नाम या निशान भी नहीं है।

अब 'विशेनवंशवाटिका' नाम की पुस्तक का विचार करते हैं, जो सन् १८८७ में खड्गविलास प्रेस बांकीपुर में बाबू रामदीन सिंह द्वारा छपवाई गई है और जिसके रचयिता मझौली क्षत्रिय राजवंश के पुरुष लाला खड्गबहादुर मल जी हैं। इस पुस्तक का बहुत सा परिचय भूमिका ही में दिया जा चुका है। अतएव अवशिष्ट अंश का ही विचार यहां करेंगे। आप को किसी कारण से या स्वाभाविक ही भूमिहार ब्राह्मणों से वैर था, इसलिये उसका बदला चुकाना चाहते थे। परन्तु सभी कामों के लिये बुद्धि की अपेक्षा होती है, इसलिये आपको सफल मनोरथ होने में चूकना पड़ा, जैसा कि अभी विदित हो जावेगा। आप उस पुस्तक के ४५ वें पृष्ठ में लिखते हैं कि:—

मयूरभट्ट ने सामवेद में अधिक परिश्रम किया था। एक बार उन्होंने अयोध्या की यात्रा की। उस समय वहां श्रीरामचन्द्र के वंश वाले राज्य करते थे। राजा ने इनकी विद्या और तपस्या देख प्रसन्नता पूर्वक अपनी कन्या सूर्यप्रभा का (जिसका प्रण था कि किसी योग्य पुरुष से ब्याही जाऊं) इनके संग ब्याह किया। फिर राजगुरु ने (जो वसिष्ठ कुल के ब्राह्मण थे) अपनी कन्या नागसेनी को भी उन्हीं से ब्याह दिया। इनकेसंग एक कुर्मिनी दासी भी आई। कुछ दिनों बाद मयूरभट्ट ने गाधि कुल के चन्द्रवंशी राजा की कन्या हय कुमारी से तीसरा ब्याह किया। प्रथम स्त्री (सूर्यप्रभा) से विश्वसेन उत्पन्न हुए, जो विश्वेन कुल के प्रथम पुरुष थे। दूसरी स्त्री (नागसेनी) से नागेशभट्ट वा नागेश्वरमिश्र हुये, जो मिश्र पयासी के प्रथम पुरुष थे। तीसरी स्त्री (हयकुमारी) से चक्रसाहि वा बाघम्बरसाहि हुए, जो बगौछिया भूमिहार के प्रथम पुरुष थे, इत्यादि। यह जो कुछ हमने सुना था सो लिख दिया।

इस लेख में कई बातें विचारणीय हैं। प्रथम तो यह देखना चाहिये कि सूर्यवंशीय लड़की से विशेन क्षत्रिय और चन्द्रवंशीय से बगौछिया भूमिहार ब्राह्मण हुए, यह कहां तक सत्य है। इस लेख में विश्वास कैसे हो सकता है कि दोनों कन्यायें जब क्षत्रिय ही जाति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की थीं, तो उनमें से एक की सन्तान तो क्षत्रिय हुई और दूसरे की भूमिहार ब्राह्मण ? क्या यह कभी हो सकता है कि एक ही प्रकार के क्षेत्र में एक ही प्रकार के बीज बोये जावें, परन्तु उनके वृक्ष भिन्न भिन्न जाति के हो जावें ? आपने इसमें कौन सा कारण दिखलाया है कि जिससे दोनों के वंशज दो होगये? अथवा उलट पलट क्यों न होगया? चन्द्रवंशीय कन्या के ही वंशज क्षत्रिय क्यों न होगये और सूर्यवंशीय के भूमिहार ब्राह्मण ? यदि आप का ऐसा तात्पर्य हो कि भूमिहार को भी हम क्षत्रिय ही मानते हैं। सो तो नहीं कहा जा सकता। क्योंकि भूमिहार ब्राह्मण शिरोमणि द्विजराज श्रीकाशिराज को आप स्वयं ही ब्राह्मण स्वीकार करते हैं। जैसा कि उसी 'विशेन वंश वाटिका' के २४ वें पृष्ठ में आप ने यह स्पष्ट शब्दों में लिखा दिया है कि:—

सरवार देश में पयासी, पिण्डी और पिपरा मुख्य स्थान हैं। इसी पिपरा के गौतम मिश्र के वंश में वर्त्तमान काशिराज भी हैं।

इसलिये आपको प्रथम अपनी बुद्धि की दवा कर लेनी थी और पीछे ग्रन्थ लिखना उचित था। यह भी देखना चाहिये कि जब एक विवाह उन्होंने याचक दलवाले ब्राह्मण की कन्या से किया, दूसरा क्षत्रिय कन्या से और उनकी तीसरी स्त्री कुर्मिनी थी, तो एक चौथी स्त्री फिर क्यों क्षत्रिय कन्या हो सकती थी ? इसलिये वह अवश्य ही दूसरे ब्राह्मण दल अर्थात् अयाचक ब्राह्मण की ही रही होगी, यही बात मानी जा सकती है। साथ ही यह भी विचारणीय है कि ब्राह्मण हो कर भी मयूरभट्ट की अधिक स्त्रियां अन्य अर्थात् क्षत्रिय जाति की थीं, यह बात कभी भी मानी नहीं जा सकती। बल्कि बलात् यही मानना होगा कि उनकी दो स्त्रियां ब्राह्मणी थीं और तीसरी क्षत्रिया कन्या। कोई मनुष्य किसी जाति का होवे, उसकी अधिक स्त्रियां अपनी हीं जाति की ही हुआ करती हैं, चाहे वह विवेकी भी न हो। परन्तु मयूरभट्टको आप परम विवेकी, तपस्वी और ऋषि मानते हुये भी उनके विषय में ऐसा लिखते हैं, जिससे उनकी अत्यंत अधमता सिद्ध हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि आपने ऐसा लिखते समय विचार से काम न लेकर केवल द्वेष या स्वार्थान्धता ही से काम लिया है। इसीसे उस पटल ने आपके ज्ञान चक्षु को आच्छादित कर दिया।

आप तो यह लिखते हैं कि मैं ने लोगों से जो कुछ सुना था वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिख दिया। परन्तु हम आप से ही यह बात पूछते हैं कि इस विषय में अंग्रेजों ने जो कुछ लिखा है, क्या उनके घर इस बात के कोई प्राचीन या उस समय के प्रणीत ग्रन्थ हैं या थे? उन्होंने भी तो यहां पर सुन कर ही लिखा है। बल्कि आप रागद्वेष के मारे कुछ नई बात गढ़कर भी लिख सकते हैं, अथवा लिखी ही है, लेकिन वे लोग तो केवल इतिहास प्रेमी होने के कारण अच्छी तरह खोज पूछ कर जैसा सुनते या पाते हैं वैसाही लिख देते हैं। इसीलिये जन श्रुति का आदर जैसा वे करते हैं वैसा हम लोग नहीं करते। इसीलिये जाति के विषय में यहां जो कुछ भी उन लोगों ने लिखा है केवल जनश्रुतियों के ही आधार पर। अब आप विचारिये कि उन लोगों ने इस विषय में आया वैसोही जन श्रुति बतलाई है, जैसी आप बतलाते हैं, अथवा आप से विलक्षण हीं वैसी ही बतलाई है, जैसा कि इस विषय में हम अभी अपना अनुमान दिखला चुके हैं। इस विषय में हम आप के ही ग्रन्थ को प्रमाण देते है, जिसमें आप स्वयं ही इलियट साहब की सम्मति दिखलाते हुए यह लिखते हैं, कि जिससे बाघम्बरसाहि उत्पन्न हुये वह भूमिहार ब्राह्मण की स्त्री थी। जैसा कि उसी विशेन वंश वाटिका के ४१ वें पृष्ठ में आप इलियट साहब की सम्मति यों लिखते हैं:—

विशेनवंश में सलेमपुर और मझौली के राजा मुख्य माने जाते हैं। इस वंश की जड़ मयूरभट्ट थे, जिनके अनेक पूर्व पुरुष नवापार के आसपास (जिसे अब परगना सलेमपुर मझौली कहते हैं) तपस्या करते थे। मयूरभट्ट यद्यपि एक ऋषि थे, तथापि राज्य प्राप्त करने के उत्साह से रहित न हो सके और काशी की यात्रा के पश्चात् हाथ में कृपाण धारण कर गंगा और बड़ी गण्डक (नारायणी) के मध्य की पृथिवी का अधिकांश अपने अधिकार में कर लिया। मयूरभट्ट की चार स्त्रियां थीं। जिनमें एक राजपुत्री से विश्वसेन उत्पन्न हुये, जिनके नामानुसार विश्वेन शब्द प्रचलित हुआ, जो विशेन कुल के प्रथम पुरुष थे। भूमिहारिन से बाघम्बरसाहि हुये, जिनके वंश में कुआरी (हथुआ) और तमखुही राज हैं। ब्राह्मणी से नागेश हुये, जिनके वंशवाले परगना सलेमपुर मझौली में थोड़े से गांवों के जमींदार हैं। कुर्मिनी से वह पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसके वंशवाले स्थान घोसी जिला आजमगढ़ में रहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इससे स्पष्ट है कि आप आपही अपना खण्डन करते हैं। इसके अतिरिक्त मिस्टर नेविल के संयुक्त प्रान्त के गजेटियर में भी ऐसा ही लिखा है। गोरखपुर के गजेटियर के ११०, ११७ वें पृष्ठों में इस प्रकार लिखा हुआ है:—

The early history of the house of Majhauli is lost in the mist of antiquity. The founder is traditionally said to have been an ascetic, bearing the name of Mayur or Mevar, and the story goes that he married three wives of different castes, a Brahmani, a Rajputni and a Bhumiharini, while a further legend states that he kept a Kurmi concubine. From their offspring sprang all the great families of Gorakhpur and the neighbouring country. The house of Tamakhuhi claims descent from the Bhumiharini wife of Mayur.

इसका भाषानुवाद यह है कि 'मझौली राज का प्राचीन इतिहास पुराने समय के अन्धकार में (कुहरे में) ला पता हो गया है। इसके मूल पुरुष की किंवदन्ती एक तपस्वी के विषय में है, जिसका नाम मयूर या मेवार भट्ट था। वह किस्सा इस प्रकार का है कि उसकी तीन विवाहिता स्त्रियां थी, जिनमें से एक ब्राह्मणी, दूसरी राजपूतनी और तीसरी भूमिहारिन। यह भी जनश्रुति है कि उसके यहां एक कुर्मिनी रखनी भी थी। इन्हीं की सन्तानों से गोरखपुर और उसके पास के बड़े बड़े घराने हुये हैं। तमखुही राजवंश भूमिहारिन स्त्री के वंश से बतलाया जाता है'।

यही बात फिशर प्रभृति के भी गजेटियरों में पाई जाती है। सन् १८६५ की मनुष्यगणना की रिपोर्ट में भी मिस्टर डबल्यू. विचाइल प्लाउडन ने यही लिखा है, जो प्रकाशित अंग्रेजी रिपोर्ट के प्रथम भाग के परिशिष्ट (ब) के ११२ वें पृष्ठ (Census of the N. W. P. for 1865, Vol.I, Appendix B.P. 112) में मिलता है और जिसका हवाला 'रेवरेण्ड शेरिंग' (Rev. Sherring) ने अपने हिन्दू जाति विवरण के प्रथम भाग के २३६ वें पृष्ठ में दिया है। और मिस्टर शेरिंग भी स्वयं उसी पुस्तक के २१७ और २१८ पृष्ठों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में इस प्रकार लिखते और इसी विषय में पूर्वोक्त सर हेनरी इलियट से सहमत होते हैं:—

The founder of the political influence of the family was Mewar Bhatt, whose ancestors had for many generations resided as devotee in the neighbourhood of Nawapur, now known as Salimpur Majhauli. Mewar Bhatt, though himeslf a religious man, was not able to withstand the solicitations of ambition; and taking up arms, after returning from a pilgrimage to Benares, acquired possession of the greater part of the country between the Ganges and the Great Gandak. Mewar had four wives. By one, a Rajputni, he hadissue, Bisusen, the founder of the name of Bisen, the ancestor of the Raja's family. By a Bhumiharin, he had Bagamar Sahi, the ancestor of the Kawari and Tamakohi Rajas. By a Brahmani he had Nages, whose descendants hold a few villages in Salimpur Majhauli. By a Kurmini he had the ancestor of those now resident in Ghosi ol Azamgarh.

इसका भाषानुवाद वही है, जो विशेनवंशवाटिका में इलियट साहब के कथन का दिया हुआ है और जिसे हम प्रथम हीं दिखला चुके हैं। इन सभी वैदेशिकों के लेखों से पाठक समझ गये होंगे कि वास्तव में बगौछिया ब्राह्मणों के विषय में किम्वदन्ती कैसी है और बड़गवहादुर मल की लिखी जनश्रुति आया सत्य है, या उन्होंने द्वेष वश गढ़ डाली है। क्योंकि यदि सच्ची होती तो कोई भी अंग्रेज या देशी लेखक उससे सहमत हो ही जाते, कारण कि वे लोग जनश्रुतियों के बहुत प्यासे होते हैं। इससे स्पष्ट है कि उस जनश्रुतिसे भूमिहार ब्राह्मणों में कोई दोषारोपण किया नहीं जा सकता। क्योंकि मयूरभट्ट भी ब्राह्मण हीं थे। इसलिये ब्राह्मण और ब्राह्मणी (भूमिहार ब्राह्मणी) के वंशज बगोछिया ब्राह्मण शुद्ध ही ब्राह्मण ठहरे। जैसे कि मयूर भट्ट के ही वंशज पयासी के मिश्र लोग हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ये जो बातें हमने लिखी हैं, वे सभी मयूर भट्ट वाली किम्वदन्ती को सत्य मानकर ही लिखी हैं। वस्तुतः तो यह किम्वदन्ती अश्रद्धेय है। क्योंकि जिस ब्राह्मण को हम ऋषि, वेदशास्त्रज्ञ, तपस्वी और परमधार्मिक स्वीकार करते हैं, उसके ही विषय में ऐसे महान अधर्म का कार्य लिखना या कहना विचार से बाहर हैं। भला ऐसा कब हो सकता है कि ऐसा विचारशील और तपस्वी ब्राह्मण शास्त्रविरुद्ध क्षत्रिय कन्या से शादी कर सकता, या कुर्मिनी को रख सकता था? यदि प्रमाद भी हो जावे तो एकाध, न कि बहुत से अत्याचार ऐसों से हो सकते हैं। इस प्रकार के इतने विवाहों से तो सूचित हो जाता है कि वह कोई अत्यन्त विषयासक्त और लम्पट पुरुष था। परन्तु उन्हें सभी तपस्वीके वंशज और तपस्वी स्वीकार करते हैं। इसलिये ऐसे पुरुष के विषय में ये विना सिर पैर की बातें नितान्त अश्रद्धेय हैं। दूसरी बात यह भी है कि 'विशेनवंशवाटिका' के कर्त्ताने मयूर-भट्ट से अपने समय तक ११५ राजे गिनाये हैं। इससे उनका समय दो वा ढाई हजार वर्षों के मध्य में हो सकता है। उन दिनों ब्राह्मणों में ये भट्ट प्रभृति उपाधियां प्रायः अप्रचलित थीं, जैसा कि प्रथमहीं दिखला चुके हैं। इसीलिये उस समय के नामों के साथ आचार्य या ऋषि प्रभृति शब्द ही पाये जाते हैं। इसके साथही यह भी निर्विवाद है कि भूमिहार संज्ञा या विशेषण भी किसी अयाचक ब्राह्मण दल का मुसलमानी समय में हीं पड़ा है, जैसीकि ब्राह्मणों की ही कान्यकुब्ज प्रभृति संज्ञायें हैं, जिनके विषय में सविस्तर विचार प्रथम हीं किया जा चुका है। इसलिये आज से दो ढाई हजार वर्ष पूर्ववर्त्ती मयूरभट्ट ने भूमिहार ब्राह्मण की लड़की से ब्याह किया, जिससे बाघम्बर साही हुये, यह बात भी विश्वास योग्य नहीं है। इसलिये भी विशेन, या दूसरे लोग मयूरभट्ट की सन्तान हैं यह वार्त्ता माननीय नहीं हैं।

हां, यह बात तो हो सकती है कि सम्राट् चन्द्र गुप्त मौर्य के वंशज विशेन लोग होवें। क्योंकि चन्द्रगुप्त को भी दो सहस्र वर्षों से अधिक हुये और उसी मौर्य शब्द को देखकर लोग मौर्यवंशी न कह कर विशेनों को मयूरवंशीय या मयूरज कहने लगे। यह कल्पना श्रद्धेय भी मालूम होती है। अब रह गई पयासी के मिश्रों की बात। यदि ये लोग मयूरभट्ट की सन्तान होवें तो कोई खटका या शंका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं हो सकती, और यही बात बगौछिया ब्राह्मणों के विषय में भी कही जा सकती है। परन्तु कुर्मिनी की बात तो बिल्कुल ही असत्य प्रतीत होती है। वस्तुतः तो बगौछिया लोग मयूरभट्ट के ही वंशज ब्राह्मणी के गर्भ से हुये हैं, इस विषय में भी हम सहमत नहीं हैं। क्योंकि ऐसा कहनेवाले इन भूमिहार ब्राह्मणों के बगौछिया नाम पड़ने का कोई कारण नहीं दिखलाते या दिखला सकते हैं। प्रत्युत सिद्ध है कि सोनके किनारे मयूर भट्ट रहते थे। इसीसे उनके वंशज वत्स गोत्री सोनभदरिया ब्राह्मण कहे जाते हैं। वहीं गया जिले में उनका पुराना ठांह है। वहीं से कुष्ट रोग ग्रस्त होनेपर गया जिले के देव के सूर्य मन्दिर में उन्होंने सूर्य की आराधना की और सूर्य शतक बनाकर आरोग्य लाभ किया। अभीतक सोनभदरियों के ही वंशज पंडित खेदा पांडे के हाथ में सूर्य मंदिर का कुछ अंश रह गया है और वे उसके पुजारी हैं। शेष अंश गरीबे के कारण शाकद्वीपियों के हाथ उन लोगों ने बेंच दिया है। इससे उनकी उक्त कल्पना मिथ्या ही प्रतीत होती है।

प्रथम प्रकरण में हीं हम यह वार्त्ता अच्छी तरह सिद्ध कर चुके हैं कि ब्राह्मणोंके अवान्तर (छोटे छोटे) दलों के नाम या व्यवहार स्थानों के नामानुसार पड़े। जैसे, गौड़, मैथिल, पिंडी के तिवारी, दिघवे या दिघवैत, दिघवेसन्दहपुर, किनवार इत्यादि। इसीलिये बगौछिया नाम भी किसी स्थान से ही पड़ा होगा, जैसा एकसार ग्राम के नाम से एकसरिया और जैथर (जयस्थल) से जैथरिया इत्यादि।

वंगप्रदेशान्तर्गत गौड़ देश में कान्यकुब्ज देश से ब्राह्मणों के जाने का जो इतिहास मिलता है, उससे स्पष्ट है कि वत्स, शांडिल्य, सावर्ण्य, भरद्वाज, और कश्यप इन पांच गोत्रों के ब्राह्मण कन्नौज से गौड़देश में गये थे। उन्हीं में से १६ ब्राह्मणों के विषय में यह भी प्रथमहीं दिखला चुके हैं कि वे लोग अयाचक या दान त्यागी हो गये थे, जिस से बल्लाल सेन ने उनकी बहुत ही प्रतिष्ठा की थी। वे लोग वंगदेशान्तर्गत राढ़ और वारेन्द्र देशों में निवास करते थे। वे लोग जिन जिन ग्रामों में रहते थे, प्रायः उनग्रामों के ही नाम से उन के नाम हुये, यह भी उस इतिहास से पता चलता है। उन के रहने के बहुत से ग्रामों में से एक ग्राम 'बागछी' नाम का भी था, जिस ग्राम में रहने से बहुत से वंगदेशीय ब्राह्मण अब भी 'बागछी' कहलाने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। यह बात 'गौड़ हितकारी' पत्र के सितम्बर मास १९११ ई० के अंक में भी 'गौड़देश में ब्राह्मण' शीर्षक लेख में आई है। यद्यपि बागछी ग्राम वासी शांडिल्य गोत्री दो एक ब्राह्मणों का ही नाम वहां लिखा गया है, तथापि जो विदित था वही, अथवा अन्यों के विदित रहने पर भी दो एक के ही नाम लिख दिये गये हैं। उस से यह कदापि सिद्ध नहीं हो सकता कि वत्स या अन्य गोत्र के ब्राह्मण बागछी ग्राम में नहीं रहते थे। इस से यही अनुमान सत्य और विश्वसनीय हो सकता है कि जिस समय वंगदेशान्तर्गत गौड़देश से गौड़ ब्राह्मण दान त्यागी या तगे ब्राह्मणों के सहित हटे या भाग कर कुरुक्षेत्र के प्रान्त और विजनौर प्रभृति स्थानों में चले गये। उसी समय या उससे कुछ आगे पीछे 'बागछी' ग्रामवाले अयाचक ब्राह्मण भी वहां से हटकर इधर चले आये और सुदूर पश्चिम में न जाकर किसी अनुकूलता वश छपरा प्रान्त में ठहर गये। इसीलिये उनकी संज्ञा 'बागछिया' होगई जा बिगड़ते बिगड़ते अब बगौछिया कहलाती है। यह बात लगभग हजारों वर्षों की हो गई। इसीलिये हथुवा या तमकुही बगौछिया राजवंशों की इस देश में प्राचीनता भी रक्षित रह गई और उनके इस नाम के पड़ने का कारण भी ठीक ठीक मिल गया। इसीलिये वंगदेशीय ब्राह्मणों में वत्स गोत्रीय ब्राह्मण इस समय कम पाये जाते हैं।

वस्तुतः गोरखपुर जिला के तमकुही राज्य के बगौछ गांवमें, जो खनुवा नदी के किनारे भरहे चौरा से ६ कोश उत्तर नारायणपुर कोठी के पास है, एक बड़ा डीह है जहां से बगौछिया ब्राह्मणों का विस्तार बताया जाता है। निकट होने से यही अधिक विश्वसनीय प्रतीत होता है। इनके पूर्वज बंगाल या गया से प्रथम बगौछ में ही आये और वहीं से पीछे सर्वत्र फैले। इसलिये यही अनुमान श्रद्धेय और युक्ति युक्त प्रतीत होता है, जिससे बगौछिया ब्राह्मणों की उज्ज्वलता भी अक्षुण्ण रह गई। अतः विशेनवंशवाटिका की जो जो बातें भूमिहार ब्राह्मणों के विपक्ष में लिखी गई हैं वे बिना सिर पैर की हैं। उनसे भूमिहारब्राह्मणों की कोई हानि नहीं हो सकती।

इसके अनन्तर हम 'भारत वर्षीय राज दर्पण' नाम की पुस्तक की आलोचना करते हैं। इसके विषय की बहुत सी बातें भूमिका में ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कही जा चुकी हैं। ग्रन्थ कर्त्ता महोदय निरंजन मुखोपाध्याय ने उक्त ग्रन्थ के ३,४ पृष्ठों में लिखा है कि:—

'एक ओर भी जन श्रुति है कि कृष्ण मिश्र का विवाह क्षत्रिया कन्या के साथ हुआ था। इसी से उनकी सन्तान भुंइहार ब्राह्मण कहलाती है। यद्यपि बहुत काल से प्रायः विक्रमादित्य के राज्य के पश्चात् क्षत्रिया कन्या के साथ ब्राह्मण का विवाह अप्रचलित है, तथापि इस विवाह के होने में एक ऐसी लोकोक्ति चली आती है कि भागलपुर के निकट एक क्षत्रिय की कन्या अपनी बाल्यावस्था में अत्यंत पवित्रता से रहती थी। यहां तक कि अपना वस्त्र और पात्र अपने घर के लोगों से फरक रखती थी। किसी रोज उसके चिढ़ाने के लिये उसकी भ्रातृ-पत्नी ने अपने लड़के को उसके कपड़े पर बैठा दिया। इस पर वह बहुत दिक होकर उस वस्त्र को अशुद्ध समझ उसे धोने लगी। तब उसकी भ्रातृ-पत्नी (भौजाई) ने हास्य कर कहा कि क्या तुम कित्थू मिश्र की स्त्री हो, जिससे हमलोगों को अशुद्ध समझती हो? ऐसा सुनकर उस कन्या ने प्रतिज्ञा की कि कित्थू मिश्र से अन्य के साथ अपना विवाह न करूंगी। ऐसा उसका बहुत काल तक हठ देख कर उसके भाइयों ने कित्थू मिश्र की प्रार्थना करके उसको स्वीकार करवाया'। इससे प्रथम हीं आप भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में ऐसा लिख चुके हैं कि:—

'बनारस के निकट कुसवार परगने में थुथुरिया ग्राम में, जो कि अब गंगा पुर कहलाता है, मनोरंजनसिंह नामक एक भुंइहार ब्राह्मण बसते थे। उनके चार पुत्र थे। सबसे ज्येष्ठ का नाम मनसाराम था, जो बनार के राजवंश के मूल पुरुष थे। थुथुरिया ग्राम के अर्द्धांश के मालिक इनके पिता मनोरंजन सिंह के पूर्वपुरुषों का विवरण कुछ नहीं पाया जाता है। जन श्रुति है कि बनार राजा के राज्य काल में काशी में कृष्णमिश्र अथवा कित्थू मिश्र नामक गौतम गोत्र के दतरिया ग्राम निवासी एक ब्राह्मण उनके मंत्र गुरु थे और वे सिद्ध पुरुष थे। राजा के पास से उनके कभी कुछ दान न ग्रहण करने से राजा सर्वदा बहुत खेद युक्त रहा करते थे। एक दिन राजा बनार ने विचार कर उनकी पगड़ी में कई ग्राम का दान पत्र छिपाकर बांध दिया। कित्थू मिश्र जब अपने घरमें आकर अपने इष्ट देवके ध्यान में बैठे, तो और दिनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की तरह उनका चित्त एकाग्र न होकर अतिशय चंचल होने लगा। उसपर वह बहुत आश्चर्यवान होकर चिन्ता करने लगे। पीछे जब राजा का व्यवहार मालूम हुआ तब उन्होंने अत्यंत क्रुद्धान्तःकरण से शाप देकर कहा है, कि जैसा तुमने हमारा तेज ध्वंस किया है, वैसाही तुम्हारा समस्त अधिकार हमारे वंश के आधिपत्य में आवेगा'।

अब यहां पर विचारना यह है कि काशी के प्रान्त या सर्यूपार में तो बहुत जिज्ञासा या खोज पूछ करने पर भी कित्थू मिश्र के साथ क्षत्रिय कन्या के विवाह वाली किंवदन्ती का पता नहीं लगता। इसीसे अंग्रेजों या अन्य लोगों ने, जो केवल किंवदन्ती के ही आधार पर चलने वाले हैं, इस किंवदन्ती का वर्णन कहीं भी नहीं किया है। इससे मालूम होता है कि ग्रन्थ कर्त्ता महोदय के जन्म स्थान बंगाल में हीं, यह किंवदन्ती प्रसिद्ध रही होगी, जिससे उन्होंने इसको लिखा है। वाहरे द्वेष और मिथ्या कल्पना! जिस भागलपुर की कन्या की बात उन्होंने लिखी है, वह सर्यूपार, गोरखपुर में मझौली राज्य के पास है। वहां यह जनश्रुति विशेन क्षत्रियों के विषय में है, जिसे खड्ग-बहादुरमल ने 'विशेनवंशवाटिका' में लिखा है, जैसा कि प्रथम दिखला चुके हैं। उसके ४५ वें पृष्ठ में लिखा है कि 'मयूरभट्ट ने साम-वेद में अधिक परिश्रम किया था। एकबार इन्होंने अयोध्या की यात्रा की। उस समय वहां श्रीरामचन्द्र के वंशवाले राज्य करते थे। राजा ने इनकी विद्या और तपस्या देख प्रसन्नता पूर्वक अपनी कन्या सूर्य-प्रभा को (जिसका प्रण था कि किसी योग्य पुरुष से व्याही जाऊं) इनके संग व्याह दिया' इत्यादि।

दूसरी बात यह है कि काशी-रामेश्वर के पास के कई ग्रामों में जो गौतम क्षत्रिय रहा करते हैं, वे अपने को कित्थू मिश्र के वंशज कहा करते हैं। जब हमने कइयों से इसका कारण पूछा तो, उन्होंने यही उत्तर दिया कि हमारे पूर्वज कित्थू मिश्र के वंशज भूमिहार ब्राह्मण थे। परन्तु बहुत दिन हुये, जब कि कित्थू मिश्र के वंशज अन्य भूमिहार ब्राह्मणों ने उनका हिस्सा दबा लिया, तो उस समय हमारे पूर्वजों ने हिस्से के लोभ से एक क्षत्रिय राजा की कन्या से विवाह कर लिया और उसी दिन से उनके वंशज हम लोग क्षत्रिय कहलाने लगे। यह बात काशी के इस प्रान्त में प्रसिद्ध है। जिसे सभी ब्राह्मण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

या क्षत्रिय स्वीकार करते हैं। संभव है कि इसी बात को निरंजन मुखोपाध्याय ने सुनकर भूल, छल, या द्वेष से भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में लिख मारा और उसमें कुछ पेवन्द भी लगादिया। भूमिहार ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों हीं गौतम कहे जाते हैं। इसलिये गौतम नाम देखकर इस भ्रान्ति का हो जाना सम्भव है कि क्षत्रियों के विषय की बात भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में लिखी गई।

एक ऐसीही किंवदन्ती जौनपुर जिलेके 'चौपट खम्भ' नाम वाले क्षत्रियों के विषय में है। जिसे सुनकर भी निरंजन मुखोपाध्याय को भ्रम हो गया, ऐसी कल्पना की जा सकती है। उसी किंवदन्ती को सन १८६५ की युक्त प्रान्तीय मनुष्य गणना की रिपोर्ट के प्रथम भाग के ११५ वें पृष्ठ में इस प्रकार लिखा है:—

Chowpat Khambha–Two Brahmans, named Buldeo and Kooldeo, came form Sarwar, and took up their residence in Mouzah Putkhohee, pergunnah Kirakut Zillah Jownpore. Raja Jaichand, a descendant of Rajah Bindar of the Lunar race, gave his daughter in marriage to Buldeo, and his descendants are called Chowpat Khambha. The origin of the name is from 'Khambha' a pillar. Kooldeo was annoyed with Buldeo for marrying out of his caste, and setting up a Pillar of a degenerate family; hence the tribe was called Chowpat Khambha.

इनका अनुवाद यह है कि 'चौपटखम्भ–दो ब्राह्मण सर्यूपार से बलदेव और कुलदेव नामक इस देश में आए और जौनपुर के परगने किराकत, ग्राम पटखोही में बस गये। चन्द्रवंशीय क्षत्रिय राजा बनार ने अपनी कन्या का विवाह बलदेव से कर दिया। इसलिये उसके वंशज चौपटखम्भ क्षत्रिय कहलाते हैं। नाम पड़ने का कारण यह है कि खम्भ नाम है स्तम्भ या खम्भे का। चूंकि कुलदेव अपने भाई बलदेव से रंज हो गया, क्योंकि उसने अपनी जातिसे अन्यजाति में विवाह करलिया और इससे एक वर्णसङ्कर या चौपट जाति अथवा खम्भ चलाया। इसीलिये उसके वंशज चौपटखम्भ कहलाने लगे।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सबसे विलक्षण और आश्चर्य की बात तो यह है कि आप स्वयं ही कृष्णमिश्र को परम विवेकी, तपस्वी, विद्वान और सिद्ध स्वीकार करते हैं, जो अपने शिष्य राजा बनार से भी एक पैसा स्वीकार करना शास्त्र और सत्पुरुष द्वारा निंदित होने के कारण अधर्म समझते थे। अतएव बनार के छल से दानपत्र देने से क्रुद्ध होकर शाप दे बैठे। क्योंकि इस अधर्म से उन्होंने अपनी ब्राह्मणता की हानि समझी। फिर ऐसी दशा में वह किसी क्षत्रिय कन्या के साथ, चाहे वह कैसीही क्यों न हो, क्योंकर विवाह कर सकते थे, जो नितान्त अनुचित और शास्त्र निषिद्ध है? इस बात को आप भी स्वयं स्वीकार करते हैं। इसलिये उनके विषय में ऐसी कल्पना करना केवल पापमयी बुद्धि का फल है।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि 'गौतम चन्द्रिका' में उन्हीं कित्थू मिश्र के वंशज जौनपुर प्रान्त निवासी याचक दलवाले ब्राह्मण पं० शिवराज मिश्र और पं० ताराप्रसाद मिश्र जब यह स्वीकार करते हैं, कि कित्थू मिश्र का विवाह पयासी के मिश्र की कन्या हुती या देवहुती से हुआ था, जिसके ही वंशज वर्त्तमान सभी गौतम भूमिहार ब्राह्मण या अन्य ब्राह्मण हैं, जैसा कि प्रथम हीं दिखला चुके हैं। वहां यों लिखा है:—

हुती पयासी की सुता, ताको प्रेम विचारि।
व्याह्यो तासों प्रगट भे, देवकृष्ण निरधारि।

हुती नाम की कन्या पयासी मिश्र (सर्यूपारी)-की रही। उसने किसी के तिरस्कार से प्रण किया कि हम अपना विवाह कित्थू मिश्र से करेंगी। इस कारण कित्थू मिश्र ने उससे विवाह किया।

तो फिर दूसरे को इससे विपरीत लिखने या कहनेका अधिकार ही क्या है? और उसकी बात क्योंकर मानी जा सकती है? पूर्वोक्त 'गौतमचन्द्रिका' के वाक्यों से पाठकों को यह भी विदित होगया होगा कि निरंजनमुखोपाध्याय ने भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में पूर्वोक्त किंवदन्ती लिख केवल अपने हृदय की गाढ़ कलुषता और द्वेष का परिचय दिया है। क्योंकि वह किंवदन्ती या बात पयासी मिश्र की कन्या के विषय में ज्यों की त्यों है, न कि किसी क्षत्रिय कन्या के विषय में।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार पं० विजयानन्द त्रिपाठी जी ने सर्यूपारीण इतिहास पंक्ति पावन परिचय में सम्पूर्ण गौतम भूमिहार ब्राह्मण वंश और द्विज राज श्री काशिराज को सर्यूपारीण ब्राह्मणों में अग्रणी माना है, जैसा कि प्रथम परिच्छेद के अन्त में दिखला चुके हैं। तो फिर निरंजन मुखोपाध्याय ने केवल मिथ्याही लिखा है यही कहा जा सकता है। गौतम चन्द्रिका के अनुसार पयासी मिश्र के घर ही कित्थू मिश्र का विवाह उचित है। इसीलिये गौतम भूमिहार ब्राह्मणों के जो पुरोहित ब्राह्मण हैं, उन लोगों का यह कथन है कि, आप लोगों के पूर्वजों ने हम लोगों के पूर्वजों को कन्यादान देकर पूजा था, इसलिये उसी समय से हम लोग आप लोगों के मान्य और पुरोहित हुये। इससे पाठकों को मुखोपाध्याय जी की सज्जनता का परिचय अवश्यही लग गया होगा। आप का यह कथन भी क्या ही बुद्धिमत्ता का है कि 'कृष्णमिश्र का विवाह क्षत्रिया कन्या के साथ हुआ था। इसीसे उनकी सन्तान भुंइहार ब्राह्मण कहलाई'! क्यों साहब! क्या क्षत्रिया कन्या के साथ विवाह का होना भूमिहार ब्राह्मण नाम पड़ने का कारण है? उस विवाह और भूमिहार ब्राह्मण नाम से क्या सम्बन्ध है? यदि ऐसा ही माना जावे तो आपके मुखोपाध्याय नाम पड़ने के भी इसी प्रकार के कुत्सित, मिथ्या और कल्पित कारण बताए जा सकते हैं। क्योंकि आप की ही तरह कुछ अनाप सनाप बक देंगे और वही आप के सिद्धान्तानुसार पत्थर की लकीर हो जावेगी, जिससे आप के होश हवासों का पता न लगेगा और लेने के देने पड़ जावेंगे।

अस्तु, जब इस पर भी आपको सन्तोष न हुआ तो इसके बादही लिखते हैं कि "यह भी प्रसिद्ध है कि मगधाधिपति महाराज जरासन्ध के यज्ञ के समय लक्ष ब्राह्मण भोजन करने के प्रयोजन होने पर राजाके अज्ञात में उनके किसी किसी कर्माध्यक्षों ने जिनको ब्राह्मणों के लाने की आज्ञा हुई थी, अनेक कष्ट से भी आज्ञानुयायी ब्राह्मण संग्रह करने में असमर्थ होकर राजदण्ड के भय से अपर जाति के लोगों के गले में यज्ञोपवीत डाल भोजन करवा दिया। पीछे से उन सबों की जाति बिरादरी के उनके साथ आहार व्यवहार परित्याग करने से वे सब कोई राजा जरासन्ध के पास गये और उनके कर्माध्यक्ष के नाम पर नालिश करके उन्होंने आद्योपान्त सब वृत्तान्त प्रकाश कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिया, जिसपर लाचार होकर उन्होंने उनके गुजरान के लिये अपने अधिकार में भूमि देकर उन सबों को बसाया। इसी से उनके खान्दानों को आज तक भी भूमिहार ब्राह्मण कहते हैं। और इसका एक प्रमाण यह है कि इन भूमिहारों के वासस्थान उस समय के मगध राज्य की सीमा के बाहर और अन्यत्र प्रायः दृष्टिगोचर नहीं होते हैं।

इस किंवदन्ती में बहुतसी बातें विचार योग्य हैं। प्रथम तो यह देखना चाहिये कि, आया जरासन्ध ने इस प्रकार का कोई भी यज्ञ किया था या नहीं। हमने तो महाभारत से लेकर सभी पुराणों का आलोडन किया, परन्तु जरासन्ध के इस यज्ञ का कहीं भी पता नहीं है। महाभारत प्रभृति ग्रन्थों में उसके जीवनचरित्र वगैरः का बहुत सी जगह वर्णन है और उसे बहुत ही धार्मिक भी लिखा है। परन्तु यह तो कहीं भी नहीं आता, कि उसने मद्यप को तरह ब्राह्मणों और चमारों को एक पंक्ति में भोजन करा धर्म के नाम पर महान अधर्म किया। अतः इस किंवदन्ती में मूल ही क्या है जिससे यह मानी जासके?

दूसरी बात यह है कि जैसे भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में आप इस कल्पित किम्वदन्ती रूप उपन्यास को खड़ा करते हैं, उसी प्रकार सर्यूपारीण, कान्यकुब्ज और मैथिल प्रभृति सभी ब्राह्मणों में इस प्रकार की किंवदन्तियां पाई जाती हैं। मैथिलों के विषय में सेवई सिंह का यज्ञ और सर्यूपारियों के विषय में शालिवाहन या दूसरे का यज्ञ इत्यादि बतलाया जाता है। फिर कभी कभी भूमिहार ब्राह्मणों और अन्य ब्राह्मणों की इन किम्वदन्तियों वाले यज्ञकर्ता दूसरे ही बतलाये जाते हैं। इससे विश्वास क्यों कर हो सकता है? यह लीलायें जिसे देखनी हों, वह हिन्दूजाति के विषय में लिखे हुए अंग्रेजों के ग्रन्थों को देखे। उनमें ये किंवदन्तियां भिन्न भिन्न नामों से आती हैं। यह बात क्यों कर हो सकती है कि सभी ब्राह्मण दलों में हिन्दू राजाओं ने इस प्रकार के अत्याचार किये हों? तिसपर भी करने वाले का ठिकाना नहीं। क्या उस समय एक दो लाख ब्राह्मण नहीं मिल सकते थे? यह बात तो विश्वास योग्य नहीं है, क्योंकि आज कल की अपेक्षा उन दिनों ब्राह्मणों की संख्या कम न थी। और आज कल भारत भर में करोड़ों ब्राह्मण मिल सकते हैं। यदि कम हीं थी, तो क्या उन राजाओं को यह भी न विदित था कि हमारे राज्य में इतने ब्राह्मण हैं!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्या वे लोग शराबी थे, जिससे कुछ भी विचार न करके मनमाना काम कर डालते थे ? आप कहते हैं कि सभी जातियों को जनेऊ पहना कर यज्ञ में खिला दिया। क्या उन दिनों ब्राह्मणों की परीक्षा न की जाती थी? क्या महानन्द और चाणक्य की कथा लोगों को नहीं विदित है ? क्या परीक्षा करने वालों को अहीर, चमार और ब्राह्मणों में भेद नहीं मालूम हुआ? क्या उस समय सभी वर्ण गायत्री जप वगैरः करते थे, जिससे परीक्षा न हो सकती थी ? क्या उन दिनों धार्मिक कार्यों में मनुवचनों का भी लोग अनादर करते थे ? क्योंकि मनुजी ने लिखा है कि:—

दूरादेव परीक्षेत ब्राह्मणं वेदपारगम् ।
तीर्थं तद्धव्यकव्यानां प्रदाने सोऽतिथिः स्मृतः ॥१३०॥
द्वौ दैवे पितृकार्ये त्रीनेकैकमुभयत्र वा ।
भोजयेत्सुसमृद्धोऽपि न प्रसज्येत विस्तरे ॥ १२५ ॥
सत्क्रियां देशकालौ च शौचं ब्राह्मणसम्पदः ।
पञ्चैतान्विस्तरोहन्तितस्मान्नेहेतविस्तरम् ॥१२६॥
ज्ञाननिष्ठाद्विजाःकेचित्तपोनिष्ठास्तथाऽपरे ।
:स्वाध्यायनिष्ठाश्चकर्मनिष्ठास्तथाऽपरे॥ १३४ ॥
ननिष्ठेषुकव्यानिप्रतिष्ठाप्यानि यत्नतः ।
यानितुयथान्यायंसर्वेष्वेवचतुर्ष्वपि ॥ १३५।३ ॥

इसका अर्थ यह है कि 'यज्ञादि में खिलाने के समय अच्छी तरह से परीक्षा करे कि यह ब्राह्मण वेदज्ञ है या नहीं; क्योंकि वेद ज्ञाता ब्राह्मण हीं देवता और पितरों के अन्न के भक्षण का अधिकारी है। देवकार्य में दो ब्राह्मण और पितृ कार्य में तीन, अथवा दोनों कार्यों में एक एक ही खिलावे। बहुत धनी होने पर भी अधिक ब्राह्मणों के खिलाने का यत्न न करे। क्यों कि ऐसा करने से पांच बातों की गड़बड़ होती है। ठीक सत्कार नहीं हो सकता, उत्तम जगह और उत्तम समय समुदाय के लिये नहीं मिल सकते, पवित्रता नहीं रह सकती और गुणवान ब्राह्मण नहीं मिल सकते। इसलिये यज्ञादि में ब्राह्मण का विस्तार नहीं करना चाहिये। ब्राह्मण चार प्रकार के होते हैं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0, In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञानी, तपस्वी, वेदपाठी और कर्मकाण्डी। इनमें से श्राद्ध में केवल ज्ञानी को ही खिलाना चाहिये, परन्तु यज्ञादि में चारों को'।

इसलिये धर्मज्ञ राजाओं ने इसके विपरीत क्योंकर किया? यदि आपका यह कथन मान भी लिया जावे, तो भी प्रश्न यह उपस्थित होता है, कि क्या उनको थोड़े बहुत भी सच्चे ब्राह्मण न मिल सके? ऐसा तो नहीं कह सकते। क्योंकि यदि ऐसा होता तो तूफान मच जाता। क्योंकि आस पास के भुक्खड़ ब्राह्मण अवश्य ही पुकार मचाते। तो क्या सच्चे ब्राह्मणों ने भी मिथ्या ब्राह्मणों के साथही भोजन किया? क्या यज्ञ के कराने वाले ऋत्विक् वगैरः भी साथही साथ भोजन करने लग गये? यदि यह कहाजावे कि सभी को कुछ न कुछ घूस देकर कर्मचारियों ने बनावटी ब्राह्मणों के साथ या अलग खिला दिया। तो क्या यह बात विश्वसनीय हो सकती है? क्या आज कल भी, जब कि लोगों के धार्मिक विचार एक बारगी ढीले पड़ रहे हैं, ऐसा देखने में आता है? जब आज कल भी हजार यत्न करने पर भी ये बातें नहीं छिप सकतीं, तो उस समय कैसे हो सकती थीं? साथही, इन बातों का कहीं कुछ भी लेख नहीं मिलता। इसलिये ये सब रचनायें एक दूसरे को नीचा दिखलाने के लिये ही कीगई हैं। क्योंकि जब एक समाज दूसरे के विरुद्ध कुछ कहता है, तो दूसरा भी प्रथम के विरुद्ध अवश्य ही कुछ कहता है। इसीलिये सभी ब्राह्मण या अन्य समाजों में इस प्रकार की बातें पाई जाती हैं। अतः इन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। विशेष कर भूमिहार ब्राह्मणों के विषय की यह कल्पित किम्वदन्ती तो नहीं हीं मानी जा सकती। इसीलिये इस विषय में अंग्रेजों ने भी इस का खण्डन किया है। जैसा कि मिस्टर 'डब्ल्यू. क्रुक' ने अपने 'युक्त प्रान्तीय जाति विवरण' के द्वितीय भाग के ६४ वें पृष्ठ और उसके अगले पृष्ठों में लिखा है और इस विषय में रिजले साहब की भी सम्मति दी है। वह लेख यों है:—

The theory that they are a mixed race derived from a congeries of low caste people accidentally brought together, is disapproved by the high and uniform type of physiognomy and personal appearance which prevails among them. This, as Mr. Risley says, would

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

not be the case, if they were descended from a crowd of low caste men promoted by the exigencies of particular occasion, for brevet rank thus acquired, would, in no case, carry with it the right of intermarriage with pure Brahmans, or Rajputs, and the artificially formed group, being compelled to marry within its own limits, would necessarily perpetuate the low caste type of features and complexion. As a matter of fact, this is what happens with the Sham Rajputs, whom we find in most of the out lying districts of Bengal. They marry among themselves, never among true Rajputs, and their features reproduce of the particular aboriginal tribe from which they may happen to be sprung.

इसका अनुवाद यों है कि 'यह कथन, कि ये (भूमिहार-ब्राह्मण) कई जातियों के समुदाय से बने हैं और उन नीच जातीय लोगों की सन्तान हैं, जो किसी कारणवश इकट्ठे करदिये गये थे, इन लोगों के ऊंचे और एक समान शरीर के ढांचे और चेहरे मोहरे से ही खंडित हो जाता है। ये ढांचे और चेहरे मोहरे इनमें आजतक पाये जाते हैं। मिस्टर रिजले ने कहा है कि, यदि ये लोग उन नीच जाति के लोगों के वंशज होते, जो किसी विशेष आवश्यकता के कारण ब्राह्मण बना दिये गये, तो इनमें यह बात कहीं न पाई जाती। क्योंकि जिन लोगों का दर्जा इस प्रकार ऊंचा बना दिया जाता, उनको किसी भी दशा में सच्चे ब्राह्मण या राजपूतों के साथ परस्पर विवाह करने का अधिकार नहीं मिलता। इसलिये वह बनावटी दल अपने हीं में विवाह करने को मजबूर होता, जिससे उसके प्रथम के नीच जातियों के ही प्राचीन ढांचे और चेहरे मोहरे बने रहजाते। यही कारण है, जिससे यही दशा आज तक उन दोगले राजपूतों में पाई जाती है, जो बंगाल के बाहरी जिलों में पाये जाते हैं। क्योंकि वे लोग आपस में हीं विवाह करते हैं, न कि सच्चे राजपूतों में। इसीलिये उनकी शारीरक बनावट वैसी ही है, जैसी कि उन प्राचीन (जंगली) जातियों की, जिनसे वे पैदा हुये होंगे।'

आपने उस पूर्वोक्त किंवदन्ती की पुष्टि में जो यह लिखा है कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'और इसका यह प्रमाण है कि इन भूमिहारों के वासस्थान उस समय के मगधराज्य की सीमा के बाहर और अन्यत्र प्रायः दृष्टिगोचर नहीं होते'। वह भी क्याही बुद्धिमत्ता है! क्या समस्त तिर्हुत, भागलपुर और पुर्नियां जिले को लिये हुये, तथा छपरा, गोरखपुर, बस्ती, आजमगढ़, प्रयाग, सुलतानपुर आदि जिलों को, जिनमें पश्चिमा, भूमिहार, जमींदार ब्राह्मण विशेषरूप से पाये जाते हैं, आप मगध में हीं समझते हैं? क्या इस विषय का आपके पास कोई प्रमाण है कि उस समय मगध संज्ञा युक्तप्रान्त तथा तिर्हुत वगैरः की भी थी? क्या आपने महाभारत या 'फाहियान' और 'ह्वेनसांग' का मगध वर्णन नहीं पढ़ा है? जब गाजीपुर, बलिया, बनारस और शाहाबाद भी मगध से बाहर हैं, तो अन्य प्रान्तों का कहना हीं क्या है? यह भी प्रथम हीं दिखला चुके हैं कि प्रथम भी भूमिहार ब्राह्मणों के विशेष वासस्थान प्रायः छपरा वगैरः सभी प्रान्तों में हीं थे, जिससे अन्यत्र जाने पर उन्हीं प्रान्तों के स्थानानुसार उनके एकसरिया प्रभृति नाम पड़े।

और 'चूंकि इन लोगों को जरासंध ने भूमि देदी, इसलिये ये लोग तभी से भूमिहार ब्राह्मण कहलाने लगे, जो अब तक प्रायः मगध में हीं पाये जाते हैं,' यह कैसी बेसमझ और बे सिर पैर की बात है? क्योंकि आप मगधवासी भूमिहार ब्राह्मणों के भूमिहार नाम पड़ने का यह कारण तो बतलाते हैं। परन्तु यह नहीं देखते कि वहां तो, जैसा कि प्रथम प्रकरण में भी कह चुके हैं, वे लोग आज तक ब्राह्मण या 'बाभन' हीं बोले जाते हैं। भूमिहार शब्द का तो प्रयोग वहां हुआ ही नहीं। हां, अब भूमिहार ब्राह्मण महा सभा के होने से कहीं २ पढ़े लिखे लोग भूमिहार शब्द का प्रयोग करने लगे हैं। ये नेत्रों के पटल आपके खुल गये होते, यदि भाग्यवश आपको मगध में जाना पड़ा होता, अथवा भूमिहार ब्राह्मणों के सामाजिक विवरण के पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ होता। उस दशा में आपके मुख से ऊटपटांग बात न निकल सकती। अफसोस और आश्चर्य तो यह है कि आप इन अयाचक ब्राह्मणों को भूमिहार ब्राह्मण कहते और लिखते जाते हैं और साथ ही इनके विषय में बहुत सी मिथ्या कल्पनायें और मनोराज्य भी करते हैं। ऐसी दशा में तो आप बंगदेशीय ब्राह्मण, मैथिल ब्राह्मण, कान्यकुब्ज ब्राह्मण, गौड़ ब्राह्मण और सर्यूपारीण ब्राह्मण इत्यादि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नामों के भी विषय में कुछ न कुछ मनमानी हांक सकते हैं। यदि नहीं, तो फिर भूमिहार ब्राह्मण नाम ने हीं आप का क्या लेलिया है, जिसके ऊपर इस तरह जी जान से रञ्ज हैं? बस, कृपा करिये, रहने दीजिये।

पाठक यह तो हुई 'भारतवर्षीय राजदर्पण' की बात। जिससे संभवतः इस दर्पण के भविष्य में खोलने की अब आवश्यकता या योग्यता न रहगई होगी। क्यों कि यह कुदर्पण है, जिससे इसमें उलटा ही दीखेगा। अतः इसके खोलने में पश्चात्ताप ही हाथ लगेगा। अब दूसरे दर्पण को खोलते और उसका भी परिचय यहीं देकर उसके भी भविष्य में बन्द करने का अनुरोध आपलोगों से करते हैं। उस दर्पण का नाम है बिहार दर्पण। उसके रचयिता भूतपूर्व खड्ग विलास प्रेस बांकीपुर के अधिष्ठाता या संचालक बाबू रामदीन सिंह थे। इनके विषय में हमें यहां विशेष नहीं कहना है। क्योंकि, जैसा कि प्रथम प्रकरण के अन्त में दिखला चुके हैं, इन्होंने टेकारी के भूतपूर्व महाराज रामकृष्ण सिंह जी के जीवन चरित्र के वर्णन प्रसंग से कई जगह भूमिहार ब्राह्मणों को स्पष्ट शब्दों में ब्राह्मण लिखा और सिद्ध भी किया है। परन्तु हँसी तो हमें उनकी इस बात पर आती है कि, उनसे भी अपनी आन्तरिक कलुषता प्रकट किये विना रहा नहीं गया और एक जगह टिप्पणी में वही जरासन्ध वाली किंवदन्ती को भारत वर्षीय राज दर्पण से ज्यों का त्यों उद्धत कर दिया और लिख भी दिया की 'भारतवर्षीयराजदर्पण' में ऐसा लिखा है। भला उनको इस लेख के सारासार का विचार तो करना चाहता था। परन्तु शोक, कि उसी अन्ध परम्परा के कीचड़ में आप भी फंस गये। अस्तु, उसके पृथक खंडन की आवश्यकता नहीं है, किन्तु जिस पुस्तक से उन्होंने उद्धृत किया, उसी पुस्तक के खंडन से उसका भी खंडन हो चुका। विशेष हंसी तो हमको उनके इस लेख पर आती है, जो उन्होंने पूर्वोक्त महाराज राम कृष्णसिंह जी के जीवन चरित्र के वर्णन प्रसङ्ग में लिखा है कि, 'किसी ग्राम के निवासी भूमिहार ब्राह्मण क्षत्रियों के हुक्के पिया करते थे, जिसे महाराज रामकृष्ण ने छुड़ाया'। भला क्याही विचित्र बात है! आपको वैसा लिखते लज्जा भी न आई! क्योंकि जब मगध या अन्य सभी प्रान्तों में उनके भाई सभी क्षत्रिय भूमिहार ब्राह्मणों को अन्य ब्राह्मणों की तरह पालागन या प्रणाम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करते हैं, तो यह कब सम्भव था कि वे ही क्षत्रिय उनके साथ हुक्का पानी रखते थे ? और यदि हुक्का पानी था, तो खान पान या विवाह सम्बन्ध वगैरः भी उनके साथ जरूर ही रहा होगा । क्योंकि यह नियम है कि जिनके साथ खानपान होता है उन्हीं के साथ हुक्कापानी भी होता है। इस लिये अच्छा हुआ होता है कि उस खानपान और विवाह सम्बन्ध वगैरः का भी परिचय आप ने दिया होता। क्योंकि इससे आप के लेख की पुष्टि हो जाती और वह प्रमाणित हो जाता। नहीं तो अब यही प्रश्न उठता है कि विना जड़ मूल की ऐसी बात, जो क्षत्रिय और भूमिहार ब्राह्मणों में इस समय कहीं भी नहीं पाई जाती है, आपने किस आधार पर लिखी ? यदि आपको विवेक था, तो उस प्रमाण को भी उसी पुस्तक में उद्धृत कर देना था। नहीं तो यदि हम भी आप के वंश या समाज के विषय में ऐसी कल्पित बातें लिखडालें कि अमुक ग्राम के क्षत्रिय अमुक नीच जाति के लोगों के साथ हुक्का पानी करते थे, जिसे आपके अमुक पुरुष ने हटाया। तो कमसे कम आपको भी अवश्य ही मान लेना पड़ेगा ।

अब रही बाबू हरिश्चन्द्र की बात, जो उन्होंने अपने मुद्रा राक्षस नाटक के हिन्दी अनुवाद ग्रन्थ में लिखी है। उसके विषय में हम क्या कहें, जो कुछ कहना था कह चुके। क्योंकि उन्होंने केवल भूमिहार ब्राह्मणों के दिल दुखाने की ही इच्छा से अपने उक्त ग्रन्थ में उसी मगधराज जरासन्ध के यज्ञ वाली किंवदन्ती को भारत वर्षीय राजदर्पण से उद्धृत कर दिया। गोया वह भारतवर्षीय राजदर्पण ऋषि ग्रन्थ हो गया, जिसे ऐसे ऐसे प्रतिष्ठित लोग भी प्रमाण देने लगे। वाहरे अन्धपक्षपात ! जिस ग्रन्थ की बात ऐसी निर्मूल, वही माननीय लोगों में भी आदर पावे ! किसी कविने ठीक ही कहा है कि:-

अहोमहान्तोऽपिमहेन्द्रजालेमज्जन्तिमायाविवरस्यतस्य॥

अर्थात् 'क्या ही आश्चर्य है कि बड़े लोग भी परमात्मा के माया जाल में फंस कर अनापसनाप ही कर बैठते हैं'। बाबू रामदीन सिंह बाबू हरिश्चन्द्र के अनन्य भक्त थे, जिससे उनकी सब पुस्तकें खड्ग विलास प्रेस में छपवाईं। इसलिये जो बात रामदीन सिंह लिखें वह इनसे क्योंकर छूटने की ? अथवा इनकी बात उनसे क्योंकर छूट सकती थी ? इसी लिये दोनों बाबू मिलगये। परन्तु बाबू हरिश्चन्द्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो हिन्दी समाज में एक बड़े ही प्रतिष्ठित पुरुष थे। अतः उनको यह बात लिखते समय अवश्य यह विचारना था कि किसी समाज के विषय में यह हमारा अकाण्ड ताण्डव कैसी हलचल मचावेगा। लेकिन उनका अपराध ही क्या कहा जा सकता है? क्योंकि उस समय तो मुद्रा राक्षस लिख रहे थे! यदि उन्हों ने ऐसा लिखने का निश्चय ही कर लिया था तो, क्याही अच्छा होता कि वे इसे प्रमाणित कर देते! जिससे भविष्य के लिये उनकी ये बातें पत्थर की लकीर हो जातीं और कोई भी उन्हें खण्डन करने का साहस न करता। परन्तु उस बात को तो वैदेशिकों ने युक्ति से ही बातकी बात में उड़ा दिया। हालां कि वे लोग हमारे हिन्दू समाज से विशेष परिचित नहीं होते हैं। परन्तु एक मान्य हिन्दू धोखा खा जावे यह क्याही आश्चर्य है!!

अन्त में बाबू हरिश्चन्द्र के दो एक और अनुयायियों और भक्तों की लीला दिखला कर इस विषय को समाप्त करना चाहते हैं। काशी नागरीप्रचारिणी सभा की तरफ से जो रामायण इंडियन प्रेस में छपी है उसके आरम्भ में उसके सम्पादक बाबू श्यामसुन्दर दास ने तुलसी दास की जीवनी लिखते हुए उनके 'मित्र और स्नेही' प्रसंग में भदैनी, काशी, के चौधरी लोगों के पूर्वज टोडर का जिक्र किया है और लिखा है कि 'इस टोडर के वंशज क्षत्रिय हैं'। यही बात फिर उन्हों ने स्वसम्पादित सटीक तुलसी कृत में दोहराई है और फिर 'तुलसीग्रन्थावली' में श्री रामचन्द्र शुक्ल, लाला भगवानदीन और बाबू ब्रजरत्नदास रूप सम्पादकत्रयी ने उसे ही ज्यों का त्यों उद्धृत कर दिया है! इस प्रकार हम देख रहे हैं कि अन्धपरम्परा का प्रवाह बह चला है। बिना समझे बूझे नकल करने की आदत हम लोगों में ऐसी आगई है कि हम अपने अनुसंधान और विचार को ताक पर रख आंख मूंदकर दूसरों का थूका चाट लेने में ही अपने को कृतकृत्य मानते हैं। जहीं तो ऐसे विवादग्रस्त विषय में यों आंख मूंदकर क्यों लिखा जाता? डाक्टर ग्रियर्सन ने उक्त टोडर को अकबर का मंत्री राजा टोडर मल लिखा, तो आप लोगों ने उस का खंडन कर उन्हें क्षत्रिय लिख मारा। वाहरे खोज! और वाहरे नागरीप्रचारिणी सभा का अनुसन्धान! आप लोग उस के कर्णधार हैं। मगर जब स्वयं बह रहे हैं तो ईश्वर ही बेड़ा पार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करे। भलेमानुसो, जिस टोडर को आपलोग क्षत्रिय लिखरहे हैं वे ब्राह्मण हैं। उन्हीं के वंशज भदैनी, नई बस्ती, नदेसर और सुरही के चौधरी लोग हैं। आप लोंगों ने जिन पांच गांवों का जिक्र किया है वह इन्हीं के अधिकार में थे और इन्हीं से महाराज बनारस को मिले। अभी तक उनका कुछ अंश इन लोगों में से किसी किसी के अधिकार में है भी। ये लोग काश्यप गोत्री भूमिहार ब्राह्मण हैं। मगर इस लिखने में आपलोगों का दोषही क्या? जब कि आपलोगों को साधारण भूगोल का ज्ञान भी नहीं है। क्योंकि कांट ब्रह्मपुर को आप लोग उन्हीं पोथों में बलिया जिले में लिखते हैं। हालां कि वह स्थान शाहाबाद में है। तो फिर यह तो अनुसन्धान की बात ठहरी। पर, स्मरण रहे कि नागरी प्रचारिणी एक जवाबदेह संस्था है न कि आपकी बपौती। यदि उसके नाम पर ऐसा लबड़धोंधों होगा तो ठीक नहीं। इसका परिणाम ठीक न होगा। क्या इसी बुद्धि से 'हिन्दी शब्द सागर' का सम्पादन हो रहा है? खुदाही खैर करे! यदि शायद यह कहें कि ये लोग क्षत्रिय ही हैं, न कि ब्राह्मण। तो हम आप लोगों को साबाशी देंगे और कहेंगे कि आप लोगों ने बहादुर का काम किया। पर याद रहे कि खत्री लोगों को क्षत्रिय लिखने में आपको जितना सबूत मिला क्या भूमिहारों के ब्राह्मण होने में उतना भी न मिला? क्या क्षत्रियों के साथ क्षत्रियों के विवाह और खान पान वगैरः होते हैं? और भूमिहारों के मैथिलों, कान्य-कुब्जों या सर्यूपारियों के साथ? इसका पता तो इसी ग्रन्थ से ही लग गया होगा या लग जायगा। हां, जाग कर सोना और बात है।

जब ऐसा लिखने का प्रमाण आप से पूछा गया तो आप लिखते हैं कि 'टोडर को क्षत्रिय मानने का कोई दृढ़ प्रमाण मेरे पास नहीं है। तुलसीदास के दोहे का 'ठाकुरो' शब्द और टोडर के वंश के नाम से यह अनुमान किया गया है कि ये लोग क्षत्रिय थे। डाक्टर ग्रियर्सन और पं० सुधाकर द्विवेदी ने भी यही माना है। यदि इस वंश के लोग अपने को भूमिहार कहते हैं तो यही मानना उचित होगा'। यह तो खासी बुद्धिमानी ठहरी कि 'ठाकुर' शब्द और नाम के अन्त में शायद 'सिंह' देखकर क्षत्रिय निश्चय कर लिया! मैथिल, कान्यकुब्ज, गौड़ और सनाढ्य ब्राह्मणो; सजग!

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं तो इस चक्की में पिस जाओगे! इस कसौटी पर खरे न निकल सकोगे! क्यों जनाब, क्या तुलसीदास का ही 'कहहिं सचिव सब ठकुर सुहाती' भूल गया, जिससे यह अनर्थ कर डाला? क्या क्षत्रियों को क्षत्रिय लिखने में इस कसौटी का प्रयोग किया गया है? वहां भी तो आपने कमाल किया है! हिन्दी शब्द सागर में उन्हें क्षत्रिय लिखते हैं और यहां लिखते हैं कि 'राजा टोडर मल टंडन खत्री थे और इस टोडर के वंशज क्षत्रिय हैं'। उन बेचारों की फजीहत क्यों करते हैं? अथवा मर्जी ही तो ठहरी! अस्तु।

इन्हीं कूप मण्डूक भलेमानुसोंकी एक और भी काली करतूत दिखला कर बस करेंगे। काशी नागरीप्रचारिणी की तरफसे जो कोष 'हिन्दी शब्द सागर' तैयार हो रहा है उसके सम्पादक तो वही हुजूर श्याम सुन्दर दास हैं और उनके जी हुजूरों में लाला भगवानदीन के सिवाय लाला जगन्मोहन और श्रीरामचन्द्र शुक्ल वगैर हैं। इस कोष में भी ये महारथी एक प्रकार से लोगों के विधाता ही बन रहे हैं और जिस किसी के बारे में जोही मनमें आता है लिखकर दिलकी कसक निकाल लेते हैं। साथही, अपना और अपने इष्ट मित्रों का काम भी बना लेते हैं। वे 'तगा' शब्दके बारे में लिखते हैं कि 'एक जाति जो रुहेल खंड में बसती है। इस जातिके लोग जनेऊ पहनते और अपने आपको ब्राह्मण मानते हैं'। जिस छल, नीचता और चालाकी से यह लिखा गया है वह उन्हीं को मुबारक हो। अच्छा फिर 'भूमिहार' शब्द पर लिखते हैं कि 'एक जाति जो प्रायः बिहार में और कहीं कहीं संयुक्त प्रान्त में भी पाई जाती है। इस जाति के लोग अपने आपको ब्राह्मणों के अन्तर्गत बतलाते हैं और प्रायः अपने आपको 'बाभन' कहते हैं। इस जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की बातें सुनने में आती हैं। कुछ लोग कहते हैं कि जब परशुराम ने पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित कर दिया था, तब जिन ब्राह्मणों को उन्होंने राज्य भार सौंपा था, उन्हीं के वंशधर ये भूमिहार या बाभन हैं। कुछ लोगों का कहना है कि मगध के राजा जरासन्ध ने अपने यज्ञ में एक लाख ब्राह्मण बुलाये थे। पर, जब इतनी संख्या में ब्राह्मण न मिले, तब उनके एक मंत्री ने छोटी जाति के बहुत से लोगों को यज्ञोपवीत पहना कर ला खड़ा किया था, और उन्हीं की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सन्तान ये लोग हैं। जो हो, पर इसमें सन्देह नहीं कि इस जाति में ब्राह्मणों के यजन, याजन आदि कर्मों का नितान्त अभाव देखने में आता है और प्रायः क्षत्रियों की अनेक बातें इनमें पाई जाती हैं। ये लोग दान नहीं लेते और प्रायः खेती बारी या नौकरी करके निर्वाह करते हैं'। सारांश, इससे खराब लिखा नहीं जा सकता।

इन मूर्खतापूर्ण बातों का अब हमें उत्तर देना नहीं है। जो कहना था कह चुके हैं। पर, इतना अवश्य कहना है कि सिवाय कूप मण्डूक के और कोई इसे यदि कहेगा तो सिर्फ पक्षपाती। हजारो बाग में तो भूमिहार लोग पुरोहिती पेशा करते ही हैं और गया-देव-के सूर्य मंदिर के पुजारी यही लोग हैं। यह गायत्री के आचार्य होते ही हैं। यह पुरोहिती सैकड़ों, हजारों वर्ष से है। इसके सिवाय अबतो इन में हजारों पुरोहिती करने वाले हैं। फिर पुरोहिती का इन में नितान्त अभाव बताना मूर्खता नहीं तो और क्या है? लाख या सवालाख ब्राह्मणों की कहानी तो सभी ब्राह्मण दलों में फैली है और उनकी पुस्तकों में लिखी भी है। फिर सिर्फ भूमिहारों के ही विषय में उसके नाम लेने की क्या आवश्यकत आपड़ी? यह केवल आन्तरिक नीचता है। अच्छा, तो क्या कायस्थों और खत्रियों के विषयों में एक बारगी साफही मामिला है? क्या खत्रियों को लोग क्षत्रिय या क्षत्रियों की एक शाखा मानते हैं या सिर्फ उन्हीं लोगों का-श्यामसुन्दर के भाइयोंका-ही दावा है? तो फिर उनके बारे में केवल क्षत्रिय या क्षत्रियों की शाखा ही क्यों लिखा गया और यह दावे की बात क्यों न लिखी गई? सिर्फ इसी लिये कि श्यामसुन्दर दास कोष के सम्पादक ठहरे और वह है उनकी जाति। लाला लोग इस लिये चुप रहे कि कायस्थों के विषय में भी ऐसा ही लिख दिया जायगा, शायद यह समझौता हो चुका था। बस फिर क्या? 'हम तुम राजी तो क्या करेंगे शहर के काजी'। हम लाला भगवान दीन की 'लक्ष्मी' वाली भलेमानुसी खूब जानते हैं, भूले नहीं हैं।

जब कायस्थों और उनके भेद-करण, अम्बष्ठ-का प्रसंग आया तो 'हिन्दुओं की एक जाति का नाम', 'कायस्थों का एक अवान्तर भेद', 'कायस्थों का एक भेद।' इत्यादि लिखकर मौन हो गये। याज्ञवल्क्यस्मृति के आचाराध्याय के ९१, ९२ और ३३६ श्लोक आप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लोग भूल ही गये। क्योंकि आप को तो विशेष चिन्ता इस बात की है कि भूमिहारों का विवरण जैसे हो दिया जावे, दूसरों का नहीं। क्यों हुजूरो, अम्बष्ठ और करण का जो अर्थ मनु और याज्ञवल्क्य ने किया है कि ब्राह्मण पुरुष से वैश्या स्त्री में और वैश्य से शूद्रा में उत्पन्न होने वाली जाति, और जिसे आप लोगों ने भी लिखा है उनमें और आपके करण एवं अम्बष्ठ कायस्थों में यदि कोई भेद है तो उसे भी क्यों न लिख दिया और ३३६ वें श्लोक का उत्तर भी क्यों न दे दिया ? ताकि आपके राज्य में आप लोगों की जाति अचल हो जाती और आप के भाई खूब समझ जाते कि 'सैंया भये कोतवाल अब डर काहेका'। हालां कि वह लोग तो इस समय भी ऐसा ही समझते हैं। यदि मिथिला और बंगाल के करण और अपने दूसरे भाइयों की दशा जाँचें तो आपकी गर्मी ही ठंढी हो जाय वहां दूसरे करण नहीं हैं। हमें तो आश्चर्य है कि जैसे एक 'दास' ने अपने समाज को साफही क्षत्रिय लिख दिया वैसे ही दूसरे दो दासों ने ऐसा क्यों नहीं कर डाला ? क्या पीछे से समझौते में फर्क पड़गया ? हमें 'वर्मा' नामधारियों की इस बदकिस्मती पर तर्स आता है ! कोष में 'भूमिका' शब्द पर आप लोगों ने लिखमारा कि 'वेदान्त के अनुसार चित्त की पांच अवस्थायें, जिनके नाम ये हैं—क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध'। भलेमानुसो, ये योगके अनुसार चित्त की अवस्थायें हैं। वेदान्त के अनुसार तो ७ हैं, जिन्हें योगवासिष्ठ में 'सप्तभूमिका' कहा है। क्या इसी बुद्धि से शब्द सागर तैयार हो रहा है ? यह तो आप लोगों के दिमाग शरीफ का एक छोटासा नमूना है। आपने कितने अनर्थ करके नागरी प्रचारणी को बदनाम किया होगा इसका ठिकाना नहीं ! अस्तु।

पूर्वोक्त अब तक की बातों से पाठकों को विदित हो गया होगा कि भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में जितनी कुकल्पनायें आजतक की गई और पुस्तकों में भी लिखी गई हैं, वे कैसी निर्मूल और लेखकों के हृदय की कालिमा की सूचक हैं। हिन्दू समाज के प्रतिष्ठित पुरुषों द्वारा किये गये पुस्तकाकार आक्षेप आजतक मेरी दृष्टिमें इतने नहीं पड़े हैं, जिनका समुचित खण्डन इस प्रकरण में कर दिया गया है। इसलिये अब इन्हीं कल्पित आधारोंपर अपने २ मानसिक प्रासाद खड़े

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करने वाले–इन्हीं को ब्रह्म वाक्य मानने वाले–उद्धत सज्जनों से मेरी यही विनीत प्रार्थना है कि, अब इसी अंजन से वे अपने ज्ञान नेत्रको निर्दोष करलेवें, जिससे भविष्य में उन्हें कभी भी भूमिहार ब्राह्मणों की सामाजिक स्थिति के विषय में दोष की स्फूर्त्ति न होवे।

२–दोनवार आदि शब्द मीमांसा।

यह तो हुई हमारे पण्डितमानियों, बाबुओं और नेताओं की पोपलीला। अब उनकी इन पूर्वोक्त कुकल्पनाओं के कल्पित आधारों का भी विचार यहीं कर लेना चाहिये। इन लोगों ने जो कुछ बक डाला, वैदेशिकोंने भी जो कुछ विपरीत स्वर आलापे और बहुतेरे अन्य लोगों को भी जो ऐसी शंकायें उठा कीं या करती हैं, जिनका सम्बन्ध केवल अयाचक ब्राह्मणों की सामाजिक स्थिति से ही है, उन सभी का कारण यह है कि ये सभी कूप-मण्डूक–प्राय हो रहे हैं। इसलिये अदनी अदनी बातों का भी तत्त्व न समझ मन मानी बात सुनाने लग जाते हैं। बात असल यह है कि इस ब्राह्मण समाज में कुछ अवान्तर (छोटे छोटे) दल (Sub-communities) ऐसे हैं, जिन्हें देखते ही अपरिपक्व विचार वालों के दिल फड़क उठते हैं। अर्थात् पश्चिमा, भूमिहारादि ब्राह्मणों में बहुत से छोटे छोटे दलों के ऐसे नाम हैं जो क्षत्रियों या अन्य वर्णों में भी पाये जाते हैं। जैसे द्रोणवार या दोनवार, सकरवार, किनवार, बरुआर, बेमुआर, कुढ़नियां, गौतम, भृगुवंश, दीक्षित, कौशिक और सोनपोखरिया या सरफकरिया इत्यादि नाम दोनों (ब्राह्मण और क्षत्रिय) समाजों में पाये जाते हैं। बस अब क्या था, इतना देखते ही लोगोंने जो चाहा लिख मारा। परन्तु इस विषय में हमारा निवेदन यह है कि, जब 'आईन अकबरी' जैसे प्राचीन ग्रन्थों में जैसे अन्य ब्राह्मण जमींदारों को ब्राह्मण या जुन्नारदार लिखा, वैसे ही इन दोनवार और किनवार आदि अयाचक ब्राह्मण दलों को भी जुन्नारदार या ब्राह्मण हीं लिखा है, जैसा कि प्रथम परिच्छेद में हीं विस्तृत रूप से दिखला चुके हैं, तो क्षत्रियों में या अन्य जातियों में दोनवार आदि संज्ञायें देखकर सन्देह करना या मिथ्या कल्पनायें करना अनभिज्ञता नहीं तो और क्या कहा जा सकता है?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक बात और भी विचारणीय है कि यदि केवल नामोंकी एकता देखकर ही एकता का संशय करलिया जावे, तो क्या दुनियां में एक नाम वाले भिन्न भिन्न जाति और समाज के लोग नहीं होते ? तो फिर क्या उन्हें एक ही जाति के समझ लेना होगा ? दूसरी बात यह है कि यदि मैथिल संज्ञा मिथिला के ब्राह्मणों और करण कायस्थों की है और दोनों का वेष भी लगभग एकसा ही है, तो क्या उन दोनों को एक जाति का ही समझ लेना चाहिये ? अथवा उसे देख उनमें से किसी की भी असलियत में सन्देह करना उचित है ? क्या लोगों को यह नहीं विदित है कनौजिया (कान्यकुब्ज) ब्राह्मण, हलवाई, कहार और क्षत्रिय आदि भी कहे जाते हैं ? क्योंकि 'कान्यकुब्ज हलवाई वैश्य' नामक मासिक पत्र काशी से ही प्रकाशित होता है। इसी तरह कायस्थ आदि भी गौड़ नहीं कहे जाते हैं क्या ? तो क्या कान्यकुब्ज या गौड़ कहलाने के कारण सभी ब्राह्मण, क्षत्रिय, हलवाई, कहार और कायस्थ एक ही जाति के समझे जावेंगे ? बहुत सम्भव है कि उन लोगों के गोत्र भी एक ही होवें। क्योंकि जोहीं गोत्र ब्राह्मणों के होते हैं, वे ही अन्य जातियों के भी, कारण कि गोत्र चलाने वाले ऋषि लोग तो प्रायः सभी के एक ही थे।

साथ ही, सम्भवतः इसी कारण से यह भी नियम रखदिया गया है कि पुरोहित का जो गोत्र होवे वही क्षत्रियादि यजमान को भी अपना बताना और संकल्प आदि में उसी का व्यवहार करना चाहिये *। इसी लिये यदि कोई यह कहने का भी उत्साह करता कि प्रायः दोनवार क्षत्रियों और भूमिहार ब्राह्मणों के गोत्र एक ही होते हैं। इसी प्रकार किनवार वगैरः के भी। इसीसे उनके विषय में विविध-शंकायें हुआ करती हैं। परन्तु कान्यकुब्ज, गौड़ और मैथिल आदि नाम यद्यपि बहुत सी जातियों के एकही हैं, तथापि गोत्रों का भेद होने

* निर्णयसिन्धु, तृतीय परिच्छेद, गोत्रप्रवर के प्रकरण में लिखा है कि 'अज्ञात चेत्पुरोहित प्रवरेणाचार्यप्रवरेण वेतिस्वगोत्राद्यज्ञाने'-यदि अपने गोत्रप्रवर का ज्ञान न हो तो पुरोहित वा आचार्यके गोत्रप्रवरसेही व्यवहार किया जाना चाहिये। मगर आश्वलायन, कात्यायन और लौगाक्षि का सिद्धान्त है कि क्षत्रियों और वैश्यों का व्यवहार सर्वदा ही आचार्य या पुरोहित के ही गोत्रप्रवरसे होना चाहिये, जैसा कि 'पुरोहितप्रवरो राज्ञामेतेन वैश्यप्रवरो व्याख्यातः' इत्यादि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से उनके विषय में कोई भी शंका नहीं होती। तो उसकी यह उक्ति भी खण्डित होगई, क्योंकि कान्यकुब्ज कहलाने वालों के भी गोत्र एकही हो सकते हैं। इस विषय में अभी आगे भी कहेंगे।

इसी तरह यह भी देखा जाता है कि कायस्थ जाति के जो अवान्तर दल श्रीवास्तव और सकसेना वगैरः कहलाते हैं और क्षत्रियों में राठौर आदि कहे जाते हैं, वेही नाम भड़भूजों में भी पाये जाते हैं। जैसा कि मिस्टर क्रुक ने अपनी उक्त जाति सम्बन्धी पुस्तक के द्वितीय भाग के १३ वें पृष्ठ में यों लिखा है:-

BHARBHUJA—The last census classifies them under the main heads of Bhatnagar, Jagjadon, Kaithiya, Kandu, Rathaur, Saksena, Sribastab. Some illustrate some real or supposed connection with other castes and tribes; such as the Bhadauriya, Chaube, Chauhan, Kanjar, Kayath, Khatri and Lodhi. P. 13. Vol. II.

इसका अनुवाद यह है कि 'अन्तिम मनुष्य गणना के अनुसार भड़भूजा लोग भटनागर, जगजादों, कैथिया, कांदू, राठौर, सकसेना, और श्रीवास्तव इन छोटे छोटे दलों में विभक्त हैं। बहुतेरे अपने वास्तविक अथवा काल्पनिक सम्बन्ध भदौरिया, चौबे, चौहान, कंजर, कायथ, खत्री और लोधियों के साथ सिद्ध करते हैं।'

इसी तरह गौड़ ब्राह्मणों में चमर गौड़ और गूजर गौड़ इत्यादि संज्ञायें हैं। तो क्या इन सब नामों को देखकर आस्तिक और विचार बुद्धि से यह सन्देह करना उचित है कि भड़भूजा, कायस्थ, श्रीवास्तव, सकसेना, चौबे, चौहान, खत्री और राठौर एवं गूजर, चमार और गौड़ ब्राह्मण इत्यादि एकही हैं? इन सब बातों को देखकर यही मानना होगा कि नामों के एक हो जाने या गोत्रों के भी एक होने से जाति एक नहीं समझी जा सकती। क्योंकि जो गाजीपुर, बनारस या मुजफ्फर पुर में उत्पन्न होने वा रहने वाले हैं और उनकी जातियां भिन्न भिन्न हैं और सम्भव है कि बहुतेरों के गोत्र भी एकही हों। अब यदि वे लोग किसी कारण से अन्यत्र चले जावें तो गाजीपुरी, बनारसी या मुजफ्फरपुरी इस एकही नाम से वे सभी बोले जावेंगे। जैसा कि लोग कहा करते हैं कि यह तो बनारसी माल, बनारसी साड़ी या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बनारसी जवान है। इसी तरह भोजपुरी इत्यादि। ऐसा होने पर भी वे सभी कदाचित् भी एक नहीं समझे जाते या जा सकते हैं। उसी तरह मिथिला, कान्यकुब्ज अथवा गौड़ वगैरः देशों में भी रहने वाले सभी जाति वाले एक ही नाम से कहे जाने पर भी एक जाति या दल के समझे नहीं जाते या जा सकते हैं। ठीक वही दशा दोनवार और किनवार आदि नामों के भी विषय में समझना चाहिये, कि ब्राह्मण या क्षत्रिय अथवा अन्य जातीय भी एक ही स्थान में रहने से एक नाम से पुकारे जाने लगे, जैसा कि अभी दिखलाया जावेगा। और यद्यपि सभी एक नाम वाले भूमिहार ब्राह्मण और क्षत्रियों के गोत्र एक नहीं हैं, जैसा कि इसी प्रकरण में विदित होगा, तथापि जिनके गोत्र एक से हैं उनके विषय में वही बात हो सकती है जैसी कि अन्य लोगों के विषय में कह चुके हैं, कि एक ही गोत्र वाले भी भिन्न भिन्न जाति वाले एक स्थान में रह सकते हैं और उसी से उनका नाम भी एक ही पड़ सकता है।

यह भी बात हुई होगी, कि जब वे लोग किसी स्थान से हट चले, तो क्षत्रियों ने देखा कि हमारे पूर्वस्थान वाले अयाचक ब्राह्मण कहां बसे हैं। और जहां उन्हे पाया, आप भी उन्हीं के पास ही बस गये। क्योंकि अन्य देश में जाने पर भी वहां पर लोग विशेष कर स्वदेश के ही लोगों का साथ ढूंढ़ा करते हैं। इसीलिये एक नाम वाले अयाचक ब्राह्मण और क्षत्रिय एकही जगह पाये जाते हैं। जैसा कि मैथिल और गौड़ एवं कान्यकुब्ज नाम वाली सभी जातियां प्रायः पास ही पास पाई जाती हैं। अयाचक ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बहुत से गोत्रों के एक ही होने का एक यह भी कारण हो सकता है, कि कोई ब्राह्मण प्रथम याचक (पुरोहित) रहा होगा और क्षत्रियों का पुरोहितो करता रहा होगा। परन्तु समय पाकर वह अयाचक हो गया, जैसा कि सर्वदा से हुआ करता है, तो अपने सगोत्र अयाचक ब्राह्मणों में मिल गया, जैसा कि अभी तक बराबर हुआ करता है। परन्तु प्रथम पुरोहित होने से उसी का गोत्र उन क्षत्रियों का भी कहलाता था, इसी लिये उसके पश्चात् आज तक एक ही गोत्र कहलाता ही रह गया।

सबसे विश्वसनीय और प्रामाणिक बात यह है कि दोनवार और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किनवार इत्यादि नाम वाले जो क्षत्रिय हैं, वे प्रथम अयाचक ब्राह्मण ही थे। परन्तु किसी कारण वश इस ब्राह्मण समाज से अलग कर दिये गये वा होगए। बनारस-रामेश्वर के पास गौतम क्षत्रिय अब तक अपने को कित्थू मिश्र या कृष्ण मिश्र के ही वंशज कहते हैं, जिन मिश्रजी के वंशज सभी गौतम भूमिहार ब्राह्मण हैं। और भूमिहार ब्राह्मणों से पृथक् होने का कारण वे लोग ऐसा बतलाते हैं कि कुछ दिन हुए हमारे पूर्वजों को गौतम ब्राह्मण हिस्सा (जमींदारी वगैरः का) न देते थे, इसलिये उन्होंने रंज होकर किसी बलवान क्षत्रिय राजा की शरण ली। परन्तु उसने कहा कि यदि हमारी कन्या से विवाह कर लो, तो हम तुम्हें लड़कर हिस्सा दिलवा देंगे। इस पर उन्होंने ऐसा ही किया और तभी से भूमिहार ब्राह्मणों से अलग हो कर क्षत्रियों में मिल गये। यह उचित भी है। क्योंकि जैसा कि प्रथम हीं इसी प्रकरण में दिखला चुके हैं कि, मनु याज्ञवल्क्यादि सभी महर्षियों का यही सिद्धान्त है कि ब्राह्मण यदि क्षत्रिय की कन्या से विवाह करले, तो उसका लड़का शुद्ध क्षत्रिय ही होगा। क्योंकि उसका मूर्द्धाभिषिक्त नाम याज्ञवल्क्य ने कहा है और 'मूर्द्धाभिषिक्तो राजन्यः' इत्यादि अमरकोष के प्रमाण से तथा महाभारत और वाल्मीकि रामायण आदि से मूर्द्धाभिषिक्त नाम क्षत्रिय का ही है। मनु भगवान ने तो,

पुत्रा येऽनन्तरस्त्राजाःक्रमेणोक्ता द्विजन्मनाम्।
तानननन्तरनाम्नस्तु मातृदोषात्प्रचक्षते ॥ अ. १० ॥

इत्यादि श्लोकों में उसे स्पष्ट ही क्षत्रिय बतलाया है। ये गौतम क्षत्रिय केवल काशी-रामेश्वर के पास दो चार ग्रामों में रहते हैं।

इसी तरह किनवार क्षत्रियों की भी बात है। वे केवल बलिया जिले के छत्ता और सहतवार आदि दोही चार गावों में प्रायः पाये जाते हैं। जिनके विषय में विलिमय इरविन साहब (William Irvine Esqr.) कलक्टर १७८०-८५ ई. ने बन्दोबस्त की रिपोर्ट (Reports on the Settlement) में लिखा है कि किनवार ब्राह्मणों के एक पुरुष कल कल राय ने किसी क्षत्रिय जाति की कन्या से ब्याह करलिया। जिससे उनके वंशज भूमिहार ब्राह्मणों से अलग होगये और उन्हीं पूर्वोक्त दो चार ग्रामों में पाये जाते हैं। इसी तरह दोनवार क्षत्रिय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी किसी कारण वश दोनवार ब्राह्मणों से अलग करदिये गये। जो गढ़ (आजमगढ़) के पास कुछ ही ग्रामों में पाये जाते हैं, परन्तु वहां दोनवार ब्राह्मण लोग १२ कोस में विस्तृत हैं। इसी तरह बरुवार क्षत्रियों को भी जानना चाहिये। वे भी केवल आजमगढ़ जिले के थोड़े से ग्रामों में हैं। परन्तु बरुवार नामके ब्राह्मण तो उसी जिले के सगरी परगने के १४ कोस में भरे पड़े हुए हैं। सकरवार क्षत्रिय भी उसी तरह किसी कारण विशेष से सकरवार ब्राह्मणों से विलग हो गये, जो गहमर वगैरः दो एक ही स्थानों में पाये जाते हैं। जब कि सकरवार नामके ब्राह्मण गाजीपुर के जमानियां परगने और आरा के सरँगहा परगने के प्रायः १२५ गावों में भरे पड़े हुए हैं। जो दोनवार अयाचक ब्राह्मण जमानियां परगने के ताजपुर और देवरिया प्रभृति बीसों ग्रामों में पाये जाते हैं, उन्हीं में से कुछ लोग किसी वजह से निकल कर क्षत्रियों में मिलगए और गाजीपुर शहर से पश्चिम फतुल्लइ पुर के पास दो चार ग्रामों में अब भी पाये जाते हैं। इसी प्रकार अन्य भी भूमिहार ब्राह्मणों के से नामवाले क्षत्रियों को जानना चाहिये।

सारांश यह है कि सभी दोनवार आदि नाम वाले क्षत्रियों की संख्या बहुत ही थोड़ी है, परन्तु इन नामों वाले भूमिहार ब्राह्मणों की संख्या ज्यादा है। इससे स्पष्ट है कि इन्हीं अयाचक ब्राह्मणों में से वे लोग किसी कारण से विलग होगये हैं। इसीलिये उनकी दोनवार आदि संज्ञाएं और गोत्र वे ही हैं जो दोनवार आदि नाम वाले ब्राह्मणों के हैं। इस संख्या वगैरः का पता हमने स्वयं उन उन स्थानों में भ्रमण कर और जानकार लोगों से मिलकर लगाया है। जिसे इच्छा हो वह प्रथम जांच कर ले, पीछे कुछ कहे या लिखे। यद्यपि सकरवार क्षत्रिय आगरे के आस पास तथा अन्य प्रान्तों में बहुत पाये जाते हैं, तथापि उन लोगों का गहमर आदि ग्रामों वाले सकरवार क्षत्रियों से कुछ संबंध नहीं है। क्योंकि ये सब सकरवार कहे जाते हैं और आगरे वाले सिकरीवार; कारण कि उनका आदिम स्थान फतहपुर सिकरी या सिकरी है और इनका स्थान सकरा डीह है। साथ ही, आगरे वालों का गोत्र शाण्डिल्य है और गहमर वालों का सांकृत, जैसा कि सकरवारों के निरूपण में आगे दिखलावेंगे। अतः सकर-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वारों को सिकरीवारों से पृथक् ही मानना होगा।

बहुत जगह अनेकों अंग्रेजों ने यह लिखा है कि जब बहुत से भूमिहार (ब्राह्मणों) और राजपूतों के गोत्र एकही हैं, जैसे किनवार या दोनवार, तो फिर वे एकही क्यों न समझे जावें? पर, उनकी यह भूल है। क्योंकि एक तो सामान्यतः वैदेशिकों को यही पता नहीं चलता कि गोत्र या मूल किसे कहते हैं। दूसरे वे लोग यह भी देखते हैं कि बहुत से लोग गोत्रों से ही पुकारे जाते हैं, जैसे भारद्वाज, गौतम और कौशिक इत्यादि। इससे उन्हें यह भ्रम हो गया कि दोनवार और किनवार भी गोत्रों के ही नाम हैं। इसी से उन्हों ने ऐसा बक डाला, जिसे देख कर आज कल के अर्द्धदग्ध लकीर के फकीर भी वही स्वर आलापने लग जाते हैं। परन्तु वास्तव में किनवार और दोनवार आदि संज्ञायें प्रथम निवास के स्थानों या डीहों से पड़ी हैं, जिन्हें मिथिला में मूल कहते हैं, और मेरठ वगैरः में निकास, न कि ये गोत्रों के नाम हैं। जैसे अन्य मैथिलादि ब्राह्मणों तथा अन्य लोगों की गौड़, कान्यकुब्ज, मैथिल, चकवार और सनैवार आदि संज्ञायें भी स्थानों के नाम से ही पड़ी हैं, न कि ये सब गोत्रों के नाम हैं।

अब हम पाठकों को इन दोनवार आदि नामों का कुछ संक्षिप्त विवरण सुना देना चाहते हैं, जिससे सब शंकायें आपही आप निर्मूल हो जावेंगी। इस जगह इस बात को पुनः स्मरण कर लेना चाहिये, कि यवन राज्य काल में जब अनेक कारणों से इतस्ततः भगेड़ मच रही थी, तो उन दिनों विशेष धर्मभीरु होने के कारण ब्राह्मणों ने अपनी धर्म रक्षा के लिये छोटे छोटे दल बनाये, जिनमें एकही प्रकार के समीपवर्त्ती ब्राह्मण सम्मिलित हुए। यह बात प्रथम परिच्छेद में ही सविस्तर दिखलाई जा चुकी है। उसी समय में प्रत्येक ब्राह्मण दल के साथ डीह (पूर्वजों के निवास स्थान) के कहने का भी प्रचार चला। जैसे पिण्डी के तिवारी और खैरी के ओझा आदि। क्योंकि इससे ठीक ठीक पता लग जाता था कि ये ब्राह्मण वास्तव में कान्यकुब्ज या सर्यूपारी हैं, क्योंकि इनके पूर्वजों के स्थान पिण्डी और खैरी आदि सर्यूपार और कान्यकुब्ज आदि देशों में हीं हैं। इसी 'डीह' को मिथिला में मूल और पश्चिम में निकास कहते हैं, जिसका अर्थ 'आदिम निवास स्थान' है, जैसा कि 'डीह' का अर्थ है। परन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह 'डीह' या 'मूल' का व्यवहार प्रायः केवल ब्राह्मणों में हीं प्रचलित था। इसी लिये अब तक भी सिवाय ब्राह्मण के अन्य जातियों में उसका व्यवहार प्रायः कहीं भी नहीं पाया जाता है। इससे भी स्पष्ट है कि जो क्षत्रियों में किनवार वगैरः नाम हैं, उनके पड़ने का वही कारण है जैसा कि अभी दिखला चुके हैं। क्षत्रिय लोगों के वंशों के नाम प्रायः उनके प्रधान पुरुषों के नाम से ही होते हैं, न कि किसी डीह से। जैसे कि रघुवंशी, यदुवंशी इत्यादि।

अस्तु, जिस तरह कान्यकुब्ज लोग डीह का व्यवहार इस प्रकार करते हैं कि क्यूना के दीक्षित, सीरू के अवस्थी और देवकुली के पाण्डे इत्यादि। इसी तरह सर्यूपारी भी। मैथिल लोग वैसा न कह कर मूल पूछने पर या तो उस स्थान का नाम भर बतला देते हैं, जैसे कि दिघवे, जाले इत्यादि। अथवा जालेवार, दिघवैत, सनैवार, चकवार इत्यादि कहते हैं। जिसका अर्थ यह है कि दिघवा, जाले या चाक आदि स्थानों के रहने वाले। और कहीं कहीं पर अनरिया, कोदरिया और ब्रह्मपुरिया आदि भी कहते हैं। जिनके अर्थ हैं कि अनारी, कोदरा और ब्रह्मपुर के रहने वाले। इसी तरह करमहे और दधिअरे इत्यादि भी समझे जाने चाहियें। तात्पर्य यह है कि वे लोग 'डीह' या 'मूल' को बहुत तरह से कहा करते हैं। और प्रथम यह बात दिखला चुके हैं कि अयाचक दलवाले ब्राह्मणों ने भी 'डीह' या 'मूल' के कहने की रीति प्रायः वही स्वीकार की जो मैथिलों में थी और तदनुसार ही दोनवार, किनवार, कुढ़नियां, कोलहा, तटिहा, एकसरिया, जैथरिया, ननहुलिया और जिझौतिया आदि कहने लगे। कान्यकुब्जों आदिसे भी इनका व्यवहार मिलता है। अतः उनकी तरह भी ये लोग कहीं २ बोले जाते हैं। जैसे भारद्वाज गोत्री कान्यकुब्ज या सर्यूपारी बाँदा के आसपास और जौनपुर जिले में दो एक जगह रवेली पंचपटिया वगैरः में दुमटेकार के तिवारी कहेजाते हैं और बहुत से भारद्वाज गोत्री भूमिहार ब्राह्मण भी पांडे या तिवारी ही कहे जाते हैं और अपने को दुमटेकार कहते हैं, जो कहीं २ बिगड़ कर 'दुमकटार' या 'डोमकटार' हो गया है। एवं बहुत से सर्यूपारी, गौड़ और कान्यकुब्ज वगैरः डीह का नाम न लेकर केवल गोत्रों से ही अपने को पुकारते हैं, जैसा कि भारद्वाज, कौ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिक इत्यादि। इस बात को पं० छोटेलाल श्रोत्रिय ने अपनी 'जात्यन्वेषण' नामक पुस्तक में स्पष्ट ही लिखा है। आजमगढ़ के जिले में भी बभनपुरा आदि दो चार ग्रामों में कुछ सर्यूपारी ब्राह्मण दूबे कहलाते हैं और अपने को 'मौनस' गोत्र से व्यवहार करते हुए, 'मौनस' कहा करते हैं। इसी प्रकार भूमिहार ब्राह्मणों में भी बहुत से ऐसे दल हैं, जो कहीं २ गोत्रों से ही अपने को पुकारते हैं, जैसे खजुरा-धुवार्जुन आदि ग्रामों वाले भारद्वाज और सुर्वत-पाली वगैरः ग्रामों वाले कौशिक कहलाते हैं। ये सब स्थान गाजीपुर जिले में हैं, इसी प्रकार बनारस में गौतम और आजमगढ़ के टीकापुर-बीबीपुर आदि ग्रामों में दोनों दलवाले भृगुवंश वा भार्गव कहे जाते हैं।

गोत्रों से पुकारे जाने में यही कारण है कि यवन काल से प्रथम तो लोग स्थायी रूप से जहां तहां पड़े रहते थे। इसलिये 'डीहों' या 'मूलों' के कहने की कोई आवश्यकता न होनेसे केवल गोत्रों से आपस के व्यवहार करते थे, जो विवाह वगैरः में आवश्यक भी था। जब यवन काल में इधर उधर भगेड़ मची तो हुलिया (पहचान) के लिये 'डीह' वा 'मूल' का व्यवहार थोड़े दिनों तक चलता रहा। परंतु उस समय भी जो लोग किसी प्रथम के निश्चित एक ही स्थान में जमे रह गये, उन्हें डीहों की आवश्यकता ही न हुई। इसलिये उनका व्यवहार पूर्ववत् गोत्रों से ही होता रहा। जैसे गौतम लोग प्रथम से ही बनारस में टिके थे और वहीं रह गये, इसीलिये वे लोग गौतम हीं कहलाते रह गये। परन्तु जो लोग उनमें से ही छपरा के किसी बड़रमी या बड़रम स्थान से भाग गये वे बड़रमियां कहलाये और कहलाते हैं और उन्हीं गौतमों में से जो प्रथम आजमगढ़ के करमा स्थान में रहते थे, जहां अब उनके स्थान में बरुवार ब्राह्मण किसी कारण से रहते हैं और वे लोग वहां से चले आकर देवगांव के पास १० या १२ गांवों में बस गये, वे करमा डीह के कारण करमाई कहलाये। परन्तु वे लोग सर्यूपारी ब्राह्मण गौतम गोत्री पिपरा के मिश्र ही हैं, जैसा कि प्रथम हीं कह चुके हैं। इसी प्रकार भृगुवंश भी आजमगढ़ में प्रथम से ही थे और वहीं रह गये। इस से उनका वही नाम रहा। परन्तु जो उनके रहने के तप्पे (परगने या इलाके) कोठा से भागकर बस्ती के कोटिया आदि स्थानों में चले गये, वे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसी तप्पे के नाम से 'कोठहा' पुकारे जाते हैं। इसी तरह गाजीपुर के जहूराबाद परगने में पुराने समय से ही रह जाने के कारण वे लोग कौशिक ही कहलाते रह गये। परन्तु छपरा के नेकती नामक स्थान से भागकर मुजफ्फरपुर और दरभंगा में जानेवाले कौशिक नेकतीवार कहलाते हैं। इसी तरह गाजीपुर के भारद्वाजों और आजमगढ़ आदि के गर्गों को भी समझना चाहिये।

अब दोनवार आदि शब्दों के अर्थ सुनिये। वास्तव में दोनवार ब्राह्मण कान्यकुब्ज ब्राह्मण, वत्सगोत्र वाले देकुली या देवकली के पांडे हैं। यह बात दोनवारों के मुख्यस्थान नरहन, रामगढ़, विभूतपुर और गंगापुर आदि दरभंगा जिले के निवासी दोनवार ब्राह्मणों के पास अब तक विद्यमान बृहत् वंशावली में स्पष्ट लिखी हुई है। वहां यह लिखा हुआ है कि देवकली के पांडे वत्सगोत्री दो ब्राह्मण, जिनमें से एक का नाम इस समय याद नहीं, मुगल बादशाहों के समय में किसी फौजी अधिकार पर नियुक्त होकर दिल्ली से मगध और तिर्हुत की रक्षा के लिये आये और पटना-दानापुर के किले में रहे। इसी जगह वे लोग रह गये और उन्हें बादशाही प्रतिष्ठा और पेन्शन वगैरः भी मिली। उनमें एक के कोई सन्तान न थी। परंतु दूसरे भाई समुद्र पांडे के दो पुत्र थे। एक का नाम साधोराम पाण्डे और दूसरे का माधव राम पांडे था। जिनमें साधोराम पांडे के वंशज दरभंगा प्रान्त के सरैसा परगने में विशेष रूप से पाये जाते हैं, यों तो इधर उधर भी किसी कारण वश दरभंगा जिले भर और बाहर भी फैले हुए हैं। बल्कि दरभंगा के हिसार ग्राम में (जनकपुर के पास) अब तक दोनवार ब्राह्मण पांडे ही कहलाते हैं। माधवराम पांडे के वंशज मगध के राकिल परगने में भरे हुए पाये जाते हैं। साधोराम पांडे के पुत्र राजा अभिमान और उनके राय गंगाराम हुए; जिन्हों ने अपने नाम से गंगापुर बसाया। वे बड़े वीर थे। उनके दो विवाह थे, और दोनों मैथिल कन्याओं से ही थे। एक स्त्री श्रीमती भागरानी चाक स्थान के राजासिंह मैथिल की और दूसरी मुक्तारानी तिसखोरा स्थान के पं० गोपीठाकुर मैथिल की पुत्री थी। एक से तीन और दूसरी से छ, इस प्रकार राय गंगाराम के ९ पुत्र हुए। जिन्हों ने नरहन, रामगढ़, विभूतपर और गंगापुर आदि ९ स्थानों में अपने २ राज्य उसी प्रान्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में जमाये। उन्हीं में से पीछे कोई पुरुष, जिनका नाम विदित नहीं है, आजमगढ़ जिले के रैनी स्थान में मऊ से पश्चिम टोंस नदी के पास आ बसे, जिनके वंशज वहां १२ कोस में विस्तृत हैं। फिर वहां से दो आदमी आकर जमानियां परगना, जिला गाजीपुर में बसे और पीछे से बहुत गावों में फैल गये। इन में से ही कुछ बनारस प्रान्त के मद्धूपुर आदि स्थानों में भी आ बसे और इसी तरह दो २ एक २ ग्राम या घर बहुत जगह फैल गये। रैनी स्थान से ही जो लोग बलिया के पास जीराबस्ती आदि तीन या चार ग्रामों में बसे हुए हैं, वे किसी कारण वश पाण्डे न कहे जाकर तिवारी कहलाने लगे, जो अब तक तिवारी ही कहे जाते हैं। जैसे पं० नगीना तिवारी इत्यादि। इस प्रकार साधोराम पांडे के वंशजों की वृद्धि बहुत हुई। परन्तु माधवराम पाण्डे के वंशज केवल मगध में हीं पाये जाते हैं। तथापि उनकी संख्या वहां कम नहीं है। दिघवारा (छपरा) के पास बभनगांव तथा ऐसेही दो एक और स्थानों के भी दोनवार लोग अब तक पाण्डे ही कहलाते हैं। जब कि दोनवार नाम के ब्राह्मण विहार और संयुक्त प्रान्त में भरे हुए हैं और क्षत्रिय दोनवार केवल कुछ ही ग्रामों में पाये जाते हैं। तो इससे निस्संशय यही बात सिद्ध है कि उन क्षत्रियों के विषय में वही बात हो सकती है जो अभी कही जा चुकी है।

अयाचक ब्राह्मणों के दोनवार नाम पड़ने में तीन बातें हो सकती हैं। पहिली बात तो यह है कि, इनके मूल पुरुष दिल्ली से आये और वह गुरु द्रोणाचार्य का निवासस्थान था, बल्कि उत्तर पाञ्चाल के राजा भी वही थे। इसीलिये वहां दिल्ली प्रान्त के समीप ही गुरुगांव जिला भी है, जिसका भाव यह है कि द्रोणाचार्य गुरु उस स्थान या गांव में रहते थे, जिससे वह गुरुगांव कहलाता है। परन्तु संभव है कि वही या वहां कोई स्थान द्रोणाचार्य के भी नाम से प्रथम पुकारा जाता रहा हो और वहीं से आने से ये ब्राह्मण लोग उसी डीह से कहे जाने लगे। जिससे इनका नाम द्रोणवार हो गया। जिसका अर्थ यह है कि द्रोण (द्रोणाचार्य) के स्थान में प्रथम के रहने वाले।

दूसरा अनुमान इस इस विषय में इससे अच्छा और विश्वसनीय यह है कि 'द्रोण' शब्द संस्कृत में देशान्तर (अन्यदेश या विदेश)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का वाचक है। जैसा कि मेदिनी कोष में लिखा है कि 'द्रोणःस्यान्नी-हृदन्तरे' अर्थात् 'द्रोण शब्द देशान्तर का भी वाचक है।' और जब मिथिला देश में काशी देश वाले और पश्चिम के रहने वाले ब्राह्मण यवन समय में गये, तो उन्हों ने (मिथिला वासियों ने) अपने और अन्य देशीय ब्राह्मणों को अलग २ रखने अथवा पहचान के लिये अपने को तिर्हुतिया या मैथिल कहना प्रारम्भ किया और नये आये हुओं को पश्चिमा। जिन में से तिर्हुतिया का अर्थ 'तिर्हुत देश में रहने वाला' और पश्चिमा का अर्थ 'पश्चिम देश में रहने वाला' है। परन्तु जब तक विशेष रूप से अन्य देशीय ब्राह्मण वहां न गये थे। किन्तु साधोराम पाण्डे या उनके वंशज ही उन देशों में आये, तो उन मिथिला वासियों ने उन्हें द्रोणवार कहना प्रारम्भ किया, जिसका अर्थ यह है कि ये लोग इस देश (मिथिला) के प्राचीन निवासी नहीं हैं, किन्तु अन्य देश के। वही व्यवहार मगध में भी चल पड़ा। क्योंकि यह बात प्रथम हीं सिद्ध कर चुके हैं कि मगध और मिथिला के व्यवहार वगैरः प्रायः एक से ही हैं। परन्तु जब और भी ब्राह्मण मिथिला देश में पश्चिम से आये और द्रोणवार कहने से यह सन्देह भी होने लगा कि आया ये लोग पश्चिम से आये हैं या पूर्व देश से, क्योंकि देशान्तर तो दोनों हीं हैं, और इस सन्देह से विवाह सम्बन्ध आदि करने में गड़बड़ होने की सम्भावना हुई। क्योंकि धर्म शास्त्रानुसार वंग आदि पूर्व देशों को निषिद्ध समझ लोग उनसे व्यवहार करना घृणित समझते थे। तो प्रथम जिन्हें द्रोणवार कहते थे, उन्हें तथा अन्य नये आए हुए पश्चिम देशके ब्राह्मणों को भी 'पश्चिमा' कहने लगे। परन्तु प्रथम से प्रचलित द्रोणवार शब्द भी रहगया और मिथिला वगैरः देशों में आजतक पश्चिमा और द्रोणवार इन दोनों शब्दों का प्रयोग होता है। पश्चिमा शब्द पश्चिमीय का अपभ्रंश है।

सब से विश्वसनीय और तीसरा अनुमान इस विषय में यह है कि मगध और मिथिला इन दोनों स्थानों के दोनवारों के मूल पुरुष सब से प्रथम आकर पटना-दानापुर के बादशाही किले में ठहरे और वहीं से दोनों प्रदेशों में फैले और वह दीना या दानापुर स्थान अति प्रसिद्ध भी था। और साथ ही यह दिखला चुके हैं कि ब्राह्मणों में अपने डीहों के कहने की रीति थी और विशेष रूप से यह भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखा जाता है कि अधिकतर अपने पुराने डीह से बहुत दूर वे लोग नहीं पाये जाते हैं, जैसा कि किनवार, सकरवार, बेमुआर, तटिह आदि के विषय में दिखलावेंगे। इसलिये साधोराम पाण्डे और माधवराम पाण्डे के वंशजों ने भी उसी दीना या दानापुर डीह के नाम से अपने को दीनावार वा दानावार प्रकाशित किया जो समय पाकर बिगड़ते २ दनवार होकर आजकल दोनवार हो रहा है, जिस का अर्थ यह है कि पहले दानापुर के रहने वाले ब्राह्मण। यही दोनवार शब्द का संक्षिप्त विवरण है जो डीह को बतलाता है।

अब 'किनवार' शब्द का विवरण सुनिये। किनवार ब्राह्मण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण काश्यप गोत्री, क्यूना के दीक्षित हैं। इसीलिये इनके विषय में किसी का मत यह है कि, ये लोग काशी के पास विशेष कर गाजीपुर में क्यूना से आये, इसीलिये उसी डीह के नाम से क्यूनावार कहलाने लगे और वही शब्द बिगड़ कर किनवार हो गया। परन्तु गाजीपुर जिले में हीं इन लोगों के निवास स्थान के पास ही कुण्डेसर ग्राम से पूर्व और वीरपुर, नारायणपुर से पश्चिम-उत्तर प्रथम ओकिनी नाम की नदी बहती थी, जो अब एकबारगी मिट्टी से पट गई है, केवल उस का थोड़ा सा चिन्ह रहगया है और कुण्डेसर से नारायणपुर को जानेवाली पक्की सड़क के पश्चिम हीं उसी ओकिनी के तट पर अबतक किनवार लोगों का पुराना डीह ऊंचा सा पड़ा हुआ है। इसलिये उसी ओकिनी के डीह पर रहने से ये लोग ओकिनीवार कहलाते २ अब ओ शब्द के काल पाकर छूट जाने से किनवार कहलाने लगे।

यद्यपि किनवार ब्राह्मणों की वंशावली में यह लिखा हुआ है कि ये लोग कर्नाटक- पदुमपुर से आये और उस पदुमपुर के विषय में बहुत लोगों ने अन्दाज से बहुत कुछ बक डाला है। फिर भी ठीक पता वे न लगासके और यद्यपि वह पदुमपुर कर्नाटक देश और केरल देश की सरहद पर केरल देशका एक खण्ड है, इस बात को अभी प्रमाणित करेंगे, तथापि किनवार ब्राह्मण प्रथम के कान्यकुब्ज ब्राह्मण हीं हैं, न कि केरल देशीय ब्राह्मण। यह बात इनकी प्राचीन वीरता और व्यवहार आचारों से सिद्ध है। यद्यपि कर्नाटक–पदुमपुर से ये लोग आये, इस विषय में कुछ विशेष प्रमाण या कारण नहीं मिलता। क्योंकि दक्षिण में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐसी भगेड न थी जैसी कि कन्नौज वगैरः देशों में थी। इसीलिये इन देशों में दक्षिण देश के ब्राह्मण प्रायः नहीं पाये जाते। तथापि यदि वहां से ही किनवार ब्राह्मणों का आना मान भी लेवें तो भी ये लोग वहां भी कान्यकुब्ज देश से ही गये थे और फिर किसी कारण वश हटकर इसी देशमें चले आये। कान्यकुब्ज देश से केरल देश या उसके पद्मपुर स्थान में ब्राह्मणों के जाने और वहां से आने की बात 'केरल उत्पत्ति' नामक ग्रन्थ में लिखी हुई है। यह ग्रन्थ मालाबारी भाषा में लिखा गया था और पीछे से उसका अनुवाद फारसी में हुआ था, जिसे मिस्टर 'जोनाथन डनकन' (Jonathan Duncan) ने १७९३ ई० में अंग्रेजीमें अनुवादित किया। यह सब पूर्वोक्त बातें एशियाटिक रिसर्चेज' (Asiatic Researches) नामक अंग्रेजी पुस्तक में लिखी गई हैं, जो सन् १८०१ ई० छपी थी। उस ग्रन्थ के ५६ वें पृष्ठ में मालाबार देशके प्राचीन विवरण को लिखते हुए उसी सम्बन्ध में ये बातें लिखी गई हैं। उस ग्रंथका कुछ अंश नीचे उद्धृत किया जाता है, जिससे पूर्वोक्त बातों का थोड़ा सा पता लग जावेगाः—

In the book called Kerul-oodputtee or the emerging of the country of Kerul (of which during my stay at Calicut in the year 1793, I made the best translation into English in my power, through the medium of a version first rendered into Persian, under my own inspection from the Malabarie copy procured from one of the Rajahs of the Zamorin's family), the origin of that coast is ascribed to the piety or penitence of Puresuram or Purseram (one of the incarnations of Vishnu), who stung with remorse for the blood he had so profusely shed in overcoming the Rajahs of the Kshatery tribe, applied to Varuna, the God of the ocean, to supply him with a tract of ground to bestow on the Brahmans; and Varuna accordingly having withdrawn his waters from the Gowkern (a hill in the vicinity of Mangalore) to Cape Comorin, this trip of territory

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

has, from its situation, as lying along the foot of the Sukhien (by the Europeans called the Ghaut) range of mountains, acquired the name of Mulyalum (i. e, skirting at the bottom of the hills), a term that may have been shortened into Maliyam or Maleam, whence are also probably its common names of Mulievar and Malabar; all of which Purseram is firmly believed, by its native Hindus inhabitants, to have parcelled out among different tribes of Brahmans, and to have directed that the entire produce of the soil should be appropriated to their maintenance and towards the edifications of temples, and for the support of divine worship; whence it still continues to be distinguished in their writings by term of Kerm-bhoomy or 'the Land of good works for the expiation of sin. The country thus obtained from the ocean, is represented to have remained long in a marshy and scarcely habitable state; in so much, that the first occupants, whom Purseram is said to have brought into it from the eastern, and even the northern prat of India, again abandoned, and it, being more especially scared by the multitude of serpents with which the mud has then abounded, and to which numerous accidents are ascribed. Uutil Purseram taught the inhabitants to propitiate these animals, by introducing the worship of them, and of their images, which became from that period objects of adoration,

In a Manuscript account of Malabar that I have seen, and which is ascribed to a Bishop of Viropoli, (the seat of a famous Roman Catholic seminary near Coachin), he observes, that by 'the accounts of the

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

learned natives of the Coast, it is little more than 2300 years since the sea came up to the foot of the Sukhien or Ghaut mountains; and that once did so he thinks extremely probable from the nature of, and the quantity of land, oyster-shells, and other fragments, met with in making deep excavations.

The country of Malyalum was, according to the Kerul-oodputtee, afterwards divided into the following Tookrees or divisions.

1st. from Gowkern, already mentioned, to the Perumbura river, was called the Tooroo or Turu Rauje.

2nd. from the Perumbura to Poodumputtum was called the Moshek Rauje.

3rd. from Poodum or Poodumputtum, to the limits of Kunety was called the Kerul or Keril Rauje; and as the principal seat of the ancient government was fixed in this middle division of Malabar, its name prevailed over and was in course of time understood in a general sense to comprehend the three others.

4th. from Kunety to Kunea Koomary, or Cape Comorin was called the Koop Rauje.

However this may be, according to the book above quoted, the Brahmans appear to have first set up and for some time maintained, a fort of republican or aristocratical government, under two or three principal chiefs, elected to administer the government, which was thus carried on, till, on jealousies arising among themselves, the great body of the Brahman land holders had recourse to foreign assisstance, which terminated, either by conquest or convention in their receiving to rule over them a Permal, or Cheif Gover-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

nor from the Prince of the neighbouring country of Choldesh (a part of the Southern Cornatic), this succession of viceroys was changed and relieved every twelve years, till at length one of those officers, named Sheoram, or Shermanoo Permaloo, and by others called Cheruma Perumal appears to have rendered himself so popular during his government, that at the expiration of its term he was enabled, by the encouragement of those over whom his delegated sway had extended, to confirm his own authority, and to set at defience that of his late sovereign, the Prince of the Choldesh, who is known in their book by the name of Rajah Kishan Rao, and who having sent an army to Malabar with a view to recover his authority, is stated to have been successfully withstood by Shermanoo and the Malabarians; an event which is supposed to have happened about 1000 years anterior to the present period, and is otherwise worthy of notice.

इसका भावार्थ यह है कि 'केरल-उत्पत्ति नामक पुस्तक में (जिसका १७९३ ई० में कालीकट में अपने रहने के समय मैंने यथाशक्ति अंग्रेजी में उत्तम अनुवाद उसके फारसी में अनुवादित उस ग्रन्थ से किया, जो प्रथम मालाबारी भाषा की पुस्तक से मेरे सामने लिखा गया था, और जो मालाबारी भाषा की पुस्तक जमोरिन वंशज एक राजा के यहां मिली थी) मालाबार किनारे की उत्पत्ति परशुराम (जोकि विष्णु के अवतारों में से थे) के उस प्रायश्चित्त के कारण बताई गई है, जो उन्हों ने क्षत्रिय राजाओं के नाश के लिये खून बहाने के शोक से किया था और जिसके लिये समुद्रपति (देवता) वरुण से यह प्रार्थना की कि उन्हें वे थोड़ीसी भूमि ब्राह्मणों को दान करने के लिये देवें। तदनुसार वरुण देव ने मंगलोर के समीपवर्त्ती गोकर्ण पर्वत से कुमारी अन्तरीप तक का जल हटालिया। और इस प्रकार वह भूखण्ड सुखेन (घाट) पर्वतके मूल में रहने से मूल्यलम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहलाया, जिसका अर्थ यह होता है कि 'पर्वत की जड़ में निकला हुआ' और संभव है कि यही शब्द संक्षिप्त होकर 'मलियम' हो गया हो और इसी से संभवतः इसके साधारण नाम मलेबार और मालाबार पड़े हों। इसके निवासी हिन्दुओं का यह दृढ़ विश्वास है कि इस सम्पूर्ण भूभाग को परशुरामजी ने वहां की भिन्न २ ब्राह्मण जातियों में विभक्त कर दिया था और उनको यह शिक्षा दी थी कि इस भूमि की सम्पूर्ण पैदावार को वे लोग अपने पालन, मंदिरों की मरम्मत और देवपूजाओं में खर्च किया करें। इसलिये उसी समय से इस भूमि को वे लोग अपने कागजों में 'कर्मभूमि' (अर्थात् पाप के प्रायश्चित्त के लिये सत्कार्य करने की भूमि) लिखने लगे और अब तक वैसाही करते हैं। इस प्रकार जो देश समुद्र से मिला वह बहुत दिनों तक दलदलसे पूर्ण था, जिस में लोग कठिनता से निवास कर सकते थे। उसकी ऐसी दशा थी कि जिन प्रथम के ब्राह्मणों को परशुरामजी ने वहां भारत वर्ष के उत्तर और पूर्व भाग से लाकर बसाया था, उन लोगों ने फिर उसे छोड़ दिया। क्योंकि उस समय उसकी कीचड़ में रहने वाले बहुत से सर्पों से उन्हें बहुत भय हुआ और बहुत से ब्राह्मण उनसे मर भी गये। यह तक कि फिर परशुराम ने वहां के निवासियों को उन सर्पों और उन की मूर्त्तियों की पूजा द्वारा उन्हें प्रसन्न करने की शिक्षा न दी तब तक यह बात रही और वह पूजा उस समय से होने लगी। मालाबार के एक प्राचीन लेख में, जिसे मैंने देखा है और जो विरापोली (कोचीन के निकट रोमन कैथलिक पाठशाले की जगह) के एक बिशप (पादरी) के पास था, यह लिखा हुआ बतलाया जाता है कि पढ़े लिखे मालाबारियों के कथन से कुछ अधिक २३०० वर्षों से समुद्र घाट के पहाड़ों की जड़ में नहीं आया है और यह बात वहां की भूमि के विस्तार और उन सीप या घोंघे वगैरः के देखने से बिलकुल ही सत्य प्रतीत होती है, जो खोदने से भूगर्भ में पाये जाते हैं। 'केरल उत्पत्ति' पुस्तक के अनुसार मलयालम (मालाबार) देश पीछे से चार भागों या टुकड़ों में विभक्त किया गया। जिन में से प्रथम भाग, जो गोकर्ण से परम्बरा नदी तक था, 'तूरू' राज्य कहलाया। दूसरा, जो परम्बरा नदी से पदमपुत्तम (पदमपुर) तक था,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'मशक' राज्य कहलाया। तीसरा, जो पद्म या पद्मपुत्तम से कुनटी की सीमा तक था, 'केरल' राज्य कहलाया। और चूंकि पुरानी राजधानी मालाबार के इसी मध्य भाग में थी। इसलिये इसी का नाम चारों ओर फैल गया और कुछ दिन बाद लोग शेष तीन खण्डों के सहित सबको सामान्यतः 'केरल' ही समझने लगे। और चौथा भाग, जो कुनटी से कुमारी अन्तरीप तक था 'कूप' राज्य कहलाता था।

अस्तु, जो कुछ भी हो। पूर्वोक्त पुस्तक (केरल-उत्पत्ति) के अनुसार पहले पहल ब्राह्मणों ने राज्य-प्रबन्ध के लिये चुने गये दो या तीन सर्दारों के आधीन प्रजा-सत्ताक राज्य-प्रबन्ध चलाया और उस दिन तक उसे कायम रखा जब कि परस्पर द्वेष के कारण अधिकांश जमींदार ब्राह्मण अन्य देशीयों से सहायता की बातचीत करने लगे और उसकी समाप्ति विजय या परस्पर सुलह से होगई। जिस में उन लोगों के ऊपर शासन करने के लिये एक चीफ गवर्नर पड़ोस के चोल देश (कर्नाटक के दक्षिण भाग) के शाहजादे की तरफ से नियत किया गया। इन वाइसरायों (चीफ गवर्नरों) की तबदीली हर बारहवें बरस होती हुई उस समय तक चली गई, जबकि उन्हीं अफसरों में एक ने, जिसका नाम शिवराम या शरमनू परमलू था, अपने को उन ब्राह्मणों की दृष्टि में अपने प्रबन्ध काल में हीं ऐसा प्रेमपात्र बनाया कि जब उस के शासन काल का अन्त आया तो, जिनके ऊपर वह राज्य करता था उनकी सहायता से अपने अधिकार को दृढ़ बनाने में समर्थ हुआ और चोल देश के राजा के अधिकार को हटा दिया। उस राजा का नाम किशनराव था। उस राजा ने अपने अधिकार को फिर से प्राप्त करने के लिये फौज भेजी। परन्तु कहा जाता है कि शरमनू और मालाबारियों ने उसे हरा दिया। यह बात आज (१७६३) से लगभग १००० पूर्व हुई और ध्यान देने योग्य है।'

इस पूर्वोक्त कथन से स्पष्ट है कि कर्नाटक से मिला हुआ और उसकी सीमा परही पद्मपुर स्थित है। इसी से किनवार ब्राह्मणोंकी वंशावली में उसे पद्मपुर कर्नाटक लिखा है। यह भी स्पष्ट है कि वहां जो ब्राह्मण लाये जाकर उस देश के राजा या जमींदार बनाये गये वे उत्तर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्व भारत अर्थात् कान्यकुब्ज देश से ही लाये गये। यह बात सत्य भी है क्योंकि कान्यकुब्ज देश में बहुत प्राचीन काल से ही ब्राह्मणों का निवास चला आता है। इसलिये इन किनवार ब्राह्मणों का वहां से आना मान भी लिया जावे तो भी ये लोग वास्तव में कान्यकुब्ज ही हैं। और यदि पद्मपुर से आये भी होंगे तो, या तो जैसा कि ऊपर लिखा है कि सर्पों के भय से बहुत से ब्राह्मण लोग भाग गये, उसके अनुसार लगभग २३०० वर्षों से ही वहांसे आये। अथवा जो युद्ध आज से ११०० वर्ष पूर्व कर्नाटक देश के राजा और मालाबारियों एवं शिवराम के बीच हुआ था उस में हीं हटकर चले आए। क्यों कि शिवराम या उन लोगों का विजय हुआ सही, तथापि एक राजा के विरुद्ध लड़ने से उनको बहुत कष्ट भोगना पड़ा और बहुत ह्रास हो गया। जिससे शिवराम (जिसके लिये युद्ध ठाना गया था) भी दुःखी होकर युद्ध के बाद कहीं अन्यत्र चला गया। यह बात आगे चल कर उसी 'केरल उत्पत्ति' में लिखी गई है। और चूंकि वे लोग उसी देश से गये थे, अतः फिर यहीं चले आये। युद्ध के समय का आना हीं विशेष विश्वनीय हो सकता है, क्योंकि उन दिनों सभी देशों में गड़बड़ मच रही थी और लोग इधर उधर भाग रहे थे। जो कुछ भी हो, चाहे किनवार ब्राह्मण पद्मपुर से आये अथवा कन्नौज से ही, परन्तु ये लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण, दीक्षित और काश्यप गोत्री हैं और इस समय भूमिहार ब्राह्मण कहे जाते हैं।

किनवार क्षत्रियों का जो केवल बलिया के छत्ता और सहतवार आदि गांवों में पाये जाते हैं, विवरण प्रथम हीं सुना चुके हैं और जहां पर किनवार ब्राह्मण गाजीपुर के मुहम्मदाबाद परगने में भरे पड़े हुए हैं और वीरपुर, नारायणपुर, कुण्डेसर, भरौली, विश्वम्भरपुर, परसा, बहुडीह गोंढ़उर और करीमुद्दीनपुर आदि उनके बड़े २ ग्राम हैं। वहां उनसे पृथक दो या चार गांवों में रहने वाले क्षत्रियों की बात कही हो सकती है जैसी कि कही जा चुकी है, और वही बात सन १८८०-८५ ई० के गाजीपुर की सेट्लमेन्ट रिपोर्ट में उस समय के कलक्टर विलियम इरविन (William Irvine) ने यों लिखी है :—

Amog Dichhit had three sons, Kulkal Rai, Baijal Rai and Mahipal Rai. As they thought that they

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

could not perform all the religious ceremonies required, they began to call themselves Rai. Kulkal Rai, without the consent of his brothers, married the daughter of a chhatri in Pargana Pachotor, and therefore he was excluded from his caste of Brahman; but the two brothers, having taken pity on him, gave him some property and the village Chhata in the Ballia district; as is recorded in the following verse:—

Baijal o mahipal bhum adha kar lin;
Jeth putra Kulkal tahiko chhata din. Page 33.

इसका मर्मानुवाद यह है कि 'किनवारों के पूर्वज अमोघ दीक्षित के कलकल राय, बैजल राय और महीपाल राय तीन पुत्र थे। उन्होंने समझा था कि हम लोग पुरोहितो आदि नहीं करवा सकते हैं, इसलिये अपने को दीक्षित की जगह राय कहने लगे। कलकलराय ने विना अपने भाइयों की सम्मति के ही पचोतर परगने के किसी क्षत्रिय की पुत्री से ब्याह कर लिया, इस लिये वे अपनी ब्राह्मण जाति से च्युत कर दिये गये। परन्तु दोनों छोटे भाइयों ने उनके ऊपर क्या करके कुछ धन और बलिया जिले का छाता गांव उन्हें दे दिया। जैसी कि कहावत है कि "बैजल और महिपाल, भुइं आधा करि लीन। जेठ पुत्र कलकल, ताहि को छाता दीन'। किनवारों के पुरोहित जो नगवा पांडे कहलाते हैं, काश्यप गोत्री ही हैं और उन लोगों में यह प्रसिद्ध है एवं उनकी वंशावलियों में भी लिखा है कि वे और किनवार दोनों भाई हैं। एक भाई का वंश यजमान हुआ और दूसरे का पुरोहित।

अब सकरवार नाम वाले अयाचक दलीय ब्राह्मणों का विवरण सुनिये। ये ब्राह्मण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण सांकृत गोत्र वाले फतूहाबाद के मिश्र हैं। जो अन्य ब्राह्मणों की तरह यवन राज्यकाल में वहां से इस देश में चले आये, जैसा कि प्रथम दिखलाया जा चुका है। फतूहाबाद फतहपुर जिले में एक स्थान है। वहांसे आकर इन के पूर्वज प्रथम रेवतीपुर, गहमर और करहिया ग्रामों (जो गाजीपुर के जमानियां परगने में है) के बीच में रहने वाले सकरा नामक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थान में बसे। जो अब भी नाम के लिये डीह के रूप में ऊंचा स्थान पड़ा हुआ है और वहां मकान वगैरः कुछ भी नहीं रहगये हैं। परन्तु लोग उसे 'सकराडीह' अबतक पुकारते ही हैं। फिर वहांसे बहुत विस्तार होने या और अनुकूलताओं एवं प्रतिकूलताओं के कारण वे लोग हटकर रेवतीपुर, शेरपुर सुहवल तथा आरा जिलेके सैकड़ों गांवों में जा बसे और उस जिले का सरँगहा परगना और जमानियां परगने का बहुत सा भाग अब छेंके हुए हैं। बल्कि मुहम्मदाबाद परगने (गाजीपुर) में भी शेरपुर, रामपुर, हरिहरपुर आदि गांवों में रहते हैं। अन्त में सकराडीह से हटकर चारों ओर बसे। इसीलिये सकरा में रहने के समय अपना पूर्व स्थान फतहपुर ही बतलाते थे। परन्तु जब वहां से भी हटे तो सकरा ही पूर्व स्थान बतलाने लगे। लेकिन पूर्व का फतूहाबाद या फतहपुर नहीं छूटा, इसलिये सकरवार कहलाने पर भी पूछने पर यही कहते थे कि फतहपुर सकरा से आये हैं, क्योंकि फतहपुर के साथ सकरा भी जुटगया। काल पाकर सकराकी जगह सकरी और सिकरी भी कहलाने लगा और फतहपुर प्रथम का था ही। बस लोग भूल से समझने लगे कि हमलोग फतहपुर सिकरी से आये हैं, जो आगरे के पास है। इस भ्रम या भूल में विशेष सहायता सिकरीवार राजपूतों के (जो आगरे के पास और अन्य जिलों में तथा ग्वालियर में विशेष रूप से पाये जाते हैं) वञ्चक भाटों ने की। क्योंकि उन्हों ने सिकरीवार और सकरवार को एक ही समझ लिया और रुपया ठगने की लालच से सकरवार ब्राह्मणों का फतहपुर सिकरी से ही आना बतलाया। परन्तु असल बात तो यही है कि फतह पुर जिलेसे आकर सकरा में रहे, इसलिये फतहपुर सकरा ही उन के डीह कहे जा सकते हैं। इस में प्रबल प्रमाण यह है कि सकरवार और सिकरीवार इन नामों में भेद के साथ साथ गोत्रों में भी भेद है। अर्थात् सिकरीवार राजपूतों का जो आगरे की तरफ पाये जाते हैं, शाण्डिल्य गोत्र है, ऐसा अन्वेषण करने से पता लगा है। और इस बात को स्वीकार करते हुए मिस्टर शेरिंग ने भी अपनी जाति विषयक अंग्रेजी पुस्तक (जिस का हाल प्रथम कह चुके हैं) के प्रथम खण्ड के १८६ पृष्ठ में सकरवारों के वर्णन प्रसंग में सिकरीवार क्षत्रियों का शाण्डिल्य गोत्र ही लिखा है। जैसा कि, 'They

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

are of Sandil gotra or order'.परन्तु सकरवार ब्राह्मणों का तो सांकृत गोत्र प्रसिद्ध ही है। इस से निःसंशय ही सकरवार ब्राह्मणों को फतहपुर सकरा से आने के बदले फतहपुर सिकरी से आना बतलाने वाले सभी ठग हैं।

इन सकवार नामधारी ब्राह्मणों का प्रसिद्ध सांकृत गोत्रही उस किंवदन्ती को मिथ्या सिद्ध कर रहा है, जो मूर्खता वश जोड़ी गई है और जिसको बहुत से अंग्रेजों ने भी लिख दिया है कि 'गाजीपुर के प्राचीन राजा गाधि के चार पुत्र अचल, विचल, सारंग और रोहित थे, जिन के ही वंशज रेवतीपुर, सुहवल और सरंगहा परगना आदि स्थानों के सकरवार हैं' इत्यादि। क्योंकि यदि ये लोग गाधि के वंशज होते, तो इनका गोत्र कौशिक होता, जैसा कि गाधि और उनके पुत्र विश्वामित्र आदि का माना जाता है। इससे ये सब कल्पनायें निर्मूल और अश्रद्धेय हैं। इससे इन्हीं के आधार पर करहिया और गहमर के सकरवार क्षत्रियों और सकरवार ब्राह्मणों को एक सिद्ध करने का साहस करना नितान्त भूल है। जब कि वे लोग दो एक गांवों में हीं रहते हैं, परन्तु सकरवार ब्राह्मण तो सुहवल, रेवती-पुर, रामपुर और शेरपुर एवं सरंगहा आदि में भरे पड़े हैं। अतः इन सकरवार राजपूतों के विषय में वही बात विश्वसनीय है, जिसका कथन प्रथमहीं कर चुके हैं और जो दोनवार और किनवार क्षत्रियों के विषय में भी कही जाचुकी है।

यद्यपि कोई २ ऐसा सिद्ध करने का साहस कर सकते हैं कि जो सिकरीवार राजपूत पश्चिम में पाये जाते हैं, उन्हीं की एक शाखा ये सकरवार राजपूत भी हैं और सिकरीवार शब्द ही बिगड़ते बिगड़ते सकरवार हो गया है। तथापि यह उनका प्रयत्न व्यर्थ हो है; क्योंकि यदि ऐसी बात होती तो सिकरीवार और सकरवार इन दोनों राजपूतों के गोत्र एकही होते। परन्तु वे लोग (सिकरीवार) शाण्डिल्य गोत्र वाले और ये गहमर, करहिया वाले सकरवार राज-पूत सांकृत गोत्र वाले ही हैं। ये लोग गाधि राजा के भी वंशज नहीं हैं, क्योंकि ऐसी दशा में इनका गोत्र कौशिक होना चाहिये। इसलिये इन राजपूतों की व्यवस्था वही है जो कही जाचुकी है। यदि इन सकरवार क्षत्रियों जो गाधिवंशजों या सिकरीवार क्षत्रियों से ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिलाने का कोई यत्न करे तो अच्छा है, वे लोग उधर ही जा मिलें। इससे भी सकरवार ब्राह्मणों का कोई हर्ज नहीं है। ये लोग तो कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं हीं। जैसे अयाचक ब्राह्मणों और राजपूतों में सकरवार नाम वाले पाये जाते हैं, वैसेही मैथिल ब्राह्मणों में भी सकरीवार या सकरवार नाम वाले ब्राह्मण पाये जाते हैं। यह नाम उन लोगों के प्रथम सकरी स्थान में रहने से है, जो दरभंगा शहर से उत्तर पूर्व में स्थित है और बंगाल नार्थ वेस्टर्न रेलवे की मधुवनी और झंझारपुर वाली लाइनों का जंकशन है। इस कथन का यहां तात्पर्य यह है कि एकही नाम वाले एक या भिन्न भिन्न स्थानों में रहने से अनेक जातियों के लोग एक ही नामवाले हो सकते हैं। परन्तु इससे उनके एक जाति सम्बन्धी होने का संशय नहीं किया जासकता। अतः निर्विवाद सिद्ध है कि ब्राह्मणों का सकरवार भी नाम प्रथम सकरा डीह के निवास से ही पड़ा है।

अब आजमगढ़ के सगरी परगने के १४ कोस में विस्तृत बरुवार नामक ब्राह्मणों का विवरण संक्षेपतः लिखा जाता है। बरुवार ब्राह्मण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण बरुवा के तिवारी काश्यप गोत्री हैं। यह बरुवा स्थान कान्यकुब्ज देशमें है। और प्रायः इसी स्थान से आनेसे ये लोग बरुवावार कहलाते कहलाते अब बरुवार कहलाते हैं। यद्यपि ये लोग पूछने से केवल इतनाही बतलाते हैं कि हमारे पूर्वज पश्चिम कन्नौज की ओर से आये और हमलोगों का गोत्र काश्यप है। परन्तु वही बरुवार नाम और काश्यप गोत्र ही इस बात का पता दे देता है कि ये लोग कन्नौज देशके बरुवा स्थान के रहने वाले थे और यवनों के समय में वहां से आकर देवगांव तहसील के बेला तप्पे के जिहुली स्थान में प्रथम बसे। जिहुली के पास ही बेला नाम का गांव भी है। फिर वहां से सगरी परगने में पीछे आकर बसे। बहुत सम्भव और विश्वसनीय है, कि जैसे भृगुवंश लोग कोठा तप्पे से कोठहा कहलाते हैं, वैसे ही इनका नाम भी बेला तप्पे से बेलवार होकर अब बेरुवार या बरुवार हो गया। क्योंकि र और ल अक्षरों का उलट फेर बिलार और बिडाल शब्दों में देखा जाता है। भूमिहार ब्राह्मणों के डीह प्रायः निकट के ही हैं, यह बात भी इस अनुमान में अनुकूल है। अस्तु। अभी कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में बहुत से काश्यप गोत्र वाले बरुवा के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिवारी पाये जाते हैं। यद्यपि बरुवार नाम वाले क्षत्रिय भी आजमगढ़ में बरुवार ब्राह्मणों से हटकर पाये जाते हैं। परंतु इनकी संख्या थोड़ी सी ही है, जैसी कि दोनवार, किनवार क्षत्रियों की। इस लिये इन बरुवार क्षत्रियों की भी व्यवस्था वैसी ही है, जैसी कि दोनवार, किनवार या सकरवार क्षत्रियों की बतलाई जा चुकी है। अथवा सामान्यतः इनके विषय में भी वैसा ही है जैसा प्रथम हीं कह चुके हैं। कुछ बरुवार ब्राह्मण आजमगढ़ के मुहम्मदाबाद परगने के केरमा, भुजही और छठियांव नामक ग्रामों में भी पाये जाते हैं।

बेमुवार नामवाले ब्राह्मणों का संक्षिप्त विवरण जानने के लिये प्रथम यह जानना आवश्यक है कि इन का गोत्र सावर्ण्य है और इन सावर्ण्य गोत्र वाले ब्राह्मणों के तीन छोटे छोटे दल अब प्रसिद्ध हैं। एक पनचोभै, दूसरे अरापै, तीसरे केवल सावर्ण्य या सावर्णियां कहलाते हैं, अर्थात् केवल गोत्र से ही बोले जाते हैं। और सावर्णिया या सावर्ण्य गोत्र वाले ब्राह्मण प्रायः कान्यकुब्जों और सर्यूपारियों में नहीं हीं हैं और मैथिलों में भरे पड़े हुए हैं। बल्कि जो इनका एक दल पनचोभै कहलाता है वह मिथिला हीं में पाया जाता है और ये लोग विहार में हीं विशेष रूप से पाये भी जाते हैं और पटना तथा आरा जिले में इनकी संख्या बहुत है। जहां मिथिला से आये हुए दिघवैत वगैरः भी पाये जाते हैं। इसलिये ये लोग पूर्व के मैथिल ब्राह्मण हीं हैं ऐसा ही हमारा अनुमान है। इनके पनचोभै और अरापै आदि संज्ञाओं के विषय में बहुत सी गढ़न्त किम्वदन्तियां हैं, परन्तु सब निर्मूल हैं, ये लोग बनारस के नरवन परगने के कुछ गांवों में भी पाये जाते हैं। वास्तव में पटना जिले में जहां ये लोग विशेषरूप से हैं, उसके पास ही बिहटा स्टेशन से उत्तर कुछ दूर गंगा के पास इन का पुराना गढ़ अरापा नाम का था, जो अब भग्नावस्था में नाम मात्र के लिये कहने को रह गया है और इनके पूर्वज वहां प्रथम रहते थे। इसी लिये ये लोग अरापै कहलाये। इसी तरह मिथिला, दरभंगा से पश्चिम पनचोभ गांव में रहने से पनचोभै कहलाये, जो वहां हीं विशेषरूप से इधर उधर पाये जाते हैं। तीसरा दल जो केवल गोत्र के नाम से ही पुकारा जाता है वह भी मिथिला में बहुत है। इससे भी स्पष्ट है कि ये लोग मिथिला से ही इन पटना आदि के प्रान्तों में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आये। परन्तु जो लोग प्रथम से अरापा गढ़ या पनचोभ गांव में न रहकर अन्य स्थानों में हीं पटना प्रान्त में या अन्यत्र प्रथम सेही रहते हुए पीछे तक रहगये वे केवल सावर्णियां, या सावर्ण्य हीं कहलाते रह गये। उन्हीं पटना जिले में रहने वाले सावर्ण्य गोत्री ब्राह्मणों में से कुछ लोग इधर उधर बढ़े। जिन में से कुछ लोग बनारस की ओर भी चले गये और, जैसा कि बेमुवारों का कहना है कि नुआंव नामक स्थान में बसे। परन्तु जो पटना के समीप बेमूपुर नामक परगने में बसे हुए थे, वे लोग जब वहां से हटकर बक्सर के आस पास आरा जिले में ठहरे, तो उसी बेमूपुर से आने के कारण बेमुवार नाम वाले कहलाये।

यह बेमूपुर परगना अकबर के समय में था। क्योंकि आईन अकबरी में जहां पर अकबर के राज्य भर के जिलों और परगनों का वर्णन है, वहां पटना के आस पास में हीं बेमूपुर नामक महाल या परगना भी लिखा गया है। सम्भव है कि अब वह नाम न होवे। परन्तु बक्सर के पास आरा जिले से भी, डुमरांव के राजाओं से बराबर लड़ाई होती रहने के कारण, वे लोग हटकर गंगा के उत्तर तट में नरही इत्यादि गावों में बलिया जिलेके गड़हा परगने में अकबर बादशाह के पीछे आ बसे और वहां के प्रथम निवासी क्षत्रिय तथा अन्य जातियों को निकाल दिया। अभी नरही, सुहांव, टुटुआरी, भरौली तथा उजियार आदि गावों में आये हुये उन्हें थोड़े ही दिन हुए। जिसे वे लोग स्वयं कहा करते हैं। और इसी कारण से बलिया के गड़हा परगने में अकबर के समय में राजपूतों की हीं जमींदारी लिखी हुई है। यह बात कि ये लोग पटना के पास बेमूपुर से आये, यों भी पुष्ट होती है कि ये लोग भी इतना कहते हैं कि हमलोगों के पूर्वज लोग बेमूपुर-पाटन से आये जो आगरा या इटावे के पास है। परन्तु वहां तो इस नाम के किसी भी स्थान का पता नहीं चलता। इसलिये पटना को ही भूल से पाटन कहने लग गये और जैसा सब लोग पश्चिम से ही आना बतलाते हैं, वैसा ही इन लोगोंने भी कहना प्रारम्भ किया, यही अनुमान है। ऐसी भूलें हुआ भी करती हैं, जैसा कि पदमपुर कर्नाटक और फतहपुर सिकरी आदि के विषय में दिखला चुके हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इससे सिद्ध होता है कि वेमूपुर डीह से, जो पटना जिले में है और जहां अब तक सावर्ण्य ब्राह्मणों की बहुत बड़ी संख्या है, आने से ही नरही आदि के अयाचक दलीय ब्राह्मण वेमुवार कहलाये यदि इन्हें सर्यूपारी और इटार के पांडे मानें तो भी हमें विवाद नहीं है।

इसी जगह प्रसंग वश हम यह भी शंका हटा देना चाहते हैं, जो लोगों की अनभिज्ञता के कारण हुआ करती है। अर्थात् लोग कभी कभी यह बकने का साहस किया करते हैं, कि 'यदि पश्चिमा, त्यागी, अयाचक, भूमिहारादि ब्राह्मणों को आप वास्तव में कान्यकुब्ज, सर्यूपारी, गौड़ और मैथिलादि बतलाते हैं, अर्थात् जिन दिनों मैथिल, गौड़, सर्यूपारी और कान्यकुब्ज आदि छोटे छोटे दल ब्राह्मणों में बनने लगे, उसी समय मिथिला, गौड़, कन्नौज और सर्यूपार आदि सभी देशों के अयाचक ब्राह्मणों का भी एक दल संगठित होने लगा। क्योंकि 'स्वगुणे परमा प्रीतिः' अर्थात् 'जो जिस प्रकार का होता है वह वैसों से ही मिलता है'। तो फिर इन लोगों के सभी डीह कन्नौज, सर्यूपार या मिथिला में न बताकर कुछ तो उन देशों में और कुछ अन्यत्र क्यों बतलाते हैं? क्योंकि दोनवार आदि शब्दों को आप डीह या मूल का वाचक बतलाते हैं, परन्तु उनसे जो डीह सिद्ध होते हैं वे तो कन्नौज या सर्यूपार आदि देशों में नहीं हैं। यद्यपि एकसरिया वगैरः नामवाले एकसार आदि डीह सर्यूपार के हैं, तथापि सब तो नहीं हीं हैं इत्यादि'। इसका समुचित उत्तर यह है कि सभी ब्राह्मणों में बहुत से डीह ऐसे मिलते हैं। जैसे सर्यूपारियों में मचैयां पांडे या निमेज के ओझा तथा बटवा उपाध्याय या बड़हरिया पांडे, इत्यादि कहलाते हैं। और यद्यपि वे लोग अपने को कभी कभी कान्यकुब्ज भी कहा करते हैं, तथापि सर्यूपारी कहलाने वाला से विवाह करते हैं। परन्तु उनके निमेज, मचियांव, बड़हर और बटवा आदि डीह न तो कन्नौज देश में हीं मिलते और न सर्यूपार ही में। किन्तु आरा जिला, पटना या मिर्जापुर आदि में पाये जाते हैं। तो क्या इस से सर्यूपारी होनेके अभिमानवाले या सर्यूपारी बननेवाले उनको अपने समाज से पृथक् कर देने का साहस भी कर सकते हैं!

साथ ही, जो लोग अन्य देशों में रहकर भी अपना डीह मिथ्या या सत्य ही सर्यूपार में बतलाते हैं, क्या उनके साथ सर्यूपार में रहने वाले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्यूपारी खान पान या विवाह संबंध भी करते वा कर सकते हैं? तो क्या ऐसा न होने से वे लोग अपने को सर्यपारी न मानें? मैथिलों में भी यही दशा है। उनमें जो कोदरिया या दिघवै इत्यादि नामवाले मैथिल हैं, उनके डीह या मूल कोदरा और दिघवा आदि छपरा प्रान्त में हैं, न कि मिथिला में। परन्तु इससे क्या वे लोग मैथिल समाज से अलग समझे जा सकते हैं? अतः यह शंका निर्मूल ही है।

बेमुवार नामवाले क्षत्रिय यदि बलिया में या अन्यत्र थोड़े बहुत पाये जाते हों, तो या तो उन्हें किसी प्रकार से बेमूपुर से आना सिद्ध करने का यत्न करना होगा, या दूसरे प्रकार से बेमुवार शब्द की व्याख्या उन्हें करनी होगी। परंतु यदि उनका भी गोत्र सावर्ण्य हीं होवे, तो सावर्ण्य गोत्र वाले क्षत्रिय पटना-बेमूपुर-में इस समय पाये नहीं जाते, परंतु सावर्ण्य ब्राह्मण तो गड़हा, पटना, काशी और दरभंगा में भरे पड़े हुए हैं। अतः ऐसी दशा में इन इने गिने बेमुवार क्षत्रियों की वही दशा हो सकती है जो सामान्यतःप्रथम कही जाचुकी है।

कुढ़नियां नाम वाले ब्राह्मणों का निवास आजमगढ़ के सूर्यपुर आदि बहुत से ग्रामों में है और इन्ही में से कुछ दरभंगा जिले के सरायरञ्जन आदि गांवों में तथा अन्यत्र भी कहीं २ पाये जाते हैं। ये लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण अंटेर के दीक्षित काश्यप गोत्री हैं। इसीलिये इन्हीं की एक शाखा मिर्जापुर के सुधवल आदि १० या १२ ग्रामों में पाई जाती है। जिन में से ३ ग्रामवाले याचक दलवाले ब्राह्मणों में मिले हुए हैं, परंतु ९ गांववाले अयाचक दलवाले ब्राह्मण हीं हैं। परंतु सब के सब अपने को एक ही बतलाते और काश्यप गोत्री अंटेर के दीक्षित ही कहते हैं और अबतक उनकी पदवी दीक्षित ही है। वे अपने को कुढ़नियां नहीं कहते। क्योंकि यहां से जाने के बाद ही आजमगढ़ वाले कुढ़नियां कहलाये। परन्तु अंटेर से आकर प्रथम यहां रहे थे। यह बात कुढ़नियां ब्राह्मणों की बृहत् वंशावली में लिखी हुई है और अंटेर स्थान को ग्वालियर के पास बताया है। सो भी ठीक ही है। सुधवल के पूर्वोक्त दीक्षित ब्राह्मणों के विषय में सन् १८६५ ई० की मनुष्य गणना की रिपोर्ट में इस प्रकार लिखा है:—

There is a sect of Dikshit Bhoinhars inhabiting Mouzah Soodhawal &c. Most of them still retain

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

their primary character, and make intermarriages among their own clan; and some of them following the manners and customs of Surwaria Brahmins have mixed with them. Vol- I. P. 120

अर्थात् ' भूमिहारों का एक दल दीक्षित कहलाता है और सुधवल आदि गांवों में पाया जाता है। उन में से अधिकांश प्रथम की तरह अयाचक ही बने हुए हैं और अपने हीं दल में विवाह आदि करते हैं। परन्तु थोड़े से सरवरिया ब्राह्मणों की चाल ढाल और रस्म रिवाजों (याचकता, पुरोहिती आदि) का अनुसरण कर उनमें हीं मिल गये हैं। भाग १, पृ० १२० '। इन्हीं दीक्षितों में से कुछ गाजीपुर जिले के शादियाबाद परगने में भी पारा और छपरी आदि गांवों में पाये जाते हैं जो अब तक काश्यप गोत्री और दीक्षित पदवी वाले ही हैं। ब्राह्मणों के दीक्षित नाम पड़ने का कारण प्रथमहीं बतला चुके हैं कि इनके पूर्वजों ने बड़े २ यज्ञ किये थे, जिन में उन्हें दीक्षा दीगई थी, इसलिये वे दीक्षित कहलाये। यद्यपि गाजीपुर के पचोतर परगने के क्षत्रिय भी दीक्षित कहलाते हैं, तथापि उनका गोत्र काश्यप नहीं है। परन्तु दीक्षित नाम तो उनका भी वैसे ही पड़ा जैसे कि ब्राह्मणों का। क्योंकि यज्ञ में जिसकी ही विधिवत् दीक्षा होवे वही दीक्षित कहला सकता है, नकि ब्राह्मण मात्र ही। क्योंकि यज्ञ करने का अधिकार ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णों को है।

अस्तु, कुढ़नियां ब्राह्मणों की वंशावली में, जो सूर्यपुर, आजमगढ़ में पाई जाती है, यह लिखा हुआ है कि अंटेर से पण्डित प्रवर गोल्हन भट्ट नामक इनके पूर्वज काशी आये और वे बड़े यज्ञ करने वाले थे; इसी लिये उनको दीक्षित पदवी मिली और काशिराज की ओर से सूर्यपूर के पास पांच गांव मिले। इसलिये वे अथवा उनके वंशज वहां जा बसे और कुछ लोग सुधवल आदि गावों में हीं रह गये। जो लोग आजमगढ़ में बसे, उनके उस प्रथम निवास का स्थान कुढ़नी नाम वाला तप्पा (परगने का एक भाग) था, इसलिये पीछे वहांसे इधर उधर हटने से वे लोग उसी तप्पे के नाम से कुढ़नियां कहलाये। कुढ़नी नाम वाला तप्पा सगरी परगने में था और शायद अब घोसीमें है और सगरी में हीं ये लोग पाये भी जाते हैं। उस तप्पे का नाम आजम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गढ़ के गजेटियर (Gazetteer) में भी लिखा हुआ है। जो लोग कुढ़नियां नाम को बिगाड़ कर कुंडहवनियां इत्यादि कहा करते हैं और उसके स्वकपोल कल्पित अर्थ भी किया करते हैं, वह उनकी भूल है। क्योंकि ब्राह्मणों के ये सब नाम डीह या मूल स्थान से ही पड़े हैं। जैसे एकसार में रहने से एकसरिया, जैथरसे जैथरिया और नोनहुल से नोनहुलिया आदि। नोनहुलिया ब्राह्मण और नोनहुल डीह बलिया जिले में सर्यू के तट पर हैं। इसी तरह एकसार और जैथर छपरा जिले में हैं और एकसरिया तथा जैथरिया ब्राह्मण छपरा और मुजफ्फरपुर जिले में पाये जाते हैं। एकसार वगैरः में उनके पूर्व पुरुषों के आने का विवरण उन लोगों की वंशालियों में पाया जाता है और थोड़ा बहुत प्रथम भी लिख चुके हैं। अस्तु, इससे सिद्ध है कि कुढ़नियां नाम कुढ़नी स्थान में रहने से ही पड़ा। यदि कुढ़नियां नाम वाले राजपूत थोड़े बहुत कहीं मिलते हों, तो यातो कुढ़नी तप्पे में रहने से वे भी कुढ़नियां कहलाये, अथवा अन्य कारणों से, जैसा कि साधारणतः कह चुके हैं।

गौतम ब्राह्मणों का तो सविस्तर वर्णन प्रथम ही परिच्छेद में तथा इस में भी बहुत जगह किया जा चुका है और काशी के गौतम क्षत्रियों का भी हाल कह ही चुके हैं। गौतम ब्राह्मणों के विषय में १८६५ ई० की मनुष्य गणना की बनारस की रिपोर्ट के ११८ वें पृष्ठ, प्रथम भाग में भी वही बात लिखी गई है, जिसका प्रदर्शन आगे करेंगे।

तटिहा नाम वाले ब्राह्मण छपरा जिले में और कुछ बलिया में भी सर्यू के दोनों तटों पर पाये जाते हैं। ये लोग सर्यूपारी ब्राह्मण सीसोटांड़ के मिश्रकाश्यपगोत्री हैं और और अबतक सीसोटांड़ में भी पाये जाते हैं। छपरा जिला तो सर्यूपार में गिना जाता है और है ही। ये लोग सर्यू नदी के दोनों तटोंपर फैले हुए हैं। इसी लिये इन का नाम तटहा, टटहा या तटिहा इत्यादि पड़ा। जिस का अर्थ यह है कि 'नदी के तट के रहनेवाले'। यदि क्षत्रिय भी इस नामवाले अधिक पाये जाते हों, तो उनका नाम भी तटपर रहने से ही तटिहा या टटिहा पड़ा होगा, अथवा उनके विषय में कोई अन्य हीं बात होगी। जो लोग तटिहा को बिगाड़ कर टेंटिहा बना देते और उस पर मन गढ़न्त कल्पनायें करते हैं वह उनकी भूल है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कौशिक नामवाले ब्राह्मण विशेष कर गाजीपुर जिले के जहूराबाद परगने में पाये जाये जाते हैं और छपरा, मुजफ्फरपुर और दरभंगा जिलों में भी उनकी कमी नहीं है। परन्तु वहां नेकतीवार और कुसौंजिया इत्यादि नामों से कहे जाते हैं। जिस का तात्पर्य यह है कि वे लोग प्रथम नेकती या कुसौंजी स्थानों में थे। अतः वहां से हटने पर नेकती वारऔर कुसौंजिया कहलाये। वे सब लोग अभीतक पाण्डे ही बोले जाते हैं। इस से स्पष्ट ही है कि जहूराबाद वाले कौशिक ब्राह्मण भी प्रथम पाण्डे ही कहलाते थे, परन्तु पीछे से उन्होंने 'राय' की पदवी धारण करली। मुर्शिदाबाद–लालगोला–के वर्त्तमान राजा साहब इसी जहूराबाद के सुर्वत पाली ग्राम के रहनेवाले कौशिक ब्राह्मण के पुत्र हैं। बहुत दिनों से ये लोग सर्यूपार या कन्नौज से आकर यहीं रहते थे और पीछे भी यहां से न हटे, इसलिये ये लोग पूर्ववत् गोत्र के नाम से ही पुकारे जाते रहगये। आईन अकबरी में भी इनको जहूराबाद का जमींदार लिखा है। यदि क्षत्रिय भी कौशिक नामवाले हों, तो हो सकते हैं। क्योंकि जैसा कि दिखला चुके हैं, कि गोत्र तो सभी जातियों के एक ही हो सकते हैं।

भृगुवंश नामवाले ब्राह्मण निजामाबाद परगने में आजमगढ़ के जिले में पाये जाते हैं। ये लोग टीकापुर, बीबीपुर आदि गांवों में पाये जाते हैं। इनका गोत्र भार्गव है, और प्रवर भार्गव, च्यवन, आप्नवान, और्व, और यमदग्नि हैं। इनके पुरोहित भी भार्गव गोत्री ही हैं। इसी से इनलोगों का कथन है कि हमलोग वास्तव में एक ही हैं। परन्तु जो लोग हमीं में हीं गरीब थे, वे हमारी ही पुरोहिती करने लगे और याचक कहलाये, और धनीलोग अयाचक या भूमिहार ब्राह्मण कह लाये। अस्तु, जो कुछ हो, ये लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं और इनकी प्राचीन पदवी पाण्डे है। इसी से इन्हीं लोगों में से जो बस्ती के कोटिया आदि गांवों और फैजाबाद में हैं, वे अब तक पाण्डे ही कहलाते हैं। इन्हीं लोगों में से कुछ लोग गाजीपुर जिले के असावर आदि गांवों में चले गये हैं, जो अपने को प्रथम असावर में रहने से असवरिया कहते हैं और यहीं से जाना बतलाते हैं। इन लोगों के ५० वर्ष के पूर्व के दस्तावेज आदि कागजों में ब्राह्मण कौशिक ही इनकी लिखी गई है, यहां तक कि भूमिहार शब्द भी नहीं लिखा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गया है *। ये लोग निजामाबाद परगने के बहुत प्राचीन रहने वाले हैं और वहीं रह गये, क्योंकि इनका पुराना डीह भी उसी जगह है। इसलिये ये लोग पूर्ववत् अपने गोत्रों से ही पुकारे जाते रह गये, क्योंकि भृगुवंश का अर्थ है भृगु या भागव गोत्र वाला।

यद्यपि बनारस के जिले में काशी से दक्षिण बहुत से गांवों में भृगुवंश क्षत्रिय भी पाये जाते हैं, तथापि उनका इन भृगुवंश ब्राह्मणों से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि एक भृगुवंश क्षत्रिय से, जो बहुत होशियार था, हमने उसका गोत्र पूछा तो उसने उत्तर दिया कि हम लोगों का गोत्र सावर्ण्य है। परन्तु जब उससे पुनः प्रश्न किया गया कि भृगुवंश कहला कर सावर्ण्य गोत्र आप लोगों का कैसे हो गया? तो इस विषय में उसने समाधान (उत्तर) करने के लिये बहुत कुछ यत्न किया, परन्तु उचित उत्तर न देसका और अन्त में उसने यही कहा कि हमारा गोत्र किसी तरह से भी हो सावर्ण्य हीं है, इसमें तो सन्देह नहीं, परन्तु हम लोग भृगुवंश क्यों कहलाये यह बात हम नहीं जानते। साथ ही, भृगुवंश क्षत्रिय और ब्राह्मण ये दोनों एक दूसरे से बहुत दूर हैं। यदि गोत्र एक भी होता तो भी कोई बात नहीं, क्योंकि गोत्र एक भी हो सकते हैं, यह दिखलाया जा चुका है।

सोनपकरिया, सोनपखरिया या सरपखरिया इत्यादि अनेक प्रकार से कहे जाने वाले ब्राह्मण आजमगढ़ जिले के इन्दारा स्टेशन के आस पास १२ या १४ ग्रामों में फैले हुए हैं। यद्यपि इनको लोग अनेक नामों से पुकारते हैं, तथापि एक उसी दल के चतुर ब्राह्मण से हमने उसका हाल पूछा, तो उसने अपना गोत्र भारद्वाज और सोनपकरिया नाम बतलाया और यह भी कहा कि हमारे पूर्वज खजुरा, धुवार्जुन या सोनवरसा की तरफ से आये। ये सब धुवार्जन आदि ग्राम गाजीपुर के सैदपुर परगने में हैं और वहां पर भारद्वाज गोत्र

* टीकापुर के श्री मथुरा प्रसाद सिंह के पास सन् १८०९ ई० के एक मुकद्दमे की रवाही का कागज मिला है, जिस में एक भृगुवंश यजमान और पुरोहित दोनों के रवाही देने के समय यजमान के नाम के आगे 'राय, भूमिहार, कौम ब्राह्मण' और पुरोहित के नाम के आगे 'पाठक, कौम ब्राह्मण' लिखा है। इससे स्पष्ट है कि भूमिहार शब्द पाठक की तरह पेशा या कामका द्योतक है, न कि जाति या दल का।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाले ब्राह्मण २४ गांवों में पाये जाते हैं। सम्भव है कि वहीं के सोनवरसा गांव से आने के कारण ये लोग सोनवरसिया कहलाते कहलाते इन पूर्वोक्त नामों से कहलाने लग गये हों, क्यों कि काल पाकर शब्दों के रूप बिगड़ जाया करते हैं, यह बात सभी को मालूम है। नहीं तो कहां वाराणसी और कहां बनारस ?

अथवा यह सम्भव है जैसा कि आगे लिखा है। वह यह है कि भारद्वाज या भरद्वाज कहलाने वाले ब्राह्मणों के पूर्वज पंडित गजाधर पाण्डे सर्यूपार से आकर आरा जिले के मचियाँव गांव में प्रथम बसे और वहां से उनके वंशजों में से एक पुरुष, जो आजमगढ़ में देवगांव की तरफ सिकरौरा, बहादुरपुर आदि गांवोंके भारद्वाज गोत्री चौधरी कहलाने वाले ब्राह्मणों के पूर्वज थे, उसी तरफ आकर बसे, जिनके वंशज उन दस या बारह ग्रामों में फैले हुए हैं। और दूसरे पुरुष, जो धुवार्जुन आदि पूर्वोक्त २४ गांववालों के पूर्वज थे, धुवार्जुन आदि की तरफ गाजीपुर जिले में आये और उन्हीं के वंशज उन २४ गांवों में इस समय पाये जाते हैं। उन लोगों का यह भी कहना है कि हमारे पूर्वजों ने प्रथम मसोन की कोट को, जो खंडहर स्वरूप में औरिहार या सैदपुर के पास है, अन्य लोगों से जीत लिया था और वहां पर ही अधिकार जमाये बहुत दिन तक रहे। परन्तु जब अन्त में किसी साधु के कोप से वह कोट उजड़ने या उलटने वाली हुई तो वहां से हट कर वे लोग इन २४ गांवों में फैल गये। वह कोट खंडहर कर दी गई या उलट दीगई। इसी से उसका नाम मसोन हुआ। क्योंकि जितने स्थानों के नाम मसोन या मसौनी आदि हमें मिले हैं, उनका ऐसाही इतिहास मिलता है कि वे किसी कारण से खंडहर कर दिये गये। और साधु या फकीर ने उसे मसोन बनाया था, इसलिये उसका नाम मसोनफकीर भी हुआ और वहीं से दूर चले आने के कारण आजमगढ़ के भारद्वाज गोत्र वाले ये ब्राह्मण मसोनफकीरिया कहलाते कहलाते काल पाकर सोनफकीरिया या सोनपकरिया इत्यादि कहलाये।

तीसरी बात यह भी हो सकती है कि जब भारद्वाज लोग मसोन कोट से भाग गये, तो उस समय सोनपकरिया लोगों के पूर्वज मसोन से भाग कर इन्दाराके पास पकरी नामक स्थान में बसे। परन्तु वहां से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी किसी कारण से हटकर इधर उधर पास में हीं फैलजाने से पूर्वके मसोन और हाल के पकरी डीह को मिलाकर अपने को मसोनपकरिया कहने लगे, और कुछ दिन बाद वही नाम सोनपकरिया या सोनपोखरिया इत्यादि हो गया। परन्तु धुवार्जुन आदि गांवों वाले भारद्वाज गोत्री लोग बहुत प्रथम काल से वहीं थे और रह गये, कहीं दूर न गये। इसलिये उनका नाम पूर्व की तरह गोत्र से ही कहलाता रहा और अब तक वे 'भारद्वाज' ही कहलाते हैं। आईन अकबरी में इन्हीं भारद्वाज ब्राह्मणों की जमींदारी सैदपुर के परगने में लिखी हुई है, जैसा कि प्रथम हीं कहा गया है। किन्तु वास्तव में सोनपकरिया, धुवार्जुन आदि वाले और सिकरौरा बहादुरपुर वाले चौधरी लोग एक ही वंश के भारद्वाज गोत्री सर्यूपारी मचैयां पाण्डे हैं। इसलिये इन्हीं लोगों में से जाकर बलिया जिले के बैरिया ग्राम में रहने वाले पंडित प्रमोद नारायण पाण्डे वगैरः अभी तक पाण्डे ही कहलाते हैं और वे लोग 'बैरिया के पाण्डे' प्रसिद्ध हैं, जिनका वंश ही बड़ा कर्मठ, अग्निहोत्र परायण, और आदर्श चरित्र है। क्योंकि अब तक बराबर अग्निहोत्र का अनुष्ठान उनके घर होता है। उनके इस व्यवहार का अनुकरण सभी ब्राह्मणों को करना चाहिये। यदि क्षत्रिय भी सोनपोखरिया कहलाते हों, तो उन का हाल पूर्ववत् जान लेना चाहिये। यदि वे लोग होंगे भी तो नाम मात्र को।

इसी गाजीपुर के ही शादियाबाद परगने के देवा नामक ग्राम में रहने वाले और जुझौतिया कहलाने वाले ब्राह्मणों के जुझौतिया नाम पड़ने का कारण प्रथम परिच्छेद में हीं दिखलाया जा चुका है, कि बुन्देलखण्ड के कुछ भाग का नाम प्रथम जुझौती था, इस लिये वहां के रहने वाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण जुझौतिया वा जिझौतिया कहलाये और उन्हीं में से कुछ लोग देवा में भी आकर बसे और अयाचक होने और अपने प्रथम के देश से दूर होने के कारण अयाचक ब्राह्मणों के साथही इसी देश में विवाह सम्बन्ध आदि करने लगगये।

इसी तरह एकसरिया और जैथरिया आदि का भी संक्षिप्त विवरण लिख चुके हैं। छपरा–चैनपुर के प्राचीन दंसी परगने से भाग कर मुजफ्फरपुर के मिहिला परगने में जा बसने वाले काश्यप गोत्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अयाचक ब्राह्मणों का ग्राम दंसवार पड़ा और एकसार के पास ही सहदौली ग्राम में रहनेवाले अयाचक ब्राह्मणों के वहां से दरभंगा के पतोर आदि ग्रामों में चले जाने से वे लोग सहदौलिया कहलाये और अबतक वे लोग मिश्र कहलाते हैं, जैसा कि पण्डित श्रीराजेन्द्र प्रसाद मिश्र इत्यादि। इन लोगों का स्वाभिमान तथा इन के आदर्श व्यवहार सभी ब्राह्मणों के अनुकरणीय हैं। सहदौलिया और एकसरिया लोग एक ही वंश के पराशर गोत्री हैं।

प्रथम आरा अथवा दरभंगा के सहस्राम में रहने के कारण आजकल दरभंगा के रपुरा आदि गांवों में रहनेवाले काश्यप गोत्री ब्राह्मण सहस्रामे कहलाते हैं। सहस्राम गांव दोनों जिलों में है। छपरा के दिघवा स्थान में रहने के कारण छपरा या मुजफ्फरपुर और दरभंगा आदि में रहनेवाले ब्राह्मण दिघवे अथवा दिघवैत कहलाये। इन का गोत्र शाण्डिल्य है। जैसे अरापा डीह में प्रथम निवास के कारण सावर्णियां लोग अरापै कहलाते हैं और वह डीह भी उनके पासही पटना जिले में है। इसी तरह चौधरी टोला-पटना के रहनेवाले श्री रामगोपाल सिंह चौधरी और श्री कृष्ण प्रसाद सिंह चौधरी आदि भी प्रथम शाहाबाद जिले के ही परहाप स्थान में, जहां से वे लोग अपना आना चौधरी टोले में बतलाते हैं, रहने से पश्चात् परहापै कहलाये। उनका गोत्र कश्यप है और वे लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं और पाण्डे उनका आस्पद है। जैसा कि उनके भाई चौधुरी सोना पाण्डे अन्त तक पाण्डेय ही कहलाते रहे और इनके पिता को तो लोग पाण्डे जी कहते ही थे। जो कश्यप गोत्र वाले और मिश्र पदवी वाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण भूपाल (मालवा) से आकर हाजीपुर के वैकुण्ठपुर (बकठपुर) आदि गांवों में अब तक रहते हैं वे भूपाली कहलाते हैं। कोई कोई उसी नामको बिगाड़कर भूमपाली या भूमापाली कहते हैं। ये लोग अब तक बहुत से गांवों में मिश्र ही बोले जाते हैं, जैसे श्री मूर्त्तिनारायण मिश्र, मुख्तार, मुजफ्फरपुर। परंतु कहीं कहीं सिंह या अन्य पदवियों से भी बोले जाते हैं. जैसे पण्डित सन्तप्रसाद सिंह शर्म्मा, बकठपुर इत्यादि। ऐसे ही और भी अथर्व आदि नामों के अर्थ और विवरण अथर्व वेद के ज्ञाता आदि समझना चाहिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गाजीपुर जिले के मुहम्मदाबाद परगने में हीं कुछ ब्राह्मण रहते हैं, जिनको कस्तुवार कहते हैं और जिनका वसिष्ठ गोत्र है। इन लोगों का विवरण, जैसा कि वहां के सभी लोग जानते हैं, ऐसा है कि राजा जयचन्दका चचेरा भाई मान्धाता कुष्ट रोग से पीड़ित होकर तीर्थ यात्रा के लिये जगन्नाथ जी जाता था। परन्तु जब उसी मुहम्मदाबाद में वर्त्तमान कठौत (गौसपुर) नामक स्थान के पास आया, तो उस स्थान पर स्थित एक तालाब में हाथ धोने के समय तुरन्त उतने का कुष्टरोग हटा हुआ देख उस तालाब में उसने स्नान किया, जिससे उसका सम्पूर्ण शरीर कुष्ट रोग से रहित और दिव्य होगया। इस से अत्यन्त प्रसन्न होकर पांच ब्राह्मणों को, जिनकी मिश्र उपाधि (पदवी) थी और जो एक या दो गोत्रों के थे, वहां बुलाकर पांच गांव दान दिये और उसी जगह उनके रहने का स्थान बनवा दिया और अपने आप भी बहुत दिनों तक वहां रहा। वहां हीं उसका कुष्ट रोग अच्छा हुआ था, अर्थात् वह कुष्ट रोग से पूत (रहित) हुआ था। इसीलिये उस स्थान का नाम कुष्टपूत हुआ। परन्तु कालान्तर में संस्कृत शब्द 'पूत' का अपभ्रंश 'उत' हो गया, जैसा कि प्राकृत भाषा में 'पुत्र' शब्द को 'उत्त' कहते हैं, अर्थात् जैसे आयपुत्र को 'अज्ज उत्त' कहते हैं, उसी तरह 'कुष्ट पूत' शब्द का 'कुष्ट उत' हो कर कुछ दिन और पीछे 'कु(क)ष्टौत' और 'कठौत' हो गया। जो आज-तक कठौत ही कहा जाता है और वहांपर मान्धाता की बनवाई हुई कोट भी अब तक भग्नावस्था में है। और ये ब्राह्मण प्रथम उसी स्थान पर गये थे और रहते भी थे, इसलिये कुष्टौतवार कहलाने लगे, जो पीछे बिगड़ते बिगड़ते कुष्टवार, कष्टवार और कस्तुवार हो गया। इन सबों की पदवी मिश्र है और वसिष्ठ गोत्र है। सम्भवतः कुछ लोगों का गोत्र दूसरा भी हो।

उन्हीं में से जिनको राजा मान्धाता या उनके वंशजों ने योग्यता देखकर अपना प्रधान या मंत्री बनाया था, अथवा अन्य ब्राह्मणों के ऊपर प्रधान बनाकर रक्खा था, वे अबतक प्रधान पदवीवाले हीं कहलाते हैं। उन सबों ने भूमि लेने के बाद धनी होने के कारण अपनी याचकता वृत्ति छोड़ दी और भूमिहार ब्राह्मणों में मिल गये। अथवा जिन ब्राह्मणों ने दान में भूमि ली थी वे दूसरे ही होंगे। ये लोग तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अयाचक ब्राह्मणों का ग्राम दंसवार पड़ा और एकसार के पास ही सहदौली ग्राम में रहनेवाले अयाचक ब्राह्मणों के वहां से दरभंगा के पतोर आदि ग्रामों में चले जाने से वे लोग सहदौलिया कहलाये और अबतक वे लोग मिश्र कहलाते हैं, जैसा कि पण्डित श्रीराजेन्द्र प्रसाद मिश्र इत्यादि। इन लोगों का स्वाभिमान तथा इन के आदर्श व्यवहार सभी ब्राह्मणों के अनुकरणीय हैं। सहदौलिया और एकसरिया लोग एक ही वंश के पराशर गोत्री हैं।

प्रथम आरा अथवा दरभंगा के सहस्राम में रहने के कारण आजकल दरभंगा के रपुरा आदि गांवों में रहनेवाले काश्यप गोत्री ब्राह्मण सहस्रामे कहलाते हैं। सहस्राम गांव दोनों जिलों में है। छपरा के दिघवा स्थान में रहने के कारण छपरा या मुजफ्फरपुर और दरभंगा आदि में रहनेवाले ब्राह्मण दिघवे अथवा दिघवैत कहलाये। इन का गोत्र शाण्डिल्य है। जैसे अरापा डीह में प्रथम निवास के कारण सावर्णियां लोग अरापै कहलाते हैं और वह डीह भी उनके पासही पटना जिले में है। इसी तरह चौधरी टोला–पटना के रहनेवाले श्री रामगोपाल सिंह चौधरी और श्री कृष्ण प्रसाद सिंह चौधरी आदि भी प्रथम शाहाबाद जिले के ही परहाप स्थान में, जहां से वे लोग अपना आना चौधरी टोले में बतलाते हैं, रहने से पश्चात् परहापै कहलाये। उनका गोत्र कश्यप है और वे लोग कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं और पाण्डे उनका आस्पद है। जैसा कि उनके भाई चौधुरी सोना पाण्डे अन्त तक पाण्डेय ही कहलाते रहे और इनके पिता को तो लोग पाण्डे जी कहते ही थे। जो कश्यप गोत्र वाले और मिश्र पदवी वाले कान्यकुब्ज ब्राह्मण भूपाल (मालवा) से आकर हाजीपुर के वैकुण्ठपुर (बकठपुर) आदि गांवों में अब तक रहते हैं वे भूपाली कहलाते हैं। कोई कोई उसी नामको बिगाड़कर भूमपाली या भूमापाली कहते हैं। ये लोग अब तक बहुत से गांवों में मिश्र ही बोले जाते हैं, जैसे श्री मूर्त्तिनारायण मिश्र, मुखतार, मुजफ्फरपुर। परंतु कहीं कहीं सिंह या अन्य पदवियों से भी बोले जाते हैं. जैसे पण्डित सन्तप्रसाद सिंह शर्म्मा, बकठपुर इत्यादि। ऐसे ही और भी अथर्व आदि नामों के अर्थ और विवरण अथर्व वेद के ज्ञाता आदि समझना चाहिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गाजीपुर जिले के मुहम्मदाबाद परगने में हीं कुछ ब्राह्मण रहते हैं, जिनको कस्तुवार कहते हैं और जिनका वसिष्ठ गोत्र है। इन लोगों का विवरण, जैसा कि वहां के सभी लोग जानते हैं, ऐसा है कि राजा जयचन्दका चचेरा भाई मान्धाता कुष्ट रोग से पीड़ित होकर तीर्थ यात्रा के लिये जगन्नाथ जी जाता था। परन्तु जब उसी मुहम्मदाबाद में वर्त्तमान कठौत (गौसपुर) नामक स्थान के पास आया, तो उस स्थान पर स्थित एक तालाब में हाथ धोने के समय तुरन्त उतने का कुष्टरोग हटा हुआ देख उस तालाब में उसने स्नान किया, जिससे उसका सम्पूर्ण शरीर कुष्ट रोग से रहित और दिव्य होगया। इस से अत्यन्त प्रसन्न होकर पांच ब्राह्मणों को, जिनकी मिश्र उपाधि (पदवी) थी और जो एक या दो गोत्रों के थे, वहां बुलाकर पांच गांव दान दिये और उसी जगह उनके रहने का स्थान बनवा दिया और अपने आप भी बहुत दिनों तक वहां रहा। वहां हीं उसका कुष्ट रोग अच्छा हुआ था, अर्थात् वह कुष्ट रोग से पूत (रहित) हुआ था। इसीलिये उस स्थान का नाम कुष्टपूत हुआ। परन्तु कालान्तर में संस्कृत शब्द 'पूत' का अपभ्रंश 'उत' हो गया, जैसा कि प्राकृत भाषा में 'पुत्र' शब्द को 'उत्त' कहते हैं, अर्थात् जैसे आयपुत्र को 'अज्ज उत्त' कहते हैं, उसी तरह 'कुष्ट पूत' शब्द का 'कुष्ट उत' हो कर कुछ दिन और पीछे 'कु(क)ष्टौत' और 'कठौत' हो गया। जो आज-तक कठौत ही कहा जाता है और वहांपर मान्धाता की बनवाई हुई कोट भी अब तक भग्नावस्था में है। और ये ब्राह्मण प्रथम उसी स्थान पर गये थे और रहते भी थे, इसलिये कुष्टौतवार कहलाने लगे, जो पीछे बिगड़ते बिगड़ते कुष्टवार, कष्टवार और कस्तुवार हो गया। इन सबों की पदवी मिश्र है और वसिष्ठ गोत्र है। सम्भवतः कुछ लोगों का गोत्र दूसरा भी हो।

उन्हीं में से जिनको राजा मान्धाता या उनके वंशजों ने योग्यता देखकर अपना प्रधान या मंत्री बनाया था, अथवा अन्य ब्राह्मणों के ऊपर प्रधान बनाकर रक्खा था, वे अबतक प्रधान पदवीवाले हीं कहलाते हैं। उन सबों ने भूमि लेने के बाद धनी होने के कारण अपनी याचकता वृत्ति छोड़ दी और भूमिहार ब्राह्मणों में मिल गये। अथवा जिन ब्राह्मणों ने दान में भूमि ली थी वे दूसरे ही होंगे। ये लोग तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजा के प्रधान थे, इसलिये जागीर की तरह ही इन लोगों को भूमि मिली होगी और उसी से आजतक प्रधान हीं कहलाते हैं। अथवा ऐसा भी हुआ होगा कि दान न देकर जागीर के तौर पर ही इनको भूमि दी गई होगी और उसी को लोग भूलकर दान की तरह मिलना कहते हैं। चाहे जो कुछ भी हो, इसमें किसी प्रकार का हर्ज नहीं है। क्योंकि यह सिद्ध कर चुके हैं कि ब्राह्मण लोग सर्वदा ही याचक से अयाचक और अयाचक से याचक धनी और गरीब होने के कारण हुआ करते हैं, न कि अयाचक सदा अयाचक ही और याचक सदा याचक ही बने रहते हैं, क्योंकि याचकता और अयाचकता ये दोनों ब्राह्मणों के व्यक्तिगत धर्म हैं। हां याचकता आपत्ति काल का धर्म है और विवेकी एवं धनी लोग उसका अनादर कर अयाचकता को ही स्वीकार करते हैं, यह अन्य बात है। परन्तु यह बात केवल अपने अपने विचार और इच्छा पर निर्भर है न कि कोई शास्त्रीय आज्ञा है कि अयाचक कभी पुरोहिती न करे और याचक पुरोहिती को न त्यागे।

बस, पाठक लोग इतने हीं से समझ गये होंगे कि अयाचक ब्राह्मणों के छोटे छोटे दलों के नामों को अन्य समाज के नामों की तरह देख कर लोगों ने जो जो मिथ्या कल्पनायें की हैं, वे कहां तक सत्य हैं। सारांश यह है कि ऐसी कल्पनाओं के करने से भारतवर्ष का ब्राह्मण से लेकर शूद्र पर्य्यन्त सभी समाज एक ही सिद्ध किया जासकता है, क्योंकि सभी समाजों अथवा उनके छोटे छोटे दलों के बहुत से नाम एकही हैं, जैसा कि अच्छी तरह सिद्ध कर चुके हैं। अतः आशा है कि पाठक उस भूल को सुधार लेंगे। नहीं तो कहीं ऐसा न हो जावे कि उसी कल्पित तंत्री (वीणा) पर विपरीत स्वर आलापने वाले पण्डितमानी लोगों को विचारकों के सन्मुख मुंह की खानी पड़े।

३-वैदेशिक उक्तियां और उपसंहार।

अब हमारा वक्तव्य यहीं पर सम्पूर्ण होता है। हमको केवल कुछ अंग्रेजी ग्रन्थ लेखकों (प्रायः वैदेशिकों) की उन सम्मतियों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उद्धृत कर देना है, जो उन्होंने इन अयाचक दलवाले ब्राह्मणों के विषय में प्रकाशित की हैं। यद्यपि यह काम हम अपने वक्तव्य की पुष्टि के लिये नहीं करते हैं, क्योंकि इस विषय में तो सभी कुछ दिखला चुके हैं और अंग्रेजों की सम्मतियों को इस विषय में हम प्रमाण मानते भी नहीं, कारण कि उनको हमारे हिन्दू समाज के आन्तरिक भावों या हमारे रस्म रिवाजों का पूर्णतः परिचय ही क्या है कि वे लोग यथार्थतः उनकी आलोचना निष्पक्षपात भाव से करसकें? उन्होंने तो जो कुछ सुना, लिख दिया। उस में भी निज के सिद्धान्त को ही सिद्ध करने का यत्न करते हैं कि वर्णव्यवस्था कोई वस्तु है ही नहीं इत्यादि। तथापि जिन बाबुओं की जिज्ञासा रूप पिपासा केवल उन्हीं की उक्ति रूप जल से शान्त होती है-जो उन्हीं की उक्ति रूप स्वाती नक्षत्र के बूंद के प्यासे चातक हैं-उन के ही संतोष के लिये हमारा यह यत्न है। सूत्र रूप से यहां इतना समझ लेना चाहिये कि सभी वैदेशिकों की सम्मतियां अयाचक दलीय ब्राह्मणों के अनुकूल ही हैं। यदि किसी ने केवल एकाध बात कुछ कुछ विपरीत लिखने का साहस डरते डराते किया भी है तो दूसरे ने उस को युक्ति युक्त प्रमाणों से खण्डित करदिया है, जैसा कि प्रसंग वश सम्भव होगा तो आगे विदित ही होगा और पाठक लोग यत्न करने से-सब की सम्मतियों को स्वयं जानने का प्रयत्न करने से-अन्यत्र भी देख सकते हैं। सर० एच० इलियट साहब की सप्लीमेन्टल ग्लासरी (Sir H. Elliot's Supplemental Glossary) नामक अंग्रेजी पुस्तक के अनुसार आगरा जिले के वर्णन में सन् १८६५ ई० की युक्त प्रान्त की मर्दुम शुमारी की रिपोर्ट के प्रथम के खण्ड ६५ वें पृष्ठ में इस तरह लिखा है:—

(1) Kankubj Proper
(2) Sunadh
(3) Surwaria
(4) Jijhotia
(5) Bhoinhar

There are five divisions of the Kankoobj Brahmans, given in the margin. The first two appear in great force in this district, but of the others I have discovered no traces and their true country lies to the east of the Ganges.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१) प्रधान कान्यकुब्ज
(२) सनाढ्य
(३) सरवरिया
(४) जिझौतिया
(५) भूमिहार

कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के पांच भेद हैं, जो इस पृष्ठ के किनारे पर लिखे हुए हैं। उनमें से प्रथम दो तो इस जिले में अधिकतर पाये जाते हैं, परन्तु अन्य तीनों का यहां पता नहीं मिला। उनके निवास स्थान गंगा के पूर्व के देश हैं।

उसी पुस्तक के ६१ वें पृष्ठ में इटावा जिले के विवरण में लिखा है कि:—

The Kankubj, with whom we are chiefly connected in these provinces, contains five sub families:-(1) Sunoreea or Sunadh; (2) Canojeea; (3) Jijhotea; (4) Bhooinhar; (5) Surwaria These. do intermarry.

अर्थ यह है कि 'कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में, जिनसे हमको इन प्रांतों में विशेष सम्बन्ध है, पांच छोटे छोटे वंश या दल हैं-(१) सनोरिया या सनाढ्य, (२) कनौजिया, (३) जिझौतिया, (४) भुइंहार और (५) सरवरिया। ये पांचों परस्पर विवाह करते ही हैं'।

आगे चल कर उसी पुस्तक के ११७ और ११८ पृष्ठों में मिर्जापुर के वर्णन में लिखा है कि—

Gautams have sprung up from Misra Brahmans. In this tehseeldaree there are no other castes except Gautams residing in Talooqa Majhava. The Gautams were originally Surwaria Misras, the most of whom with a view to show their pomp and splendour on being ilaqadars, commenced smoking hookkah, and consequently rest of their brethren discontinued eating and drinking with them. These Gautams, being thus excommunicated, commenced marriages with Bhoinhars, who settled in the eastern districts, and since then this tribe is increasing. As these Gautams sprang up from Misras, who had their gotra or family title, Gautam, they became known by that appellation.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

There are several subdivisions among the Bhoinhars. They are the descendants of Ujach Brahmans. In other countries the ujach Brahmans ore called Chitpawan and by other different denominations. The Brahmins have gotras, which they have assumed from Rishees, from whom they have sprung up; for instance Gautambuns, who are said to be offspring of Kithoo Misra who descended from Gautam Ujach Brahmins, Kripacharya family. There is no distinction between them and the other Brahmins, besides this, that the formers carry arms and have a military life, and consequently they have assumed the title of 'Singh' and have forsaken eating with other Brahmins. Owing to their title of 'Singh' being celebrated, their original titles of Misra, Pande, Upadhia &c. have fallen in to disuse. Still up to this day in some places they are known by their old titles.

अर्थात् 'गौतम लोग मिश्र ब्राह्मणों के वंशज हैं। इस तहसील (मिर्जापुर) में गौतमों को छोड़कर, जो मझवा तालुका में रहते हैं, दूसरी जातियां नहीं हैं। गौतम लोग सरवरिया ब्राह्मण थे, परन्तु तालुकादार होने पर उन में से बहुतों ने अपनी बड़ाई और प्रतिष्ठा दिखलाने के लिये तम्बाकू पीना प्रारम्भ करदिया, जिस से उन के अन्य भाइयों ने उनके साथ खान पान छोड़ दिया। ये लोग इसप्रकार अलग होकर भूमिहारों के साथ विवाह आदि करने लगगये, जो पूर्व जिलों में रहते थे। उसी समय से ये लोग बढ़ते जा रहे हैं। चूंकि ये गौतम उन मिश्र ब्राह्मणों के वंशज हैं जिनका गोत्र गौतम था, इसलिये ये लोग गौतम कहलाने लगे। भूमिहार लोगों के बहुत से छोटे छोटे दल हैं। ये लोग अयाचक ब्राह्मणों के वंशज हैं। अन्य देशों में अयाचक ब्राह्मण चितपावन, एवं अन्य नामों से पुकारे जाते हैं। ब्राह्मणों के गोत्र हुआ करते हैं, जो उन ऋषियों के सूचक होते हैं जिन से वे लोग पैदा हुए हैं। जैसे, गौतम वंश कित्थू मिश्र के वंशज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं, जो कृपाचार्य के वंश के गौतमऋषि नामक अयाचक ब्राह्मण के वंशज थे। इन भूमिहार ब्राह्मणों और अन्य ब्राह्मणों के बीच कोई भेद नहीं है, सिवाय इसके कि भूमिहार ब्राह्मण अस्त्र शस्त्र ग्रहण करते और वीरों (योद्धाओं) का सा जीवन बिताते हैं और इसीलिये उन्हें 'सिंह' की पदवी मिलगई है और अन्य (याचक) ब्राह्मणों के साथ खाना पीना भूल गये हैं। और इसी 'सिंह' की पदवी के प्रसिद्ध होजाने से उनकी पुरानी मिश्र, पांडे और उपाध्याय इत्यादि पदवियों का प्रयोग नहीं होता। तथापि अबतक बहुत से स्थानों में वे लोग उन्हीं पुरानी मिश्र आदि पदवियोंवाले पाये जाते हैं'।

उसी पुस्तक में मिर्जापुर की क्रेरा नामक तहसील का हाल यों लिखा है:—

The Brahmins are said to be the aborigines of Kanauj, from where a portion of them imigrated into Surwar and several other places. Among them there are to sects, Shut-Karma and Tri-Karma. They procure their livelihood by priesthood; agriculture and other occupations in this pergannah.

तात्पर्य यह है कि 'ब्राह्मण लोग कन्नौज के प्रथम निवासी बतलाये जाते हैं, जहां से ये लोग सरवार तथा अन्यदेशों में फैले हैं। ब्राह्मणों के दो भेद हैं, (१) षट्कर्मा और (२) त्रिकर्मा। इस परगने में रहने वाले इन लोगों में से कोई पुरोहिती से जीविका करते हैं और कोई खेती तथा अन्य पेशों से'।

सन् १९०९ ई० के आजमगढ़ के गजेटियर के ८५, ८६ और ८७ पृष्ठों में लिखा है कि:-

Next on the list come Bhumihars, who at the last census numbered 55669 persons, or 4. 24 precent of the Hindus. They are to be found in all Tahsils, but nearly half of the total number in Sagri, and nearly one half of the remainder are in Deogaon. According to their own tribal traditions, when Paras Ram destroyed the Kshatris, the soil was given to the

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Brahmans, who in taking possession of land assumed the title of Bhumihars. Their Brahman and Rajput neighbours generally insinuate that they are of mixed Brahman and Rajput breed, but there is no evidence in particular to support this view. Some Bhumihars describe themselves as Brahmans and some as Rajputs. In popular estimation they share some thing of the sanctity attaching to a Brahman, while on the other hand their subdivisions are often the same as those of the well known Rajput clans. All the Bhumihars of Azamgarh claim to be of Brahman stock.

अर्थ यह है कि 'राजपूतों के बाद भूमिहारों की संख्या है, जो जन मनुष्य गणना में ५५६६६, या सब हिन्दुओं में से ४.२४ फी सैकड़े है। वे लोग सभी तहसीलों में पाये जाते हैं, परन्तु लगभग आधे के केवल सगरी में और शेष के आधे देवगांव में पाये जाते हैं। उनकी जाति के विषय में ऐसा प्रसिद्ध है कि जब परशुराम ने क्षत्रियों का नाश किया तो उनकी भूमि ब्राह्मणों को दी गई और वेही ब्राह्मण भूमि के मालिक होनेसे भूमिहार कहलाने लगे। उनके ब्राह्मण और राजपूत पड़ोसी छिप कर चुपके से यह इशारा करते हैं कि ये लोग ब्राह्मण और राजपूत के मेल से उत्पन्न हुए हैं। परन्तु उनलोगों के ऐसा कहने में कोई खास प्रमाण नहीं है। कुछ भूमिहार ब्राह्मण हैं और कुछ राजपूत भी भूमिहार हैं। जन साधारण की दृष्टि में भूमिहार लोग बहुतसी बातों में वैसेही पवित्र समझे जाते हैं जैसे (अन्य) ब्राह्मण। लेकिन उनके बहुत से छोटे छोटे दलों के नाम ऐसे हैं जो राजपूतों के भी हैं। आजमगढ़ के सभी भूमिहार अपने को ब्राह्मण बतलाते हैं'।

राजपूतों के भी भूमिहार नाम पड़ने का कारण और भूमिहार ब्राह्मण तथा राजपूतों के बहुत से नामों के एक होने का पूर्ण विवरण लिखा जा चुका है। इसी ब्राह्मण और राजपूतों के मौलिक इशारे के खण्डन से मिस्टर 'रीड' वगैरः ने जो यही इशारा किया है, उसका भी खण्डन गजेटियर ने हीं कर दिया। साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही, इस गजेटियर के इस कथन से कि 'ये लोग जन साधारण की दृष्टि में ब्राह्मणों की तरह पवित्र समझे जाते हैं'। और मिस्टर 'ओल्डहम के भी इस कथन से कि, 'In popular estimation they share something of the sacredness which attaches to Brahmins' अर्थात् 'बहुतसी बातों में सब लोगों की दृष्टि में ये लोग ऐसे ही पवित्र समझे जाते हैं जैसे ब्राह्मण लोग'। मिस्टर रीड का वह भी कथन स्वयमेव खण्डित हो गया, जो उन्होंने लिखा है कि लोग इन्हें क्षत्रिय समझते हैं।

गाजीपुर के गजेटियर के ४२ पृष्ठ में लिखा है कि:- 'In popular estimation they share in something of the sacredness that attaches to the Bhramins, and they, like genuine Brahmans, were exempted from capital punishment by the old law of the Benares province.'

अर्थात् 'जन साधारण इनको बहुत बातों में ब्राह्मणों की तरह पवित्र समझते हैं और सूबा बनारस के पुराने कानून के मुताबिक जैसे ब्राह्मणों को फांसी की सजा न मिलती थी, वैसेही इन्हें (भूमिहारों को) भी न मिलती थी।

जरासन्ध वाली किंवदन्ती का खण्डन मिस्टर क्रुक ने अपनी पुस्तक (The Tribes and Castes of U. P. and Oudh) में इस प्रकार किया है कि,:— 'The theory that they are a mixed race, derived from a congeries of low caste people accidentally brought together, is disapproved by the high and uniform type of physiognomy and personal appearance which prevails among them &c.

इसका पूरा अर्थ इसी प्रकरण में प्रथमहीं दिखला चुके हैं।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी की कार्यवाही की जांच के लिये जो सिलेक्ट कमिटी बैठी थी, उस की जो पांचवीं रिपोर्ट बंगाल प्रेसिडेन्सी के विषय में प्रकाशित होकर सन् १८१२ ई० में लण्डन में छपी है, उस के प्रथम भाग के ५११ से ५१३ पृष्ठों तक ऐसा लिखा हुआ है:—

Subah Behar (First circar Behar). 3. Ten pergunnas zamindary of Meterjet Singh, Brahman, residing at

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Tekari. 5. Two Pergannas zamindary of Jaswant Singh etc. Brahmans, composed of Arenzil and Musaodih. 8. Two Pergannas Pilich and Malda, the former held by Nandoo Singh Brahmin in zamindary. Two Pergannas Sauret and Bellia, in zamindary, chiefly to Howlass Chowdhery and Anagir Singh Brahmins. 11. One Perganna Gyaspur to Sheo Prasad Singh, Brahmin, with other lessor zamindars. 16. One Perganna of Baykoonthpur to Kesari Singh Brahmin.

Six circar Hajipur. 37. One Perganna Havellee to Hardan Singh etc., Brahmins in zaminday. 38. One Perganna Saraisa to Suchit Singh Brahman. 50. Two Pergannas Rutty and Gursand principally in zamindary to Pertap Singh Brahmin. 51. Five Pergannas Moulky etc. in zamindary to Herlal etc. Brahmins, and usually united with the pergannas of Bellia etc. belonging to Mongeer.

Seven Circar Saran. 53. 15 Pergannas Gowahetc. which 13 to Gopal Narayn etc. five brothers, 2 Allyanpur and Sipah to Raja Fateh Narayan Singh Brahman caste.

इसका अनुवाद यह है कि 'सूबा विहार (प्रथम सरकार विहार)—(४) १० परगनों की जमींदारी मित्र जीतसिंह की थी, जो टिकारी के वासी ब्राह्मण थे। (५) अरंजील और मुसाऊ डीह इन दो परगनों जमींदार जसवन्तसिंह वगैरः ब्राह्मण थे। (८) पिलिछ और मालदा दो परगनों में से पिलिछ के जमींदार नन्दूसिंह ब्राह्मण थे। (९) सन और बलिया ये दो परगने खासकर हुलास चौधुरी और आनासिंह नामक ब्राह्मणों की जमींदारी थी। (११) ग्यासपुर परगने की जमींदारी शिवप्रसादसिंह ब्राह्मण की थी और उसमें छोटे छोटे जमींदार भी शरीक थे। (१६) बैकुण्ठपुर परगना केसरी सिंह ब्राह्मण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की जमींदारी थी। (छ सरकार हाजीपुर)—(३७) परगना हवेली हरदानसिंह ब्राह्मण का था। (३८) सरैसा परगना सूचितसिंह नामक ब्राह्मण का था। (५०) रत्ती और गुरसंद ये दो परगने प्रधानतया प्रतापसिंह ब्राह्मण की जमींदारी में थे। (५१) मुलकी इत्यादि पांच परगनों के जमींदार हरलाल वगैरः ब्राह्मण थे। और ये परगने मामूली तौर पर मुंगेर के बलिया वगैरः परगनों में मिले हुए थे। (सात सरकार सारन)—(५३) १५ परगने गोवा वगैरः में से १३ गोपालनारायण इत्यादि पांच भाइयों के थे और कल्याण पुर और सिपाह ये दो परगने राजा फतेहनारायणसिंह के थे, जिनकी ब्राह्मण जाति थी'।

जो 'गोल्डन बुक आफ इन्डिया' (The Golden book of India) नामक अंग्रेजी पुस्तक 'सर रापर लेथब्रिज के. सी. आई. ई. (By Sir Ropper Lethbridge K. C. I. E.) द्वारा विशेष आज्ञा से (By special permission) लिखी गई और भारत सम्राज्ञी महारानी श्री विक्टोरिया को १८९३ में समर्पित है (Dedicated to Her Gracious Majesty, Victoria, Queen Empress of India, 1893), उसमें लिखा है कि:—

Page 66, Benares-His Highness Sir Prabhu Narayan Singh K. C. I. E. Maharaja Bahadur. The family are Brahmans of the Bhumihar class, and their traditions go back to the year 1000, when a Brahman ascetic of Utaria, a village near Benares, forestood the succession of his posterity to the dominions then governed by Hindu Rajas.

Page 67. Bettiah-Maharaja Sir Hirendra Kishore Singh K. C. I. E. Maharaja Bahdur belongs to Jaitheria Brahmans (Hindu family descended from Gangeshwar Deo, who settled at Jaither in Saran, Bengal, about 1244 A. D.).

Page 174. Hathua-Maharaja Sir Krishna Pratap Sahi Bahadur K. C. I. E. Maharaja Bahadur belongs

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

to a Begochhia Brahman family.

Page 493. Raja Shambhu Narayan belongs to Gautam clan of Bhumihar Brahmans.

इसका अर्थ यह है कि 'पृष्ठ ६६ में लिखा है कि हिज हाईनेस सर प्रभु नारायणसिंह के.सी.आई.ई. महाराजा बहादुर बनारस का वंश ब्राह्मणों में भूमिहार ब्राह्मण दलवाले ब्राह्मणों से है। इनके विषय में यही प्रसिद्ध है कि १००० वर्ष पूर्व बनारस के पास उतरिया गांव में एक तपस्वी ब्राह्मण रहते थे। उन्होंने उस समय के हिन्दू राजाके राज पर अपने वंशजों का राज्य चलाया।

६७ पृष्ठ में लिखते हैं कि महाराज सर हीरेन्द्र किशोरसिंह के. सी. आई. ई. महाराजा बहादुर बेतिया, जैथरिया ब्राह्मण वंश के हैं। यह वंश गंगेश्वरदेव से चला, जो बंगाल के सारन (छपरा) जिले के जैथर गांव में १२४४ ई० में रहते थे।

१७४ पृष्ठ में है कि महाराजा सर कृष्ण प्रताप साही बहादुर के. सी. आई. ई. महाराजा बहादुर हथुवा बगौछिया ब्राह्मण वंश के है।

और ४६३ पृष्ठ में है कि राजा शम्भूनारायणसिंह (औसानगंज) भूमिहार ब्राह्मणों के गौतम वंश के हैं'।

डाक्टर विलियम ओल्डहैम(William Oldham B.C.S.LL. D.) ने स्व पुस्तक (North Western Provinces Historical and Statistical Memoir of the Ghazipur District) के प्रथम भाग के ४३ पृष्ठ में लिखा है कि, "Bhoinhars, both by themselves and by ethnologists, are believed to be the descendants of Brahmins, who, on becoming cultivators and landholders gave up their priestiy functions. In popular estimation they share in something of the sacredness which attaches to the Brahmins, and by the old law of the Benares Province, they like the genuine Brahmins, were exempted form capital punishment; but family priests, or spritual guides are never chosen from among them by men of their own race nor by other Hindus.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थ यह है कि 'भूमिहार लोग अपने आप और वंशपरम्परा के जाननेवालों द्वारा भी उन ब्राह्मणों में से माने जाते हैं, जिन्हों ने कृषक और जमींदार होनेपर पुरोहिती छोड़ दी। जन साधारण की दृष्टि में बहुत से अंशों में ये लोग अन्य ब्राह्मणों की तरह पवित्र समझे जाते हैं और उन्हीं की तरह इन लोगों को भी बनारस प्रान्त के पुराने कानून के अनुसार प्राण दण्ड (फांसी) की सजा नहीं मिलती थी, (क्योंकि हिन्दूधर्म में ब्राह्मणों को फांसी देना वर्जित है)। लेकिन ये लोग न तो अपने हीं समाज के पुरोहित और गुरु होते हैं और न अन्य हिन्दुओं के ही'। डाक्टर ओल्डहैम के 'बहुत से अंशों में अन्य ब्राह्मणों की तरह पवित्र माना जाना' लिखने का तात्पर्य अन्त के वाक्यों से स्फुट है। अर्थात् ये लोग गुरु या पुरोहित नहीं होते, इसीलिये सब अंशों में अन्य ब्राह्मणों की तरह पवित्र नहीं समझे जाते। क्योंकि ऐसी दशा में गुरु या पुरोहितों की तरह पूजा कैसे होसकती है?

५६ पृष्ठ में लिखा है कि 'A Bhumihar family of Panre Brahmins settled at Byreah in Doab Pergannah, have for generations past been the Tehseeldars or land-agents of the Domaraon family.'

अर्थात् 'पांडे कहलानेवाले ब्राह्मणों में से एक भूमिहार ब्राह्मण वंश, जो बलिया जिले के दोआब परगने के बैरिया गांव में प्रथम से ही आकर बसा है, बहुत पीढ़ियों से डुमरांव राज्य का तहसीलदार होता चला आया है'।

६८ पृष्ठ में लिखा है कि 'The family of the Benares Rajahs belong to a clan of Gowtum Bhumihar Brahmans, land holders of the Pergannah Kuswar, which lies a few miles to the west of Benares. They trace their descent form a Brahmin Kithoo Misra etc.

अर्थात् 'बनारस के राजाओं का वंश गौतम भूमिहार ब्राह्मण है, जो काशी से चन्द मील दूर पश्चिम तरफ के कुसवार परगने के जमींदार हैं। ये लोग अपनी उत्पत्ति कित्थू मिश्र नामक एक ब्राह्मण से बतलाते हैं इत्यादि'।

फिर उसी पुस्तक के द्वितीयखण्ड के ४३ वें पृष्ठ में उक्त साहब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हादुर ने लिखा है कि:—

The Hindu land-owning tribes of Benares are, ither Bhumihars, secular Brahmans, or Rajputs.

अर्थात् 'बनारस जिले के मुख्य जमींदार या तो भूमिहार यानी नियवी ब्राह्मण हैं (यहां दुनियवी का अर्थ याचकों या पुरोहितों से भिन्न है, क्योंकि वे लोग पुरोहितों को हिन्दू धर्मानुसार पारलौकिक मझते हैं), या राजपूत'।

बाबू नीलमणिदासराय बहादुर, सदरआला, मुजफ्फरपुर के १८६७ ० के फैसले की जो अपील राजकुमार श्री गिरिजानन्दनसिंहजी ने हारानीजानकी कुंवरि के विरुद्ध की थी, उसके फैसले के १०७ पृष्ठ में इस तरह लिखा है कि:—

Maharajadhiraj Rajendra Kishore Sinha Bahadur, son of Maharaj Nawal Kishore Sinha Bahadur, proprietor of Nimak Saeer Mahal out of Sarcar Champaran inhabitant of Kasaba Betteah, Pergannah Majhawa, Jaitharia Brahman by caste, a zamindar by professon.

अर्थात् 'महाराजा राजेन्द्र किशोरसिंह बहादुर महाराजा नवल किशोरसिंह बहादुर के पुत्र, और निमक सायर महाल के मालिक हैं, जो चम्पारन सरकार से बाहर है। ये मझवा परगने के कसबा बेतिया में रहते हैं। इन की जाति जैथरिया ब्राह्मण और पेशा जमींदारी है'।

इसी प्रकार बेतिया के समीपवर्ती मधुवन के मुकदमे के सन १६०७ के फैसले की अपील के फैसले के १०७८ वें पृष्ठ में लिखा है कि:—

This statement of Sir W. B. Hudson is fully borne out by the acknowledgment of Sir Ropper Lethbridge in the introduction to his compilation, called the Golden Book of India, in para 67 of which work we find Maharaja Sir Harindra Kishore Sinha described as Jaithria Brahman, descended from Gangeshwar Deo, the ancestor of Raja Ugrasen Sinha.

अर्थ यह है कि 'सर डबल्यू. बी. हडसन का यह कथन सर रापर लेथब्रिज के कथन से अच्छी तरह प्रमाणित हो जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि उन्होंने अपनी पुस्तक 'गोल्डनबुक आफ इंडिया' की भूमिका के ६७ वें पारा में लिखा है कि महाराज हरीन्द्र किशोरसिंह जैथरिया ब्राह्मण, गंगेश्वर देव के वंशज हैं, जो राजा उग्रसेनसिंह के पूर्वज थे'।

गाजीपुर के इस्तमरारी बन्दोबस्त की रिपोर्ट, सन् १८८०-८५ ई० के २७ वें और ६३ वें पृष्ठों में 'विलियम इरविन, (William Irvine) साहब कलक्टर ने लिखा है कि 'Raja Shambhu Narayan Sinha is Bhumihar Brahman. Gauri Shankar Prasad Sinha and Harishankar Prasad Sinha are great grand sons of Deokinandan Sinha, Brahman of the Allahabad district.

अर्थात् 'राजा शम्भूनारायण सिंह भूमिहार ब्राह्मण हैं। गारी शंकर प्रसादसिंह और हरिशंकरप्रसादसिंह ये दोनों देवकी नन्दनसिंह नामक प्रयाग जिले के एक ब्राह्मण के प्रपौत्र हैं'।

सन् १८९१ ई० की भारतवर्षीय मनुष्यगणना के विवरण के १९१ और २०३ पृष्ठों में लिखा हुआ है कि:—

The Babhan is a caste, confined, according to the returns, to Behar, but the Bhumihars of the adjacent territorry of the N. W. P. should, no doubt, be added. It is an offshoot of a community of fairly pure Arya blood, descended from some of the early settlers of Hindustan.

In the Brahman caste, returned as such, we have every sort and grades of sub-divisions. In the Punjab there is the Mohial, whose aim is military service, like Pande of the Gangotri basis in Hindustan. The cultivating classes of Desaie of South Gujrat and the corresponding class in Orissa are both turned Mastans, but this title is shared by other castes of cultivating Brahmans in Upper India. Some of the last perform the whole cycle of operations connected with tillage,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

whilst others draw the line at holding the plough, and employ their serfs on that task, There is a considerable number of Brahmans engaged as family and village priest, but the majourity have taken to secular pursuits and been divided accordingly.

In Hidustan the number of Brahman cultivators is very large, and on the West Coast of, both in Malabar and along the Kankan, this caste in various district communities is prominent amongst the land holders. In the Deccan, again, the Brahmans almost monopolise the occupations barring trade, that require reading and writing.

अर्थ यह है कि 'बाभन एक जाति है जो सर्कारी विवरणके अनुसार बिहार में पाई जाती है, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि समीप के युक्त देशवाले भूमिहार भी इसी में शामिल हैं। ये लोग उन शुद्ध आर्य वंशजों के एकदल हैं, जो भारतवर्ष के प्रथम के कुछ निवासियों के वंश में थे। ब्राह्मण जाति में, जिसे मनुष्य गणना में ब्राह्मण जाति नाम से लिखा है, हर प्रकार और दर्जे के छोटे २ दल पाये जाते हैं। पंजाब में महियाल लोग हैं, जिनका मुख्य उद्देश्य युद्धसेवा है। जैसे कि भारत वर्ष के गंगोत्री स्थान के मूल में रहनेवाले पांडे लोग हुआ करते हैं। दक्षिण गुजरात की कृषक जाति जो देसाई कहलाती है और उसी तरह के उड़ीसा निवासी ये दोनों मस्तान लिखे जाते हैं। लेकिन यह पदवी उत्तर भारत की अन्य कृषक ब्राह्मण जातियों की भी है। उत्तर भारत के बहुत से ब्राह्मण कृषि सम्बन्धी सभी कार्य करते हैं, परन्तु कुछ लोग हल जोतना अच्छा या उचित न समझ उसके लिये हलवाहे नौकर रखते हैं। कुछ ऐसे ब्राह्मण हैं जो खान्दानों या ग्रामों की पुरोहिती किया करते हैं, परन्तु अधिकांश दुनियबी कामों में लगगये हैं और इसीसे पृथक भी हो गये हैं ओल्डहैम साहब ने भी भूमिहार ब्राह्मणों को दुनयबी लिखा है और ऐसा करने से ही इतर ब्राह्मणों से अलग बताया है, जैसा कि दिखला चुके हैं)। हिन्दुस्तान में खेती करने वाले ब्राह्मणों की संख्या बहुत है और को-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कण तथा मालाबार के पश्चिमी किनारे पर यह जाति जिले के भिन्न भिन्न समाजों में सब से बड़ी भूम्यधिकारिणी है। दक्षिण में भी जो काम वाणिज्य के सिवाय हैं और जिन में पढ़ने लिखने की आवश्यकता है, उन को ब्राह्मणों ने सम्पूर्ण अधिकार में करलिया है'।

सर हेनरी. एम. इलियट (Sir Henry M. Elliot K. C. B.) की जो 'सप्लीमेन्टरी ग्लासरी आफ इंडियन टर्म्स' (Supplementary Glossary of Indian Terms) नामक पुस्तक है और उसपर जो टिप्पणी 'जान बीम्स' (John Beames M. R. A. S.) ने की है, उस के प्रथम भाग के २१ वें पृष्ठ में यों लिखा है:-

By Elliot-Bhumihar. A tribe of Hindus to be found in great number in Gorakhpur, Azimgarh and the province of Benares. The Maharaja of Benares is of this caste. They call themselves some times Brahmans and sometimes Thakurs. They were originally Brahmans of Sarawaria stock; but from having, as they say, received the Parganna of Kaswar from Raja Banar, and become addicted to agricultural pursuits and cultivators af land (भुइं) they last their rank of Brahmans, though they frequently receive marks of respect due only to that privileged class. Others say when Parsaram destroyed all the Kshatriyas, he introduced Brahmans to occupy their place, and hence they became proprietors of land. It will be observed that several of these are subdivisions of the Sarawaria Brahmans, and those whose origin is distinguished by new names, have all same titles connecting them with the Sarawaria stock. Thus the Sakarwars are Misras, the Donwars Tewari and so on.

By Beames-From that day they ranked as an inferior caste of Brahmans. They are a fine manly race with the delicate Aryan type of feature in full perfection.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Page 85. Domtikar, one of the Subdivisions of Sarwaria Brahman.

Page 116. The Jaganbansi Kanaujia Brahmans of Kora are said to have received the Chandrahat of that Purgannah from Birsingh Deo, a Gautam chieftain.

Page 141. Jaganbansi, a tribe of Brahmans, who hold zamindari possessions in Purgannah Kora, zillah Fatehpur.

Page 146. Of Brahmans there are ten well known sub-divisions, of which five are Gaur and five Dravida. Of the five Gaurs, Kanaujia is one and also is considered the most numerous, as it extends from the Sivalik Hills to the Narbada, and the Bay of Bengal. The sub-divisions of the Kanaujia are five; Kanaujia proper, Sarwaria, Sanadh or Sanaudha, Jijhoutia and Bumihar.

Page 149. The Sarwarias, including the Bhumihars touch the Kanaujias on the East.

Page 150. In the census of N. W. P. in 1865, the Brahmans of the Province are thus classified and numerated:—

Kanaujia	...	...	...	...	...
Sarwaria	...	...	...	...	...
Sanadhya	...	...	...	...	...
Jijhautia	...	...	...	...	...
Bhumihar	5	2	1	9	9, Gorakhpur, Benares.

अर्थ यह है 'इलियट साहब भूमिहार ब्राह्मणों के विषय में लिखते हैं कि यह एक हिन्दू जाति है, जो बहुत संख्या में गोरखपुर, आजमगढ़ और बनारस के प्रान्तों में पाई जाती है। महाराज बनारस इसी जाति के हैं। ये लोग अपने को कभी ब्राह्मण कहा करते हैं और कभी ठाकुर *। ये लोग प्रथम सरवरिया ब्राह्मण थे। परन्तु राजा बनारस से कुसवार परगना पाने और खेती करने तथा भूमिसम्बन्धी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

काम करने से, जैसा कि वे लोग कहते हैं, उनलोगों ने अपने ब्राह्मण दर्जे को खोदिया। गोकि अभी तक अकसर उनलोगों को वेही प्रतिष्ठायें मिला करती हैं जो अन्य ब्राह्मणों को मिलती हैं। अन्य लोगों का यह कहना है कि जब परशुराम ने क्षत्रियों का नाश किया तो ब्राह्मणों को ही उनकी जगह नियत किया। इसलिये ये लोग भूमि के मालिक बन गये। यह भी देखा जाता है कि इन लोगों (भूमिहार ब्राह्मणों) के बहुत से छोटे छोटे दल वे ही हैं, जो सरवरिया ब्राह्मणों के हैं और जिन के मूल का पता उनके नवीन नामों से लगता है, उन लोगों की पदवियां सबकी सब वेही हैं जो उनको सरवरिया ब्राह्मणों में मिला देती हैं। जैसे सकरवार मिश्र कहलाते हैं और दोनवार तिवारी इत्यादि'।

मिस्टर इलियट के पूर्वोक्त कथन 'खेती करने से इनलोगों ने अपने ब्राह्मण दर्जे को खोदिया' का तात्पर्य मिस्टर बीम्स ऐसा लिखते हैं कि 'उस समय से ये लोग ब्राह्मणों में मध्यम समझे जाने लगे इत्यादि। * येलोग उत्तम मनुष्य जाति के हैं और इनके शरीर की सम्पूर्ण बनावट ठीक और बहुत ही सुन्दर एवं आर्यों की ही है।

८५ पृष्ठ में इलियट साहब ने लिखा है कि दुमटिकार लोग सरवरिया ब्राह्मणों के एक भेद हैं। (इस से स्पष्ट है कि दुमटिकार ही नाम ठीक है, दुमकटार या डोमकटार कहना भूल है, जैसा कि प्रथम ही सिद्ध कर चुके हैं)।

११६ और १४१ पृष्ठों में जगनवंशी या जगद्वंशी ब्राह्मणों को लिखते हैं कि ये लोग ब्राह्मणों की एक जातिवाले हैं, जो फतहपुर जिले के कोड़ा परगने के जमींदार हैं। जो जगद्वंशी कनौजिया ब्राह्मण कोड़ा में रहते हैं, उन्हें उस परगने का चन्द्रहाट स्थान एक गौतमवंशी क्षत्रिय वीर सिंह देव द्वारा प्राप्त हुआ है।

१४६ पृष्ठ में लिखा है कि ब्राह्मणों के प्रसिद्ध दस भेद हैं, जिनमें से पांच द्राविड़ और पांच गौड़ हैं। पांच गौड़ों में से कनौजिया भी एक भेद है। ये लोग सब से अधिक हैं, क्योंकि सिवालिक पर्वत से

---

* अन्य ब्राह्मण भी ठाकुर कहे जाते हैं, जैसा कि दिखला चुके हैं और चूंकि जमींदार हैं, इसलिये ठाकुर कहलाते हैं, क्योंकि इसका अर्थ जमींदार है।

* परन्तु खेती करने से ब्राह्मण मध्यम नहीं हो सकता है, यह अच्छी तरह प्रमाणित किया जाचुका है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खंदा और बंगाल की खाड़ी तक फैले हुए हैं। कनौजियों के पांच भेद हैं, (१) खास कनौजिया, (२) सरवरिया, (३) सनाढ्य या सनौढा, (४) जिझौतिया और (५) भूमिहार।

१४६ पृष्ठ में लिखा है कि 'भूमिहारों को अपने में लेते हुए सरवरिया लोग पूर्व में कनौजियों से मिलजाते हैं।

१५० पृष्ठ में लिखा है कि युक्त प्रान्त की १८६५ ई० की मनुष्य-गणना में इस प्रान्त के ब्राह्मणों के विभाग और उनकी संख्या यों है:—

कनौजिया	... ...	
सरवरिया	... ...	
सनाढ्य	... ...	
जिझौतिया	... ...	
भूमिहार	... ५२१६६ ...	गोरखपुर और बनारस।

मिस्टर शेरिंग (Rev. M. A. Sherring M. A. LL. B.) ने जाति विवरण (Tribes and Castes) नामक पुस्तक में इस तरह लिखा है:—

Part I. Page 9, 10. Great important distinctions subsist between the various tribes of Brahmans. Some are given to learning, some to agriculture, some to politics and some to trades. The Mahratta Brahman is a very different being from the Bengali, while the Kanaujia differs from both.

Only those Brahmans that perform all these six duties are reckoned perfectly orthodox. Some perform three of them, namely, the first, third and fifth, and omit the other three; yet they suffer in rank in consequence. Hence Brahmans are divided into two kinds, the Shat-karmas and the Tri-karmas, or those who perform the six duties and those who perform the three only. The Bhumihar Brahmans, for instance, are Tri-karmas, and merely pay heed to three duties.

Page 23. The Bhumihars, of whom many, though

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

not all, belong to the Sarjupariya division, are a large and influential body in all that province.

अर्थ यह है' प्रथम भाग, ९ और १० पृष्ठ–ब्राह्मणों की बहुत सी जातियों में बड़े बड़े और प्रसिद्ध भेद हैं। कोई केवल पढ़ता ही है, कोई केवल खेती, कोई राज नीति और कोई वाणिज्य में लगा रहता है। महाराष्ट्र ब्राह्मण बंगाली ब्राह्मणों से बिल्कुल भिन्न हैं और कन्नौजिया दोनों से भिन्न हैं।

केवल वे ही ब्राह्मण, जो षट्कर्म करते हैं, कट्टर समझे जाते हैं। बहुत से ब्राह्मण षट्कर्मों प्रथम, तृतीय और पंचम (अध्ययन, यज्ञ और दान) तीन हीं करते हैं और शेष तीन छोड़ देते हैं। इसीलिये उन का दर्जा कुछ नीचा समझा जाता है। इस प्रकार ब्राह्मणों के दो भेद हैं, षट्कर्मा और त्रिकर्मा। अर्थात् एक तो वे जो छ कर्मों को करते हैं और दूसरे वे जो केवल तीन हीं करते हैं। दृष्टान्त के लिये भूमिहार ब्राह्मणों को ले सकते हैं, जो केवल तीनहीं कर्मों पर ध्यान देते हैं।'

२३ पृष्ठ–भूमिहार लोग. जिन में सब नहीं तो अधिकांश सर्यूपारी ब्राह्मण हैं, इस प्रान्त भर में बहु संख्यक और प्रभाव शाली हैं।

आगे चलकर मिस्टर शेरिंगने ब्राह्मणों के निरूपण प्रकरण में हीं पंच गौड़ों में से सर्यूपारियों के निरूपण प्रसंग में हीं जिझौतिया, सारस्वत एवं गौड़ों से प्रथम हीं भूमिहार ब्राह्मणों का निरूपण करते हुए ३९ और ४० पृष्ठ में ऐसा लिखा है:—

Bhumihar Brahmans. These Brahmans belong chiefly, though not exclusively, to the Sarwaria branch of the Kanaujia tribe. They are found in large numbers in the city of Benares, and in the district and province of the same name, and even as far as the northern part of Behar. Some doubt has been thrown on the purity of their blood as Brahmans. It has been said that they are Kshatriya Brahmans; or partly Rajputs and partly of other castes; or are a race of bastard Brahmans. I have been unable to obtain any trustworthy evidence for such assertions. Nevertheless, there is no question

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

that they donot occupy a high rank and position among the Brahmanical races. The reasons for this I conceive to be three-fold:-

(1) The Bhumihars are addicted to agriculture, a pursuit considered to be beneath the dignity of pure orthodox Brahmans. The word is partly derived from Bhuin or Bhumi 'land.'

(2) They have accepted and adopted in their cheif families the secular title of Raja, Maharaja, and so forth distinctions which high Brahmans altogether eschew. Hence, such Bhumihars have in a sense degraded from their position of Brahmans to that of Rajputs, whose honoric title of Singh they commonly affix to their names. The Maharaja of Benares, who is the acknowledged head of the Bhumihar Brahmans in that City, is styled Maharaja Ishwaree Narain Singh. The title is borne by all the members, near and remote, of the Maharaja's family.

(3) The Bhumihars only perform one half of the prescribed Brahmanical duties. They give alms, but donot receive them; they offer sacrifices to their idols, but donot perform the duties and offices of priest-hood; they read the sacred writings, but donot teach them.

Sir Henry Elliot says.-'We perhaps have some indications of the true origin of Bhumihars in the name of Gargabhumi and Vatsabhumi, who are mentioned in the Harvansa as Kshatriya Brahmans, descendants of Kasiya princes. Their name of Bhumi, and residence at Kasi (Benares), are much in favour of this view. Moreover, there are to this day Garga and Vatsa Gots or Gotras, amongst the Sarwaria Brahmans.'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

It is quite true, as before remarked, that this tribe is numerous in Benares and its neighbourhood, though not as descendants of Kasiya princes. The Maharaja of Benares is undoubtedly a Bhumihar; but his family dates only from the first-half of the preceeding century. There is no evidence to show that in olden times princes of Benares were ever Bhumihars.

By the people of the country of other castes, among whom they dwell, they are called indiscriminatly Bhumihars, Gautams and Thakurs. The term Bramhan, is not, I belive, applied to them in common conversations as it is to other Brahmans; but this is no valid argument against their right to the title. The Bhumihars call themselve Brahmans; have the Gotras, titles and family names of Brahmans; practise, for the most part, the usages of Brahmans, and, in default of proper evidence to the contrary, must be regarded as Brahmans. While the Gautams of Benares are called Bhumihars, they are so simply from the accident of the Bhumihars there mostly belonging to the Gautam Gotra. There are other Gotras of Bhumihars besides the Gautam. Moreover although the Bhumihars are chiefiy united with the Sarwaria branch of the Kankubja tribe of Brahmans, yet some of them are allied to the Kanaujia Brahmans proper. For instance, the Babus of Chainpur, in the Chaprah district are Bhumihars of the latter sub-tribe. The name of their clan is Ekasariya; of their Gotra Parasar; of their title Dikshit.

In face of the peculiar Brahmanical terminology and nomenclature in use among the Bhumihars, who differ '*in toto cœlo*' from those employed by all other

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

castes, of their Brahmanical habits and customs, of their claim to be regarded as Brahmans, the statement of Mr. Campbell in his recent work on the ethnology of India (pege 66), that "there seems to be no doubt that this class is formed by an intermixture of Brahmans with some other inferior caste," is untenable. He assigns no reason for such an observation further than that, "they live in strong and pugnatious brotherhoods, and are in character much more like Rajpoots than Brahmins." The opinion of Mr. Beames, in his edition of Sir H. Elliot's Supplemental Glossary on the physical characteristics of the Bhumihars, is true and worth recording. "They are fine manly race, with the delicate Aryan type of feature in perfection, yet," he adds, "their character is bold and overbearing, and decidedly inclined to be turbulent,"– a strong expression, which it would not be easy to substantiate or justify. The most important of these clans in Benares is the Bipra branch of the Gautam Gotra, of the Misra rank, to which belongs the Maharaja of Benares togther with the noble families connected with him, and the family of the Late Raja Sirdeo Narayan Singh and of his son Raja Shambhu Narain Singh.

It is of the Kauthumiya Sakha, or branch, of Brahmans, following the ritual of the Sama Veda. It has three Parvars (distinguished by the number of knots in the Brahmanical card)–the Gautam, Angiras and Kauthathiya. The clan intermarries with the Bhumihars of the Madhyandina Sakha, or branch of Brahmans, observing the ritual of the Yajur Veda. It is traditionally allied to the Sarjupari Brahmans of the

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

village of Madhubani, beyond the Gogra, who, strange to say, are Shat-karmas, that is, perform the six duties enjoined on Brahmans. This relationship seems to show that the Bhumihar Brahmans, who now observe only three of the Brahmanical obligations, were once orthodox, and observed the entire six.

इसका मर्मानुवाद यह है:—'भूमिहार ब्राह्मण—ये ब्राह्मण, यद्यपि सब नहीं, तथापि अधिकांश, कनौजिया ब्राह्मणों के सरवरिया दल वाले ब्राह्मणों में हैं। ये लोग बहुसंख्यक बनारस शहर, बनारस जिला और बनारस प्रान्त में और विहार के उत्तर भाग तक पाये जाते हैं। इनके शुद्ध ब्राह्मण वंशज होने में कुछ सन्देह किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि ये लोग क्षत्रिय अथवा राजपूत ब्राह्मण हैं, राजपूत तथा अन्य जातियों के मेल से हुए हैं, अथवा दोगले ब्राह्मण हैं। परन्तु मैं इस कथन में कोई विश्वास योग्य प्रमाण पाने में असमर्थ हूं। तथापि इस बात में तो कुछ कहना हीं नहीं कि ब्राह्मण जातियों में इनका दर्जा ऊंचा नहीं माना जाता। मेरी समझ में इसके तीन हीं कारण हैं:-(१) भूमिहार लोग कृषि किया करते हैं, जो सच्चे (कट्टर) ब्राह्मणों का धर्म नहीं माना जाता है। भूमिहार शब्द भी इसी भुइं या भूमि शब्द से बना है। (२) उनके बड़े बड़े वंशों में राजा, महाराजा इत्यादि पदवियों का स्वीकार और प्रयोग होता है, जिस से कट्टर ब्राह्मण बिल्कुल ही घृणा करते हैं। इसी लिये लोगों ने यह मतलब लगा लिया है कि भूमिहार लोग ब्राह्मण दर्जे से हट कर राजपूत दर्जे को प्राप्त हो गये हैं और उनकी पदवियों को बहुधा अपने नामों के पीछे लगाया करते हैं। महाराजा बनारस, जो बनारस के भूमिहार ब्राह्मणों के माननीय नेता हैं, महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायणसिंह कहलाते हैं। महाराजा के वंश के निकट या दूर के सभी लोग 'सिंह' कहलाते हैं। (३) भूमिहार लोग ब्राह्मणों के षट् कर्मों में से तीन हीं करते हैं, अर्थात् वे लोग दान देते हैं, परन्तु लेते नहीं, यज्ञ करते हैं, परन्तु करवाते नहीं, और पवित्र ग्रन्थों को पढ़ते है, परन्तु पढ़ाते नहीं *।

* ये तीन कारण, जिन से लोग भूमिहार ब्राह्मणों को हीन समझने का भ्रम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर हेनरी इलियट ने कहा है कि 'भूमिहार लोगों के वास्तविक मूल का कुछ पता सम्भवतः हमें गर्गभूमि और वत्सभूमि इन नामों से चलता है, जो हरिवंश (पुराण) में क्षत्रिय ब्राह्मण और काशी के राजाओं के वंशज लिखेगये हैं। उनका भूमि नाम और काशी(बनारस) के पास निवास भी इस अनुमान के अनुकूल है। इसके अतिरिक्त सर्यूपारी ब्राह्मणों में आज तक गर्गऔर वत्सगोत्र भी पाये जाते हैं'।

जैसा कि प्रथम कह चुके हैं, उससे यह बात तो ठीक है कि ये लोग बनारस और उसके आस पास में बहुत पाये जाते हैं। परन्तु प्राचीन काशी के राजाओं के वंशज नहीं कहलाते। यद्यपि महाराजा बनारस भूमिहार हैं इसमें सन्देह नहीं है, परन्तु इनका वंश केवल गत शताब्दी के पूर्वार्द्ध से ही यहां पर सिद्ध होता है। इसमें कोई प्रमाण नहीं है कि प्राचीन समय में भी काशी के राजे भूमिहार ही थे। इस देश की अन्य जातियों के लोग, जिनके मध्य में ये लोग रहा करते हैं, उन्हें अज्ञान वश कभी भूमिहार, कभी गौतम और कभी ठाकुर कहा करते हैं। मेरा विश्वास है कि साधारण बात चीत में इनके नाम के साथ ब्राह्मण शब्द नहीं लगाया जाता है। परन्तु इन्हें ब्राह्मण मानने के विपरीत यह कोई सच्चा प्रमाण नहीं है। क्योंकि भूमिहार लोग अपने को ब्राह्मण कहते, ब्राह्मणों के हीं गोत्र, उनकी हीं पदवियां और वंशनाम रखते और अधिकांश ब्राह्मणों को ही रस्म रिवाजों को करते हैं। इसलिये इनके विपक्ष में कोई उचित प्रमाण न होने के कारण उन्हें अवश्य ही ब्राह्मण समझना चाहिये।

बनारस के गौतम लोग भूमिहार कहलाते हैं। यह बात इस कारण से है कि वहां भूमिहार लोग अधिकांश गौतम गोत्री ही हैं। गौतम गोत्र के अतिरिक्त भी भूमिहार ब्राह्मणों में गोत्र पाये जाते हैं। इसके

करते हैं, प्रथमही खण्डित किये जा चुके हैं और यह प्रमाणित किया जा चुका है कि कृषि ब्राह्मणों का प्रधान कर्म है और राय, सिंह इत्यादि पदवियां भी क्षत्रिय या ब्राह्मण लोगों की न होकर उन सभी की हैं जो इनके योग्य थे या हैं। इसीलिये ब्राह्मणों और अन्य जातियों में भी आजतक पाई जाती हैं। और वस्तुतः ब्राह्मण त्रिकर्मा ही होते हैं, न कि षट्कर्मा होना उनका धर्म है, यह भी सिद्ध हो चुका है। यज्ञ करा या पढ़ा कर के अन्न द्रव्यार्जन करना अनावश्यक है, जिसे भूमिहार ब्राह्मण नहीं करते। परन्तु आहार के लिये या धर्मार्थ पढ़ाने आदि से उन्हें इनकार नहीं है। परंतु मिस्टर शेरिंग ने जो अन्य लोगों की धारणा मात्र बतलाई है, न कि अपनी राय। अबतो सब करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिवाय, गोकि विशेषतः भूमिहार ब्राह्मण सरवरिया ब्राह्मणों से ही मिले हुए हैं तथापि, बहुत से भूमिहार ब्राह्मण खास कनौजिया ब्राह्मण भी हैं। जैसे, चैनपुर के भूमिहार बाबुआन कनौजिया ब्राह्मण हैं। वे लोग एकसरिया कहलाते हैं और उनका गोत्र पराशर और पदवी दीक्षित है।

जो अन्य जाति के लोगों में बिल्कुल ही नहीं पाये जाते, ऐसे जो केवल ब्राह्मण सम्बन्धी संकेत और नाम इन भूमिहार ब्राह्मणों में पाये जाते हैं, उनके मुकाबिले में, इन लोगों को ब्राह्मण सम्बन्धी रस्म रिवाजों और स्वभाव के मुकाबिले में और इन लोगों के ब्राह्मण होने के दावे के भी मुकाबिले में मिस्टर कैम्पबेल की वह उक्ति तुच्छ या अनादरणीय है, जो उनके हाल के भारतीय जाति विवरणसम्बधी ग्रन्थ के ६६ वें पृष्ठ में है कि 'इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह जाति ब्राह्मण और कुछ नीच जातियों के मेल से बनी है'। क्योंकि वे अपने इस कथन की पुष्टि में इससे अधिक प्रमाण नहीं देते कि 'ये लोग मजबूत और लड़ाके पड़ोसियों में रहा करते और चाल ढाल में ब्राह्मणों की अपेक्षा क्षत्रियों से अधिक मिलते हैं' *।

सर हेनरी इलियट की सप्लीमेण्टल ग्लासरी में जो मिस्टर बीम्स की सम्मति भूमिहार लोगों की शारीरक रचना के विषय में है वह सत्य और उल्लेख योग्य है। अर्थात् वे कहते हैं कि 'ये लोग बहुत ही सुन्दर मनुष्य जाति के हैं और इनकी शरीर रचना पूर्णतया सुन्दर और आर्यों की शारीरक बनावट जैसी है'। परन्तु उनका यह कथन कि 'ये लोग साहसी और झटपट उबल पड़ने वाले, एवं निःसन्देह झगड़ालू होते हैं' बहुत ही सख्त (कड़ा) है, जिसको प्रमाणित करना जरा टेढ़ी खीर है।

भूमिहार ब्राह्मणों में सबसे प्रसिद्ध बनारस में गौतम गोत्र और मिश्र पदवी वाली विप्र शाखा है, जिसमें महाराज बनारस अपने सम्बन्धी बड़े बड़े वंशों के साथ सम्मिलित हैं और भूतपूर्व राजा

---

* इन बातों का खण्डन उनके पूर्वोक्त रस्म रिवाजों इत्यादि से ही हो गया, जो केवल ब्राह्मणों में ही पाये जाते हैं। और जमीन्दारी करने के कारण मजबूती वगैरः की जरूरत मजबूर होकर ही पड़ती है। अतएव मिस्टर शेरिंग इस विषय में कैम्पबेल का अनादर करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर देवनारायण सिंह और उनके पुत्र राजा शम्भूनारायण सिंह का वंश भी उसी में शामिल है। ब्राह्मणों की कौथुमी शाखाही इनकी शाखा और सामवेदही वेद है। इनलोगों के तीन प्रवर गौतम, अंगिरस् और औतथ्य हैं, जिनकी सूचना के लिये यज्ञोपवीत में तीन ग्रंथियां दीजाती हैं। ये लोग यजुर्वेद की माध्यन्दिन शाखावाले भूमिहार ब्राह्मणों के साथ विवाह करते हैं और इनके विषय की कथा ऐसी है जिससे इनलोगों का सम्बन्ध सर्यूपार के मधुबनी ग्राम के सर्यूपारी ब्राह्मणों से सिद्ध होता है। जिनके विषय में यह कहते आश्चर्य होता है कि वे लोग षट्कर्मा ब्राह्मण हैं। इस संबंध से यह भी पता चलता है कि भूमिहार ब्राह्मण, जो अब केवल तीनहीं कर्म करते हैं, प्रथम क्षुद्र और षट्कर्मा ब्राह्मण हीं थे'।

शेरिंग साहब ने पूर्वोक्त ग्रन्थ के द्वितीय खंड के १८६ और २२६ पृष्ठों में लिखा है कि:- The truth is that the word Bhumihar applies to Rajputs as well as to Brahmans. A similarity of nature, however, amounting even to an exact correspondence, is frequently found subsisting between Brahmans and Rajputs. Both races have their Gautams, their Bhumihars, their Kinwars and likewise, have the same Gotras, thereby professing to be descended from the same Rishis or sages of primitive Hinduism.

अर्थात् 'सत्य बात तो यह है कि भूमिहार शब्द का प्रयोग राजपूत और ब्राह्मण दोनों जातियों में किया जाता है। राजपूतों और ब्राह्मणों में स्वभाव की भी समानता पाई जाती है, जो ठीक ठीक मिल जाती है। दोनों में गौतम, भूमिहार, किनवार आदि हैं और बहुत से एकही गोत्र पाये जाते हैं, जिससे यह कहा जाता है कि वे लोग एकही ऋषि के वंशज हैं'।

श्रीयुक्त योगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य एम. ए. डी. एल. की सम्मति भूमिहारब्राह्मणों के विषय में दी जा चुकी है। यहां पर केवल उनके लेख के उस अवशिष्ट अंश को लिखते हैं, जिसमें उन्हों ने मिस्टर बुचले तथा अन्य लोगों के मिथ्या आक्षेपों का युक्तियों द्वारा खण्डन किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'हिन्दू कास्ट्स ऐण्ड सेक्ट्स' के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१०९-११३ पृष्ठों में इस प्रकार लिखा है:-

The Bhumihar Brahmans of Behar and Benares-There are various legends regarding the origin of the caste. The Bhumihar Brahmans themselves claim to be true Brahmans, descended from the rulers whom Parsuram set up in the place of the Kshatriya kings slain by him. The Brahmans and the Kshatriyas of the country look down upon them and insinuate that they are of a mixed breed, the offspring of Brahman men and Kshatriya women. It is even said that the class was formed by the promotion of low caste men under the orders of a minister to a Raja, who wanted a very large number of Brahmans to celebrate a religious ceremony; but for whom his minister could not procure the required number of true Brahmans. But the legendry theory is strongly contradicted by the Aryan physiognomy of the Bhumihars, who in respect of personal appearance are in no way inferior to the Brahmans or the Rajputs. One of the most important points of difference between the Bhumihar Brahmans and the majourity of the ordinary Brahmans is, that while the latter are divided into only those Exogamous classes called Gotras, the former have among them, like Rajputs, a two-fold division based upon both Gotra and tribe. From this circumstance Mr. Risley has been laid to conclude that the Bhumihar Brahmans are an offshoot of the Rajputs and not true Brahmans. But as there are similar tribal divisions among the Maithila Brahmans of Tirhut and the Saraswat Brahmans of the Punjab, it might, on the same ground, be said that the Saraswats and the Maithilas are offshoots of the Rajputs.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

In theory that Bhumihar Brahmans are an offshoot of the Rajputs, involves the utterly unfounded assumption that any of the military clans could have reason to be ashamed of their caste-status. The 'royal race' had very good reason to be proud of such surnames as Sinha, Roy and Thakur, and it seems very unlikely that any of their clans could, at any time, be so foolish as to club together for the purpose of assuming the Brahmanic surnames of Dobe, Tewari, Chobe and Upadhyay. On the theory that the Bhumihar Brahmans are an offshoot of the Rajputs, the clans that now profess to be Bhumihar Rajputs, are residento that have stuck to their original status, and have never aspired to a higher one. But on this supposition it would be difficult to find any reason for the distinctions between Bhumihar Rajputs and the ordinary Rajputs.

The usual surnames of the Bhumihar Brahmans are the same as those of the other Brahmans of northern India. Being a fighting caste, a few of them have the Rajput surnames.

अर्थ यह है 'विहार और बनारस के भूमिहार ब्राह्मण—इस जाति की उत्पत्ति के विषय में बहुतसी किम्वदन्तियां हैं। भूमिहार ब्राह्मण स्वयं अपने आप को पक्के ब्राह्मण कहते हैं और उन ब्राह्मणों के वंशज बतलाते हैं, जिन्हें परशुराम जी ने क्षत्रियों को मारकर उनकी जगह पर स्थापित किया था। इस देश के ब्राह्मण और क्षत्रिय उन को हीन दृष्टि से देखते और चुपके से इशारा करते हैं कि वे लोग ब्राह्मण पुरुष और क्षत्रिया स्त्री के संयोग से उत्पन्न हुए हैं। यह भी कहा जाता है कि यह जाति उन नीच जातियों के पुरुषों से बनी है जो किसी राजा के मंत्री की आज्ञा से ब्राह्मण बना दिये गये। क्योंकि उस राजा ने किसी धार्मिक कार्य के करने के लिये बहुसंख्यक ब्राह्मणों के लाये जाने की इच्छा प्रगट की थी, परन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह मंत्री उतने ब्राह्मण न पा सका। परन्तु ये सब किम्वदन्तियां भूमिहार ब्राह्मणों की शारीरिक रचना से ही अच्छी तरह खण्डित होजाती हैं। क्योंकि देह की बनावट में वे लोग ब्राह्मणों या क्षत्रियों से किसी प्रकार न्यून नहीं हैं। बहुतसे साधारण ब्राह्मणों और भूमिहार ब्राह्मणों में भेद होने के प्रसिद्ध कारणों में से एक यह भी है कि साधारण ब्राह्मणों का विभाग गोत्रों के ही अनुसार होता है, परन्तु राजपूतों की तरह भूमिहार ब्राह्मणों में भी गोत्र और अवान्तर जाति दोनों के अनुसार विभाग होता है। इसी को देखकर मिस्टर रिजले ने यह नतीजा निकाला है कि भूमिहार ब्राह्मण राजपूतों के वंशज हैं, न कि सच्चे ब्राह्मण। परन्तु अवान्तर जाति के अनुसार तिर्हुत के मैथिल ब्राह्मणों और पञ्जाब के सारस्वत ब्राह्मणों में भी ऐसे ही विभाग पाये जाते हैं। अतः इसी पूर्वोक्त कारण से मैथिल और सारस्वत ब्राह्मण भी राजपूतों के वंशज सिद्ध हो सकते हैं *।

भूमिहार ब्राह्मण राजपूतों के वंशज हैं, इस कल्पना के मानने में यह भी बिल्कुल ही निर्मूल कल्पना माननी होगी कि कोई भी जाति युद्धविशारद बनने में अपने जातीय दर्जे के सन्मुख (विचार से) लजा सकती थी (क्योंकि उसे राजपूत बन जाना पड़ता)। राजपूत जातियां अपनी सिंह, राय और ठाकुर आदि पदवियों का बड़ा अभिमान रखती थीं। इस से यह कल्पना एकदम असंभव जान पड़ती है कि उनमें से कोई भी जातियां ऐसी मूर्ख हो गईं, जिससे वे एक दल में इसलिये पृथक हो गईं कि उनको ब्राह्मणों की दूबे, तिवारी, चौबे और उपाध्याय इत्यादि पदवियां मिलें। भूमिहार ब्राह्मणों को राजपूत वंशज मानने में यह भी बात माननी होगी कि जो राजपूत अपने को भूमिहार कहते हैं वे अपनी प्राचीन हीं दशा में पुराने बाशिन्दों की तरह पड़े हुए हैं और ऊंचे दर्जे की कभी भी इच्छा नहीं करते। साथही, उनके और साधारण राजपूतों के बीच कोई भी अन्तर मालूम करना इसी कल्पना के कारण कठिन हो जावेगा।

भूमिहार ब्राह्मणों की पदवियां विशेष कर वे ही हैं जो उत्तर भारत

---

* वस्तुतः तो सभी ब्राह्मणों में दोनों प्रकार के विभाग पाये जाते हैं, क्योंकि खैरी के ओझा और पिण्डी के तिवारी ये विभाग तो गोत्र के अनुसार नहीं हैं और न दुमटिकार इत्यादि ही।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के अन्य ब्राह्मणों की। परन्तु वीर जाति होने के कारण उनमें से कुछ लोगों ने राजपूतों की पदवियों को भी स्वीकार कर लिया है।

मुजफ्फरपुर के गजेटियर में मिस्टर एल.एस.एस.ने लिखा है कि:-

These traditions are not recognized by the Babhans themselves, who claim to be true Brahmans. According to their own account, they are pure Brahmans, and have been recognized as such from time immemorial. They contend that they differ from the rest of the Brahmans only in having taken to cultivation and given up the principal functions of Brahmans connected with priestcraft, viz, officiating as priests in religious ceremonies, teaching the Vedas, and receiving alms; and they therefore call themselves Bhumihar Brahmans. They claim that, even at the present day Maithil Brahmans, who secede from their own community, are admitted among them on condition that they give up priestly occupations, and they contend that many of their ceremonies are performed in the same manners and styles, and with the same Mantras as those of the Brahmans.

अर्थात् 'बाभन इन किम्वदन्तियों को स्वयं नहीं मानते और अपने सच्चे ब्राह्मण होने का दावा रखते हैं। उन के कथनानुसार वे लोग सच्चे ब्राह्मण हैं और अनादि काल से सच्चे ब्राह्मण माने जाते हैं। उनका कहना है कि अन्य ब्राह्मणों से उनका भेद इसलिये है कि वे खेती करते हैं और पुरोहिती सम्बन्धी प्रधान कर्मों को बिल्कुल नहीं करते। अर्थात् न पुरोहिती करते, न वेदों को पढ़ाते और न दान लेते हैं और इसीसे भूमिहार ब्राह्मण कहलाते हैं। उनका दावा है कि आजतक भी जो मैथिल ब्राह्मण अपने समाज से अलग होना चाहता है वह हमारे समाज में इस शर्त पर मिला लिया जाता है कि वह फिर पुरोहिती नहीं करेगा। वे लोग यह भी कहते हैं कि हमारे बहुत से कर्म उसीरीति से और उन्हीं मंत्रों द्वारा किये जाते हैं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जैसे अन्य ब्राह्मणों के'।

The Right Hon'ble Sir Richard Temple, Bart, M. P., G. C. S. I., C. I. E., D. C. L., LL. D., F. R. S. Governor of Bombay, Lieutenant Governor of Bengal and Finance Minister to India Government (राइट आनरेब्ल सर रिचर्ड टेम्पुल, बार्ट ने, जो बम्बई के गवर्नर, बंगाल के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर और भारत सर्कार के अर्थ सचिव थे), अपनी पुस्तक 'सन् १८८० ई०, का भारत वर्ष' (India in 1880) के १११ और ११७ पृष्ठों में इस प्रकार लिखा है:—

Higher In the scale are those Brahmans who follow secular pursuits, apart from their brethren of the priestly orders. Their influence in landed concerns is comparatively slight in Northern India, but is considerable in Eastern, Western and Central India and almost dominant in many parts of the countrys.

The priestly classes are still numerous through out the Emplire. The Hindu priest-hood includes only those Brahmans who follow religious calling, and not those who are engaged in secular pursuits, though a certain sanctity is attached to them.

अर्थात्, 'प्रतिष्ठा की दृष्टि से वेही ब्राह्मण बड़े माने जाते हैं जो दुनियवी कार्य (व्यापार और कृषि आदि) करते हैं और अपने पुरोहित भाइयों से पृथक् हैं। यद्यपि उनकी जमींदारी उत्तर भारत में कुछ कम है, तथापि पूर्व, पश्चिम और मध्य भारत में अच्छी है और देश के बहुत से भागों में तो बहुत ही प्रबल या अधिक है।

पुरोहिती करने वाले भी ताहम बहुत हैं और बृटिश राज्य भर में फैले हुए हैं। हिन्दू पुरोहित वेही ब्राह्मण लोग कहलाते हैं जो केवल धार्मिक काम किया करते हैं, न कि वे लोग भी, जो दुनियवी काम करते हैं, गोकि बहुत अंशों में वे भी पवित्र समझे जाते हैं'।

विन्सेन्ट ए. स्मिथ एम. ए. (Vincent A. Smith M. A.) ने 'भारत का प्रारम्भिक इतिहास' (Early History of India)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के ३७४ वें पृष्ठ में लिखा है कि:-

Occasionally a Raja might be a Brahman by caste, but the Brahman's natural place at court was that of minister rather than that of King. Chandra Gupta Mourya presumably was considered to be a Kshatriya, his minister Chanakya certainly was a Brahman.

अर्थ यह है कि 'कभी २ ब्राह्मण भी राजा हुआ करते थे। परन्तु ब्राह्मणों का राजदर्बार में स्वाभाविक कार्य राजा के कार्य की अपेक्षा मंत्री का अधिक हुआ करता था। सम्भवतः चन्द्रगुप्त मौर्य क्षत्रिय समझा जाता था, परन्तु उसका मंत्री चाणक्य तो अवश्य ही ब्राह्मण था'।

'मीडोज़ टेलर' (Meadows Taylor) ने अपने 'भारत वर्ष के इतिहास' (A Student Manual of the History of India) के २४, ४७ और ५४ पृष्ठों में क्रमशः एसा लिखा है:—

Brahmans who follow the profession of the priest-hood only, frequently hold themselves superior to, and distinct from others, who are soldiers or merchants, or who have taken themselves to any secular callings for a livelihood. Hence an immense variety of Brahmanical castes have been created, which, though in general terms they have not affected the peculiar sanctity and exclusiveness of their original foundation, have yet broken the unity of their order, and reduced its power.

The power of the Brahman priest-hood in all spiritual matters was very great, and they were esteemed holy, as yet they had not adopted secular employments and lived apart as professions of religion.

At Kanauj, in Oudh, under the hills of Nepal another great Hindu Dynasty sprang up, or at least materially increased in power during the period under notice. Their Princes did not join the Boodhist movement. They were exclusively Hindus, and perhaps Brahmans.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

It is at least certain that they protected vast numbers of Brahmans during their persecution by the Boodhists; for one of the most numerous of the Nothern Brahmanical sects is termed Kanaujia. Grants of land were made to them, and they became farmers, as many continue to be. The Kanaujia Brahmans are not esteemed as of the purest rank by others; they seldom hold priestly offices, and many of them enter the militay service. They are perhaps, the finest physical race in India and of the true Aryan type.

अर्थात् ' जो ब्राह्मण केवल पुरोहिती करते हैं, वे प्रायः अपने को उन ब्राह्मणों से श्रेष्ठ और अलग समझते हैं जो योद्धा या व्यापार करने वाले होते हैं। अथवा जो जीविका के लिये कोई भी दुनियबी कार्य करते हैं। इसी से ब्राह्मणों में बहुत से जातिभेद होगये हैं, जिन से गो साधारण तौर पर उन की पवित्रता नहीं नष्ट हुई है और न उन की जड़ ही बिगड़ने पाई है, तथापि उनकी एकता नष्ट होगई और शक्ति घट गई है।

सभी पारलौकिक कार्यों में पुरोहित का दर्जा बहुत बड़ा था, एवं वे लोग पवित्र समझे जाते थे। और चूंकि अभी तक वे लोग दुनियबी काम न करते थे, अतः केवल पृथक् रूप से पुरोहिती या धार्मिक कार्य ही में लगे रहते थे।

अवध प्रान्त की नैपाली पर्वतों की तराई में कनौज में एक दूसरा बड़ा भारी हिन्दू वंश उत्पन्न हुआ, अथवा कम से कम उस समय शक्ति सम्पन्न हुआ। उस वंश के राजे बुद्धधर्म को नहीं मानते थे और वे लोग बिल्कुल ही हिन्दू और संभवतः ब्राह्मण थे। कम से कम यह तो निश्चित ही है कि उन्हों ने बहुसंख्यक ब्राह्मणों को बौद्धों द्वारा सताये जाने से बचाया। क्योंकि उत्तर भारत के ब्राह्मणों के बड़े बड़े दलों में से एक दल कनौजिया भी है। उन लोगों को भूमि दी गई और वे लोग कृषक होगये, जैसा कि बहुत से अबतक वैसे ही पाये जाते हैं। दूसरे लोग कनौजिया ब्राह्मणों को अति उत्तम या सच्चे दर्जे के नहीं मानते। वे लोग मुश्किल से पुरोहिती करते हैं, और बहु-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं उन में से युद्ध का काम करते हैं। सम्भवतः वे लोग शारीरक बनावट में सब से अच्छे और सच्चे आर्यों के सदृश होते हैं'।

आनरेब्ल माउन्ट स्टुअर्ट एल्फिन्स्टन (Mount Stuart Elphinston) ने अपनी 'हिस्ट्री आफ इन्डिया' (History of India) के १११ वें पृष्ठ में लिखा है कि "A strict Brahmin performing his full ceremonies, would stil be occupied for not less than four hours in the day. But even a Brahman, if engaged in in worldly affairs, may perform all his religious duties within half an hour. Of the eighty four Gurus (or spiritual chiefs) of the sect of Ramanuja, for instance, seventy nine were secular Brahmins."

अर्थ यह है कि 'कट्टर ब्राह्मण अपने धार्मिक कार्यों के करने में अब भी प्रति दिन चार घंटे से कम न लगा रहेगा। लेकिन तौ भी जो ब्राह्मण सांसारिक कार्यों में लगा रहता है वह आध घंटे में हीं अपने धार्मिक कार्यों को कर डालता है। दृष्टान्त के लिये रामानुज सम्प्रदाय के ८४ गुरुओं में से ७९ केवल दुनियवी (सांसारिक) ब्राह्मण थे, अर्थात् पुरोहित दल के न थे'।

हिन्दुस्तान के 'इम्पीरियल गजेटियर' (The Imperial Gazetteer of India), जो आक्सफोर्ड-क्लेरेन्डन प्रेस (Cxford-Clarendon Press) में छपा है, के द्वितीय भाग के ३१५ पृष्ठ में इस प्रकार लिखा है:—

The eleventh and twelveth centuries were the Golden age of the new civilization. That civilization was founded partly on theocracy; partly on military despotism. The Brahmans ware divine by birth. They sometimes designed to hold the highest offices of state, but their special business was the pursuits of literature, science and philosophy; and the Rajput courts vied with each other in the patronage of learning. Brahmans of low rank were the spiritual guides (purohits) of the people

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

and even they condes ended to act as the priest of the more respectable and popular deities.

अर्थ यह है कि 'ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दियां (सदियां) नवीन सभ्यता के सत्य युग थीं। वह सभ्यता कुछ तो दैविक शक्ति और कुछ नवीन सैनिक अत्याचार पर निर्भर थी। ब्राह्मण जन्म से ही देवता माने जाते थे। वे लोग कभी कभी राज्य के सब से ऊँचे दर्जे पर भी रहते थे, लेकिन उनका प्रधान काम साहित्य, विज्ञान और दर्शनों का पढ़ना था। विद्या की अभिभावकता या प्रभुत्व के लिये राजपूत दर्बार परस्पर चढ़ा बढ़ी किया करते थे। हीन दर्जे के ब्राह्मण हीं लोगों के पुरोहित हुआ करते और प्रसिद्ध प्रसिद्ध सर्व प्रिय देवताओं के पुजारी भी हुआ करते थे'।

बस, अब हम वैदेशिक विद्वानों या अंग्रेजी लेखकों के बहुत से वचन लिखकर ग्रन्थ विस्तार करना उचित नहीं समझते। पाठकों को इतने हीं से पता चल गया होगा कि उन लोगों की सम्मतियां इन ब्राह्मणों के विषय में कितनी अनुकूल हैं। और यह भी पता लग गया होगा कि इस अयाचक ब्राह्मण समाज के विषय में जो कुछ मिथ्या आक्षेप इस देश या अन्य देशके लोगोंने किये हैं, उनका खण्डन भी उन्हीं लोगों ने करके इस बात में 'मियां की जूती और मियां का ही सिर' वाली कहावत चरितार्थ कर दी है, जिसके लिये अब पृथक् यत्न करने की आवश्यकता ही न रहगई। साथही, यह भी विदित हो गया कि इस देश के कोई कोई बाबू लोग जो किसी अंग्रेजी विद्वान के लेख के एक अंश को लेकर इस ब्राह्मण समाज पर आक्षेप कर बैठते हैं वे कितनी भूल करते हैं। क्योंकि ऐसे कोई भी आक्षेप नहीं हैं जिनका खण्डन उसी अंग्रेज विद्वान या अन्य विद्वानों ने न किया हो। अतः ऐसे साहसियों को अब इस ग्रन्थाञ्जन से अपने ज्ञानचक्षु को निर्मल कर लेना और करने का उद्योग करना चाहिये, जिससे भविष्य में ऐसा ही साहस करने से पश्चात्ताप और निन्दा का भागी न होना पड़े। अन्त के वाक्यों ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि पुरोहिती करना हीन ब्राह्मणों का ही काम है और था, न कि श्रेष्ठ और प्रतिष्ठितों का, जैसा कि सभी लोग समझते थे और समझते हैं।

अब सभी विद्वन्मण्डली से बद्धाञ्जलि यही प्रार्थना है कि जो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ बातें इस द्वितीय 'कण्टकोद्धार' नामक परिच्छेद में किसी के वाक्यों के खण्डन मण्डन रूप में कही गई हैं, उनका निष्पक्षपात भाव से परिशीलन कर हंसवत् नीरक्षीर का विवेक करें और साथ ही यह भी ध्यान रखें कि ये बातें उन विपरीत लेखकों या अन्य समाज पर आक्षेप दृष्टि से नहीं लिखी गई हैं, किन्तु केवल अपने पक्ष की परिपुष्टि के लिये। जैसा कि मीमांसा भाष्यकार श्री शबर स्वामी ने कहा है कि 'नहि निन्दा निन्द्यं निन्दयितुं प्रवर्त्तते, किन्तु निन्दितादितरत्प्रशंसयितुम्'। अर्थात् 'किसी की निन्दा ग्रन्थों में इसलिये नहीं की जाती है कि वह वास्तव में निन्द्य समझा जावे। किन्तु निन्दित वस्तु से भिन्न वस्तु कि प्रशंसा के ही लिये निन्दा हुआ करती है'। इसलिये इसे आक्षेप समझ कर व्यर्थ किसी को दुखी न होना चाहिये। क्योंकि किसी का दिल नाहक ही दुखाना हमें इष्ट नहीं है। और यदि कहीं आपाततः आक्षेप प्रतीत हो तो वह प्रसंगवश दूसरे लोगों की राय ही होगी, न कि हमारा स्वतंत्र लेख होगा।

उपसंहार में उस विश्व व्यापक अन्तर्यामी से यही प्रार्थना है कि वह अपने नैसर्गिक अनुकम्पा सलिल से लोगों की बुद्धि के कालुष्य का संक्षालन करदेवे, जिस से लोग स्वाभाविक रागद्वेष रहित होवें और परस्पर भ्रातृभाव की अभिवृद्धि करें। साथ ही, लकीर के झूठे फकीर न हो तथ्यातथ्य का विचार करें, निष्पक्षपातभाव का आदर करना सीखें, हमारे इस केवल परोपकारार्थ परिश्रम से लाभ उठाने का यत्न करें और लाभ उठावें। और इन अयाचक दलीय ब्राह्मणों को भी ऐसी सुबुद्धि और जागृति का प्रदान करे कि ये लोग अपने वास्तविक पवित्र और सर्वोत्तम ब्राह्मण स्वरूप को पहचान कर उस के कर्मों में यत्नशील होवें, कल्पित बाह्य आक्षेपों का मर्दन कर निर्द्वन्द्व रहें और अपने आन्तरिक छिद्रों को ऐसा दूर करें कि उन का निशान भी न रहने पावे। जिस से इस प्रकार बाह्य कण्टक और आन्तरिक छिद्रों के हटा देने से स्थायी गुणवान हो इस लोक और परलोक में देववत् पूजित और प्रतिष्ठित होवें।

॥ ॐ शम् ॥

इति श्री ब्रह्मर्षिवंशविस्तरे कण्टकोद्धारो नाम द्वितीयं प्रकरणम् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्रह्मर्षि वंश विस्तर।

पूर्व परिशिष्ट।

अहिंसैकपरा नित्यमप्रतिग्राहिणस्तथा।
सत्रिणो दाननिरता ब्राह्मणाःपंक्तिपावनाः। बृ. उशनाः।

१—स्फुट प्रश्न समालोचना।

यद्यपि पूर्व के दो प्रकरणों में युक्ति और प्रमाणों द्वारा ब्राह्मणों के वास्तविक स्वरूप और धर्मों के प्रदर्शन करदेने, याचक और अयाचक दलवाले ब्राह्मणों का परस्पर प्रसिद्ध विवाह सम्बन्ध एवं खान पान दिखला देने और अज्ञान तथा द्वेष मूलक अयाचक ब्राह्मणों के ऊपर किये गए निर्मूल, अतएव मिथ्या आक्षेपों को विविध उपायोंद्वारा विधिवत् निर्मूल कर देने से अयाचक ब्राह्मणों का सर्वोत्तम और शास्त्र सिद्ध वास्तविक स्वरूप अच्छी तरह विदित हो होगया। अतः अब कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। तथापि दो एक प्रसिद्धतर प्रश्नों की मीमांसा करते और वंगदेशीय कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में से दो चार प्रसिद्ध घरों के साथ भी विवाह सम्बन्ध दिखलाते हुए अत्यन्तोपयोगी और नित्य कर्त्तव्य संध्योपासन एवं श्राद्धादि विषयों की आवश्यकता और उनमें भोजन कराने योग्य ब्राह्मणों का निरूपण करके इस ग्रन्थ को सम्पूर्ण करना है। इसीलिये थोड़ा सा यह यत्न और भी कर दिया जाता है। यद्यपि जिन प्रश्नों की मीमांसा यहां की जावेगी उन की भी सामान्य रूप से प्रथम हीं आलोचना हो चुकी है, तथापि वे बहुत प्रसिद्ध या प्रचलित हैं, इसीलिये उनका विशेष रूप से विचार किया जाता है।

प्रथम और सब से प्रचलित प्रश्न तो यह है कि जब कभी और जहां कहीं भी ब्राह्मणों के स्वरूप या धर्म का विचार उपस्थित होता है, वहां लोग झट से यह कह बैठते हैं कि, अजी साहब ! जैसी कान्यकुब्ज और सर्यूपारी आदि ब्राह्मणों की उत्पत्ति शास्त्रों में मिलती है, एवं क्षत्रिय वगैरः की भी, वैसी भूमिहार आदि ब्राह्मणों की उत्पत्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब तो कहीं भी पता नहीं है, फिर यदि इनके विषय में कुकल्पनाएं न हों तो और होवे क्या ? और यदि आप इनके विषय में किसी तरह का दावा करते हैं तो बस, इनकी उत्पत्ति कहीं दिखला दीजिये, हम आपकी सब बातें मानने को तैयार हैं। इस पर यदि उनलोगों से यह कहाजावे कि, अच्छा, तो फिर प्रथम आपही बतलाइये कि कान्यकुब्ज, सर्यूपारी या गौड़ आदि की उत्पत्ति कहां लिखी है? तो वे लोग झट पट बोल बैठते हैं कि 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' इस वेद मंत्र, 'लोकानां तु विवृद्ध्यर्थं मुख बाहूरुपादतः। ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं च निरवर्तयत्'। इस मनुवाक्य और समस्त पुराणों में हीं लिखी है। इस में कहने को क्या बात है ? परन्तु विचारने की बात है कि जिन वचनों का नाम ऊपर लिया गया है, उनमें केवल ब्राह्मण शब्द ही आया है, न कि कान्यकुब्ज या गौड़ आदि शब्द आये हैं। वहां 'कान्यकुब्जोऽस्य मुखमासीत्' 'गौडोऽस्य मुखमासीत्' ऐसा तो लिखा हुआ है नहीं। अब यह देखना चाहिये कि उस ब्राह्मण शब्द से कान्यकुब्ज या गौड़ आदि ब्राह्मण हीं लिये जावेंगे और भूमिहार, त्यागी, पश्चिमा आदि ब्राह्मण नहीं, इसमें प्रमाण हीं क्या है ? क्या इसकी कोई रजिस्टरी या हुलिया उनके पास खास तौर पर है कि वहां ब्राह्मण शब्द उन्हीं का वाचक है, न कि त्यागी आदि ब्राह्मणों का भी ? यह अन्ध सम्पात या मिथ्या अभिनिवेश नहीं है तो और है क्या ?

दूसरी बात यह है कि जब कान्यकुब्ज लोग स्वयं हीं इस बातको स्वीकार करते हैं कि काश्यप गोत्रवाले सभी कान्यकुब्ज मदारपुरके अधिपति भूमिहार ब्राह्मणों के ही वंशज हैं और उन काश्यप गोत्रवाले कान्यकुब्जोंका खानपान या विवाह संबंध सभी गोत्रवाले कान्यकुब्जों से होता है और सर्यूपारी लोग भी उन्हीं कान्यकुब्जों की एक शाखा होने को स्वीकार करते हैं। तो फिर हमारा इस विषय में केवल इतनाहीं कथ्य है कि आप सर्यूपारी या कान्यकुब्ज ही अपनी अपनी उत्पत्तियां बतलावें, उसी से भूमिहार आदि ब्राह्मणों की उत्पत्ति का भी पता लग जावेगा, क्योंकि वे लोग भूमिहार ब्राह्मणों के ही वंशज हैं। अथवा संक्षिप्ततः इस उत्पत्ति वाले प्रश्न का यही उत्तर है कि भूमिहार आदि ब्राह्मण कान्यकुब्ज आदि ब्राह्मणों के पिता या पूर्वज हैं। जैसी कि उनकी राय और सिंह वगैरः पदवियां दूबे और चौबे आदि पदवियों की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जन्माने वाली प्रथम हीं सिद्ध की गई हैं। कान्यकुब्ज और भूमिहार आदि शब्दों का विचार करते हुए यह बात प्रथम प्रकरण मे हीं सविस्तर वर्णित है। अतः इसका विशेष ज्ञान वहीं से प्राप्त कर लेना चाहिये।

दूसरा प्रश्न हुआ करता है कि यदि दान लेना ब्राह्मणों का धर्म नहीं है, तो भूमिहार ब्राह्मण कन्या दान को क्यों स्वीकार करते हैं? वाह! वाह! क्याही अच्छा प्रश्न है! हमने यह कब कहा है कि दान लेना सर्वथा ही ब्राह्मणों का धर्म नहीं है? किन्तु उसे केवल आपद्धर्म बतलाया है, जिसका तात्पर्य यह है कि जब जिस दान के ग्रहण किये विना काम किसी प्रकार भी चल नहीं सकता, तो उस समय उसका स्वीकार ब्राह्मण कर सकता है। और कन्यादान के स्वीकार विना किसी प्रकार भी काम चल नहीं सकता, प्रत्युत वंश या संसार का ही उच्छेद हो जावेगा और महान उत्पात मच जावेगा। इसलिये अगत्या उसके करने की शास्त्र ने भी आज्ञा दी है। परन्तु वह भी हमारी इच्छा पर निर्भर है, चाहे हम उसे लेवें या न। दूसरी बात यह है कि हम सामान्य रूप से दानका निषेध करते हैं, न कि नाम लेकर एक एक का। ऐसी दशा में यदि कोई विशेष वचन किसी कन्यादान आदि विशेष दान के स्वीकार की आज्ञा देता है तो उस से उस सामान्य निषेध का विशेष अंश में संकोच होकर यह तात्पर्य सिद्ध होगा, कि कन्यादानादि से भिन्न दानों का स्वीकार शास्त्र निषिद्ध है, क्योंकि सामान्य शास्त्र को विशेष शास्त्र बाध लेता है। नकि उस कन्यादान स्वीकार वाले शास्त्र के विशेष वचन के बल से सभी दानों का ग्रहण करना सिद्ध हो जावेगा। यदि ऐसा होने लगे तो फिर शास्त्रों में बड़ा ऊधम मच जावेगा और 'मा हिंस्यात् सर्वा भूतानि' अर्थात् 'किसी भी प्राणी की हिंसा न करे'। यह जो वचन सामान्यतः सभी हिंसाओं का निषेध करता है, उसके विरोधी 'अग्नीषोमीयं पशुमालभेत' अर्थात् 'अग्नीषोमीय याग में पशुकी हिंसा (वा स्पर्श) करना चाहिये' इस वचन के होने से उस सामान्य वचन का संपूर्ण बाध होने पर सभी प्रकार की हिंसाएं शास्त्रविहित हो जावेंगी। इसीलिये भगवान पतञ्जलिने महाभाष्य में कहा है कि:—

प्रकल्प्य चापवादविषयं तत उत्सर्गो निविशते।

इसका तात्पर्य वही है जो पूर्व दिखला चुके हैं कि विशेष वचन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के होने पर सामान्य शास्त्र का विशेष अंश में संकोच होजाया करता है। बड़ी खूबी तो इस प्रश्न में यह है कि जिस कन्यादान के स्वीकार से आप लोग दान लेना ब्राह्मणों का उच्च धर्म सिद्ध किया चाहते हैं, उसे ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल पर्यन्त सभी करते हैं। तो फिर क्या आपकी इस दलील के अनुसार चाण्डाल पर्यन्त सभी जातियों को दान ग्रहण करना चाहिये? तो फिर आप इस युक्ति से इतना भी कदापि सिद्ध नहीं कर सकते कि जो दान न लेवे वह श्रेष्ठ ब्राह्मण हीं नहीं है।

तीसरा प्रश्न यह किया जाता है कि जैसे अन्य जातीय याचक, भिक्षु या पुरोहित दलवाले ब्राह्मणों को पूजते या प्रणाम करते हैं, वैसे ही आप के अयाचक या भूमिहार आदि ब्राह्मण भी किया करते हैं। तो फिर इनके विषय में सन्देह या कुकल्पनायें क्यों न हों? परंतु इस प्रश्न को भी सुनकर हंसी आती है। क्योंकि यदि इसी दलील के अनुसार अयाचक ब्राह्मणों के विषय में सन्देह किया जावे, अथवा वे ब्राह्मण ही समझे न जावें, तो फिर सभी ब्राह्मण कहलाने वालों को अपनी ब्राह्मणता का बाजीदावा लिखना या उस से हाथ धोना पड़ेगा। क्यों कि ऐसा प्रश्न करनेवाला जो ही याचक दल वाला ब्राह्मण होगा वही अपने गुरु या पुरोहित को वैसे ही प्रणाम करता, या उन की पूजा करता होगा जैसे कि अयाचक ब्राह्मण किया करते हैं। क्योंकि गुरु या पुरोहित तो सभी के हुआ करते हैं। तो फिर वह याचक दलवाला ब्राह्मण भी इसी दलील के मुताबिक ब्राह्मण न ठहरा। इसी प्रकार उस के गुरु या पुरोहित के भी गुरु और पुरोहित होंगे और फिर उन के भी वैसे ही होंगे और वे लोग भी अपने अपने गुरुओं और पुरोहितों के पूजन और प्रणाम करने से ब्राह्मण न ठहरे। इसका अन्त नतीजा यह निकलेगा कि कोई भी ब्राह्मण सिद्ध न हो सकेगा। यह तो वही 'सूद के लिये मूल के भी गंवाने' वाली बात हुई।

बात तो असल यह है कि अधिकतर अयाचक ब्राह्मण तो पुरोहिती वगैरः करते ही नहीं। ऐसी दशा में अगत्या याचक ब्राह्मणों को पुरोहित वगैरः बना कर यदि अयाचक ब्राह्मण उन्हें प्रणाम आदि करते हैं तो इसमें हानि हीं क्या है? यदि कोई ऐसा कहने का साहस करे कि सभी अयाचक ब्राह्मण सभी याचक ब्राह्मणों को प्रणाम आदि करते हैं, तो यह बात कभी भी मानी नहीं जासकती। जैसा कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रथमहीं कह चुके हैं कि ऐसे ऐसे अयाचक दलीय ब्राह्मण वंश पड़े हुए हैं जिन्हें याचक दल वाले प्रथम हीं प्रणाम करते हैं। यहां तक कि उस दल के राजे महाराजे भी प्रणाम करते और पत्र वगैरः में भी लिखा करते हैं। इसके लिये प्रमाण स्वरूप बहुत से पत्र और व्यवस्थायें प्रथमहीं प्रकरण में प्रदर्शित कर दी गई हैं। जिन्हें इस बात का आग्रह हो उन्हें हम ऐसे ऐसे लाखों दृष्टान्त दिखला सकते हैं। यदि कहीं कहीं पुरोहितादि से भिन्न याचक दलवालों को भी अयाचक ब्राह्मण लोग प्रणाम कर देते हों; तो इससे भी पुरोहित दलवालों की उत्तमता सिद्ध नहीं हो सकती, किन्तु इसका कुछ और ही कारण है। वह यह कि, जिन गुरु या पुरोहित से भिन्न किसी किसी याचक ब्राह्मणों को अयाचक ब्राह्मण कहीं २ प्रणाम कर देते हैं, उनके पूर्वज प्रथम बड़े बड़े तपस्वी और शास्त्रज्ञ थे। जिससे 'विप्राणां ज्ञानतो ज्यैष्ठ्यम्' अर्थात् 'ब्राह्मणों में अधिक ज्ञान वाला ही ज्येष्ठ समझा जाता है, न कि अधिक अवस्थावाला' इस मनुवचन के अनुसार उन्हें ज्येष्ठ समझ कर गुरु या पुरोहित न होने पर भी अयाचक ब्राह्मणों के पूर्वज प्रणाम कर दिया करते थे। जैसाकि करना उचित ही है और याचक दल वाले भी किया करते ही थे और करते भी हैं। परन्तु सभी घुरहू कतवारू को आंख मूँदकर प्रणाम न तो याचक ही और न अयाचक ही किया करते थे, या किया करते हैं। काल पाकर यद्यपि उनके वंशजों में वह योग्यता न भी रहगई जिससे उन्हें प्रणाम करना उचित था। परन्तु लोक की तो अन्धपरम्परा है। जो बात एक बार चल पड़ी उसे रोकना सहज नहीं है, जैसा कि नीतिकारों ने कहा है कि:-

गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः।

अर्थात् 'संसार अन्धपरम्परा की तरह देखा देखी किया करता है न कि सच्ची या झूठी, अथवा योग्य, अयोग्य, बातों का विचार किया करता है'। इसीलिये अबतक उनके वंशजों को कहीं कहीं लोग प्रणाम कर दिया करते हैं। इसके लिये दृढ़तर प्रमाण एक तो याचकों का आचरण हीं है और दूसरा यह है। जैसा कि सभी लोग जानते और देखते हैं कि प्रायः प्रत्येक गावों में जो गोसाईं हुआ करते हैं, जिन्हें लोग घरबारी गोसाईं या अतीथ कहा करते हैं और जिनके लड़के बाले भी होते हैं। उन्हें प्रायः सभी जातिके लोग जहां तहां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'नमोनरायन बाबा!' कहकर प्रणाम किया करते हैं। परन्तु यदि विचार दृष्टि से देखा जावे तो वास्तव में वे किसी के भी प्रणाम के योग्य नहीं हैं, क्योंकि जैसा कि लिखा है कि जो संन्यासी होकर स्त्री रख लेता या विवाह करलेता है, वह और उसके वंशज पतित हो जाते हैं। वे वचन इस प्रकार हैं:-

चाण्डालाः प्रत्यवसिताः परिव्राजकतापसाः।

तेषां जातान्यपत्यानि चाण्डालैः सह वासयेत्। द.।४।२०॥

यतुप्रव्रजितापत्या याचैषांवीजसन्ततिः।

विदुरानामचाण्डाला जायन्तेनात्रसंशयः। अ. ।३५।१६५॥

यस्तु प्रव्रजिताज्जातो ब्राह्मण्यांशूद्रतश्चयः।

द्वावेतौ विद्धिचाण्डालौसगोत्राद्यस्तु जायते।ग.।४२।२१॥

अर्थात् 'दक्षस्मृति का वचन है और अग्निपुराण में भी लिखा है कि जो चाण्डाल, अन्य के छूने के अयोग्य, संन्यासी और तपस्वी (वानप्रस्थ) हैं, इन चारों के लड़के बराबर ही होते हैं। अतः उन्हें चाण्डालों के साथ ही रहना या खाना पीना चाहिये। जो लोग संन्यास लेकर स्त्री से भोग करते हैं और उससे जो लड़के उत्पन्न होते हैं वे सभी विदुर नाम वाले चाण्डाल होते हैं इसमें संशय नहीं है। गरुड़ पुराण के ब्रह्मखंड में लिखा है कि जो संन्यासी से जन्मा हो, जो ब्राह्मणी में शूद्र के वीर्य से पैदा हो, जो सगोत्र में व्याह से पैदा हो उन्हें चांडाल जानो'। अग्नि पुराण वाला ही श्लोक अत्रिस्मृति के ८ वें अध्याय का १८ वां है। इसीलिये इनलोगों का यात्रा वगैरः में दर्शन निषिद्ध मानते हैं, न कि संन्यासी (दण्डी) का दर्शन निषिद्ध है, क्योंकि वह तो नारायण स्वरूप है। जैसा कि लिखा है कि:—

दण्डग्रहणमात्रेण नरोनारायणो भवेत्।

अर्थात् 'ब्राह्मण दण्ड धारण करने से ही नारायण स्वरूप हो जाता है'। और नारायण का दर्शन सिवाय मंगल के अमंगल हो सकता नहीं। अस्तु, फिर भी लोग उन्हें प्रणाम करते ही हैं। इसका कारण यह है कि इन गोसाइयों के पूर्वज प्रथम सच्चे संन्यासी थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी से लोग उन्हें 'ॐ नमोनरायाणाय' कहकर प्रणाम किया करते थे। परन्तु यद्यपि काल पाकर वे या उनके बाद के जो साधु (संन्यासी) उस स्थान पर रहते थे, वे भ्रष्ट भी होगये और स्त्री लड़केवाले वाले होगये। परन्तु लोग वही पुरानी लकीर के फकीर होकर अब तक वैसे ही प्रणाम करते चले आते हैं, और वही 'ॐ नमोनारायणाय' बिगड़कर 'नमोनरायन बाबा!' हो गया। तो क्या इतना होते रहने पर भी वे गोसाईं वास्तव में उन प्रणाम करने वालों से श्रेष्ठ हो सकते हैं? बस, यही दशा अन्य याचक ब्राह्मणों की भी समझ कर सन्तोष कर लीजिये।

चौथा प्रश्न जो प्रायः हुआ करता है वह यह है कि, यदि अयाचक ब्राह्मण लोग उत्तम ब्राह्मण हैं तो फिर दान लेकर क्यों नहीं पचालेते? परन्तु यह भी निरी अनभिज्ञता को प्रगट करता है। क्योंकि दान लेकर हजम करना तो प्रायः श्रेष्ठ ब्राह्मणों का कर्म है ही नहीं, प्रत्युत वे लोग उसे निंदित कर्म हीं समझते हैं, यह बात प्रथम हीं सिद्ध की जा चुकी है। और यदि वास्तव में पूछा जाय तो जो याचक ब्राह्मण दान लेकर हजम करने के अभिमान वाले हैं वे भी यह नहीं समझते कि, आ या वे लोग दान लेकर उसे हजम कर लेते हैं अथवा अपनी हजम करने वाली शक्ति का कुछ भी विचार न कर इतना दान ले रहे हैं कि जिससे उन्हें बदहजमी हो रही है और अन्त में पेट के फट जाने से मर जावेंगे। अर्थात् उन्हें परलोक में नरक वासी होना होगा। क्योंकि जब प्रथम हीं यह सिद्ध कर चुके हैं कि विना तप करने और वेद पढ़ने वाले के जो दूसरा ब्राह्मण प्रतिग्रह की इच्छा भी करता है वह दान को लेकर ही पत्थर की नाव की तरह डूब जाता है। जैसा कि मनु भगवान ने कह दिया है कि—

अतपास्त्वनधीयानः प्रतिग्रहरुचिर्द्विजः ।
अम्भस्यश्मप्लवेनेव सह तेनैव मज्जति ॥

तो फिर कैसे कहा जासकता है कि आजकल के निरक्षर भट्टाचार्य लोग दान को हजम करने वाले हैं? किन्तु हारकर यही मानना पड़ेगा कि उन्हें बदहजमी हो रही है। परन्तु अचायक ब्राह्मण लोग तो प्रायः कीचड़ में पांव डालकर पीछे से धोना और बदहजमी से तंग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होना नापसन्द करते थे और करते हैं, क्योंकि बुद्धिमान उसे ही कहते हैं जो कभी भी हीन कार्य न करे। यदि दान को हजम करने के ही अभिमान से आप श्रेष्ठ बनने की डींग हांकते हैं, तो फिर महापात्र या महाब्राह्मण तो आप से भी श्रेष्ठ सिद्ध हो जावेंगे, क्योंकि जिस शय्यादान आदि को आप भी हजम नहीं करसकते, उसे वे पचा जाने का दावा करते हैं। इतना हीं क्यों ? शायद आपकी इस दलील के मुताबिक चाण्डाल सभी ब्राह्मणों से अथवा सारे संसार से श्रेष्ठ ठहर गया, क्योंकि जिस ग्रहण काल के दान को आप लोग कोई भी पचाने की शक्ति नहीं रखते, उसे वह हांक देकर पचाने का दावा रखता है। इसलिये ऐसे ऐसे प्रश्नों की चर्चा भी करना न चाहिये, प्रश्न तो दूर रहें, नहीं तो लेने के देने पड़ जावेंगे। ये सब प्रश्न अत्यन्त प्रसिद्ध हैं, अतः इनका स्वतंत्र विचार कर दिया। ब्राह्मण तो दस प्रकार के ही हैं, ग्यारहवें कहां से आगए ? इसका तो उत्तर होही चुका है कि अयाचक ब्राह्मण दशविध ब्राह्मणों से बाहर हैं नहीं। इसके अतिरिक्त 'सारस्वताः कान्यकुब्जाः' इत्यादि श्लोक आधुनिक हैं। क्योंकि वे जितनी जगह मिलते हैं उतने हीं प्रकार से उलटा पलटा लिखे हैं और किसी किसी ने उनमें सर्यूपारी आदि पद घुसेड़ कर अन्य पद निकाल दिये हैं। जैसा कि पं० दुर्गादत्त के दिग्विजय और ब्राह्मणोत्पत्तिमार्त्तण्ड आदि से विदित है। यथाः—

ब्राह्मणोत्पत्तिमार्त्तण्ड

कार्णाटकाश्च तैलंगा द्राविडा महाराष्ट्रकाः।
गुर्जराश्चेति पञ्चैव द्राविडा विन्ध्यदक्षिणे ॥ १६ ॥
सारस्वताः कान्यकुब्जा गौडा उत्कल मैथिलाः।
पंच गौडा इतिख्याता विन्ध्यस्योत्तरवासिनः ॥१७॥पृ०३॥
त्रिहोत्रा ह्यग्निवैश्याश्च, कान्यकुब्जाः कनौजियाः।
मैत्रायणाः पंचविधा एते गौडाः प्रकीर्त्तिताः।३। पृ०३४९॥

ब्रह्मणोत्पत्ति

सारस्वताः कान्यकुब्जा गौडाश्च मैथिलोत्कलाः।
गौडाः पंच समाख्याता विन्ध्यस्योत्तरवासिनः ॥ २३ ॥
महाराष्ट्रा द्राविडाश्च तैलंगा गुर्जरास्तथा।
कार्णाटा द्राविडाः पंच विंध्यदक्षिणवासिनः।२४।पृ०१२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पं० उमाकान्त मिश्र

महाराष्ट्राश्च तैलंगा द्राविडा गुर्जरास्तथा।
कारणाटाश्च पञ्चैते दाक्षिणात्याः प्रकीर्त्तिताः॥
सरस्वाः कान्यकुब्जाश्च सारस्वताश्च मैथिलाः।
नागराश्चेति पंचैते पंच गौडाः प्रकीर्त्तिताः॥ पृ०२॥

यदि शक्ति संगम तंत्र के भी होते तो भी उनकी ऐसी दुर्दशा न होती। अथवा उसमें मानने पर भी वह भी आधुनिक ही है। साथ ही, यदि दस प्रकार के ही ब्राह्मण माने जावेंगे तो सर्यूपारी, सनाढ्य, जिझौतिया और बंगाली आदि ब्राह्मणों की क्या व्यवस्था होगी? वैसी ही यहां भी जान लीजिये। अवशिष्ट सब प्रश्नों या बातों का विचार तो अच्छी तरह से प्रथम हीं किया जाचुका है।

२—वंगीय ब्राह्मण सम्बन्ध।

अब कान्यकुब्ज तथा अन्य देशों से बंगाल में गए हुए प्रसिद्ध प्रसिद्ध कान्यकुब्ज और सर्यूपारी ब्राह्मणों के साथ दो एक भूमिहार ब्राह्मणों के विवाह सम्बन्ध दिखला देते हैं:—

मुर्शिदाबाद-लालगोला के राजा साहब योगेन्द्रनारायण राय गाजीपुर—सुर्वत पाली से गये हुए हैं और कौशिक गोत्री भूमिहार ब्राह्मण हैं। उनकी पुत्री की शादी गाजीपुर—सुहवल निवासी श्रीश्यामनारायण राय के पुत्र श्रीसुरेन्द्रराय एम. ए. से हुई थी और राजा साहबके दायाद श्रीगिरीशनारायण राय के घर भी श्रीश्यामनारायण का सम्बन्ध है। उक्त राजासाहब के दायाद श्रीशरदिन्दुनारायण राय और श्रीद्विजेन्द्रनारायण राय दो भाई मुर्शिदाबाद-जमुवां में रहते हैं। उन्हीं शरदिन्दु नारायण राय की बहिन का विवाह रिपन कालेज के प्रिंसिपल डाक्टर रमेन्द्र सुन्दर त्रिवेदीजी से हुआ था, जो जिझौतिया ब्राह्मण पुण्डरीक गोत्र के थे। उक्त राजासाहब के राज कुमार श्री सत्येन्द्रनारायण राय और हेमेन्द्रनारायण राय की लड़कियों से मुर्शिदाबाद-टेयां ग्रामवासी डाक्टर नृसिंह प्रसाद त्रिवेदी के पुत्रों की शादी हुई है, जो कान्यकुब्ज ब्राह्मण हैं। मुर्शिदाबाद-शेखअलीपुर में श्री शशिभूषण राय रहते हैं, जो सावर्ण्य गोत्र वाले भूमिहार ब्राह्मण बलिया के नरही ग्राम से गये हैं। उनकी शादी राजशाही जिले के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्राम के निवासी सर्यूपारी गर्ग गोत्र वाले श्रीसुमेश्वर राय शुक्लके हां हुई है और उसी ग्राम में मालदह-सिंहाबाद के राजासाहब भैरवेन्द्र नारायण राय की बहिन का ब्याह श्री रामचन्द्र राय शुक्ल के यहां हुआ है। राजा भैरवेन्द्र नारायण राय किनवार ब्राह्मण गाजीपुर के सोनाड़ी से गए हैं। मुर्शिदाबाद-आलमशाही ग्राम निवासी सर्वेश्वर पांडे से पूर्वोक्त श्री शशिभूषण राय की बहिन का विवाह हुआ है। बागडांगा निवासी श्री मानवेन्द्रनारायण की बहिन से जैसोर-चन्दनपुर निवासी मन मोहन पांडे (मिनर्वा थियेटर वाले) का विवाह है और उनके भाई का विवाह मालदह-बुलबुल चण्डी निवासी राजेन्द्रबाबू की स्त्री की बहिन से हुआ है। ये दोनों समुवां के पास खोसवासपुर निवासी श्री किष्टनाथराय की कन्याएं हैं। इत्यादि सहस्रों विवाह सम्बन्ध वहां भी प्रसिद्ध प्रसिद्ध सर्यूपारियों, कनौजियों और जिझौतियों से हुए और होते हैं।

३-आवश्यक कर्त्तव्य।

जैसे यह बात दिखलाई गई है कि गोसाईं लोगों को प्रणाम करना बहुत ही निन्दित और अनुचित है। परन्तु लोग अन्ध परम्परा का करते चले आते हैं और समझदार होने पर पीछे से भी छोड़ देते हैं। उसी तरह यह भी देखा जाता है कि बहुत से ब्राह्मण, क्षत्रियआदि वर्णों के आचार्य या मंत्र देने वाले (कान फूंकने वाले) गुरु वे ही गोसाईं निरक्षर भट्टाचार्य और दुराचारी याचक दलवाले ब्राह्मण उसी पूर्वोक्त अन्धपरम्परा के अनुसार चले आते हैं। परन्तु उनको हटाकर अपने दल का गुरु बनाना चाहिये, क्योंकि अब उनमें वह योग्यता न रह गई जो उनके पूर्वजों में थी। शास्त्रकारों का तो यहां तक कथन है कि यदि गुरुवंश या आचार्यवंश अपढ़ और दुराचारी हो गया हो तो उसे आगे के लिये ही नहीं छोड़ देना चाहिये, किन्तु जिस समय ही उसके इन दुर्गुणों का पता लग जावे उसी समय उसे त्याग देना चाहिये। जैसा कि वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड में रामजी के प्रति लक्ष्मणजी ने कहा है कि:—

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः।
उत्पथं प्रतिपन्नस्य शास्त्रैस्त्यागो विधीयते॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अर्थात् 'गुरु भी यदि अभिमानी होजावे, अपने कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य को न जाने और शास्त्रनिन्दित काम करता हो तो उसका दण्ड करने और उसे त्याग देने की आज्ञा शास्त्रों में है।'

पूर्व ग्रन्थ के अवलोकन से ब्राह्मणों का सच्चास्वरूप और उन के धर्मों का यथावत् ज्ञान होगया और यह विदित होगया कि उनका सच्चा स्वरूप वही है जो अयाचक नामधारी ब्राह्मणों का सदा से ही चला आता है। इसीलिये औशनस स्मृति में लिखा भी है कि:—

अहिंसैकपरा नित्यमप्रतिग्राहिणस्तथा।
सत्रिणो दाननिरताः ब्राह्मणाः पंक्तिपावनाः॥

अर्थात् 'जो ब्राह्मण हिंसा और प्रतिग्रह (दान लेने) से रहित हों और सत्र (यज्ञ) करनेवाले एवं दान देने वाले हों, वे पंक्ति पावन कहलाते हैं, अर्थात् जिस पंक्ति में बैठते हैं उसे पवित्र कर देते हैं'। इसलिये हमारा वक्तव्य इन अयाचक ब्राह्मणों के स्वरूप या धर्म के विषय में कुछ रह नहीं गया, जिस के लिये विवाद या आकांक्षा होवे। इसी से हम इन सब विषयों को अब यहां पर ही छोड़कर ग्रंथ के अन्त में ब्राह्मण आदि वर्णों के अत्यन्त उपयोगी और नित्य, अथवा नित्य नहीं तो बहुधा पड़ने वाले विषयों का कुछ संक्षेपतः निरूपण कर देते हैं। जिससे लोगों को अल्प श्रम से ही विशेष लाभ होवे। मनु भगवान ने अपनी स्मृति के द्वितीय अध्याय में ब्राह्मण के जन्म से लेकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश से प्रथम के धर्मों को बतलाया है। वे संक्षेपतः ये हैं:—

नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वास्य कारयेत्।
पुण्ये तिथौ मुहूर्त्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते॥३०॥
मंगल्यं ब्राह्मणस्य स्यात्क्षत्रियस्य बलान्वितम्।
वैश्यस्य धनसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्॥३१॥
शर्मवद्ब्राह्मणस्यस्याद्राज्ञोरक्षासमन्वितम्।
वैश्यस्य पुष्टिसंयुक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम्॥३२॥
ततश्च नाम कुर्वीत पिता वै दशमेऽहनि।
देवपूर्वं नराख्यं हि शर्मवर्मादिसंयुतम्॥२।१०।८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शर्मवद्ब्राह्मणस्योक्तं वर्मेतिक्षत्रसंयुतम् ।
गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः ।३।१०।८।
चतुर्थे मासि कर्तव्यं शिशोर्निष्क्रमणं गृहात् ।
षष्ठेऽन्नप्राशनंमासि यद्वेष्टं मंगलं कुले ॥३४॥
चूडाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः ।
प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्त्तव्यं श्रुतिचोदनात् ॥३५॥
गर्भाष्टमेऽब्देकुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम् ।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तुद्वादशेविशः ॥३६॥
ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पंचमे ।
राज्ञोबलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे ॥३७॥
आषोडशाद्ब्राह्मणस्य गायत्री नातिवर्त्तते ।
आद्वाविंशात् क्षत्रबंधोराचतुर्विंशतेर्विशः ॥३८॥
अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः ।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः ॥३९॥
नेतैरपूतैर्विधिवदापद्यपिहि कर्हिचित् ।
ब्राह्मान्यौनांश्च सम्बन्धानाचरेद्ब्राह्मणः सह ॥४०॥
कार्ष्णरौरवबास्तानि चर्माणि ब्रह्मचारिणः ।
वसीरन्नानुपूर्व्येण शाणक्षौमाविकानि च ॥४१॥
मौंजीत्रिवृत्समाकार्या श्लक्ष्णाविप्रस्यमेखला ।
क्षत्रियस्य तुमौर्वीज्या वैश्यस्यशणतान्तवी ॥४२॥
कार्पासमुपवीतंस्याद्विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृत् ।
शणसूत्रमयं राज्ञो वैश्यस्याविकसौत्रिकम् ॥४४॥
ब्राह्मणो वैल्वपालाशौ क्षत्रियोवाटखादिरौ ।
पैलवौदुम्बरौ वैश्यो दण्डानर्हन्ति धर्मतः ॥४५॥
केशान्तिको ब्राह्मणस्य दण्डः कार्यः प्रमाणतः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ललाटसम्मितो राज्ञःस्यात्तुनासान्तिकोविशः॥४६॥
पिता पितामहो भ्राता ज्ञातयो गोत्रजाग्रजाः ।
उपायनेऽधिकारीस्यात् पूर्वाभावेपरःपरः॥ वृद्धगर्ग।
पितैवोपनयेत्पूर्वं तदभावे पितुः पिता ।
तदभावे पितुर्भ्राता तदभावेतु सोदरः ॥ वृद्धगर्ग ।
उपनीय गुरुः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः ।
आचारमग्निकार्यं च सन्ध्योपासनमेवच ॥ ६८ ॥
प्राक्कूलान्पर्युपासीत पवित्रैश्चैवपावितः ।
प्राणायामैस्त्रिभिःपूतस्ततओंकारमर्हति ॥७५॥
अकारं चाप्युकारंच मकारंच प्रजापतिः ।
वेदत्रयान्निरदुहद् भूर्भुवःस्वरितीति च ॥७६॥
त्रिभ्य एव तु वेदेभ्यः पादपादमदूदुहत् ।
तदित्यृचोऽस्याःसावित्र्यापरमेष्ठी प्रजापतिः॥७७॥
एतदक्षरमेतां च जपन्व्याहृतिपूर्विकाम् ।
सन्ध्ययोर्वेदविद्विप्रो वेदपुण्येन युज्यते ॥ ७८ ॥
सहस्रकृत्वस्त्वभ्यस्य बहिरेतत्त्रिकं द्विजः ।
महतोऽप्येनसो मासात्त्वचेवाहिर्विमुच्यते ॥ ७९ ॥
एतयर्चा विसंयुक्तः काले च क्रियया स्वया ।
ब्रह्मक्षत्रियविड्योनिर्गर्हणां याति साधुषु ॥ ८० ॥
ओंकारपूर्विकास्तिस्रो महाव्याहृतयोऽव्ययाः ।
त्रिपदा चैव गायत्री विज्ञेयं ब्रह्मणो मुखम् ॥८१॥
योऽधीतेऽहन्यहन्येतांस्त्रीणिवर्षाण्यतन्द्रितः ।
स ब्रह्म परमभ्येति वायुभूतः खमूर्त्तिमान् ॥ ८२ ॥
एकाक्षरं परं ब्रह्म प्राणायामाः परन्तपः ।
सावित्र्यास्तुपरंनास्तिमौनात्सत्यंविशिष्यते ॥८३॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विधियज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशभिर्गुणैः ।
उपांशुःस्याच्छतगुणः साहस्रोमानसः स्मृतः ॥८५॥
पूर्वांसन्ध्यां जपँस्तिष्ठेत् सावित्रीमार्कदर्शनात् ।
पश्चिमां तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात् ॥१०१॥
पूर्वां सन्ध्यांजपँस्तिष्ठन्नैशमेनो व्यपोहति ।
पश्चिमांतुसमासीनोमलंहन्तिदिवाकृतम् ॥ १०२ ॥
न तिष्ठति तु यःपूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् ।
सशूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः ॥१०३॥
विप्रोवृक्षस्तस्यमूलंचसंध्यावेदाःशाखाधर्मकर्माणिपत्रम् ।
तस्मान्मूलंयत्नतोरक्षणीयंछिन्नेमूलेनैवशाखानपत्रम्।वि.॥
शय्यासनेऽध्याचरिते श्रेयसा न समाविशेत् ।
शय्यासनस्थश्चैवैनं प्रत्युत्थायाभिवादयेत् ॥११८॥
उद्धर्वप्राणाह्युत्क्रामन्ति यूनःस्थविर आयति ।
प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान्प्रतिपद्यते॥१२०॥
अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि संप्रवर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम् ॥१२१॥
आयुष्मान्भव सौम्येति वाच्योविप्रोऽभिवादने १२५
ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रबन्धुमनामयम् ।
वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च ॥१२७ ॥
उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता ।
सहस्रं तु पितॄन्माता गौरवेणातिरिच्यते ॥ १४५॥
न हायनैर्नवलितैर्न वित्तेन न बन्धुभिः ।
ऋषयश्चक्रिरे धर्मं योऽनूचानः स नो महान् ॥१५४॥
विप्राणां ज्ञानतोज्यैष्ठ्यं क्षत्रियाणान्तु वीर्यतः ।
वैश्यानां धान्यधनतः शूद्राणामेव जन्मतः ॥१५५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः।
यो वै युवाप्यधीयानस्तं देवाः स्थविरंविदुः ॥१५६॥
यथाकाष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः।
यश्च विप्रोऽनधीयानस्त्रयस्ते नामबिभ्रति ॥१५७॥
यथाषण्ढोऽफलः स्त्रीषु यथागौर्गविचाफला।
यथाचाज्ञेऽफलंदानंतथाविप्रोऽनृचोऽफलः ॥१५८॥
वेदमेव सदाऽभ्यस्येत्तपस्तप्स्यन्द्विजोत्तमः।
वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते ॥१६६॥
नीचं शय्यासनं चास्य सर्वदा गुरुसन्निधौ।
गुरोस्तु चक्षुर्विषये न यथेष्टासनोभवेत् ॥ १८८ ॥
यं मातापितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम्।
न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्त्तुं वर्षशतैरपि ॥२२७॥
तयोर्नित्यं प्रियं कुर्यादाचार्यस्य च सर्वदा।
तेष्वेव त्रिषु तुष्टेषु तपः सर्वं समाप्यते ॥२२८॥
सर्वे तस्यादृताधर्मा यस्यैते त्रय आदृताः।
अनादृतास्तु यस्यैते सर्वास्तस्याफलाःक्रियाः॥२३४॥

इसका अनुवाद यह है कि 'पुत्र के उत्पन्न होने के ग्यारहवें अथवा तेरहवें दिन उसका नाम रक्खे। अथवा अच्छी तिथि, अच्छे मुहूर्त्त और शुभ नक्षत्र में उसके बाद भी जब चाहे तभी रक्खे। ब्राह्मण का नाम मंगल सूचक होना चाहिये। पुत्र का नाम पिता ही रक्खे और वह नाम पुरुष वाचक और आदि में देवताओं के नामसे युक्त हो जैसे सोमशर्मा आदि, नकि यमुना प्रसाद वगैरः। ब्राह्मण के नाम के अन्त में शर्मा पदवी, क्षत्रिय की वर्मा, वैश्य की गुप्त और शूद्र की दास पदवी होनी चाहिये। बच्चे को जन्मवाले (प्रसूति) गृह से चौथे मास में बाहर निकालना और छठे महीने में अन्न प्राशन (अन्नखिलाना) उचित है, अथवा जैसी कुलपरम्परा होवे वैसा ही करे। एक अथवा तीन वर्ष के होने पर बालक का मुण्डन करवाना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाहिये। गर्भ के आठवें वर्ष ब्राह्मण का, ग्यारहवें वर्ष क्षत्रिय का और बारहवें वर्ष वैश्यका उपनयन संस्कार (यज्ञोपवीत वा जनेऊ) होना चाहिये। परन्तु यदि ब्राह्मण को ब्रह्मतेज की, क्षत्रिय को बलकी और वैश्यको धन की इच्छा होवे तो क्रम से ५, ६ और ८ वर्षों में ही यज्ञोपवीत करे। जन्म से १६ वें वर्ष तक भी ब्राह्मण का, २२ वें तक क्षत्रिय और २४ वें तक वैश्य का यज्ञोपवीत कर देने से वे पतित नहीं हो सकते। परन्तु इसके उपरान्त विना यज्ञोपवीत के वे लोग गायत्री पतित और सत्पुरुषों द्वारा निन्दित होते और व्रात्य कहलाते हैं। ये लोग प्रायश्चित्त * करके फिर संस्कार और यज्ञोप-

---

* व्रात्य लोगों के लिये प्रायश्चित्त मनुस्मृति के ग्यारहवें अध्याय में इस प्रकार लिखा हुआ है:-

येषां द्विजानां सावित्री नानूच्येत यथाविधि।
तांश्चारयित्वा त्रीन्कृच्छ्रान् यथाविध्युपनाययेत्॥१८१॥

अर्थात् 'जिन लोगों के संस्कार ठीक समय पर न होने से वे व्रात्य होगये हों, उनसे तीन कृछ्र (प्राजापत्य) व्रत करवाकर पुनः विधिवत् उनके यज्ञोपवीत करवावे।'

प्राजापत्य का स्वरूप मनु भगवान ने स्वयं आगे बतलाया है:-

त्र्यहं प्रातस्त्र्यहं सायं त्र्यहमद्यादयाचितम्।
त्र्यहं परंच नाश्नीयात् प्राजापत्यं चरन्द्विजः॥२११॥

अर्थात् 'प्रथम तीन दिन तक दिन में, बाद तीन दिन तक रात्रि में और फिर तीन दिन तक विना मांगे किसी समय मिलने पर एक बार भोजन करे और फिर तीन दिन तक भूखाही रहे तो एक प्राजापत्य (कृछ्र) व्रत होता है।'

सायंद्वाविंशतिर्ग्रासाः प्रातः षड्विंशतिस्तथा।
अयाचिते चतुर्विंशत् परं चानशनं स्मृतम्॥
कुक्कुटाण्डप्रमाणं च यावांश्च प्रविशेन्मुखम्।
एतं ग्रासं विजानीयात् शुद्ध्यर्थं ग्रासमात्मनः॥
हविष्यंचान्नमश्नीयाद्यथा रात्रौ तथा दिवा॥

वीत द्वारा यदि पवित्र न किये जावें, तो ब्राह्मण इनके साथ खान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पान, पठन पाठन और विवाह सम्बन्ध कभी भी न करे। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ब्रह्मचारियों को बिछाने के लिये क्रमशः कृष्णमृग, रुरुमृग और बकरे के चर्म और पहनने के लिये सन, दुकूल और भेड़ी के बालों के कम्बल रखने होते हैं। ब्राह्मण ब्रह्मचारी के लिये कमर में पहनने को तीन तागे वाली मूंज की मौंजी (मेखला) बनानी चाहिये, क्षत्रिय के लिये मूर्वा औषधी की धनुष की तांत की तरह और वैश्य को सनकी तीन तागे वाली। ब्राह्मण का जनेऊ रुई का, क्षत्रिय का सन का और वैश्य का भेड़ के बाल का होता है। ब्राह्मण के लिये बिल्व अथवा पलाश, क्षत्रिय को वट या खदिर और वैश्य के लिये पीलुवृक्ष या गूलर के दण्ड बनाने चाहियें। ब्राह्मण का दण्ड शिखातक, क्षत्रिय का ललाट तक और वैश्यका नासिका तक का होना चाहिये। यज्ञोपवीत काल में प्रथम तो पिता ही गायत्री का उपदेश करे, परन्तु उसके न रहने पर पितामह, भाई, दायाद, और गोत्रवाले क्रम से एक के न रहने पर दूसरे गायत्री का उपदेश करें। परन्तु जब ये कोई भी न होवें तो कुलीन ब्राह्मण ही करे। यज्ञोपवीत के बाद गुरु शौच, आचार, अग्निहोत्र और सन्ध्योपसन शिष्य को सिखलावे। कुशों का अग्रभाग पूर्व को करके उनपर बैठे और कुशों स शरीर पर जल छिड़क और तीन प्राणायाम करके पुनः ओंकार युक्त गायत्री का उच्चारण करे। ओंकार में जो अ, उ और म ये तीन अक्षर हैं उन्हें और भूः, भुवः और स्वः इन महाव्याहृतियों को परमात्मा ने क्रमसे तीनों वेदों से मथकर निकाला है। और गायत्री मंत्र के २४ अक्षरों में से जो आठ आठ अक्षरों के तीन चरण हैं, उन्हें भी क्रम से तीनों वेदों से ही दुह कर भगवानने निकाला है। इसलिये सायं प्रातः काल जो ब्राह्मण ओंकार, व्याहृति और गायत्री मंत्र को मिलाकर—ओं भूर्भुवःस्वःतत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो

अर्थात् 'आपस्तम्ब लिखते हैं कि दिन में २६ रात्रि में २२ और विना मांगे २४ ग्रास खावे। ग्रास मुर्गी के अण्डे भर के होवें, अथवा मुख में जितना जा सके उतने बड़े होवें। सर्वदा हविष्य (खीर) वगैरः भोजन करना चाहिये। किसी के मतसे व्रात्यस्तोम भी प्रायश्चित्त के लिये करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्—जप करता है उसे सब वेदों के पाठ करने का पुण्य मिलता है *।

एक मास तक ग्राम से बाहर एक हजार प्रति दिन गायत्री जप करने से महापाप से भी आदमी वैसेही छूट जाता है, जैसे सर्प केंचली से अलग हो जाता है। सायं प्रातः काल जो द्विज इस गायत्री का जप और अग्नि होत्र आदि नहीं करता है उसको सत्पुरुष निन्दित समझते हैं। ओंकार और तीन महाव्याहृतियों के सहित गायत्री मंत्र परमात्मा का मुख है। जो ब्राह्मण इस पूर्वोक्त गायत्री का तीन वर्ष तक बराबर जप करता है वह स्वेच्छाविहारी और परमात्मा का स्वरूप हो जाता है। ओंकार परमात्मा का स्वरूप है, प्राणायाम से बढ़ कर तपस्या और गायत्री से बढ़ कर मंत्र नहीं है, और मौन रहने की अपेक्षा सत्य बोलना अच्छा है। सब यज्ञों की अपेक्षा बोल कर भी गायत्री या अन्य मंत्र का जप करना दसगुना फल देता है, केवल ओष्ठ हिलते हुए जप करना सौगुना और मन से जप करना तो हजारगुना फल देने वाला है। प्रातः काल में खड़ा हो कर तारे

---

* यद्यपि यह प्रमाण मिलता है कि:—

ओंकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैवच।
अन्ते च प्रणवं दद्यादेतज्जपमुदाहृतम्॥

अर्थात् 'प्रथम ओंकार, फिर भूर्भुवः स्वः और उसके बाद 'तत्सवितुः' इत्यादि, और अन्त में पुनः ओंकार लगा कर जप करना चाहिये'। तथापि देवी भागवत में लिखा है कि:—

संपुटैकषडोंकारा गायत्री त्रिविधा मता।
तत्रैकप्रणवा ग्राह्या गृहस्थैर्ब्रह्मचारिभिः॥

अर्थात् 'दो, छ और एक ओंकार वाला, इस प्रकार गायत्री मंत्र तीन प्रकार का है। उनमें से गृहस्थ और ब्रह्मचारी को एक ओंकार वाले का अर्थात् आदि में हीं ओंकार लगा कर जप करना चाहिये'। इस वचन के अनुसार दो ओंकार वाला वानप्रस्थ के लिये है, गृहस्थ और ब्रह्मचारी एकही ओंकार लगावे, ऐसाही प्रतीत होता है और मनुजी की भी ऐसी ही सम्मति प्रतीत होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दीखते रहने से सूर्य दीखने तक और सायंकाल में सूर्य दीखते रहने से तारे दीखने तक बैठ कर जप करे। प्रातःजाल खड़े होकर गायत्री जपने से रात्रि भर के भूल चूक वाले पापों का, और सायंकाल बैठ कर जपने से दिन भर के ऐसे पापों का नाश हो जाता है। जो एक दिन भी प्रातः और सायं संध्या नहीं करता वह शूद्र की तरह किसी भी द्विज कर्मों का अधिकारी नहीं रहता है। ब्राह्मण रूप वृक्ष की जड़ संध्या, शाखा वेद और अन्य धर्म कर्म पत्ते हैं, अतः संध्या रूप जड़ की यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिये, क्योंकि जड़ के कटने पर शाखा और पत्ते एक भी नहीं रह सकते। अपने से श्रेष्ठ माता पिता वगैरः के आने समय छोटे लोगों के प्राण ऊपर को निकलते हैं, परन्तु उठकर उन बड़ों को प्रणाम करने से फिर शरीर में रह जाते हैं। माता पिता आदि बड़ों के साथ अथवा उनके सामने आसन या खाट पर न बैठे और यदि बैठा भी हो तो उनके आनेपर उठ कर उन्हें प्रणाम करे। जो वृद्ध जनों को नित्य प्रणाम और उनकी सेवा करते हैं उनकी आयु, विद्या, यश और बल बढ़ते हैं। अपने से छोटे ब्राह्मणके प्रणाम करनेपर 'हे सौम्य आयुष्मान्भव' ऐसा कहना चाहिये। यदि समान अथवा अल्प अवस्था वाला या विशेष अपरिचित कोई भी ब्राह्मण मिले तो उसे प्रणाम न कर 'कुशलम्?' ऐसा पूछे, क्षत्रियको 'अनामयम्?' वैश्यको, 'क्षेमम्?' और शूद्रको 'आरोग्यम्?' ऐसा केवल पूछ भर लेवे। दस उपाध्याय के बराबर एक आचार्य, सौ आचार्य के बराबर एक पिता और हजार पिता के बराबर एक माता श्रेष्ठ है। अवस्था अधिक होने, बाल पकने और अधिक धन और बन्धु वर्ग होने से ब्राह्मण श्रेष्ठ नहीं होता। किन्तु जोही वेद शास्त्र का ज्ञाता है वही श्रेष्ठ है। अधिक ज्ञान वाला ही ब्राह्मण, अधिक बल वाला क्षत्रिय, अधिक धन वाला वैश्य और अधिक अवस्था वाला शूद्रही श्रेष्ठ माना जाता है। इसलिये बाल पकने सेही ब्राह्मण श्रेष्ठ नहीं होता। किन्तु यदि अल्प अवस्था वाला भी वेदज्ञ हो तो वही श्रेष्ठहै। जैसे काठ का हाथी और चमड़े का मृग बेकार है, वैसेही जो ब्राह्मण नहीं पढ़ता वह नाम मात्र के ही लिये है। जैसे स्त्रीके लिये नपुंसक पति, गायके लिये गाय और मूर्खको दान देना ये सब निष्फल हैं, वैसेही वेद का न जानने वाला ब्राह्मण भी निष्फल है। यदि ब्राह्मण को तप करना हो तो दसा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेद का ही अभ्यास करे, क्योंकि उस के लिये वही महान तप है। ज्ञानोपदेश करनेवाले गुरु तथा श्रेष्ठ जनों के सन्मुख नीचे आसनपर बैठे। उन के सामने हाथ पांव फैला कर न बैठे। पुत्र के जन्म में माता पिता को जो क्लेश होता है उस का उद्धार पुत्र से सैकड़ों वर्षों में भी नहीं हो सकता। माता, पिता और ज्ञानोपदेश करने वाले गुरु के इच्छानुसार ही सदा काम करे, क्योंकि उन के प्रसन्न रहने से ही सब तपस्याओं के फल मिल जाते हैं। जो इन तीनों का आदर करता है, उसने सब धर्म करलिये। परन्तु जो इनका अनादर करता है उस के सभी धर्म निष्फल हो जाते हैं'।

इस के बाद भगवान मनु ने तृतीय अध्याय में इस प्रकार लिखा है:-

असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने ॥ ५॥
महान्त्यपि समृद्धानि गोऽजाविधनधान्यतः।
स्त्री संबन्धे दशैतानि कुलानि परिवर्जयेत् ॥६॥
हीनक्रियं निष्पुरुषं निश्छन्दो रोमशार्शसम्।
क्षय्यामयाव्यपस्मारि श्वित्रिकुष्ठिकुलानि च ॥७॥
आच्छाद्य चार्चयित्वाच श्रुतिशीलवते स्वयम्।
आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्त्तितः॥२७॥
न कन्यायाः पिता विद्वान् गृह्णीयाच्छुल्कमण्वपि।
गृह्णँश्छुल्कं हि लोभेन स्यान्नरोऽपत्यविक्रयी॥५१॥
स्त्रीधनानि तु ये मोहादुपजीवन्ति मानवाः।
नारी यानानि वस्त्रं वा ते पापा यान्त्यधोगतिम् ॥५२॥
कुविवाहैः क्रियालोपैर्वेदानध्ययनेन च।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च ॥६३॥
पंच सूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः।
कण्डनी चोदकुम्भश्च वध्यते यास्तुवाहयन् ॥६८॥
तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पंच क्लृप्ता महायज्ञाः प्रत्यहं गृहमेधिनाम् ॥६९॥
अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्प्पणम् ।
होमोदैवोबलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥७०॥
देवताऽतिथिभृत्यानां पितॄणामात्मनश्च यः ।
ननिर्वपति पंचानामुच्छ्वसन्न स जीवति ॥ ७२ ॥
कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्येनोदकेन वा ।
पयोमूलफलैर्वापि पितृभ्यः प्रीतिमावहन् ॥ ८२ ॥
वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येग्नौ विधिपूर्वकम् ।
आभ्यः कुर्याद्देवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम् ॥८४॥
अग्नेः सोमस्यचैवादौ तयोश्चैव समस्तयोः ।
विश्वेभ्यश्चैवदेवेभ्यः धन्वन्तरय एव च ॥ ८५ ॥
कुह्वैचैवानुमत्यै च प्रजापतय एव च ।
सहद्यावापृथिव्योश्च तथा स्विष्टकृतेऽन्ततः ॥८६॥
एवं सम्यग्घविर्हुत्वा सर्वदिक्षु प्रदक्षिणम् ।
इन्द्रान्तकाप्पतीन्दुभ्यः सानुगेभ्योबलिंहरेत् ॥८७॥
मरुद्भ्यइतितुद्वारि क्षिपेदप्स्वद्भ्यइत्यपि ।
वनस्पतिभ्यइत्येवं मुसलोलूखले हरेत् ॥ ८८ ॥
उच्छीर्षके श्रियैकुर्याद्भद्रकाल्यै च पादतः ।
ब्रह्मवास्तोष्पतिभ्यां तु वास्तुमध्येबलिं हरेत्॥८९॥
विश्वेभ्यश्चैवदेवेभ्यो बलिमाकाश उत्क्षिपेत् ।
दिवाचरेभ्यो भूतेभ्यो नक्तंचारिभ्य एवच ॥ ९० ॥
पृष्ठवास्तुनि कुर्वीत बलिं सर्वात्मभूतये ।
पितृभ्योबलिशेषं तु सर्वं दक्षिणतो हरेत् ॥ ९१ ॥
शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम् ।
वायसानां कृमीणांच शनकैर्निर्वपेद्भुवि ॥ ९२ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वौ दैवे पितृकार्ये त्रीनेकैकमुभयत्र वा।
भोजयेत्सुसमृद्धोऽपि न प्रसज्येत विस्तरे ॥१२५॥
सत्क्रियां देशकालौच शौचं ब्राह्मणसम्पदः।
पंचैतान्विस्तरो हन्ति तस्मान्नेहेतविस्तरम्॥१२६॥
श्रोत्रियायैवदेयानि हव्यकव्यानि दातृभिः॥
अर्हत्तमाय विप्राय तस्मै दत्तं महाफलम्॥ १२८॥
एकैकमपि विद्वांसं दैवे पित्र्ये च भोजयेत्।
पुष्कलं फलमाप्नोति नामंत्रज्ञान्बहूनपि॥ १२९॥
ज्ञाननिष्ठा द्विजाः केचित्तपोनिष्ठास्तथापरे।
तपःस्वाध्यायनिष्ठाश्च कर्मनिष्ठास्तथापरे॥ १३४॥
ज्ञाननिष्ठेषु कव्यानि प्रतिष्ठाप्यानि यत्नतः॥
हव्यानि तु यथान्यायं सर्वेष्वेव चतुर्ष्वपि॥ १३५॥
एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हव्यकव्ययोः।
अनुकल्पस्त्वयं ज्ञेयः सदा सद्भिरनुष्ठितः॥ १४७॥
मातामहं मातुलं च स्वस्त्रीयं श्वशुरं गुरुम्।
दौहित्रं विट्पतिं बन्धुमृत्विग्याज्यौचभोजयेत्।१४८।
न ब्राह्मणं परीक्षेत दैवे कर्मणि धर्मवित्।
पित्र्ये कर्मणि तु प्राप्ते परीक्षेत प्रयत्नतः॥ १४९॥
चिकित्सकान्देवलकान् मांसविक्रयिणस्तथा॥१५२॥
भृतकाध्यापको यस्तु भृतकाध्यापितस्तथा॥१५६॥
कुशीलवोऽवकीर्णी च वृषलीपतिरेवच।
ब्राह्मैर्यौनैश्च सम्बन्धैः संयोगं पतितैर्गतः॥ १५७॥
हस्तिगोश्वोष्ट्रदमको नक्षत्रैर्यश्चजीवति॥ १६२॥
आचारहीनः क्लीबश्च नित्यं याचनकस्तथा।
कृषिजीवी श्लीपदी च सद्भिर्निन्दित एवच॥१६५॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एतान्विगर्हिताचारानपाङ्क्तेयान्द्विजाधमान् ।
द्विजातिप्रवरो विद्वानुभयत्र विवर्जयेत् ॥ १६७ ॥
याज्ञ० । अग्र्याः सर्वेषु वेदेषु श्रोत्रियो ब्रह्मविद्युवा ।
वेदार्थविज्ज्येष्ठसामा त्रिमधुस्त्रिसुपर्णिकः ॥ २१८ ॥
स्वस्त्रीयऋत्विग्यामातृयाज्यश्वशुरमातुलाः ।
त्रिणाचिकेत दौहित्र शिष्यसम्बन्धिबान्धवाः॥२२०
कर्मनिष्ठास्तपोनिष्ठाः पञ्चाग्निब्रह्मचारिणः ।
-पितृमातृपराश्चैव ब्राह्मणाःश्राद्धसम्पदः ॥२२१॥

इन सब पूर्वोक्त श्लोकों का तात्पर्य यह है कि 'जो स्त्री माता के पांच पुरुषों तककी अथवा माताके गोत्र की न हो, तथा पिताके सात पुरुषों तक की और पिता के भी गोत्रकी न हो उससेही विवाहकरना चाहिये। जिस वंश में जात कर्म और प्रेत कर्म आदि न होते हों, केवल लड़कियां हों, वेद न पढ़ा जाता हो, शरीर में अधिक बाल होता हो, बवासीर हो, क्षय और अन्य रोग हों, श्वेत और दूसरे प्रकार के कुष्ठ हों, धन धान्य से पूर्ण भी इन दस कुलवालों के साथ विवाह न करे। कन्या और वर दोनों को प्रीति पूर्वक बुला, सुन्दर वस्त्र पहना और आभूषणों से अलंकृत कर शास्त्र ज्ञानी और शीलवान वर को जो विधिवत् कन्यादान किया जाता है उसेही ब्राह्म विवाह कहते हैं। कन्या का पिता वर से कुछ भी न लेवे, क्योंकि ऐसा करना कन्या विक्रय कहलाता है। जो मनुष्य मोहवश कन्या के बदले वर से द्रव्य, दासी, यान या वस्त्र आदि लेते हैं वे पापी नरकगामी होते हैं। कुत्सित विवाह करने, संध्या और अग्निहोत्र आदि के न करने, वेदों के पठन पाठन न करने और विद्वान एवं तपस्वी ब्राह्मण का निरादर करने,से वंश नीच हो जाते हैं। गृहस्थों के यहां चूल्हा, चक्की, ओखली, झाड़ू, जल के पात्र ये पांच स्थान हिंसा के हैं, जिनसे प्रतिदिन पाप हुआ करता है। इन्हीं पांच हत्याओं को मिटानेके लिये महर्षियों ने गृहस्थों को प्रतिदिन पंच महायज्ञ करने को बतलाया है। वेद शास्त्रों तथा स्तोत्र आदि का पठन पाठन ब्रह्मयज्ञ, तर्पण पितृयज्ञ, अग्निहोत्र अथवा अन्य गायत्री आदि मंत्र द्वारा हवन देवयज्ञ, भोज-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न के समय काक वगैरः की बलि (भाग) निकालना भूत यज्ञ और अतिथिसत्कार मनुष्ययज्ञ कहलाता है। जो इन पांच यज्ञों को नहीं करता, वह श्वास लेता हुआ भी मुर्दा है। प्रतिदिन पितरों की तृप्ति के लिये अन्न, जल, दूध, मूल या फलों से ही श्राद्धकरे, और इसी प्रकार पितृपक्ष आदि में भी। अग्निहोत्र की अग्नि से भिन्न अग्नि में पकाये अन्न से बलि वैश्वदेव करने के लिये इन अगले मंत्रों से हवन करे। (१) अग्नये स्वाहा, (२) सोमाय स्वाहा, (३) अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा, (४) विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा, (५) धन्वन्तरये स्वाहा, (६) कुह्वै स्वाहा, (७) अनुमत्यै स्वाहा (८) प्रजापतये स्वाहा, (९) द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा, (१०) अग्नयेस्विष्टकृते स्वाहा। इस के बाद पूर्व दिशा में, (११) इन्द्रायनमः इन्द्रपुरुषेभ्योनमः। दक्षिण दिशा में (१२) यमायनमः यमपुरुषेभ्योनमः। पश्चिम दिशा में, (१३) वरुणायनमः वरुणपुरुषेभ्योनमः। उत्तरदिशा में, (१४) सोमायनमः सोमपुरुषेभ्योनमः। द्वार में (१५) मरुद्भ्योनमः, जल में (१६) अद्भ्योनमः, ओखली और मूसल पर (१७) वनस्पतिभ्योनमः। घर के उत्तर-पूर्व कोने या खाट के सिरहाने की ओर (१८) श्रियै स्वाहा। घर के दक्षिण-पश्चिम कोने या खाट के पैरों के भाग की ओर (१९) भद्रकाल्यैनमः। मकान के मध्य में (२०) वास्तोष्पतिभ्यां नमः। आकाश में (२१) विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः, दिन में (२२) दिवाचरेभ्यो भूतेभ्योनमः। रात में (२३) नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्योनमः। कोठेपर अथवा अपने पीछे (२४) सर्वात्मभूतये नमः। दक्षिण मुख हो और जनेऊ को अपसव्य (बायें) कर (२५) स्वधा पितृभ्यः, इस मंत्र से दक्षिण दिशा में बचे अन्न की बलि देवे। थोड़ा दूसरा अन्न लेकर, (२६) श्वभ्योनमः, (२७) पतितेभ्योनमः, (२८) पापरोगिभ्योनमः, (२९) वायसेभ्योनमः और (३०) कृमिभ्योनमः, इन मंत्रों से जमीन पर बलिदेवे। इसके बाद अतिथि को भोजन करवावे।

बहुत धनी होने पर भी जब कभी श्राद्ध और देवयज्ञ करे तो देवयज्ञ में दो और श्राद्ध में तीन अथवा दोनों में एकही एक ब्राह्मण खिलावे, अधिक नहीं। बहुत ब्राह्मण खिलाने से एक तो अच्छे और सुपात्र ब्राह्मण नहीं मिलते, दूसरे उन का सत्कार ठीक नहीं होता,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तीसरे उत्तम स्थान और चौथे उत्तम काल में उन्हें भीड़ के कारण खिला नहीं सकते और पांचवें पवित्रता भी नहीं रहजाती। इस लिये अधिक ब्राह्मणों को भोजन न करावे। अत्यन्त योग्य और वेदशास्त्रों के जानने वाले ही ब्राह्मण को यज्ञ अथवा श्राद्ध में भोजन करवाना चाहिये, तभी फल मिलता है। यज्ञ और श्राद्ध में एक एक भी विद्वान ब्राह्मण को खिलाने से महाफल की प्राप्ति होती है, न कि बहुत से भी मूर्खों के खिलाने से। कोई ब्राह्मण ज्ञानी, कोई तपस्वी, कोई वेद पढ़ने वाले और कोई यज्ञ आदि कर्म करने वाले होते हैं। उनमें से श्राद्ध में केवल ज्ञानी को ही खिलाना चाहिये, परन्तु देव कार्य में चारों प्रकार के ब्राह्मणों को। यदि इस प्रकार के योग्य ब्राह्मण मिलसकें तभी उन्हें श्राद्ध आदि में भोजन करावे। परन्तु ऐसे ब्राह्मणों के न मिलने पर सर्वदा सत्पुरुष लोग जिन्हें खिलाया करते हैं वे ये हैं; अपने नाना, मामा, बहिनके लड़के, श्वसुर, आचार्य, माता, पिता, लड़की के पुत्र, दामाद, भाई बिरादर, और यज्ञ कराने और करनेवाले इन को श्राद्ध में भोजन करावे। देव कार्य में तो खिलाने के समय ब्राह्मणों की विशेष परीक्षा न भी करे, परन्तु श्राद्ध में तो यत्न पूर्वक परीक्षा करे। दवा करने वाले (वैद्य) मूर्त्ति दिखाकर पैसे मांगने वाले, मांस बेचनेवाले, रुपया लेकर पढ़ने और पढ़ाने वाले, नाचने और गाने वाले, शूद्र अथवा अन्य जाति की स्त्री को रखने वाले, पतितों (नीचों) के साथ पठन पाठन करने वाले, हाथी, गाय, घोड़े और ऊंटों को फंसानेवाले, ज्योतिषी, भ्रष्टाचार, नपुंसक, नित्य याच्ञा करने वाले, अपने हाथों हल जोतने वाले, फील पांववाले, और सत्पुरुषों द्वारा निन्दित इत्यादि निषिद्ध, पंक्ति में बैठाने के अयोग्य और अधम ब्राह्मणों को बुद्धिमान् कभी भी यज्ञ या श्राद्ध में भोजन न करावे।

याज्ञवल्क्य स्मृति में भी लिखा है कि, युवावस्थावाले, वेदों के विलक्षणज्ञाता, सामान्यतः वेदों और उनके अर्थों के जाननेवाले, सामवेद, ऋग्वेद और यजुर्वेदों के कुछ कुछ अंशों के पण्डित, बहिनके लड़के, यज्ञ करानेवाले, दामाद, यज्ञ करनेवाले, श्वसुर, मामा, लड़की के लड़के, शिष्य, दायाद (भाई बिरादर), नातेदार, कर्मकाण्डी और तपस्वी, अन्य योग्य ब्राह्मण, पांचों अग्नियों की उपासना करने वाले, ब्रह्मचारी और माता पिता के भक्त ब्राह्मण, इतने हीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं को श्राद्ध में भोजन करवाना उत्तम है।

श्राद्ध का काल भी सामान्यतः मनुजीने आगे कह दिया है:—

यथाचैवापरः पक्षः पूर्वपक्षाद्विशिष्यते।
तथा श्राद्धस्य पूर्वाह्णादपराह्णो विशिष्यते ॥२७८॥
रात्रौ श्राद्धं न कुर्वीत राक्षसी कीर्त्तिता हि सा।
सन्ध्ययोरुभयोश्चैव सूर्येचैवाचिरोदिते ॥ २८० ॥

अर्थात् 'जैसे श्राद्ध के लिये शुक्ल पक्ष की अपेक्षा कृष्णपक्ष उत्तम है वैसेही दिनके पूर्वार्द्ध भाग से उत्तरार्द्ध भाग श्रेष्ठ है। रात्रि राक्षसी है, इसलिये रात्रिको, दिन रात के सन्धिकाल में और सूर्य निकलने के बादही तुरन्त श्राद्ध न करे'।

घर या सपिंड (मरे या जन्मे से ७ वीं पीढ़ी तक) में किसी के मरजाने या जन्म लेने से ब्राह्मण दस दिन तक अशुचि रहता और यदि जन्म या मरण के दस दिन के भीतर ही दूसरा जन्म या मरण हो जावे, तो साधारणतया दस दिन के बाद ही दूसरे जन्म और मरण का, भी आशौच मिट जाता है। जैसा कि मनु भगवान ने पांचवें अध्याय में लिखा है:—

अन्तर्दशाहे स्यातां चेत्पुनर्मरणजन्मनी।
तावत्स्यादशुचिर्विप्रो यावत्स्यात्तदनिर्दशम् ॥७८॥
शुद्ध्येद्विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः।
वैश्यः पंचदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥ ८३ ॥

अर्थात् 'यदि जन्म के दस दिन के भीतर ही फिर जन्म और मरण हो जावे तो प्रथम के दस दिन पूरे होने तक ही ब्राह्मण अशुचि रहता है। ब्राह्मण जन्म और मरण में दस दिन तक अशुचि रहता है, क्षत्रिय बारह दिन तक, वेश्य पन्द्रह दिन तक और शूद्र एक मास तक अशुचि रहता है। इस विषय का विशेष विचार आगे उत्तर परिशिष्ट में मिलेगा। आशौच काल में नैमित्तिक कर्म दान आदि तो वहीं हीं करने चाहियें। यही सभी ऋषियों का मत है। परन्तु नित्य कर्म सन्ध्या आदि में विवाद है। किसी का मत है कि—

सन्ध्यां पञ्चमहायज्ञान्नैत्यकं स्मृतिकर्म च।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तन्मध्ये हापयेदेषां दशाहान्ते पुनः क्रिया ॥
मरणाशौचमाख्यातं जननेऽप्येवमेव च ॥ जाबालि ॥

अर्थात् 'जाबालि स्मृति में लिखा है कि जन्म या मरण काल में दस दिन तक संध्या, पंच महायज्ञ, अन्य नित्यकर्म और प्रतिमा पूजा आदि इन सभी का त्याग कर देना और उसके बाद करना चाहिये'।

परन्तु निर्णयसिन्धु आदि ग्रन्थों में यह सिद्ध किया है कि आशौच काल में भी नित्य कर्मों का त्याग नहीं होता है। इसीलिये अन्य ग्रंथकारों ने यह लिखा है कि सन्ध्या वगैरः नित्यकर्मों में भी जितने कर्म विना जलके होवें, उन्हें तो कर लेवे, परन्तु आचमन या सूर्य को अर्घ प्रदानादि न करे। इसलिये यह विषय विवाद का हो गया और इसमें बहुत से मत हो गये। ऐसी दशा में चाहे बिल्कुल ही न करे या केवल गायत्री आदि जपले और प्राणायाम कर लेवे इसमें मर्जी की बात है। परन्तु प्रतिमा की पूजा आदि तो नहीं ही करे। यह भी लिखा है कि:—

अजागावौ महिष्यश्च ब्राह्मणी च प्रसूतिका ।
दशरात्रेण शुद्ध्यन्ति भूमिस्थं च नवोदकम् ॥

अर्थात् 'बकरी, गाय, भैंस और ब्राह्मणी ये सब पुत्र जन्म के दस दिन बाद शुद्ध हो जाती हैं और जमीन पर पड़ा हुआ नया पानी भी शुद्ध ही होता है'। सन्ध्या काल में प्राणायाम का मंत्र यह है:—

"ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् ।

जैसा कि योगी याज्ञवल्क्य ने लिखा है कि:—

सव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह ।
त्रिः पठेदायतप्राणः प्राणायामः स उच्यते ॥

अर्थात् 'ओंकार, सप्तव्याहृति, गायत्री मंत्र और 'आपोज्योती' इत्यादि सिर मन्त्र इन सबों को मिला तीन बार पढ़कर प्राणोंके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रोकने का नाम प्राणायाम है।'

गायत्री मंत्र से शिखा बन्धन करना और सूर्य को अर्घ भी देना चाहिये। जैसा कि लिखा है कि:—

स्मृत्वोंकारं च गायत्रीं निबध्नीयाच्छिखां ततः।
कराभ्यां तोयमादाय गायत्र्या चाभिमंत्रितम् ॥
आदित्याभिमुखस्तिष्ठँस्त्रिरूर्ध्वं सन्ध्ययोः क्षिपेत्।
सकृदेव तु मध्याह्ने क्षोपणीयं द्विजातिभिः ॥

अर्थात् 'ओंकार सहित गायत्री पढ़कर शिखा बांधे। दोनों हाथों की अंजली में जल ले, गायत्री पढ़ कर प्रातः और सायंकाल सूर्य की तरफ ऊपर को उसे तीन बार फेंके परन्तु मध्याह्न में एकही बार।

गायत्री मंत्र केजप के विषय में प्रतिदिन के लिये लिखा है कि:—

अष्टोत्तरशतं नित्यमष्टाविंशतिरेव वा।
विधिना दशकं वापि त्रिकालेषुजपेद्बुधः। व्यास॥
आरभ्यानामिकामध्यं पर्वाण्युक्तान्यनुक्रमात्।
तर्ज्जनीमूलपर्यन्तं जपेद्दशसु पर्वसु ॥
मध्यमांगुलिमूले तु यत्पर्वद्वितयं भवेत्।
तं वै मेरुं विजानीयाज्जपे तं नातिलंघयेत् ॥गा.क.॥

अर्थात् 'प्रतिदिन १०८,२८ अथवा कम से कम १० बार तीनों काल में जप करे। अनामिका अंगुली के मध्य पर्व (पोर) से आरम्भ कर कम से १० पर्वों पर बराबर जपे। परन्तु मध्यमा अंगुली के जड़के दो पर्वों कों छोड़ देवे, क्योंकि वे अंगुली के मेरु हैं और जप में मेरु का लंघन नहीं किया जाता है'।

गायत्री मंत्र का अर्थ यह है कि:—ॐ=ओंकार स्वरूप वा सर्वव्यापक। भूर्भुवः स्वः=तीनों लोकस्वरूप, या स्वयम्भू, सर्वाधार और आनन्द स्वरूप। तत्=सम्पूर्ण वेदों और शास्त्रों द्वारा प्रतिपादित। वरेण्यं=सब के भजन और प्रार्थना के योग्य। सवितुः=जगत् और प्राणियों के कल्याण को उत्पन्न करने वाले। देवस्य=स्वयं प्रकाश स्वरूप परमात्मा के। भर्गः=ज्योतिः स्वरूप को। धीमहि=हमलोग ध्यान करते हैं। यः=जो ज्योतिः स्वरूप। नः=हमलोगों की। धियः=

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बुद्धियों को। प्रचोदयात्=अपनी ओर, विचार और सत्कर्मों में लगावे। अर्थात् 'सम्पूर्ण जगत के रचने वाले और प्राणियों के कल्याण कर्त्ता स्वयं प्रकाशस्वरूप परमात्मा के उस ज्योतिःस्वरूप का ध्यान हमलोग करते हैं, जो ओंकार स्वरूप, और सर्वरक्षक तीनों लोक स्वरूप, और स्वयम्भू, सर्वाधार, आनन्द स्वरूप सब शास्त्रों द्वारा प्रतिपादित और सभी लोगों की प्रार्थना एवं भजन के योग्य है। वह ज्योतिःस्वरूप हमारी बुद्धियों को अपनी ओर, सत्कर्म और विचार में लगावे।

पुराने यज्ञोपवीत (जनेऊ) के त्यागने का मंत्र यह है:—

एतावद्दिनपर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया।
जीर्णत्वात्त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम्।

इस मंत्र से जनेऊ को सिरकी तरफ से निकाल कर पवित्र स्थान में रख देवे। नवीन यज्ञोपवीत धारण करने के बाद पुराने को निकालना चाहिये। धारण करने का मंत्र यह है:—

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥

इस मंत्र को पढ़कर गृहस्थ को सर्वदा दो जनेऊ और परन्तु ब्रह्मचारी को एक धारण करना चाहिये। जनेऊ के विषय में ऐसा लिखा हुआ है:—

पृष्ठवंशे च नाभ्यां च धृतं यद्विन्दते कटिम्।
तद्धार्यमुपवीतं स्यान्नातिलम्बं नचोच्छ्रितम्॥छं०प०॥
ब्रह्मचारिण एकं स्यात्स्नातस्य द्वे बहूनि वा॥
विना यज्ञोपवीतेन तोयं पिबति यो द्विजः।
उपावासेन चैकेन पंचगव्येन शुद्ध्यति॥
विना यज्ञोपवीतेन विण्मूत्रोत्सर्गकृद्यदि।
उपवासद्वयं कृत्वा दानैर्होमैस्तु शुद्ध्यति॥
सूतके मृतके चैव गते मासचतुष्टये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नव यज्ञोपवीतानि धृत्वा जीर्णानि संत्यजेत्॥संग्रह॥

अर्थ यह है कि 'नाभि और पीठ पर होता हुआ जो यज्ञोपवीत कमर तक पहुँच जावे वही उत्तम और धारण करने योग्य है, उससे छोटा या बड़ा नहीं। ब्रह्मचारी को एक और गृहस्थ को साधारणतः दो जनेऊ पहनने चाहियें। जो द्विज विना जनेऊ के पानी पी लेता है वह एक दिन उपवास करने और पंचगव्य पीने से शुद्ध होजाता है। यदि विना जनेऊ के मल मूत्र का त्याग कर देवे तो दो दिनों के उपवास के बाद दान और होम द्वारा शुद्ध होजाता है। सूतक में, मृतक में और चार मास बीतने पर नये यज्ञोपवीत को पहन कर पुराने को त्याग देना चाहिये'। जनेऊ बनाने के विषय में मदन पारिजात में लिखा है कि पवित्र देश में हाथ के कते पवित्र सूत के ९६ चतुरंगुल (चौआ) का जनेऊ बनावे। चतुरंगुल (चौआ) चारों अंगुलियों को सटाकर उनकी जड़में बनाना चाहिये और दस वार गायत्री को पढ़कर जलसे जनेऊ का अभिमंत्रण करना चाहिये। प्रवरग्रंथि भी रहे।

स्नान कालमें प्रतिदिन नीचे लिखे मंत्रोंसे तर्पण करना चहिये। देव तर्पण में जनेऊ सीधा ही रहे, पितृ तर्पण में बाएं कन्धे पर और ऋषि तर्पण में गले में लटकना चाहिये, और देवतर्पण में प्रत्येक मंत्र से एक एक अंजली, ऋषि तर्पण में दो दो और पितृतर्पण में तीन तीन देनी चाहिये।

देव तर्प्पण–ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम्। ओं भूर्देवास्तृप्यन्ताम्। ओं भुवर्देवास्तृप्यन्ताम्। ओं स्वर्देवास्तृप्यन्ताम्। ओं भूर्भुवःस्वर्देवास्तृप्यन्ताम्॥ ऋषितर्पण–ओं सनकादिद्वैपायनादयोऋषयस्तृप्यन्ताम्। ओं भूर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्। ओं भुवर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्। ओंस्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्। ओंभूर्भुवः स्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्॥ पितृ तर्पण–ओंकव्यवाहनलादयःपितरस्तृप्यन्ताम्। भूः पितरस्तृप्यन्ताम्। ओं भुवःपितरस्तृप्यन्ताम्। ओंस्वः पितरस्तृप्यन्ताम्। ओंभूर्भुवः स्वःपितस्तृप्यन्ताम्॥

इसके बाद आचमन कर, जनेऊ को सीधा करके 'यक्ष्म' तर्पण करे, अर्थात् नीचे लिखे मंत्र से जलके किनारे एक अंजली देवे। मन्त्र–

यन्मया दूषितं तोयं शरीरमलसम्भवात्।
तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं यक्ष्मैतत्ते तिलोदकम्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद अपनी दक्षिण ओर तृण अथवा लता आदि में शिखा के जल को निचोड़ देवे। मंत्र यह है:-

लतागुल्मेषु वृक्षेषु पितरो ये व्यवस्थिताः।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मयोत्सृष्टैः शिखोदकैः॥

ब्राह्मण को भोजन काल में संक्षेपतः यह विधि करनी चाहिये:-

जल अथवा भस्म से चौकोना मण्डल [ ] बना कर उसके ऊपर अन्नका पात्र रक्खे और 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' इस मंत्र से हाथ में जल लेकर दाहिनी तरफ से थाली के चारों ओर गिरावे। इसे पंक्ति वारण कहते हैं। पुनः हाथ जोड़ कर अन्न की स्तुति करे। उसका मंत्र यह है:-'ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च'। इस के बाद हाथ में जललेकर दिनमें 'सत्यन्त्वर्त्तेनपरिषिञ्चामि' इस मंत्र से, और रात में 'ऋतं त्वा सत्येन परिषिञ्चामि' इस मंत्र से उस जल को अन्न पर छिड़क कर हाथ से अन्न का स्पर्श करे। उसका मंत्र यह है, 'तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि। प्रियं देवानामनाधृष्टं देव यजनमसि'। फिर इन तीन मंत्रों को पढ़कर थाली से उत्तर एक से उत्तर दूसरी और उससे उत्तर तीसरी इस प्रकार तीन बलि देवे। मंत्र ये हैं:—'ओं भूपतये स्वाहा नमः। ओं भुवनपतये स्वाहानमः। ओं भूतानां पतये स्वाहा नमः। बादको बायें हाथ में जल लेकर 'ओं अमृतोपस्तरणमसि' इस मंत्र से उसे पीजावे। और फिर जरा जरा अन्न लेकर पांच प्राणाहुति करे, अर्थात् नीचे के मंत्रों को पढ़ पढ़ कर पांच बार मुख में डाले। मंत्र ये हैं:— 'ओं प्राणाय स्वाहा। ओं अपानाय स्वाहा। ओं व्यानाय स्वाहा। ओं समानाय स्वाहा। ओं उदानाय स्वाहा'। फिर बाएं हाथ में जल लेकर दोनों नेत्रों में लगावे। पंक्तिवारण, प्राणाहुति और नेत्र में जल लगाना, ये तीन काम तो भोजन काल में अवश्य करके फिर भोजन करे। याद रहे कि प्राणाहुति पर्यंत जितनी बलि वगैरः दी जाती है वह केवल घृत से या मीठा से मिश्रित अन्न या केवल अन्न की होवे न कि उस में नमक का सम्बन्ध हो। इस के अनन्तर विष्णु के स्मरणपूर्वक बाएं हाथ से शिखा को खोलकर चुपचाप भोजन करे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भोजन के बाद उच्छिष्ट अन्न में से बैरके फल भरकी चित्राहुति पात्र की बाईं ओर देवे। फिर दाहिने हाथ में जल लेकर 'ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा' यह मंत्र पढ़कर उसकाआधा पीकर शेष उसी 'चित्राहुति' पर गिरा देवे। फिर चुपचाप बाएं हाथसेशिखाबांध,उस चित्राहुति आदि को काकों को देकर हाथ, मुंह आदि धोडाले और एक आचमन करके,

अगस्त्यं वैनतेयं च शनिं च वडवानलम्।
अन्नस्य परिणामार्थं स्मरेद्भीमं च पंचमम्॥

इस मंत्र को पढ़ता हुआ पेटपर हाथ फेरे। इति भोजन विधिः।

इति श्री ब्रह्मर्षि वंश विस्तरे पूर्व परिशिष्टम्॥

॥ श्रीः ॥

ब्रह्मर्षि वंश विस्तर।

उत्तर परिशिष्ट।

१-वाटधान।

इस ग्रन्थ के ५३ आदि पृष्ठों में प्रसंग वश जिन वाटधान ब्राह्मणों का उल्लेख हुआ है उनके सम्बन्ध में लोगों के दिलों में जो एकाध शंकायें हुआ करती हैं उन्हें दूर करदेना जरूरी है। यद्यपि उन ब्राह्मणों से हमें कोई विशेष तात्पर्य नहीं है और न हमारे या किसी और के ही पास कोई ऐसा सबूत है कि उन्हीं के वंशज महियाल, तगे या भूमिहार आदि हैं और न हमने ऐसा स्पष्टरूप से कहीं लिखा ही है। तथापि न्यायके नाते ही हमें ऐसा करना पड़ता है। न जाने क्यों कुछ दिनों से साधारणतः लोगों की यह धारणा हो चली थी कि राज्य, युद्ध या कृषि आदि ब्राह्मणों के धर्म नहीं हैं। फलतः इसी भ्रान्त-धारणा के आधार पर कितने अनर्थ हो गये हैं जिनका दिग्दर्शन और इस धारणा का निराकरण ग्रन्थ में किया जा चुका है, अस्तु। इसी धारणा से लोगों का यह कहना है कि यदि वाटधान ब्राह्मण शुद्ध ब्राह्मण होते तो एक तो पाण्डव उनके साथ युद्ध कर उन्हें परास्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न करते। दूसरे वे लोग नजर देने के समय दरवाजे परही रोक न दिये जाते। भीतर यज्ञ शाला में अवश्य जाने पाते। मगर वे रोके गये यह तो 'द्वारि तिष्ठन्ति वारिताः, प्रवेशं लेभिरे न च–वे दरवाजे पर ही रोक दिये गये, भीतर न जाने पाये,' से स्पष्ट ही है। इसलिये मानना होगा कि वे शुद्ध नहीं, किन्तु व्रात्य वा पतित ब्राह्मण थे, जैसा कि उन्हीं श्लोकों की टीका में नीलकंठने भी अपने भारतभावप्रदीप में लिख दिया है कि 'वारिता इत्येन तेषामत्यन्तहीनता दर्शिता—द्वार पर रोके जाने से उनकी अत्यन्त नीचता सूचित होती है'। इसलिये वे वही ब्राह्मण थे जिन के बारे में मनु ने १० वें अध्याय में लिखा है कि—

व्रात्यात्तु जायते विप्रात्पापात्मा भूर्जकण्टकः।
आवन्त्यवाटधानौ च पुष्पधः शैख एव च ॥२१॥

'यथा समय उपनयनादि संस्कार रहित जो पतित वा व्रात्य ब्राह्मण हो उसके ही वंशज भूर्जकण्टक, आवन्त्य, वाटधान, पुष्पध्र और शैख कहाते हैं'।

यद्यपि इस शंका का विचार करके ही ग्रन्थ के उसी प्रसंग के ५४ वें पृष्ठ में टिप्पणी दे दी गई है कि विचारवान उनके रोके जाने का असली कारण समझकर शान्त हो जावेंगे। मगर जिन्हें उतनी भी बुद्धि नहीं है और जिन्होंने महाभारतादि ग्रन्थ पढ़े भी नहीं हैं, उनके लिये उस विचार का स्पष्टीकरण किया जाता है। पहली शंका जो युद्ध के बारे में है उसका उत्तर तो यही है कि वे आततायी थे और आततायी के साथ युद्ध करने या उसे मारने में कोई दोष नहीं है, चाहे वह कोई भी हो। अतएव मनु ने (८–३५०, ३५१) लिखा है कि—

गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।
आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् ॥
नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन ॥

'गुरु, बालक, वृद्ध अथवा सर्व वेदशास्त्रज्ञ ब्राह्मण आततायी के चढ़ आने पर विना विचारे ही उसे मार डाले। इससे मारने वाले को कोई दोष नहीं होता'। अब रही आततायी की बात। उसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वरूप वसिष्ठ स्मृति (३-१६) में यों है—

अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः ।
क्षेत्रदारापहर्त्ता च षडेते ह्याततायिनः ॥

'घर जलाने वाला, विष देने वाला, हाथ में हथियार लेकर चढ़ आने वाला, धन हरने वाला और जमीन और स्त्री को लूटने वाला, ये छ आततायी कहाते हैं'। इस प्रकार वाटधान ब्राह्मण और द्रोण, कृपाचार्य और अश्वत्थामा वगैरः भी आततायी श्रेणी में आगये। इसीसे धर्मप्राण युधिष्ठिर ने उन सभी के साथ युद्ध किया। यहां तक कि उन्हें मार भी डाला। इसीलिये अपने विद्यागुरु परशुरामजी के साथ २१ दिनों तक भीष्म ने युद्ध कर उनके दांत खट्टे करदिये और बड़े परिश्रम से किसी प्रकार युद्ध से हटाये जासके। उन्होंने उद्योग पर्व (१७९-२४) में स्पष्ट कह दिया है कि—

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः ।
उत्पथंप्रतिपन्नस्य न्याय्यं भवति शासनम् ॥

'यदि गुरु भी घमंड में चूर हो, विपरीतमार्ग पर चले और कार्य, अकार्य का विचार न करे तो उसका दण्ड करना चाहिये और उसे छोड़ देना चाहिये।'

अब रही द्वार पर रोके जाने की बात। असल में यज्ञ का पूरा ब्योरा न जानने और वहां के पूर्वापर ग्रन्थ के न देखने से ही अथवा उसकी विस्मृति से ही लोगों को भ्रम हो गया है। युधिष्ठिर के यज्ञ के नजरों का वर्णन सभापर्व में हीं है और वहां कहीं कहीं लिखा है कि 'व्यपागच्छन्युधिष्ठिरम्'—लोग नजर लेकर युधिष्ठिर के पास गये'। मगर इसका आशय यह कदापि नहीं है कि नजरें युधिष्ठिर के हाथ दी जाती थीं। वह तो यजमान की दीक्षा ग्रहण कर यज्ञक्रिया में प्रवृत्त थे। उसका आशय सिर्फ यही है कि सभी नजरें युधिष्ठिर के ही लिये थीं। उस समय काम बांट दिया गया था, जिसमें दुर्योधन के जिम्मे सिर्फ नजर (भेंट) लेने का काम था। जैसाकि ३५ वें अध्याय में लिखा है—

एवमुक्त्वा स तान्सर्वान्दीक्षितः पाण्डवाग्रजः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युयोज स यथायोगमधिकारेष्वनन्तरम् ॥४॥
भक्ष्यभोज्याधिकारेषु दुःशासनमयोजयत् ।
परिग्रहे ब्राह्मणानामश्वत्थामानमुक्तवान् ॥५॥
दुर्योधनस्त्वर्हणानि प्रतिजग्राह सर्वशः ॥८॥

'दीक्षा के बाद युधिष्ठिर ने लोगों को यथा योग्य कामों में पृथक् पृथक् नियुक्त कर दिया। इसके अनुसार दुःशासन भोजन के अधिकार पर नियुक्त हुआ, अश्वत्थामा ब्राह्मणों के उठाने बिठाने में और दुर्योधन सभी प्रकार की–सर्वशः–नजरों के लेने में'। इसी से दुर्योधन को पीछे ताप भी हुआ था; कारण, वह धन उसे असह्य होगया। इसी दुःखको उसने ४६, ५० अध्यायों में कुछ प्रसिद्ध प्रसिद्ध नजरों का वर्णन करते हुए बताया है, जिनमें उल्लेख योग्य काम्बोज देश के राजा, वाटधान देशीय ब्राह्मणों और समुद्र तथा सोम की अत्यन्त प्रसिद्ध और अभिषेकोपयोगी घृत, मधु, दधि आदि वस्तुएं ४६ वें अध्याय के १८—२६ श्लोकों में लिखी हैं। अनन्तर विशेषतः लोगों की भीड़ और शंखादि के शब्दों का वर्णन करते हुए सामान्यतः धनकी बहुलता कही गई है और दुर्योधन ने कहा है कि मुझे चैन नहीं है, मेरे हृदय में आग लगी है—'शान्तिं न परिगच्छामि दह्यमानेन चेतसा'। फिर बदला लेने के लिये शकुनी के द्यूतवाली युक्ति बतलाने पर यह बात धृतराष्ट्र से कही गई है। धृतराष्ट्र और विदुर दोनों ने रोका है कि ऐसा न करो। मगर अन्त में धृतराष्ट्र के भी ढल जाने पर विदुर रंज होकर भीष्म के पास चले गये हैं। इसके बाद ५० वें अध्याय में विदुर की बात को विचार कर फिर धृतराष्ट्रने दुर्योधनको रोका और दुःखका वास्तविक कारण पूछा है। पर, दुर्योधन ने हठकर अपना दुखड़ा सुनाना शुरू किया है। और साधारणतया धनाधिक्य दिखलाकर कहा है कि मेरे जीने को धिक्कार है। क्यों कि धनका असह्य दुःख तो थाही, सभामें मेरी हँसी भी कीगई। यदि उसपर कुछ बोलता तो मारा जाता। 'वहां तो इतना धन नजर के रूपमें आया था कि उन अमूल्य रत्नों का आर पार ही न था। मुझे ज्येष्ठ भ्राता समझ मेरे सत्कारार्थ युधिष्ठिर ने मुझे ही उन नजरों के लेने को नियत किया था। पर, वह धन इतना अधिक था और उसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देख मुझे इतनी खिन्नता होगई थी कि मेरा हाथ चलता ही न था। इससे दूरदूर से आये हुए नजर देने वालों को द्वार पर ही खड़े रह कर प्रतीक्षा करनी पड़ती थी'—

जेष्ठोऽयमिति मां मत्वा श्रेष्ठश्चेतिविशांपते।
युधिष्ठिरेण सत्कृत्य युक्तो रत्नपरिग्रहे ॥ २२ ॥
उपस्थितानां रत्नानां श्रेष्ठानामर्घहारिणाम्।
नादृश्यत परः पारो नापरस्तत्र भारत ॥ २४ ॥
मम हस्तः समभवद्बहुसुतत्प्रतिगृह्णतः।
अतिष्ठन्त मयि श्रान्ते गृह्य दूराहृतं वसु ॥२५॥

फिर ५१ वें अध्याय में अपने देखे मुख्य मुख्य धनों के नाम सुनाने लगा है—

यन्मया पाण्डवेयानां दृष्टं तच्छृणु भारत।
आहृतं भूमिपालैर्हि वसुमुख्यं ततस्ततः ॥ १ ॥
नाविदं मूढमात्मानं दृष्ट्वाहं तदरेर्धनम्।
फलतो भूमितो वापि प्रतिपद्यस्व भारत ॥ २ ॥

यह वर्णन पूरे ५१ वें और ५२ वें के ४० श्लोकों में पूरा हुआ है। इसी वर्णन प्रसंग में नजर दाताओं के द्वारपरही रोके जाने के कारण की बात भी कही गई है। बात यह है कि जब दुर्योधन बड़ी बड़ी कीमती नजरें लेते लेते कुछ तो परिश्रम और कुछ भीतरी जलन से थक गया और फलतः उसका हाथ रुकगया तो नजर वाले गृह के द्वार पर बड़ी भीड़ होगई और लोगों ने द्वारपालों को दिक करना और यह पूछना शुरू कर दिया कि हमलोग कब तक यहीं बाहरही खड़े रहेंगे, भीतर जाने क्यों नहीं देते हो ? तो उन्होंने सब को सुना दिया कि अपनी अपनी पारी आने पर बाहरही नजरें देकर आप लोग भीतर जाने पावेंगे, यह महाराज युधिष्ठिर की आज्ञा है'—

तत्रस्था द्वारपालैस्ते प्रोच्यन्ते राजशासनात्।
कृतकालाः सुवलयस्ततो द्वारमवाप्स्यथ ॥१८॥

इस श्लोक के 'कृतकालाः' पदका अर्थ नीलकण्ठ ने भी 'पारी-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आने पर ' ही किया है—' कृतकालाः कृतप्रस्तावाः' । बस, इसी ५१, ५२ अध्याय के बलिके लगातार वर्णन प्रसंग में वाटधान देशीय ब्राह्मणों के भी नजरों का वर्णन आया है, जो ५१ वें के ५-७ श्लोकों में है। इससे स्पष्ट है कि द्वारपालों ने जो पारी पारी से दे कर भीतर जाने को कहा है वह सभी के लिये है, न कि केवल किरात, दरद, काश्मीर आदि के निवासियों के ही लिये है। कारण, प्रसंग और सिलसिला एकही हैं और उसी सिलसिले में सभी आये हैं। हां ४६ वें अध्याय के प्रासंगिक वर्णन का यदि इस सिलसिले से कोई सम्बन्ध न हो तो कोई बात भी नहीं है। मगर वही बात फिर ५१, ५२ में कही गई है। जब कि ५० वें अध्याय के २४ वें श्लोक में दुर्योधन ने साफ साफ कह दिया है कि मेरे हाथ रुक जाने से लोगों को ठहरकर इन्तजार करना पड़ता था और वहां पर नीलकंठने भी इसे स्वीकार किया है कि:— 'समभवत् समर्थो नाभवत्, अतिष्ठन्त प्रतीक्षां कृतवन्तो वसुन आहर्त्तारो वसु दातुम्' । तो फिर समझ में नहीं आता कि उन वाटधान ब्राह्मणों के ही द्वारपर रोके जाने का नीलकंठने भी दूसरा अभिप्राय क्यों निकाला, न कि औरों के रोके जाने का भी ? ' द्वारि तिष्ठन्ति वारिताः, प्रवेशं लेभिरे नच,' ये अथवा एतदर्थक दूसरे शब्द पूर्वोक्त दो अध्यायों के लगभग ६,७,१३,१५,१८,२४,२६,३१, तथा ७,१२,३५, ३७ श्लोकों में १२ बार आये हैं और कईबार ' बलिं च कृत्स्नमादाय द्वारि तिष्ठन्ति वारिताः' यह आधा श्लोकही आया है। शल्य भगदत्त और पूर्व देशीय सभी राजाओं के लिये भी यही शब्द आये हैं। चोल और पाण्ड्य देशीय राजाओं के लिये भी लिखा गया है कि उन्हें प्रवेश न मिला—'चोलपांड्यावपिद्वारं न लेभाते ह्युपस्थितौ ।' फिर रोके ही जाने से और लोग हीन न होकर केवल वाटधान देशीय ब्राह्मण हीं क्यों हीन समझे जाँय ? और नीलकंठ की इस अकांड तांडव कल्पनामें प्रमाणहीं क्या ? किसी किसी का यह भ्रम कि उनकी नजरें भी कबूल न हुईं, निर्मूल है। क्योंकि वे लोग सोनेके कमण्डलु वगैरः लाये थे और वे घृतपूर्णभी थे, जैसा कि 'कमण्डलूनुपादाय जातरूपमयान्शुभान्' श्लोक और उसकी नीलकण्ठीटीका 'कमण्डलूनिति घृत पूर्णानिति द्रष्टव्यम् ' से स्पष्ट है और वह है अभिषेक सामग्री जिसके लाने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाले सिर्फ वाटधान ब्राह्मण हीं थे, जैसा कि नीलकंठने स्वयं माना है। फिर उस का इनकार कैसे किया जा सकता था? यह कहना तो निरी मूर्खता है।

उक्त श्लोक के 'दासनीयाः' शब्द को देखकर किसी किसीका यह अनुमान है कि वे ब्राह्मण हीं दास योग्य थे। इसीलिये नीच माने गये। मगर यह भी भ्रमहीं है। 'दासनीयाश्च' में जो उस शब्द के साथ 'च' है जिसका अर्थ 'और' है, उससे स्पष्ट है कि उन ब्राह्मणों के सिवाय दास योग्य शूद्रादि भी उनके साथ थे, जो नजरों को साथ में ढोकर लाये थे। इसे नीलकण्ठ भी मानते हैं। एक बात और है। वहां पाठ भेद है। वह शब्द तीन ढंगका मिलता है, दासनीयाः, दाशनीयाः और दर्शनीयाः। इन में 'दर्शनीय' पाठ में तो दर्शन योग्य, यह अर्थ सुगम हीं है। मगर दासनीय या दाशनीयका अर्थ दास योग्य न होकर 'बड़े बड़े दाता' यही अधिक उचित है। जैसे प्रवचनीय, मोहनीय, कोपनीय आदि शब्दों के अर्थ 'प्रवचनकर्त्ता या पढ़ाने वाला' इत्यादि होते हैं, जैसा कि न्याय दर्शन के वात्स्यायन भाष्य के चतुर्थाध्याय के प्रथमाह्निकके ६ ठें सूत्रके भाष्यकी तात्पर्यटीका में श्री वाचस्पति मिश्र ने लिखा है। उसी प्रकार 'दाशृ या दाषृ' दाने धातुसे 'अनीयर्' प्रत्यय कर्त्तामें करके 'बड़े बड़े दाता' यही अर्थ ठीक होगा।

एक शंका लोगों को और भी होती है। लोगों का कहना है कि वाटधान, वाह्लीक, गांधार आदि देशों में ब्राह्मण रहते ही नहीं। इस का कुछ उत्तर तो ग्रन्थ में हीं दिया जा चुका है। भरतको नानिहाल से लाने के लिये दूतों के जाने के प्रसंग में अयोध्याकाण्ड में वाल्मीकि जी लिखते हैं 'दूतलोग बाल्हीक देश के वेद पारंगत और अंजली से जलपीने वाले ब्राह्मणों को देखते हुए उस देश के बीच मार्ग से सुदामा पर्वत को गये'—

अवेक्ष्यांजलिपानांश्चब्राह्मणान्वेदपारगान्।
ययुर्मध्येनबाल्हीकान्सुदामानंच पर्वतम् ॥१८।६८॥

कर्ण पर्व के ४२, ४३ प्रभृति अध्यायों में कर्ण और शल्य का परस्पर वाद विवाद और हंसी मजाक आया है और परस्पर एक दूसरे को और उसके देशवासियों को भी नीच बनाने का यत्न किया गया है। वहां गान्धार आदि अनेक देशोंका नाम आया है। अन्त में शल्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने डपट कर कहा है कि—

सर्वत्र ब्राह्मणाः सन्ति सन्ति सर्वत्र क्षत्रियाः।
वैश्याः शूद्रास्तथा कर्ण स्त्रियःसाध्व्यश्च सुव्रताः ॥४२॥
रमन्ते चावहासेन पुरुषाः पुरुषैः सह।
अन्योन्यमवरक्षन्तो देशे देशे समैथुनाः ॥ ४३ ॥
परवाच्येषु निपुणः सर्वो भवति सर्वदा।
आत्मवाच्यं न जानीते जानन्नपि च मुह्यति ॥ ४४ ॥
सर्वत्र सन्ति राजानः स्वं स्वं धर्ममनुव्रताः।
दुर्मनुष्यान्निगृह्णन्ति सन्ति सर्वत्र धार्मिकाः ॥ ४५ ॥
न कर्ण देशसामान्यात्सर्वः पापं निषेवते।
यादृशाः स्वस्वभावेन देवा अपि न तादृशाः ॥ ४६।४५ ॥

'हे कर्ण सभी देशों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा सती स्त्रियां रहा करती हैं। सर्वत्रही पुरुष लोग मैथुन करने वाले और पुरुषों के साथ हंसी करने वाले होते हैं। सभी दूसरों के दोष देखने में निपुण होते हैं। पर अपना दोष नहीं देखते अथवा देखकर भी भूल जाते हैं। सभी देशोंमें धर्मात्मा पुरुष एवं स्वधर्म पालक राजे रहा करते हैं जो दुष्टों का निग्रह करते हैं। ऐसा कोई भी देश नहीं जहां सबके सब पापी ही हों। सभी जगह ऐसे बहुतसे पुरुष होते हैं जैसे देवता भी नहीं होते'। इसी प्रसंग में यह भी लिखा है कि 'उत्तर दिशाके देशों की रक्षा ब्राह्मणों के सहित भगवान चन्द्रमा करते हैं-उदीचीं भगवान्सोमो ब्राह्मणैः सहरक्षति'। 'उदीची' का अर्थ 'उत्तर के देश' ही है, न कि उत्तर दिशा। क्योंकि देशों और वहां के निवासियों का ही प्रसंग है।

एक बात और भी है। यदि गान्धार, मद्र, केकय आदि देशों में जो पश्चिम पञ्जाब में हैं और थे ब्राह्मण न रहते तो पाण्डु, धृतराष्ट्र और दशरथ के विवाह कैसे होते? क्या ये सब संस्कार विना आचार्य, पुरोहित आदि के ही वहां के क्षत्रियादि के घर हो जाते थे? केकय देशसे भरत के मामा युधाजित् ने अपने गुरु ब्रह्मर्षि अंगिरा के पुत्र को रामचन्द्र के पास कैसे भेजा था? जैसा कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाल्मीकिरामायण (उ० कां० अ० १०) में लिखा है कि:—

कस्यचित्त्वथ कालस्य युधाजित्केकयोनृपः।
स्वगुरुं प्रेषयामास राघवायमहात्मने ॥ १ ॥
गार्ग्यमंगिरसः पुत्रं ब्रह्मर्षिममितौजसम् ॥ २ ॥

'कुछ दिनों बाद केकय देशके राजा युधाजित् ने अंगिरा के पुत्र, गार्गगोत्री ब्रह्मर्षि और परम प्रतापी अपने गुरुको अयोध्या भेजा'। सबसे बड़ी बात यह है कि उन देशों में सारस्वत और काश्मीरी आदि ब्राह्मण आज भी पाये ही जाते हैं।

एकबात यह भी ध्यान देने की है कि यदि वे वाटधान ब्राह्मण व्रात्य वा व्रात्यों के वंशज होते तो फिर उन्हें तो किसी भी श्रौतस्मार्त्त कर्मका अधिकार न होता, जैसा कि पूर्व परिशिष्ट में दिखलाया जा चुका है। मगर वे लोग नीलकण्ठ के अनुसार ही त्रिकर्मा थे। यह बात तो ग्रन्थ में हीं सिद्ध कीगई है। इसीलिये वाटधान का अर्थ नीलकंठ स्वयमेव करते हैं कि 'वाटधान शब्द में व्यधिकरण बहुव्रीहि समास है और वाट शब्द का अर्थ क्षेत्र रक्षा के लिये बनी खाई या वृत्ति और 'धाना' का अर्थ है नई बनी हुई। यह बात विश्वकोष में लिखी है। तदनुसार जिन देशों या देशवासी ब्राह्मणों के पास अन्न वाले खेतों के रक्षार्थ नई नई खाइयां बनी थीं वही वाटधान कहलाये—वाटाः क्षेत्रादि वृत्तयस्तासां धाना अभिनवोद्भेदो येषामितिव्यधिकरणोबहुव्रीहिः, सस्यादिसम्पन्नक्षेत्रादि वृत्तिमन्त इत्यर्थः। वाटो वृत्तौ च मार्गेचेति, धाना भृष्टयवे प्रोक्ता धान्याकेऽभिनवोद्भिदीतिविश्वः'। इससे सिद्ध है कि वाटधान देश के रहने के कारण हीं वे ब्राह्मण वाटधान कहेगये और वे पवित्र एवं कुलीन ब्राह्मण थे, नकि पतितों के वंशज। वे तो कोई दूसरे ही होंगे जिनका पता लगाना वैसाही कठिन है जैसा भूर्जकण्टक, पुष्पध आदिका।

२ धर्मारण्य और वाडव।

जिस धर्मारण्य का विशेष जिक्र ग्रन्थ में आया है और जो सीतापुर से कानपुर तक बताया गया है उसके विषय में भी लोगों में बहुत सी भ्रान्त धारणायें हैं, जिनका निराकरण आवश्यक है। यह भ्रम भी लोगों को प्रायः इसीसे हो जाता है कि प्राचीन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्रंथों में कई धर्मारण्यों का वर्णन है। परंतु "अंधों के हाथी" की तरह जिसने जहां जो देखलिया उसी को मानकर शंका करने लगा कि आपने गलत लिखा है। यदि सभी ग्रन्थों के परिशीलनका सौभाग्य लोगों को मिले तो यह शंका ही न हो। जैसे भृगु, गौतमादि ऋषियों के नामसे बहुत से स्थान प्रसिद्ध हैं और वह सिर्फ इसलिये कि विभिन्न काल में विभिन्न स्थानों पर वे लोग रहे या वहां तप आदि किया। ठीक इसीतरह धर्मने विभिन्न समय में जिनजिन स्थानों में तप या निवास किया अथवा जो स्थान धर्मप्रधान थे वही धर्मारण्य कहलाये। इस प्रकार अभीतक हमारे जानते तीन स्थान धर्मारण्य के नाम से प्राचीन ग्रन्थों में विख्यात हैं, जिनमें से दोमें तो धर्मके यज्ञ और तप करने का भी वर्णन मिला है। एक गया क्षेत्र, दूसरा बरेली, सीतापुर वगैरः का प्रदेश जिसे नैमिषारण्य भी कहते हैं और तीसरा पुष्कर क्षेत्रसे दक्षिण-पश्चिम सिद्धपुरके निकट मोढ़ेरा के इर्द गिर्द। इन तीनों का पता महाभारत के वनपर्व के तीर्थ यात्रा प्रकरण, पद्मपुराण के स्वर्ग खंडके तीर्थनिरूपणप्रकरण, स्कन्दपुराणके धर्मारण्य प्रकरण और वायुपुराण के गयामाहात्म्य से चलता है। वनपर्व में अजमेर (पुष्कर) से पृथिवीकी दक्षिणावर्त्त परिक्रमा करने में उस के बादही ८२ वें अध्याय में लिखा है कि—

कण्वाश्रमं ततो गच्छेच्छ्रीजुष्टं लोकपूजितम्।
धर्मारण्यं हि तत्पुण्यमाद्यंच भरतर्षभ ॥ ४५ ॥

'हे युधिष्ठिर पुष्करके बाद कण्वाश्रममें जाना चाहिये जहां लक्ष्मी रहती है और जो लोकपूजित है। वह सबसे प्रथमका और पवित्र धर्मारण्य है'। फिर ८४ वें अध्याय में लिखा है कि:—

ततो गयां समासाद्य ब्रह्मचारी समाहितः।
अश्वमेधमवाप्नोति कुलं चैव समुद्धरेत् ॥ ८२ ॥
ततो ब्रह्मसरो गत्वा धर्मारण्योपशोभितम् ॥ ८५ ॥

'उसके बाद ब्रह्मचर्य पूर्वक मनको एकाग्र करके गया जानेसे अश्वमेध का फल और कुलका उद्धार होता है। फिर (गया में हीं) ब्रह्मसर में जाना चाहिये जो धर्मारण्य से शोभित है'। यही बात पद्मपुराण के स्वर्गखंड में भी है। स्कन्दपुराण में तो ब्रह्मखंड का एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भागही धर्मारण्य है जिसमें धर्म के तप आदिका सविस्तर वर्णन है। जिससे बरेली, सीतापुर वगैरः का प्रदेश या वर्त्तमान नैमिषारण्य ही कुछ विस्तृत रूप में धर्मारण्य सिद्ध होता है। जैसा कि उसके २५ वें अध्याय में लिखा है—

सू० उ०-अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि तीर्थमाहात्म्यमुत्तमम् ।
धर्मारण्ये यथानीता सत्यलोकात्सरस्वती ॥१॥
भगवन्नैमिषारण्ये सत्रे द्वादशवार्षिके ।
त्वयावतारिता ब्रह्मन्नदी या ब्रह्मणः सुता ॥६॥
मा०-धर्मारण्ये मया विप्राः सत्यलोकात्सरस्वती ।
समानीता सुरेखाद्रौ शरण्या शरणार्थिनाम् ॥ १० ॥

'सूत ने कहा कि हम धर्मारण्यका दूसरा माहात्म्य सुनाते हैं कि जैसे ब्रह्मलोक से वहां सरस्वती लाई गई । मुनियों ने मार्कण्डेय से प्रश्न किया कि आपने नैमिषारण्य में सरस्वती कैसे लाई ? उन्होंने उत्तर दिया कि शरणेच्छुओं को शरण देनेवाली सरस्वती पहले मैंने सुरेखपर्वत पर लाकर फिर धर्मारण्य में लाई।' इससे धर्मारण्यमें सरस्वती का लाया जाना सिद्ध है और शल्यपर्व से पता लगता है कि सरस्वती की सातधाराओं में एक नैमिषारण्य में थी। इससे नैमिषारण्य और धर्मारण्य एक ही सिद्ध होते हैं और पूर्व के श्लोकों से भी। आगे चल कर धर्मारण्य में यज्ञ करने केलिये श्रीरामचन्द्रजी की यात्रा का वर्णन करते हुए ३१ वें अध्याय में लिखा है कि अयोध्या से प्रथम थोड़ा उत्तर और फिर पश्चिम जाकर १० वें दिन धर्मारण्य में पहुंचे। जैसा कि—

वसिष्ठं चाग्रतः कृत्वा महासारबलिकैर्नृपैः ।
पुनश्चरविधिं कृत्वा प्रस्थितश्चोत्तरां दिशम् ॥ ५२ ॥
वसिष्ठं चाग्रतः कृत्वा प्रतस्थे पश्चिमां दिशम् ।
ग्रामाद्ग्राममतिक्रम्य देशाद्देशं वनाद्वनम् ॥ ५३ ॥
दशमेऽहनि सम्प्राप्तं धर्मारण्यमनुत्तमम् ॥ ५४ ॥

पहले जमाने में अयोध्या से ८-१० दिनों का पैदल रास्ता, सो भी कर चाकर और दल बादल के साथ और उत्तर पश्चिम दिशा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में, वही बरेली, सीतापुर का प्रदेशही हो सकता है। वहां यह भी लिखा है कि यज्ञ के बाद श्रीरामजी ने सीताजी के नाम से सीतापुर बसाया है। अब भी सीतापुर में सीताजी की मूर्त्ति मौजूद है। वाल्मीकि रामायण के उत्तर कांड के ९१-९२ सर्गों में श्रीरामजी का नैमिषारण्य में हीं अश्वमेध करना यों लिखा है—

यज्ञवाटश्च सुमहान्गोमत्या नैमिषे वने ॥ १५ ॥
अनुभूय महायज्ञं नैमिषे रघुनन्दनः ॥ १७ ॥
ऋत्विग्भिर्लक्ष्मणं सार्द्धमश्वेच विनियुज्य च।
ततोऽभ्यगच्छत्काकुत्स्थः सहसैन्येन नैमिषम् ॥२॥

'श्री रघुनन्दन ने इस बात की आवश्यकता अनुभव की कि अश्वमेध महायज्ञ गोमती वाले नैमिषारण्य में हीं होना चाहिये और वहीं महती यज्ञशाला बननी चाहिये। ऋत्विजों के साथ लक्ष्मण को यज्ञ के अश्वकी रक्षा में नियुक्त कर सेना के साथ श्रीरामजी नैमिषारण्य को गये'। इससे निर्विवाद सिद्ध है कि नैमिषारण्य का ही कुछ विस्तृत रूप धर्मारण्य है। सिद्धपुरके निकट और गया के धर्मारण्य न तो अयोध्या के ८-१० दिन के पैदल रास्ते पर हैं, न उत्तर-पश्चिम हैं, न वहां गोमती ही है और न उन्हें नैमिषारण्य कहते ही हैं। पर, यहां एक बात ध्यान रखने की है कि सीतापुर से कानपुर तक विस्तृत रहने पर भी धर्मारण्यतीर्थ, जिसका विशेष माहात्म्य है, उतना विस्तृत न था। किन्तु वह तो संकुचित ही रहा होगा। जैसा कि काशी की बृहत् और लघु पंचक्रोशी ८४ और २५ की होने पर भी उसका विशेष माहात्म्य वरुणा और अस्सी के बीच में हीं है। इसीलिये वहां के ब्राह्मणों के बालकों का धर्मारण्य तीर्थ या क्षेत्र के निकट गायें चराने का वर्णन आया है न कि समूचे धर्मारण्य से बाहर। उसी धर्मारण्य में प्रथम ब्रह्मा, विष्णु और महेश द्वारा जिन १८००० ब्राह्मणों की स्थापना हुई थी, उन्हीं को अश्वमेध यज्ञ के अनन्तर रामचन्द्रजी ने उस धर्मारण्य का राज्य ताम्रपत्र लिख कर दिया। वे ब्राह्मण चुन चुन कर वहां त्रिदेवों द्वारा अनेक देशों से लाये गये थे और साक्षात् ऋषि थे। हमने ग्रन्थ में यह दिखलाया है कि इन्हीं पवित्रात्मा ब्रह्मर्षियों के वंश में वर्त्तमान जमीदार, भूमिहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदि ब्राह्मण हैं, जिनका विस्तार (विस्तर) बहुत दूर तक हुआ है। इसीसे ग्रन्थ का नाम भी ब्रह्मर्षि वंश विस्तर है। मगर इसका यह अभिप्राय नहीं है कि सिर्फ धर्मारण्य के ब्राह्मण ऋषियों (ब्रह्मर्षियों) के ही वंशज आजकल के अयाचक और याचक, त्यागी, महियाल, जमींदार, भूमिहार, पश्चिमा, चितपावन, नागर, जगद्वंशी, धनञ्जयी, जाजपुरी, मैथिल, कनौजिया, गौड़, सारस्वत आदि ब्राह्मण हैं। उन के वंशधर तो कुछ ही लोग हो सकते हैं। शेष ब्राह्मण तो अन्यान्य ब्रह्मर्षियों के ही वंशज हैं, जिन्हें गोत्रकार ऋषि भी कहते हैं। अस्तु।

उन धर्मारण्य के ब्राह्मणों की सामाजिक स्थिति का मनोहर और विशद वर्णन ग्रन्थ के ५१ वें पृष्ठ में आया है। उन्हें त्रिदेवों ने स्थापित किया था इसी से त्रैविद्य कहे जाते थे। मगर पीछे से राजा कुमार पाल द्वारा राज्य हरण कर लेने पर उन में से ३००० तो रामेश्वर की ओर हनुमान की सहायता के लिये गये। क्योंकि उन्हें श्रीरामजी का आदेश था कि संकट आनेपर मेरा और हनुमान का स्मरण करने से वह दूर हो जायगा। शेष १५००० वहीं राजा के बहकाव से और जप, होम, पूजा आदि के भी लिये रहे, जिन्हें राजा ने सुखवास स्थान में रक्खा था। यही लोग पीछे से चातुर्विद्य कहे गये। क्योंकि तीन देवों के सिवाय चतुर्थ (राजा) की सहायता इन्हों ने अपने रहने में ली। मगर उन ३००० ने दूसरे की सहायता न ली और रामेश्वर की ओर से हनुमान जी की कृपा से दो पुड़िया लेकर आये और जैसाकि ग्रन्थ में लिखा जा चुका है, एक पुड़ियासे राजा कुमारपाल का राजभवन जलाकर उसके शरणागत होने पर दूसरी से अग्नि को शान्त करदिया और इस प्रकार अपनी तपो महिमा और शक्ति से फिर धर्मारण्य का राज्य प्राप्त करलिया। क्योंकि राजा ने अपराध क्षमाकराके उनका राज उन्हें सौंपदिया। इसीसे वे त्रैविद्य ही कहाते रह गये। यह सभी बात नीचे के श्लोकों से स्पष्ट है—

यस्मिन्स्थाने च ये विप्राः सदाचारशुभव्रताः।
अशेषधर्मकुशलाः सर्वशास्त्रविशारदाः ॥१९॥
तपोज्ञाने महाख्याता ब्रह्मयज्ञपरायणाः।
स्थापिता ऋषयः सर्वे सहस्राण्यष्टादशैवतु ॥२०॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नानादेशात्समानीय स्थापितास्तत्रवै सुरैः ॥२१९॥
त्रयीविद्यास्तु विख्याताः सर्वे वाडवपुंगवाः।
सहस्राणि च त्रीण्येव त्रैविद्या अभवन्ध्रुवम् ॥१२०॥
पंचदश सहस्राणि ततस्तु द्विजपुंगवाः।
यथागतं गताः सर्वे चातुर्विद्या द्विजोत्तमाः ॥१२४॥
ते पंचदशसाहस्राः पुनस्तानूचुरादरात्।
अस्माभिरत्रस्थातव्यमग्निसेवार्थतत्परैः ॥ १३८ ॥
त्रिसाहस्रास्तदातस्मात्प्रस्थिताद्विजसत्तमाः१४७।३६
त्रयीविद्यास्तु ते ज्ञेया स्थापिता ये त्रिमूर्त्तिभिः।
चतुर्थेनैव भूपेन स्थापिताः सुखवासने ॥ ८० ॥
ते बभूवुर्द्विजश्रेष्ठाश्चातुर्विद्याः कलौयुगे।
चातुर्विद्याश्चतेसर्वे धर्मारण्ये प्रतिष्ठिताः ॥८१॥३९॥

इन सभी का निचोड़ यह है कि 'नाना देशों से ढूंढ़कर १८००० वेदशास्त्र पारंगत, सदाचारी, तपस्वी, धर्मात्मा ब्राह्मण महर्षि (ब्रह्मर्षि) ब्रह्मा, विष्णु, महेश द्वारा धर्मारण्य में स्थापित किये गये। यद्यपि सभी त्रैविद्य कहलाते थे। पर, पीछे से ३००० ही कहलाते रह गये। १५००० उत्तम ब्राह्मण जैसे आये थे वैसे ही चलेगये और वे चातुर्विद्य कहलाये। उन्होंने ३००० विप्रों को कहा कि हमलोग यहीं अग्निहोत्रादि करने के लिये रहजाते हैं। इसलिये उस समय वे ३००० ही रामेश्वर को रवाना हुए। जिन्हें त्रिदेवों ने प्रथम स्थापित किया था वे सभी त्रैविद्य कहाते थे। मगर पीछे जिनको चतुर्थ राजाने रामेश्वरजाने से रोककर सुखवास नामक स्थान में रखलिया वे लोग कलिमें चातुर्विद्य कहलाये। वे सभी श्रेष्ठ ब्राह्मण धर्मारण्य में प्रतिष्ठित हो गये'। उन्हें वाडव भी कहा है और वाडव का अर्थ ब्राह्मण है, जैसा कि अमरकोष आदि में लिखा है। वडवा ब्राह्मणी को कहते हैं और उसके ब्राह्मण द्वारा जो पुत्र हो उसी का नाम वाडव है। यह बात अमरकोष के द्वितीय काण्ड के ब्राह्मण वर्ग और उसकी टीका रामाश्रमी में स्पष्टतया लिखी है। ग्रन्थ के १२९–१३२ पृष्ठों को देखकर इस इतिहास का मिलान करलेना चाहिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३—याचक और अयाचक।

ग्रन्थमें बहुत जगह जो प्रवृत्त और निवृत्त शब्द आये हैं उनके सम्बन्ध में लोगों का यह कहना है कि ये शब्द सकाम और निष्काम कर्म अथवा सांसारिक और विरक्त के वाचक हैं, नकि याचक और अयाचक या पुरोहित और उससे भिन्न के। हमें इसमें विवाद नहीं है कि इन शब्दों के उक्त अर्थ भी हो सकते हैं। पर, याचक और अयाचक आदि अर्थ नहीं हो सकते इसे हम न तो मानही सकते और न यह संभव ही है। ग्रन्थ के ८५, ८६ आदि पृष्ठों से आईने की तरह झलकता है कि वहां प्रवृत्त और निवृत्त शब्दों के याचक, अयाचक के सिवाय और अर्थ हो ही नहीं सकते। इसमें तो वाद विवाद के लिये स्थान है ही नहीं। लेकिन जिन मूर्खों ने इन शब्दों का द्वैत और अद्वैत अर्थ किया है उन्हों ने तो कमालही कर डाला है! मगर उनके बारे में कुछ न कहनाहीं उचित है। क्योंकि यह उनकी अनोखी सूझ है जो कथमपि संभव नहीं और न जिसे आजतक किसी ने माना ही है।

बहुत लोगों का कहना है कि पुरोहित याचक नहीं हो सकता, पुरोहिती और याचकता एक चीज नहीं है। निस्सन्देह पुरोहिती और याचकता कभी भी एक चीज नहीं है और न हमने ऐसा लिखाही है। पर, पुरोहित समाज को हमने याचक अवश्य लिखा है और वह अनुचित नहीं, ठीकही है। याचक नाम है मांगने वाले का, दो—देहि-कहने वाले का। फिर भी, मांगने वाला हाथ फैलाता है और पुरोहित भी दान लेने के समय या दक्षिणा के समय अवश्य हाथ फैलाता है। इसी समानता से पुरोहित को भी याचक कहा है। जैसे श्येन नाम बाज पक्षीका है। मगर अभिचार कर्मका नाम श्येन इसी कारण रक्खा गया है कि जैसे श्येन दूसरे पक्षियों को अपने चंगुल में फंसालेता है उसी तरह वह अभिचार कर्म भी शत्रु को फंसाकर मारडालता है। यह वैदिक कर्म के ज्ञाता मीमांसकों को विदित है। इसी प्रकार 'सिंहो देवदत्तः'—देवदत्त तो सिंह है, इत्यादि व्यवहारों में भी जान लेना चाहिये। सिंह कहने से देवदत्त जंगल का जानवर नहीं हो जाता अथवा आजकल के सिंह नामधारी पशु नहीं हैं।

रहगई एक बात। कभी कभी लोग यह कह बैठते हैं कि जो अयाचक हैं, या उस दलके हैं वह पुरोहिती नहीं कर सकते। नहीं तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर अयाचक कैसे रहेंगे, या उनका दल अयाचक क्योंकर कहलायेगा? मगर विचारना तो यह है कि पुरोहितों में भी बहुतों के अयाचक रहनेपर भी जैसे उनका दल याचक कहलाता है। कारण, उनमें प्रधानता या मनोवृत्ति अधिकांश लोगों की उसी तरफ पाई जाती है। मालूम होता है, कि उनपर गोया पुरोहितो की छाप लगी हुई है। ठीक उसी प्रकार अयाचक दलमें भी कुछ पुरोहितों के होने से भी वह दल अयाचक ही कहलायेगा। क्योंकि प्रधानता या छाप तो उसी की है और मनोवृत्ति भी वैसी ही है। नियम भी है कि जिसकी प्रधानता होती है उसी से व्यवहार किया जाता है। जैसे जिस गांव में ब्राह्मणों की प्रधानता हो वह ब्राह्मणों का गांव कहाता है। मगर इसका यह अर्थ नहीं है कि उस गांवमें दो चार घर भी शूद्रादि न होंगे। यह बात ग्रंथमें भी लिखी जा चुकी है। एक बात यह भी कहीचुके हैं कि पुरोहिती का ग्रहण या त्याग तो व्यक्तिगत धर्म है न कि ब्राह्मणों में कोई ऐसा समाज हो सकता है जो पुरोहिती से एक बारगी ही अलग हो। फिर क्षत्रियों में और उस समाज में बाहरी व्यवहार में फर्क क्या रहजायगा? दुनियां तो व्यवहार ही देखती है। शास्त्र कौन देखने जाता है? इसलिये इच्छा हुई तो हमने आज पुरोहिती की और कल छोड़दी। फिर परसों करली। इसका कोई नियम न तो हो सकता है और न होना उचित है। शास्त्रकारों ने इसके लिये कोई बंधन नहीं रक्खा है और शास्त्र दृष्टिसे ब्राह्मणों में याचक या अयाचक नामका कोई दल हो नहीं सकता। हां, व्यक्तिगत रूपसे प्रवृत्त, निवृत्त या याचक, अयाचक ये दो प्रकार के ब्राह्मण हो सकते हैं। एक भाई याचक है तो दूसरा अयाचक। अभी तक यही होता भी आया है। मगर यह दलबन्दी तो बहुत हाल की है; जैसे गौड़, मैथिल आदि दलबन्दी। मगर यह वहीं तक ठीक है जहां तक व्यवहार और शास्त्र का विरोध न हो। मगर यदि पुरोहिती के न करने और करने का किसी दलविशेष को अधिकार दे दिया जावे तो फिर शास्त्र और व्यवहार दोनों का विरोध होगा फलतः अत्याचार होना अनिवार्य है, जैसा कि देख भी रहे हैं। मनुस्मृति के चौथे अध्याय के प्रारम्भ के श्लोकों से स्पष्ट है कि याचित और अयाचित वृत्तियों से ब्राह्मण जीविका करते हैं और यह उनकी मर्जीपर है कि चाहे जिसे करें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मगर वहां की याचित वृत्ति पुरोहिती नहीं है किन्तु भिक्षा।

इसी सम्बन्ध में एक बात दक्षिणा और प्रतिग्रह की है। इन दोनों शब्दों का अर्थ और इनका भेद ग्रन्थ में प्रतिपादित है। जिसका निचोड़ यह है कि दक्षिणा तो कर्म कराने की मजदूरी है और प्रतिग्रह किसी के पापको हटाने के लिये अपना ब्रह्मतेज या तपोबल देकर उसके बदले में अन्न, धनादि के स्वीकार को कहते हैं। और पुरोहिती के अन्तर्गत प्रतिग्रह खामख्वाह आभी नहीं जाता। हां, दक्षिणा तो पुरोहित को लेनी हीं पड़ती है और वह ठीक भी है, जिसे वह अपने काम में ला सकता है। मगर प्रतिग्रह के लिये तो वह मजबूर नहीं है और चाहे तो लेकर किसी परोपकार कार्य में लगा सकता है। इसलिये दक्षिणा और प्रतिग्रह या दान लेने को एक समझकर जो पुरोहिती करने में होहल्ला मचाया जाता है वह नितान्त अनुचित और हेय है।

४—आशौच और उसका संकर।

पूर्व परिशिष्ट में ब्राह्मण के जन्म और मरण के आशौच का साधारण विचार किया गया है। कभी कभी ऐसा होता है कि दो तीन आशौच एक साथ या आगे पीछे पड़जाते हैं। उनके विषय में यद्यपि मनुजी का मोटा और साधारण सिद्धान्त यही बताया गया है कि पहले आशौच के दसदिन के भीतर यदि दूसरा आशौच होजावे तो पहले ही से दूसरे की निवृत्ति हो जाती है। तथापि उसके विषय में थोड़ासा सूक्ष्म विचार भी करलेना आवश्यक है। साधारणतया यही नियम है कि ब्राह्मणके सपिण्ड को दसदिनका और सो (समानो) दक को तीन दिन का आशौच होता है। जैसा कि मनुने ५ वें अध्याय में लिखा है—'दशाहं शावमाशौचं सपिण्डेषु विधीयते। ५६। त्र्यहादुदकदायिनः। ६४। जन्मन्येकोदकानांतु त्रिरात्राच्छुद्धिरिष्यते। ७१।' जन्मे या मरे से सातवीं पीढ़ीतक पिता के वंश में और माता के कुल में पांचवीं पीढ़ीतक को सपिंड कहते हैं और उसके बाद तो जहां तक कुलके किसी भी पुरुष के जन्म और नाम का ज्ञान हो वहां तक पिता पक्ष में सोदक कहलाते हैं। जैसा कि याज्ञवल्क्य और मनुने कहा है—

पञ्चमात्सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतस्तथा ॥या०५३॥

समानोदकभावस्तुजन्मनाम्नोरवेदने। म०५। ६०॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु यदि पुत्र वा पुत्री नामकरण से प्रथमहीं मरजावे तो स्नान मात्रसे शुद्धि हो जाती है। उसके बाद और दांत निकलने से पहले ही मरने पर यदि दाह करे तो एक दिनमें और यदि न करे तो स्नान मात्र से ही शुद्धि होती है। दांत निकले पर प्रथम वर्ष में हीं मुण्डन से प्रथम हीं मरने पर एक दिन में और उसके बाद मुंडन हो जाने पर तीन वर्ष पर्यन्त तीन दिन में पुत्र का और कन्या का तो वाग्दान से पहले मुंडन न होने तक स्नान मात्र से ही और मुंडन हो चुकने पर एक दिन में आशौच निवृत्त हो जाता है। पर, कन्या के विषय में सपिंडता वाग्दान से प्रथम तीनहीं पुरुष तक मानी जाती है। यदि पुत्र का मुंडन तीनवर्ष तक भी न हुआ हो तो एकही दिन का आशौच होता है। तीन वर्ष के बाद तो मुंडन न होने पर भी उपनयन पर्यन्त तीन दिन का आशौच होता है और उपनयन के बाद दस दिन का। वाग्दान (तिलक) के बाद और विवाह से पहले कन्या का आशौच पिता और पति दोनों कुल में तीन दिन का लगता है और विवाह हो जाने पर सिर्फ पति कुलको ही दस दिनका आशौच होता है। दांत निकलनेके बाद और तीन वर्ष से पहले मरनेपर दाह और पिंडदानादि करना न करना अपनी इच्छा पर है। पर, बाद को तो करनाहीं होगा। दो वर्ष से कम अवस्थावाले का दाह न कर शुद्ध भूमि में गाड़ देना चाहिये। पर गंगा जल में निक्षेप करने के लिये कोई रोक टोक नहीं है। जिसे चाहें फेंक सकते हैं। सभी आशौच मालूम होने पर ही होते हैं। न मालूम होने पर नहीं। यही मनु, याज्ञवल्क्य और मिताक्षरा आदि का निचोड़ है। जैसाकि—

आदन्तजन्मनः सद्य आचूडान्नैशिकी स्मृता।
त्रिरात्रमाव्रतादेशाद्द्वशरात्रमतःपरम्। या०प्रा०२३॥
ऊनद्विवार्षिकंप्रेतं निदध्युर्बान्धवा बहिः।
अलंकृत्य शुचौभूमावस्थिसंचयबादृते ॥ ६८ ॥
नात्रिवर्षस्य कर्तव्या बांधवैरुदकक्रिया।
जातदन्तस्य वा कुर्युर्नास्मिन वापिकृतेसति ॥७०॥
स्त्रीणामसंस्कृतानांतु त्र्यहाच्छुध्यन्तिबान्धवाः।
यथोक्तेनैव कल्पेन शुद्ध्यन्तितु सनाभयः॥७२॥ म०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राङ्नामकरणात्सद्यः शौचन्तदूर्ध्वं दन्तजननादर्वागग्निसंस्कार-क्रियायामेकाहः, इतरथा सद्यःशौचम्। जातदन्तस्य च प्रथमवार्षिका-शौलादर्वागेकाहः। प्रथमवर्षादूर्ध्वं त्रिवर्षपर्यन्तं कृतचूडस्यत्र्यहम् इतरस्यत्वेकाहः। वर्षत्रयादूर्ध्वमकृतचूडस्यापित्र्यहम्। उपनयनादूर्ध्वं सर्वेषां ब्राह्मणादीनां दशरात्रादिकम्। अप्रत्तानांतुस्त्रीणां त्रिपुरुषी (सपिण्डता) विज्ञायतइतिवसिष्ठस्मरणादितिमिताक्षरा या० प्रा०। २३, २४॥

आशौच में एक बात का और भी विचार रहना चाहिये कि वह दो प्रकार का होता है, एक तो स्पर्श की अयोग्यता और दूसरे कर्मकी अयोग्यता। इन में मरणाशौच में तो दोनों हीं प्रकारका आशौच साधारणतया माना जाता है। परन्तु जन्म में माताको तो दोनों प्रकार का होता है। परन्तु स्नानके बाद पिता स्पर्श योग्य हो जाता है और अन्य सपिण्ड तो सदा ही स्पर्श योग्य होते हैं। परन्तु कर्म की योग्यता नहीं रहती है जब तक कि पूरे दिन न बीत जावें। मनुजी का यही अभिप्राय नीचे के श्लोक से स्पष्ट है—

सर्वेषां शावमाशौचं मातापित्रोस्तु सूतकम्।
सूतकं मातुरेव स्यादुपस्पृश्य पिता शुचिः ॥५।६२॥

इस लिये जो कोई सपिण्ड विदेश में हो तो दशाहके बाद और एक वर्ष के भीतर जन्म या मरण की खबर मिलने पर तीन दिन तक कर्म का अनधिकारी रहता है। मगर सवस्त्र स्नानके बाद छूने योग्य हो जाता है। मगर एक वर्ष के बाद खबर मिलने पर तो सिर्फ स्नान करलेने परही पवित्र हो जाता है। जैसा कि मनुने कहा है—

अतिक्रान्ते दशाहे च त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्।
संवत्सरेऽत्यतीते तु स्पृष्ट्वैवापो विशुध्यति ॥७६॥
निर्दशं ज्ञातिमरणं श्रुत्वा पुत्रस्य जन्म च
सवासा जलमाप्लुत्य शुद्धो भवति मानवः ॥५।७७॥

गर्भ पात हो जाने पर जितने महीने का गर्भ हो उतने दिनों तक स्त्री अपवित्र रहती है। किसी का मत है कि तीन महीने के बाद के ही गर्भ का यह नियम है और छठे मास तक के ही लिये। इसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाद तो पूरा आशौच लगता है। रजस्वला स्त्री तीन दिन तक अपवित्र रहती है और चौथे दिन स्नान करने पर शुद्ध होती है। जैसा कि मनुने कहा है—

रात्रिभिर्मासतुल्याभिः गर्भस्रावे विशुध्यति।
रजस्युपरते साध्वी स्नानेन स्त्री रजस्वला॥ ५॥ ६॥

समान, असमान, सजातीय, विजातीय इस तरह आशौच चार प्रकार का होता है और इनमें से दोसे अधिक यदि एक साथ या आगे पीछे प्रथम की निवृत्ति के पहले ही पड़जावें तो उसे आशौच-संकर कहते हैं। जिन अशौचों की दिन संख्या बराबर होवे वे समान और जिनकी बराबर न हो वे असमान हैं। इसी तरह जन्म सम्बन्धी सभी अशौच परस्पर सजातीय हैं और मरण सम्बन्धी भी। परंतु मरण और जन्म एक दूसरे के विजातीय हैं। सजातीय आशौचका यह नियम है कि यदि अधिक दिन वाले के भीतर उसका सजातीय कम दिन वाला या बराबर वाला आशौच होजावे तो पहले से ही दूसरे की भी निवृत्ति हो जाती है। परन्तु यदि अधिक दिन वाला कम दिन वाले सजातीय के भीतर आपड़े तो अधिक दिनवाले से ही कम दिन वाला निवृत्त होता है। जैसा कि याज्ञवल्क्य और उसकी मिताक्षरा में उशना का वचन है कि—

अन्तरा जन्ममरणे शेषाहोभिर्विशुध्यति। प्रा० २०।
स्वल्पाशौचस्य मध्येतु दीर्घाशौचं भवेद्यदि।
नपूर्वेणविशुद्धिःस्यात्स्वकालेनैव शुध्यति॥उश०॥

विजातीय का यह नियम है कि चाहे मरण में जन्म हो या जन्म में मरण; पर, मरणाशौच की निवृत्ति से ही जननाशौच की भी निवृत्ति होती है। फिर चाहे मरण समान हो या असमान। जैसाकि अंगिरा का वचन है कि—

सूतके मृतकं चेत्स्यान्मृतकेत्वथ सूतकम्।
तत्राधिकृत्य मृतकं शौचं कुर्यान्न सूतकम्॥

परन्तु माता, पिता के मरण के संकर में मिताक्षराकारने लिखा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि यदि माता के मरने पर बीचमें हीं पिता मरजावे तो पिता के आशौच की निवृत्ति से माता के भी आशौच की शुद्धि होती है। और यदि पिता के बाद माता मरी हो पिता के आशौच के बाद दो दिन और उनके बीच की रात बिताकर शुद्ध होता है। जैसाकि

मातर्यग्रे प्रमीतायामशुद्धौ म्रियते पिता।
पितुः शेषेण शुद्धिःस्यान्मातुःकुर्यात्तु पक्षिणीम्॥

यद्यपि पूर्व प्रदर्शित याज्ञवल्क्य के वचनानुसार और मनु ने भी लिखा है कि, दस दिन के भीतर यदि फिर दूसरा जन्म या मरण हो जावे तो तभी तक आशौच रहता है जब तक कि दस दिन पूरा नहीं होता। जैसाकि—

अन्तर्दशाहे स्यातां चेत्पुनर्मरणजन्मनी।
तावत्स्यादशुचिर्विप्रोयावत्स्यात्तदनिर्दशम्॥५।७८॥

तथापि यही सिद्धान्त किया गया है कि दस दिन के भीतर का अर्थ है नवें दिन और रात के तीन पहर तक। इसलिये यदि उस समय तक कोई दूसरा आशौच आजावे तो पूर्व से ही वह भी निवृत्त हो जावेगा। जैसा कि बौधायन ने प्रथम प्रश्न के पांचवें अध्याय में कहा है—

अथ यदि दशरात्रात्सन्निपतेयुराद्यंदशरात्रमाशौ-मानवमाद्दिवसात्॥ १२४॥

परन्तु उसके बाद दसवें दिनकी शामतक दूसरे आशौच के होजाने से पहले के पूरा होने के दो दिन बाद शुद्धि होती है और शाम के बाद एकपहर रात रहेतक होनेपर तीन दिन और बिताना पड़ता है। त्रिका संस्कृत नाम त्रियामा है, जिससे तीनहीं पहरकी रात मानते और शेष एक पहर प्रातःकाल कहलाता है। यह बात गौतम, वसिष्ठ, शातातप स्मृतियों में लिखी है। जैसा कि—

रात्रिशेषे सतिद्वाभ्यांप्रभाते सति तिसृभिः।व०४।२३।
रात्रिशेषे द्व्यहाच्युद्धिर्यामशेषेशुचिस्त्र्यहात्।शात०।

आशौच के अन्तिम या दसवें दिन गांव से बाहर स्नान करना, कपड़ा बदलना, दाढ़ी मूंछ आदि बनवाना और नख कटवाना चाहिये,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नकि उसके बाद या पहले। जैसा कि—

दशमेऽहनि संप्राप्तेस्नानं ग्रामाद्बहिर्भवेत् ।
तत्रत्याज्यानिवासांसि केशश्मश्रुनखानिच ।देवल०॥

प्रेत (मरे) के लिये सोलह श्राद्ध किये जाते हैं जिनकानाम षोडशी है । जिनके नाम ये हैं-ऊनमासिक,प्रथममासिक, त्रिपाक्षिक, द्वितीय मा०, तृ० मा०, च०, पं० ऊनषाण्मासिक, षाण्मासिक, स०, अ०, न०, दश०, एका०, ऊनवार्षिक, वार्षिक । यदि बीच में अधिमास हो जावे तो १७ और न्यूनमास हो तो १५ ही होते हैं । इनमें पहला एकादशाह को करते हैं और शेष यथासमय । प्राचीन नियम यही था कि वार्षिक श्राद्ध जो १२ वें मास में होता है उसीके बाद सपिंडीकरण श्राद्ध कियाजावे और विना सपिंडी के कोई मंगल कार्य घरमें न होवे । मगर अब ऐसा नियम है कि साधारणतया एकादशाह को पहला श्राद्ध करके शेष १५ को द्वादशाह के दिन करते हैं और उसी दिन सपिंडन भी किया जाता है । अथवा सोलहों श्राद्ध एकादशाह को ही कर डालते हैं । सिर्फ सपिंडन द्वादशाह को करते हैं । दोनों प्रकार के वचन मिलते हैं । मगर फिर सपिंडन के बाद भी मासिक आदि श्राद्ध किये जाते हैं और उन्हें अवश्य करना चाहिये और पूरा वर्ष बीतने पर वार्षिक होना चाहिये,नकि बीच में हीं, क्योंकि उसका नामहीं वार्षिक है । जब सपिंडन होगया तो फिर मंगल कार्य करनेमें कोई हर्ज नहीं है । ब्रह्मभोज भी श्राद्ध के दिन हीं होना चाहिये यहीं निचोड़ है।

५—गोत्र, प्रवर और साधारण होम ।

विवाह आदि संस्कारों में और साधारणतया सभी धार्मिक कामों में गोत्र, प्रवर और शाखा आदिकी आवश्यकता हुआ करती है। इसीलिये उन सभीका संक्षिप्त विवरण आवश्यक है । समान गोत्र प्रवरकी कन्याके साथ विवाह करने से जो संतान होती है वह चाण्डाल श्रेणी में गिनी जानी चाहिये । जैसा कि यमस्मृतिका वचन है कि—

आरूढपतितापत्यं ब्राह्मण्यां यश्चशूद्रजः ।
सगोत्रोढासुतश्चैव चाण्डालास्त्रयईरिताः ॥

' संन्यासी का पुत्र, ब्राह्मणी स्त्री से शूद्रका पुत्र और समानगोत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाली कन्या से विवाह करके जन्माया पुत्र, ये तीनों चाण्डाल कहाते हैं'। पर, देखते हैं कि सभी देशों के ब्राह्मण आदि समाजों में ऐसा बहुधा होता है। यहांतक कि बहुतों को तो गोत्र का ज्ञान भी नहीं होता। प्रवर, शाखा आदि की बातही दूर रहे। और विवाह तो गोत्र भिन्न रहने पर भी यदि प्रवरों की एकता होजावे तौभी नहीं होना चाहिये। जैसा कि पूर्वपरिशिष्ट में लिखा गया है।

गोत्र नाम है कुल, सन्तति, वंश, वर्ग का। यद्यपि पाणिनीय सूत्रों के अनुसार 'अपत्यं पौत्रप्रभृतिगोत्रम्' ४-१-१६२-पौत्र आदि वंशजों को गोत्र कहते हैं। तथापि वह सिर्फ व्याकरण के लिये संकेत है। इसी प्रकार यद्यपि वंश या सन्तति को ही गोत्र कहते हैं तथापि विवाह आदि में जिस गोत्र का विचार है वह भी सांकेतिक ही है और सिर्फ विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गौतम, अत्रि, वसिष्ठ, कश्यप और अगस्त्य, इन आठ ऋषियों या इनके वंशज ऋषियों की ही गोत्र संज्ञा है। जैसा कि बौधायन के महाप्रवराध्याय में लिखा है कि-

विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतमः।
अत्रिर्वसिष्ठः कश्यपइत्येते सप्तर्षयः॥ सप्तानामृषीणामगस्त्याष्टमानां यदपत्यं तद्गोत्रमित्युच्यते॥

इस तरह इन आठ ऋषियों की वंशपरम्परा में जितने ऋषि (वेदमंत्रद्रष्टा) आगये वे सभी गोत्र कहलाते हैं। और आज कल ब्राह्मणों में जितने गोत्र मिलते हैं वह उन्हीं के अन्तर्गत हैं। सिर्फ भृगु, अंगिरा के वंश वाले ही उनके सिवाय और हैं जिन ऋषियों के नाम से भी गोत्र व्यवहार होता है। इस प्रकार कुल दस ऋषि मूलमें हैं। इस प्रकार देखाजाता है कि इन दसों के वंशज ऋषि लाखों होगये होंगे और उतनेहीं गोत्र भी होने चाहियें। तथापि इस समय भारत में तो उतने गोत्रों का पता है नहीं। प्रायः ८० या १०० गोत्र मिलते हैं।

जो गोत्रके नाम से ऋषि आये हैं वही प्रवर भी कहाते हैं। ऋषि का अर्थ है वेदों के मंत्रों को समाधिद्वारा जाननेवाला। इस प्रकार प्रवरका अर्थ हुआ कि उन मंत्रद्रष्टा ऋषियों में जो श्रेष्ठ होवे। प्रवर का एक और भी अर्थ है। यज्ञ के समय अध्वर्यु या होता के द्वारा ऋषियों का नाम लेकर अग्नि की प्रार्थना की जाती है। उस प्रार्थना का अभिप्राय यह है कि जैसे अमुक अमुक ऋषिलोग बड़ेही प्रतापी और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योग्य थे। अतएव उनके हवन को देवतओं ने स्वीकार किया। उसीप्रकार, हे अग्नि देव, यह यजमानभी उन्हीं का वंशज होने के नाते हवन करने योग्य है। इसप्रकार जिन ऋषियों का नाम लिया जाता है वही प्रवर कहलाते हैं। यह प्रवर किसी गोत्र के एक, किसी के दो, किसी के तीन और किसी के पांच तक होते हैं। न तो चार प्रवर किसी गोत्र के होते हैं और न पांच से अधिक। यही परम्परा चली आती है। पर, मालूम नहीं कि ऐसा नियम क्यों है। ऐसा ही आपस्तम्ब आदि का वचन लिखा है। हां, यह अवश्य है कि किसी ऋषिके मतसे सभी गोत्रों के तीन हीं प्रवर होते हैं। जैसा कि—

त्रीन्वृणीते मंत्रकृतोवृणीते ॥ ७ ॥अथैकेषामेकं वृणीते द्वौवृणीते त्रीन्वृणीते न चतुरोवृणीते न पञ्चातिवृणीते ॥ ८ ॥

जो दस गोत्र कर्त्ता ऋषि मूल में बताये गये हैं, उनके वंश का विस्तार बहुत हुआ और आगे चलकर जहां जहां से एक एक वंश की शाखा अलग होती गई वहां वहां से उसी शाखा का नाम गण कहलाता है और उस शाखा के आदि ऋषि के नाम सेही वह गण बोला जाता है। इसप्रकार उन दस ऋषियों के सैकड़ों गण होगये हैं और साधारणतया यह नियम है कि उनगणों के भीतर जितने गोत्र हैं नतो उनका अपने अपने गणभरमें किसी दूसरे के साथ विवाह होता है और न एक मूल ऋषिके भीतर जितने गण हैं उनकाभी परस्पर विवाह हो सकता है। क्योंकि सबका मूल ऋषि एकही है। हां, भृगु और अंगिरा के जितने गणहैं उनमें हरेक का अपने गणके भीतर तो विवाह नहीं हो सकता। पर, गणसे बाहर दूसरे गणमें तभी विवाह होगा जब कि दोनों के प्रवर एक न हो जावें। प्रवर एक होने का भी यह अर्थ नहीं कि दोनों के ३ या ५ जितने प्रवर हैं सब एकही रहें। बल्कि यदि दोनों के तीन हीं प्रवर हों और उनके दो ऋषि दोनों में हों तो वह प्रवर एकही कहलावेगा। इसी प्रकार यदि पांच प्रवर हों तो तीन के एक होने से ही एक होगा। सारांश, आधे से अधिक ऋषि यदि एक हों तो समान प्रवर हो जाने से विवाह नहीं होना चाहिये। जैसा कि बौधायन ने लिखा है—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्व्यार्षेयसन्निपातेऽविवाहस्त्र्यार्षेयाणांत्र्यार्षेयसन्नि-
पातेऽविवाहःपञ्चार्षेयाणामसमानप्रवरैर्विवाहः ॥

इसीलिये बौधायन आदिने गोत्रका जो सांकेतिक अर्थ किया है उसमें भृगु और अंगिरा को न कहकर आठही को गिनाया है। नहीं तो जैसे अत्रि आदिके गणों में जहांतक एक गोत्र कर्त्ता ऋषि उनके किसी भी गोत्र के प्रवरों में विद्यमान रहें वह वास्तव में एकही गोत्र कहलाते हैं, चाहे व्यवहार के लिये भिन्न हीं क्यों न हों और चाहे उनके प्रवर तीन हों या पांच। उसी प्रकार भृगु और अंगिरा के भी गणों के प्रवरों में सिर्फ एक ही ऋषि के समान होने से ही उनके तीन और पांच प्रवर वाले गोत्रों का विवाह नहीं हो पाता। मगर अब हो सकता है। क्योंकि एक ऋषि की समानता का नियम सिर्फ आठही ऋषियों के लिये है, न कि भृगु और अंगिरा के लिये भी। जैसा कि—

एक एव ऋषिर्यावत्प्रवरेष्वनुवर्त्तते।
तावत्समानगोत्रत्वमन्यत्रांगिरसोभृगोः ॥

भृगु और अंगिरा के वंशजोंके जो गण हैं उनमें कुछ तो गोत्रके उन आठ ऋषियों के ही गण में आगये हैं और कुछ अलग हैं। इस प्रकार भृगु और केवल भृगु एवं अंगिरा और केवल अंगिरा इस तरहके उनके दो दो विभाग होगये हैं। भृगु के ७ गणों में वत्स, विद और आर्ष्टिषेण ये तीन तो जमदग्निके भीतर आगये। शेष यस्क, मिवयुव, वैन्य और शुनक ये केवल भार्गव कहाते हैं। इसी प्रकार अंगिरा के गौतम, भारद्वाज और केवल आंगिरस ये तीन गण हैं। उन में दो तो आठ के भीतर ही हैं। गौतम के १० गण हैं, अयास्य, शरद्वन्त, कौमण्ड, दीर्घतमस, औशनस, करेणुपाल, रहूगण, सोमराजक, वामदेव, बृहदुक्थ। इसी प्रकार भारद्वाज के चार हैं, भारद्वाज, गर्ग, रौक्षायण, कपि। केवलांगिरसके पांच हैं, हरित, कण्व, रथीतर, मुद्गल, विष्णुवृद्ध। इस तरह सिर्फ भृगु और अंगिरा के ही २६ गण हो गये। इससे स्पष्ट है कि भरद्वाज या भारद्वाज गोत्र का गर्ग या गार्ग्य के साथ विवाह नहीं हो सकता। क्योंकि उनका गण एक ही है।

अत्रि के चार गण हैं, पूर्वात्रेय, वाद्धुतक, गविष्ठिर, मुद्गल।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विश्वामित्र के दस हैं, कुशिक, रोहित, रौक्ष, कामकायन, अज्ञ, अघमर्षण, पूरण, इन्द्रकौशिक, धनञ्जय, कत । धनञ्जय और कौशिक का परस्पर विवाह नहीं हो सकता ।

कश्यप के पांच हैं, कश्यप, निध्रुव, रेभ, शांडिल्य, लौगाक्षि । शांडिल्य, कश्यप, काश्यप, लौगाक्षि का परस्पर विवाह असंभव है ।

वसिष्ठ के पांच हैं, वसिष्ठ, कुण्डिन, उपमन्यु, पराशर और जातूकर्ण्य । वसिष्ठ और पराशर आदि का परस्पर विवाह ठीक नहीं है ।

अगस्त्य का कोई अन्तर्गण नहीं है । इस प्रकार कुल ५१ गण हैं । किसी किसी के मत से कुछ कम या अधिक भी हैं ।

कोई कोई गोत्र द्व्यामुष्यायण कहलाते हैं; जैसे सांकृति या साकृत्य और लौगाक्षि आदि । इसका अर्थ यह है कि इन ऋषियों का सम्बन्ध दो गोत्रों से है । ये ऋषि किसी कारण से दोनों गोत्रों से सम्बन्ध रखते हैं, न कि एक छोड़ कर दूसरे में मिलगये । इसीलिये सांकृति का वसिष्ठ के साथ और लौगाक्षिका भी वसिष्ठ के साथ, एवं लौगाक्षिका और सांकृति का भी परस्पर विवाह नहीं होगा । क्योंकि लौगाक्षि और सांकृति दोनों वसिष्ठ गोत्र में गये हैं और साथ ही, सांकृतिका केवलांगिरस के गण में और लौगाक्षिका कश्यप के गण में जन्म है ।

भरद्वाज, भारद्वाज; कश्यप, काश्यप; गर्ग, गार्ग्य; भृगु, भार्गव ये अलग अलग गोत्र हैं, न कि कश्यप और काश्यप आदि एक ही हैं । परन्तु विवाह तो फिर भी कश्यप काश्यप आदि का परस्पर नहीं हो सकता । कारण, मूल ऋषि एक ही हैं । इसी प्रकार यद्यपि भृगु के वंश में हीं वत्स हुए, तथापि वत्सगोत्र अलग ही है । विश्वामित्र के प्रकरण में इन्द्रकौशिक गोत्र है जो कौशिक से भिन्न हीं है । इसी प्रकार धृत गोत्र भी उसी में है । मगर कहीं कहीं सर्यूपारियों में धृत कौशिक को एक ही गोत्र मानकर व्यवहार करते हैं । यह भूल है । इसी प्रकार गर्दभीमुख नाम के एक ऋषि कश्यप के गण में हैं और शांडिल्य भी । पर इसका अर्थ न समझ लोगों ने गर्दभीमुख का कल्पित अर्थ कर डाला है और श्रीमुख नामका एक दूसरा गोत्र भी मान रक्खा है । उनके विचारसे शांडिल्य गोत्र के ही ये दो भेद हैं । मगर बात यह नहीं है । यह तो परस्पर नीच ऊंच के भावों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का फल है। श्रीमुख कोई गोत्रकार ऋषि नहीं हैं। हां गर्दभीमुख हैं। पर शांडिल्य से भिन्न हैं। फिर भी, कश्यप के अन्तर्गत होने से दोनों का परस्पर विवाह नहीं हो सकता। कोई कोई इन्द्र और कौशिक ये दो गोत्र मानते हैं और धृत को घृत पढ़ते हैं। पाठ भेद हो सकता है। पर, हरिवंश के सातवें अध्याय में धृत ही मिलता है और उनको धर्म-धृत भी कहा है। इससे धृत पाठ ही अधिक माननीय है।

गोत्रों में प्रवर के सिवाय वेद, शाखा, सूत्र, पाद, शिखा और देवता का भी विचार है। ऐसा सम्प्रदाय अभी तक बराबर चला आता है। इनमें से वेदका अभिप्राय यह है कि उस गोत्रकार ऋषिने उसी वेद के पठन पाठन या प्रचार में विशेष ध्यान दिया और उस गोत्रवाले प्रधानतया उसी वेद का अध्ययन और उस में कहे गये कर्मों का अनुष्ठान करते आये। इसलिये किसी गोत्र का यजुर्वेद है तो किसी का सामवेद और किसी का ऋग्वेद है तो किसी का अथर्ववेद। उत्तर के देशों में प्रायः साम और यजुर्वेद का ही प्रचार था। किसी किसी का ही अथर्ववेद मिलता है। जब आगे चल कर लोग सम्पूर्णतया एक वेद भी पढ़ न सके, किन्तु उसकी अनेक शाखाओं में से सिर्फ एक ही, तो फिर उन उन गोत्रों के लोगों ने शाखा का व्यवहार करना शुरू किया। सूत्रों का तो सिर्फ यही अर्थ है कि उन वेदों की उन उन शाखाओं में कहे गये कर्मों की विधि और उनके अंगों के क्रम आदि के विचार के लिये ऋषियों ने जिन जिन श्रौत या गृह्य सूत्रों का निर्माण किया है, उन्हीं के अनुसार विभिन्न गोत्रों की पद्धतियां तैयार की गई हैं और उन्हीं के अनुसार कर्म कलाप होते हैं। हरेक वेदों के ये सूत्र विभिन्न ऋषियों द्वारा बनाये गये हैं। जैसे यजुर्वेद का कात्यायन ने बनाया है, सामवेदका गोभिलने, ऋग्वेद का आश्वलायन ने और अथर्ववेदका कौशिक ने। और भी ऋषि हैं जिनके सूत्र वेदों की शाखाओं पर हैं। हरेक ऋषि ने अपनी ही शाखा का सूत्र ग्रन्थ बनाया है। हरेक वेद या उसकी शाखा के पढ़ने वाले किसी विशेष देवता की आराधना करते थे। वही उनके देवता कहे गये। इसी तरह तुरन्त पहचान के लिये उनके बाहरी व्यवहार में भी कुछ अन्तर रक्खा जाता था। जैसे कोई शिखा में जो ग्रन्थि देता था वह बाईं तरफ घुमा कर और कोई दाहिनी तरफ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार पूजा के समय प्रथम कोई बायाँ पांव धोता या धुलाता था और कोई दाहिना। बस वही व्यवहार अबतक कहने मात्र को रह गया है और वही पाद कहलाता है। प्रायः यही नियम था कि सामवेदियों की बाईं शिखा और बायांहीं पाद और विष्णुदेवता हों। इसी प्रकार यजुर्वेदियों की दाहिनी शिखा, दाहिना पाद और शिव देवता। कहीं कहीं शिखा और पाद में शायद उलट पलट है। परन्तु वह हमारे जानते काल पाकर भूलसे बदल गया होगा। क्योंकि जब और बातों में नियम है तो यहां भी एक ही नियम होना चाहिये। इसी तरह सामवेदियों की कौथुमी शाखा और गोभिलसूत्र, एवं यजुर्वेदियों की माध्यंदिनीय शाखा और कात्यायन सूत्र है। चारों वेदों के चार उपवेद भी हैं और उनका भी व्यवहार पाया जाता है। यजुर्वेद का धनुर्वेद, ऋग्वेद का आयुर्वेद, सामवेद का गान्धर्व वेद और अथर्व वेदका अर्थवेद वा अर्थ शास्त्र है।

किस गोत्र का कौन वेद है, इस में इस समय बड़ी गड़बड़ी है कारण, व्यवहार और सम्प्रदाय हर प्रदेश में कुछ न कुछ बदल गये हैं। कान्यकुब्जों और सर्यूपारियों में पांच गोत्रों का और कहीं कहीं छ का सामवेद बताया है। वे पांच कश्यप, काश्यप, वत्स, शाण्डिल्य और धनञ्जय हैं और छठां कौशिक है। परन्तु, इसके विपरीत मैथिलों में सिर्फ एक शाण्डिल्य का ही सामवेद लिखा है। शेष गोत्रों का यजुर्वेद ही। हालांकि उनकी एक वंशावली में, जो पिलखवाड़ ग्राम के पञ्जीकार श्री जयनाथ शर्मा की लिखी है, लिखा है कि—

कश्यपौ वत्सशांडिल्यौ कौशिकश्च धनंजयः।
षडेते सामगा विप्राः शेषा वाजसनेयिनः॥

इससे पूर्व के छ गोत्र सामवेदी सिद्ध होते हैं। कान्यकुब्ज वंशावली में लिखते हैं कि पांचही सामवेदी हैं, कौशिक नहीं—

कश्यपः काश्यपो वत्सः शांडिल्यश्च धनंजयः।
पञ्चैते साम गायन्ति यजुरध्यायिनोऽपरे॥

यह बातअसंभव सीभी मालूम होती है कि सिर्फ शाण्डिल्य ने हीं सामवेद का प्रचार किया और दूसरे किसी भी ऋषिने नहीं। इससे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पांच या छ गोत्रों काही सामवेद मानना ठीक है। इसलिये त्यागी, पश्चिमा, जमींदार या भूमिहार आदि अयाचक ब्राह्मणों में भी इसी के अनुसार संस्कार आदि और प्रचार होना चाहिये। गौड़, जिझौतिया वगैरः में भी इसीका प्रचार है।

आजकल एक गोत्र पाया जाता है जिसका उल्लेख पुराने ग्रन्थों में कहीं नहीं मिलता। वह है कविस्त, काविस्त अथवा कावित्स। अत्रि के एक गणके ऋषिका का नाम गविष्ठिर है। सम्भव है इसी का विपर्यास होगया हो। लेकिन प्रवर में भेद है।

प्रवरों के विषय में बड़ा मत भेद और वाद विवाद है। एक प्रवर तो सिर्फ चार प्रचलित गोत्रों में है। वसिष्ठ का वासिष्ठ, शुनक का शौनक, मित्रयुवका वाध्यश्व और अगस्त्य का आगस्त्य। कश्यप का ही सिर्फ दो प्रवर है, देवल और असित। मगर इनके भी तीन प्रवर लिखे हैं। इसी प्रकार पांच प्रवर गर्ग, सावर्णि, वत्स, भार्गव, भरद्वाज, भारद्वाज, जमदग्नि और गौतम के हैं। मगर तीन प्रवर भी इनके लिखे हैं। हरेक गोत्रों के प्रवरों की जितनी संख्या हो उतनी ग्रंथि जनेऊ में दी जाती है।

कुछ प्रसिद्ध गोत्रों के प्रवर आदि नीचे लिखे हैं।

(१) कश्यप, (२) काश्यप के काश्यप, असित, देवल अथवा काश्यप, आवत्सार, नैध्रुव तीन प्रवर हैं। इस गोत्र के ब्राह्मण ये हैं— जैथरिया, किनवार, बरुवार, दन्सवार, मनेरिया, कुढ़नियां, नोनहुलिया, तटिहा, कोलहा, करेमुवा, भदैनीचौधरी, त्रिफलापांडे, परहापै, सहस्रामै, दीक्षित, जुझौतिया, बवनडीहा, मौवार, दधिअरे, मरैं, सिरियार, धौलानी, डुमरैत, भूपाली आदि।

(३) पराशर के वसिष्ठ, शक्ति, पराशर तीन प्रवर हैं। इस गोत्र के ब्राह्मण एकसरिया, सहदौलिया, सुरगणे, हस्तगामे आदि हैं।

(४) वसिष्ठ के वसिष्ठ, शक्ति, पराशर, अथवा वसिष्ठ, भरद्वसु, इन्द्रप्रमद ये तीन प्रवर हैं। ये ब्राह्मण कस्तुवार, डरवलिया, मार्जनीमिश्र आदि हैं। कोई वसिष्ठ, अत्रि, सांकृति प्रवर मानते हैं।

(५) शांडिल्य के शांडिल्य, असित, देवल तीन प्रवर हैं। दिघवैत, कुसुमीतिवारी, नैनजोरा, रमैयापांडे, कोदरिये, अनरिये, कोरांचे,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चिकसौरिया, करमहे, ब्रह्मपुरिये, पहितीपुरपांडे, बटाने, सिहोगिया आदि इस गोत्र के ब्राह्मण हैं।

(६) भरद्वाज, (७) भारद्वाज के आंगिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज अथवा आंगिरस, गार्ग्य, शैन्य तीन प्रवर हैं। दुमटिकार, जठरवार, हीरापुरीपांडे, वेलौंचे, अमवरिया, चकवार, सोनपखरिया, मचैयांपांडे, मनछिया आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(८) गर्ग (९) गार्ग्य के आंगिरस, गार्ग्य, शैन्य तीन अथवा धृत, कौशिक, माण्डव्य, अथर्व, वैशम्पायन पांच प्रवर हैं। मामखोर के शुक्ल, बसमैत, नगवाशुक्ल, गर्ग आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(१०) सावर्ण्य के भार्गव, च्यवन, आप्नवान, और्व, जामदग्न्य पांच, या सावर्ण्य, पुलस्त्य, पुलह तीन प्रवर हैं। पनचोभै, सवर्णियां, टिकरा पांडे, अरापै, बेमुवार आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(११) वत्स के भार्गव, च्यवन, आप्नवान, और्व, जामदग्न्य पांच, या भार्गव, च्यवन, आप्नवान तीन प्रवर हैं। दोनवार, गाना मिश्र, सोनभदरिया, बगौछिया, जलैवार, शमसेरिया, हथौरिया, गंगटिकैत आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(१२) गौतम के आंगिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज, या अंगिरा, वसिष्ठ, गार्हपत्य तीन, या अंगिरा, उतथ्य, गौतम, उशिज, कक्षीवान पांच प्रवर हैं। पिपरामिश्र, गौतमिया, करमाई, सुरौरे, बड़रमियां, दात्यायन, वास्यायन आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(१३) भार्गव के भार्गव, च्यवन, आप्नवान तीन, या भार्गव, च्यवन, आप्नवान, और्व, जामदग्न्य पांच प्रवर हैं। भृगुवंश, असवरिया, कोठहा आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(१४) सांकृति के सांकृति, सांख्यायन, किल, या शक्ति, गौरुवीत, सांकृति या आंगिरस, गौरुवीत, सांकृति तीन प्रवर हैं। सकरवार, मलैयांपांडे, फतूहाबादी मिश्र आदि इस गोत्र के ब्राह्मण हैं।

(१५) कौशिक के कौशिक, अत्रि, जमदग्नि या विश्वामित्र, अघमर्षण, कौशिक तीन प्रवर हैं। कुसौंझिया, टेकार के पांडे, नेकतीवार आदि इस गोत्र के ब्राह्मण हैं।

(१६) कात्यायन के कात्यायन, विश्वामित्र, किल या कात्यायन, विष्णु, अंगिरा तीन प्रवर हैं। बदर्कामिश्र, लमगोड़ियातिवारी,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीकांत पुरके पांडे आदि इस गोत्र के ब्राह्मण हैं।

(१७) विष्णुवृद्धके अंगिरा, त्रसदस्यु, पुरुकुत्स तीन प्रवर हैं। इस गोत्र के कुथवैत आदि ब्राह्मण हैं।

(१८) आत्रेय (१९) कृष्णात्रेय के आत्रेय, आर्चनानस, श्यावाश्व तीन प्रवर हैं। मैरियापांडे, पूले, इनरवार इस गोत्र के ब्राह्मण हैं।

(२०) कौण्डिन्य के आस्तीक, कौशिक, कौण्डिन्य या मैत्रावरुण, वासिष्ठ, कौण्डिन्य तीन प्रवर हैं। इनका अथर्व वेद भी है। अथर्व, विजलपुरिया आदि ब्राह्मण इस गोत्र के हैं।

(२१) मौनस के मौनस, भार्गव, वीतहव्य (वेधस) तीनप्रवर हैं।

(२२) कपिल के अंगिरा, भारद्वाज, कपिल तीन प्रवर हैं। इस गोत्र के ब्राह्मण जसरायन आदि हैं।

(२३) ताण्ड्य गोत्र के तांड्य, अंगिरा, मौद्गल्य तीन प्रवर हैं।

(२४) लौगाक्षिके लौगाक्षि, बृहस्पति, गौतम तीन प्रवर हैं।

(२५) मौद्गल्य के मौद्गल्य, अंगिरा, बृहस्पति तीन प्रवर हैं।

(२६) कण्वके आंगिरस, आजमीढ़, काण्व, या आंगिरस, घौर, काण्व तीन प्रवर हैं।

(२७) धनंजय के विश्वामित्र, मधुच्छन्दस, धनंजय तीन प्रवर हैं।

(२८) उपमन्यु के वसिष्ठ, इन्द्रप्रमद, अभरद्वसु तीन प्रवर हैं।

(२९) कौत्स के आंगिरस, मान्धाता, कौत्स तीन प्रवर हैं।

(३०) अगत्य के अगस्त्य, दार्ढ्यच्युत, इध्मवाह तीन प्रवर हैं, अथवा केवल अगस्त्य ही।

इसके सिवाय और गोत्रों के प्रवर प्रवरदर्पण आदि से अथवा ब्राह्मणों की वंशावलियों से जाने जा सकते हैं।

होम की साधारण विधि इस प्रकार है:—

सभी होमके प्रारम्भमें सात प्रायश्चित्त आहुतियां और पांच पंचवारुणी, कुल बारह आहुतियां दी जाती हैं। वह इस प्रकार हैं:—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम। (२) ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय न मम। (३) ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम। (४) ॐ सोमाय स्वाह इदं सोमाय न मम। (५) ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये न मम। (६) ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे न मम। (७) ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद नीचे लिखा मंत्र पढ़कर जल छिड़के, या केवल मंत्र ही पढ़ देवे—

यथा वाणप्रहाराणां कवचंवारकं भवेत्। तद्वद्दैवोपघातानां शांतिर्भवति वारिका। शांतिरस्तु पुष्टिरस्तु वृद्धिरस्तु यत्पापं तत्प्रतिहतमस्तु द्विपदे चतुष्पदे सुशांतिर्भवतु।

फिर पंचवारुणी होम करे—

(१) ॐ त्वन्नोअग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठा। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम। (२) ॐ सत्वन्नोऽअग्नेवमोभवोती नेदिष्ठो अस्या उषसोव्युष्टौ। अवयक्ष्वनोवरुणंरराणो वीहि मृडीकं सुहवो न एधिस्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम। (३) ॐ अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्च सत्वमित्त्वमयाअसि। अयानो यज्ञं वहास्ययानो धेहि भेषजं स्वाहा इदमग्नये न मम। (४) ॐ येते शतं ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम। (५) ॐ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय। अथावयमादित्यव्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा इदं वरुणाय न मम।

इसके बाद थोड़ा जल गिराकर नवग्रह आदि देवताओं के नाम लेकर और जिस देवता का होम करना हो उसका भी नाम लेकर स्वाहा शब्द के साथ चतुर्थ्यन्त उच्चारण करके आहुतियां देवे और अन्त में 'ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम' पढ़कर आहुति देवे और पूर्णाहुति करे। होम के आरम्भ में संकल्प करके होम शुरू करे और अन्त में भी पूर्णाहुति का संकल्प करे। यदि दूसरा आदमी होम करने वाला हो तौ भी संकल्प स्वयं पढ़ना चाहिये और 'इदं प्रजापतये न मम' इत्यादि प्रतिमंत्र के अन्तमें स्वयं बोलना चाहिये और उसीके साथ आहुति छोड़नी चाहिये, नकि 'स्वाहा' के साथ। इसका नाम त्याग है और इसके बोलने का अधिकार केवल यजमान को ही है। इसके विना आहुति अधूरी रहजाती है।

६—ब्राह्मणोंकी पदवियां।

यद्यपि ब्राह्मणोंकी पुरानी और नवीन पदवियों के विषय में अच्छी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तरह लिखा जाचुका है और कुछ नामभी पदवियों के साथ लिखे गये हैं। तथापि कुछ अधिक नामों और पदवियों के दिखला देने से लोगों की बहुत दिनोंकी भ्रान्त धारण के दूर होने में आसानी होगी। हम हरेक ब्राह्मण दलों के कुछ इनेगिने नामहीं दिखलावेंगे। सभी नाम वर्त्तमान लोगों केही नहीं हैं।

कान्यकुब्ज।

(१) चौधरी खुमानसिंह, बिठूर, कानपुर। (२) चौधरी हरनारायणसिंह, सुलतानगंज, फतहपुर। (३) पंडित अयोध्यासिंह तिवारी, जहानागंज, फतहगढ़ (४) ठाकुर नारायणसिंह, सीरू के अवस्थी। (५) रुद्रसाह, खजुहा, फतहपुर (६) खांडेराय, फतहपुर। (७) लालसाह, फतहपुर। (८) रनजीतराय, फतहपुर। इसके सिवाय (९) सावर्णि, (१०) ठकुरिया, (११) राउत, (१२) मैरहा, (१३) अध्वर्यु इत्यादि पदवियां भी प्रचलित हैं।

सर्यूपारी।

(१) बाबू बैजनाथसिंह, कुरौना, बनारस। (२) श्रीयुतविवेकीसिंह, सिंहनपुरा, शाहाबाद। (३) त्रिपाठी बूआसिंह, बेरौचा, बांदा। (४) त्रिपाठी नृपतिसिंह, मंडौर, बांदा। (५) श्रीरामशरणसिंह, चरवा, इलाहाबाद। (६) ब्रह्मदत्तसिंह, टाटा, इलाहाबाद। (७) कल्लूसिंह, थरी, मिर्जापुर। (८) श्री त्रिभुवनसिंह, गंगहरा, मिर्जापुर। (९) श्री बलदेवसिंह, पुरवापाल, रीवांराज्य। (१०) श्री शम्भूसिंह, मनिकबरा, रीवां राज्य।

गौड़।

(१) पं. अमरसिंह, एम. ए. तहसीलदार, दिल्ली। (२) राजा फतहसिंह, शेखूपुरा, लाहौर, सभापति गौड़सभा (३) पं० रघुवीरसिंह, डिप्टी कलक्टर, हिसार। (४) पं० बद्रीदास, निरीक्षक, गौड़सभा, कुरुक्षेत्र। (५) पं० रामस्वरूप चौधरी रईस, शिकारपुर। (६) श्रीभाऊराम स्वामी, कोराली, अम्बाला।

सनाढ्य।

(१) कुंवर हनुमानसिंह, आनरेरी मजिस्ट्रेट, अलीगढ़। (२) रायसाहिब ठाकुर केहरीसिंह, रईस, मथुरा। (३) कुंवर सुजान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिंह, रईस, ज़िला अलीगढ़। (४। रायबहादुर पलिया राधोबा रत्तीराम, रईस, अलीगढ़। (५) भटैले श्यामविहारीलाल, रईस, जिला एटा। (६) पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय, निजामाबाद, आजमगढ़।

पालीवाल।

(१) शाह रामचन्द्रशर्म्मा रईस, रामपुर, मैनपुरी, सभापति पालीवालसभा, (२) सेठ भगवानदास रईस, सुकीट, एटा, उप सभापति (३) शाह किशोरीलाल, रईस, बाजीदपुर, अलीगढ़, मंत्री। (४) शाह मोहनलालशर्म्मा, ताल्लुकेदार, सिमरा. आगरा। (५) शाह दुर्गाप्रसादशर्म्मा, ताल्लुकेदार।

मैथिल।

(१) सर रमेश्वरसिंह, महाराजा बहादुर, दरभंगा। (२) महाराजा लक्ष्मीश्वरसिंह, (३) बाबू तुलापतिसिंह, महाराज दरभंगा के चचा। (४) महामहोपाध्याय श्री कृष्णसिंह ठाकुर, दरभंगा। (५) पंडित बबुआखां, बनगांव, दरभंगा। (६) पंडित गुणपति सिंह, वीरसायर। (७) बाबू यदुनन्दनसिंह झा, चनौर (८) कुमार सूर्यानन्दसिंह, बनैली रामनगर। (९) पं. मुक्तिनाथ ठाकुर, अथरी, मुजफ्फरपुर। (१०) पं. जीवनाथराय, व्याकरणतीर्थ, वीरसायर। (११) तुरन्तलाल चौधरी, दुलारपुर। (१२) सेठ रामाश्रयसिंह, केवटा। (१३) खेदू ईश्वर, मरांची, मुगेर। (१४) पं. योगानन्द कुंवर, भूतपूर्व सम्पादक, मिथिलामिहिर, दरभंगा।

जिझौतिया।

(१) श्रीयुत दर्यावसिंह जागीरदार, चित्रकूट। जुझौतियों की वंशावली में हीं उनकी (२) राव (राउ) त, (३) राय, (४) अरिजरिया, (५) नायक, (६) भंड़ैरिया, (७) पटैरिया, (८) गंगेले, (९) सुल्लेरे, (१०) फौजदार, (११) बोहरे या बहोरे, (१२) दीन, (१४) घड़ियाली, (१५) पारसाई, (१६) सराफ आदि पदवियां लिखी हैं।

भूमिहार, पश्चिमा, जमींदार।

(१) द्विजराज काशीराज श्रीमत्प्रभुनारायणसिंह शर्म्मा (२) श्रीमान आदित्य नारायण सिंहशर्म्मा, महाराजकुमार, बनारस (३)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीकवीन्द्रनारायणसिंह, जगतगंज, काशी। (४) श्रीइन्द्रजीत प्रताप बहादुर साही, राजासाहब तमकुही। (५) श्री गुरुमहादेव आश्रम प्रसाद साही, महाराजा हथुवा (६) श्री वेनीप्रसादसिंह, सराय गोवर्धन, काशी। (७) पं. रघुनाथ प्रसादसाहीशर्म्मा, सांढ़ा, मुजफ्फरपुर (८) पं. रामदासराय मिश्र, काव्यतीर्थ, प्रोफेसर, भू० ब्रा० कालेज मुजफ्फरपुर (९) राजा हरिहरप्रसादनारायण सिंह, अमावां (१०) पं. सन्तप्रसादसिंहशर्म्मा, बकठपुर, मुजफ्फरपुर।

त्यागी।

(१) श्रीचौधरी रघुवीर नारायणसिंह, ताल्लुकेदार, अलौढ़ा मेरठ (२) पं० पद्मसिंह शर्म्मा, नायकनगला, विजनौर (३) चौधरी अनूपसिंह, नहटौर, विजनौर (४) चौधरी वैजनाथसिंह, रतनगढ़, विजनौर (५) पं० रामवतारशास्त्री, रतनगढ़, विजनौर (६) चौधरी रूपचन्द शर्म्मा, गोवर्धनपुर, सहारनपुर (७) पं० शालिग्राम शर्म्मा, चरथावल, मुजफ्फरनगर (८) पं० कूड़ेरामजी शर्म्मा, लखौदा, मेरठ। (९) प्रोफेसर पं. धर्मवीर शर्म्मा।

महियाल।

(१) बाबू शिवनाथ सिंह, गाजीपुर। (२) महते योगध्यान सिंह, प्रधान, महियालसभा, लाहौर। (३) बा० हीरासिंहजी दत्त, मंत्री, महियालसभा। (४) पं० रामभज दत्त चौधरी, लाहौर। (५) रायजादा नत्थूराम वैद्य, मंत्री, महियालसभा, शिमला। (६) रामरिक्खामलदत्त, मंत्री, महियालसभा, झेलम। (७) श्री युत दीवान भीमसेन, सेनापति राजासूचितसिंह, जम्मू (८) दीवान हेमराज, सेनापति, जम्मू। (९) रिसालादार मेजर हुकुम सिंह। (१०) सूबेदार सन्ध्यादास, २५ वीं पंजाबी पैदल सेना। (११) सूबेदार लाखासिंह, पहली सिख पैदल सेना। (१२) जमादार रामसिंह, दूसरी पंजाब घुड़सवार फौज।

इसके सिवाय पूर्व के प्रदर्शित इन सभी ब्राह्मणदलों में मिश्र, चौबे, दुबे, तिवारी, पांडे, पाठक, शुक्ल, ओझा, झा, उपाध्याय वगैरः पदवियां पाई जाती हैं, जिनका दिग्दर्शन ग्रन्थ में हीं कराया जाचुका है। इसी लिये जान बूझकर उन्हें यहां नहीं लिखा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

७–चरम उपसंहार और समर्पण ।

प्रसंगादपमानोक्तिः कटूक्तिर्यदिवोद्धृताः ।
निवर्त्यसन्तस्तां क्षान्तिसाञ्जलिःप्रार्थयाम
भाद्रमासि सिते पक्षे शुभे चन्द्रजवासरे ।
द्वितीयायां तिथौ रात्रौ गुणाश्वांकेन्दुवत्सरे
अविमुक्ते निवसता परोपकृतिबुद्धिना ।
रचितः सहजानन्दसरस्वत्याख्यदण्डिना ॥
वर्द्धितश्च पुनर्भाद्रे भूवस्वंकमहीमिते ।
ब्रह्मर्षिवंशविस्तारः सोऽयं सर्वांगसंयुतः ॥४
सुमनोऽञ्जलिरूपेण सुमनोमोददायिना ।
अमुना पार्वतीजानिः प्रीयतां जगतीपतिः

इति श्रीवाराणसेयदशाश्वमेधघट्टस्थमठभूतपूर्वालङ्कारश्रीरूपसरस्वतीपूज्यपादविनेयपरम्परा प्रविष्टश्रीमत्स्वामिवर्यासरस्वतीपूज्य चरणाम्बुज भृङ्गायमाण स्वामि सहजानन्द विरचिते ब्रह्मर्षिवंश विस्तरे उत्तर परिशिष्टाख्यं चतुर्थं प्रव

॥ समाप्तश्चायं ग्रन्थः ॥ शुभम्भूयादनिशम् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

ic Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS

th, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundatio

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

ग्रा अलीगढ़ । (४ । रायबहादुर पलिया राधोबा
मलीगढ़ । (५) भटैले श्यामविहारीलाल, रईस,
पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय, निजामाबाद, आजमगढ़।

पालीवाल ।

रामचन्द्रशर्म्मा रईस, रामपुर, मैनपुरी, सभापति
(२) सेठ भगवानदास रईस, सुकीट, एटा, उप
शाह किशोरीलाल, रईस, बाजीदपुर, अलीगढ़, मंत्री।
लालशर्म्मा, ताल्लुकेदार, सिमरा, आगरा । (५)
र्म्मा, ताल्लुकेदार ।

मैथिल ।

रमेश्वरसिंह, महाराजा बहादुर, दरभंगा । (२)
श्वरसिंह, (३) बाबू तुलापतिसिंह, महाराज दरभंगा
महामहोपाध्याय श्री कृष्णसिंह ठाकुर, दरभंगा।
दुआर्खा, बनगांव, दरभंगा । (६) पंडित गुणपति
। (७) बाबू यदुनन्दनसिंह झा, चनौर (८) कुमार
नैली रामनगर । (९) पं. मुक्तिनाथ ठाकुर, अथरी,
१०) पं. जीवनाथराय, व्याकरणतीर्थ, वीरसायर।
ाल चौधरी, दुलारपुर । (१२) सेठ रामाश्रयसिंह,
खेदू ईश्वर, मरांची, मुगेर । (१४) पं. योगानन्द
म्पादक, मिथिलामिहिर, दरभंगा ।

जिझौतिया ।

त दर्यावसिंह जागीरदार, चित्रकूट । जुझौतियों
हीं उनकी (२) राव (राउ) त, (३) राय, (४)
५) नायक, (६) भंडैरिया, (७) पटैरिया, (८)
ल्लेरे, (१०) फौजदार, (११) बोहरे या बहोरे, (१२)
डियाली, (१५) पारसाई, (१६) सराफ आदि
हैं ।

भूमिहार, पश्चिमा, जमींदार ।

राज काशीराज श्रीमत्प्रभुनारायणसिंह शर्म्मा (२)
। नारायण सिंहशर्म्मा, महाराजकुमार, बनारस (३)

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg